इंगलैंड में स्थानीय प्रशासन

[LOCAL GOVERNMENT IN ENGLAND]

हरीशचन्द्र शर्मा एम० ए०

भारत में स्थानीय प्रशासन, फ्रांस में स्थानीय प्रशासन, इंगलैंड
में स्थानीय प्रशासन, भारत में लोक प्रशासन, तुलनात्मक
लोक प्रशासन आदि पुस्तकों के लेखक

एवं

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति की विचारभूमि, लोक प्रशासन के नये
क्षितिज आदि पुस्तकों के सहलेखक
राजनीतिशास्त्र विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

कालेज बुक डिपो, जयपुर

प्रकाशक :
कॉलेज बुक डिपो
त्रिपोलिया, जयपुर

प्रथम संस्करण 1968

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन सुरक्षित

मूल्य : Rs. 20.00

मुद्रक
कालेज प्रेस
जयपुर

विषय-सूची

OUR OTHER PUBLICATIONS

9. भारत में स्थानीय प्रशासन (1968) — 20.00
   (Local Govt. in India)
   By : Prof. Harish Chandra Sharma

10. इंगलैन्ड में स्थानीय प्रशासन (1968) — 20.00
    (Local Govt in England)
    By : Prof H C. Sharma

11. फ्रांस में स्थानीय प्रशासन (1968) — 20.00
    (Local Govt. in France)
    By : Prof H. C. Sharma

12. अमेरिका में स्थानीय प्रशासन (1968) — 20.00
    (Local Govt. in America)
    By : Prof. H C. Sharma

13. अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध (प्रथम भाग) — 16.00
    (International Relations from 1919 upto 1945)

14. अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध (द्वितीय भाग) — 16.00
    (International Relations from 1945 upto Present day)

15. विश्व के प्रमुख संविधान (1968) — 16.00
    (*A Comparative Study of U. S. A., U. S. S. R, U. K, Switzerland, Japan and France*)

ग्रेट ब्रिटेन की स्थानीय सरकार को भी विकास की विभिन्न श्रेणियों में होकर गुजरना पड़ा है। वहां के राजनैतिक जीवन में जो उथल-पुथल हुई और जिस प्रकार निरंकुश राजाशाही ने संवैधानिक राजतन्त्र का रूप धारण किया और देश में रक्तहीन क्रांतियां हुईं, उसी प्रकार वहां स्थानीय सरकार के रूप में भी वांछित परिवर्तन किए गए। यदि हम ग्रेट ब्रिटेन की स्थानीय सरकार के वर्तमान रूप का अध्ययन करना चाहें तो उसके ऐतिहासिक विकास पर एक दृष्टि डालनी होगी। मि० जॉन जे० क्लार्क (John J Clarke) के कथनानुसार किसी भी मानवीय संस्था को उस समय तक नहीं समझा जा सकता जब तक कि उसके ऐतिहासिक संघों का अध्ययन न किया जाए। भविष्य की प्रगति की रेखाओं पर विचार करते समय अतीत के विकास के भण्डार को ध्यान में रखना होता है।* कुछ-कुछ यही बात दूसरे शब्दों में मि० एल० गोल्डिंग (L. Golding) ने कही है। उनके शब्दों में स्थानीय सरकार की वर्तमान व्यवस्था का अध्ययन प्रारम्भिक काल से ही स्थानीय सरकार के विकास के ज्ञान द्वारा सुगम बना दिया जाता है।† स्थानीय सरकार के स्वरूप एवं अर्थ भी समय-समय पर बदलते रहते हैं। केन्द्रीय सरकार एवं स्थानीय निकाय दोनों के कार्यों के बीच पर्याप्त असमानताएं वर्तमान हैं। स्थानीय निकाय मुख्य रूप से जन-व्यवस्था की रक्षा, गरीबी को मिटाना, आवश्यकतानुसार सड़कों की रचना करना तथा जन सफाई का कार्य आदि से सम्बन्धित रहती है। जनसंख्या बढ़ जाने से तथा वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास हो जाने के कारण जो परिवर्तन आए हैं तथा औद्योगीकरण ने जिन नवीन चुनौतियों को हमारे सामने रखा है उन सब के फलस्वरूप ग्रेट ब्रिटेन का सामाजिक परिवेश अत्यन्त जटिल हो गया और उसके परिणामस्वरूप नई एवं परिवर्तित सेवाएं आवश्यक समझी जाने लगीं। साथ ही उन्हें सम्पन्न करने की नई तकनीकों का विकास किया गया। स्थानीय क्षेत्र में जो कुछ भी विकास हुए वे सब आवश्यक रूप से स्थानीय सरकार के विषय नहीं थे, उदाहरण के लिए बड़े अस्पतालों की स्थानीय क्षेत्र में बड़ी जरूरत होती है तथा वे वहां के जीवन का अभिन्न अंग होते हैं। किन्तु स्थानीय सभा द्वारा न तो उनके धन का प्रबन्ध किया जाता है और

फ्रैन्क प्लेज व्यवस्था (Frank Pledge System) भी होती थी जो कि एंग्लो-सेक्सन संविधान के अन्तर्गत दस व्यक्तियों की एक संस्था होता थी जिनके द्वारा शान्ति की रक्षा के लिए कार्य किया जाता था।

प्रारम्भ में जहां एंग्लो-सेक्सन लोग रहे वह मुख्य रूप से देहाती और कृषि से सम्बन्धित क्षेत्र था क्योंकि रोम वालों ने जो कस्बे बनाए थे उनको नष्ट किया जा चुका था और उनके अवशेष भी समाप्त हो गए थे; किन्तु ज्यों-ज्यों जन-संख्या बढ़ती गई और कारीगरी का विकास होता गया त्यों त्यों कस्बों को केन्द्रीय महत्व प्राप्त होता गया। यहां के निवासी मुख्य रूप से औद्योगिक कार्यों में प्रवृत हो गए, यद्यपि कुछ लोग अब भी पशु चराने एवं खेती करने के कार्य में संलग्न थे। इन कस्बों का स्थानीय प्रशासन टाऊन मूट (Town Moot) द्वारा किया जाने लगा। बड़े कस्बों में जो मूट (Moot) कार्य करते थे वे बारो परिषद की तरह और जो छोटे कस्बों में कार्य कर रहे थे उनको नगर जिला परिषद (Urban District Council) का पूर्वज माना जा सकता है। आस-पड़ोस के कई एक कस्बे मिल करके एक निकाय की रचना कर लेते थे जिसे हन्डरेड (Hundred) कहा जाता था। अन्य नागरिक संस्थाओं की भांति इस संस्था का जन्म भी एक सैनिक संगठन के रूप में हुआ। इस संस्था का नामकरण यह क्यों हुआ–इसके बारे में कहा जाता है कि सम्भवतः यह उस क्षेत्र के नाम से निकला होगा जिसमें कि एक से भू-भाग हों। उत्तरी काउन्टीज में इसको एक वार्ड के स्काटिश नाम से पुकारा गया। उत्तर पूर्वी काउन्टीज में इसे वापेनटेक (Wapentake) नाम से जाना गया। वार्ड प्रदेशों में प्रादेशिक प्रकृति या विभाजन का विशेष रूप से प्रयोग किया गया। यार्कशायर में हमें रिचमण्ड-शायर, रिपनशायर, हेलमशायर, आईजलैण्डशायर, नारहमशायर आदि देखने को मिलते हैं। इस बात का कोई ऐतिहासिक प्रमाण नहीं मिलता कि कस्बे से ऊपर के स्थानीय विभाजन को शायर ही कहते थे। स्थानीय सरकार के प्रारम्भिक इतिहास में हन्डरेड का स्थान टाऊनशिप (Township) से तुरन्त ऊपर था। इनमें से अनेक को न्यायिक प्रशासन, शान्ति एवं सुरक्षा के लिए एक संघ में गठित कर लिया जाता था। हन्डरेड के संविधान का निर्णय प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त के आधार पर किया जाता था। प्रत्येक टाउनशिप में एक सौ मूट होते थे जिनका प्रतिनिधित्व इनके कस्वा-रीवी द्वारा किया जाता था तथा चार से लेकर दस तक कस्बे के व्यक्ति भी प्रतिनिधित्व करते थे। जब कभी टाउनशिपों के बीच कोई झगड़ा होता था तो उसे पंच फैसले के लिए हन्डरेड मूट में रख दिया जाता था। अधिक खतरनाक अपराधों तथा जीवन मरण के मामलों से सम्बन्धित फैसला इसी के द्वारा किया जाता था। इसे हन्डरेड के लिए कानून बनाने का उतना ही अधिकार था जितना कि प्रत्येक पृथक गांव के सम्बन्ध में गांवों के मूट को हुआ करता था। इस प्रकार से एंग्लो-सेक्सन स्थानीय सरकार की व्यवस्था स्वतन्त्र एवं प्रजा-तन्त्रात्मक थी। इस सम्बन्ध में यह उल्लेखनीय है कि वर्तमान स्थानीय सर–कार का रूप इस व्यवस्था से बहुत कुछ मिलता-जुलता सा है। यह व्यवस्था इतनी अच्छी थी कि इसमें सुधार मुश्किल से ही किया जा सकता है। व

मान समय में स्थानीय प्रशासन के पास कार्यपालिका न्यायिक कार्य नहीं है। यह एक अन्तर माना जा सकता है जो कि वर्तमान को अतीत से अलग करता है। आज यदि स्थानीय प्रशासन की आज्ञाओं या कानूनों का पालन नहीं किया जाता तो किस के लिए न्यायालय में अपील करनी होती है। एंग्लो-सेक्सन समय में यह प्रक्रिया अत्यन्त सरल थी।

नार्मन काल

जब विलियम नार्मन ने शासन सत्ता सम्भाली तो उसने ग्राम सभाओं [Folk Moots] को समाप्त कर दिया। उसने देखा कि शक्ति के स्थानीय केन्द्र बहुत प्रभावशाली हैं और इनके रहते हुए वह सत्ता का प्रयोग मनचाहे ढंग से नहीं कर पाएगा। टाउनशिप केवल गांव बन कर रह गये और शायर-मूट के स्थान पर मेनर न्यायालय [Manor Court] स्थापित किए गए जहां कि संचालक द्वारा मेनर लार्ड के प्रतिनिधि के रूप में कार्य किया गया। इस न्यायालय के निर्णयों को बेलिफ [Bailiff] द्वारा क्रियान्वित किया जाता था। कभी-कभी बेलिफ की संख्या एक से अधिक भी हुआ करती थी और ऐसी स्थिति में एक प्रमुख [Major] बेलिफ होता था जिसे केवल मेजर भी कह दिया जाता था। मेजर से ही बाद में मेयर [Mayor] शब्द की व्युत्पत्ति हुई है। हन्डरेड न्यायालयों को समाप्त नहीं किया गया किन्तु उन्हें नियमित रूप से मिलने के लिए निर्देशित किया गया। यदि इनमें सदस्य अनुपस्थित रहते थे तो उनको दण्डित किया जा सकता था। सन् १८९४ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने हन्डरेड न्यायालयों के स्थान पर जिला परिषद [District Council] की स्थापना की। ये न्यायालय बाद में चल कर राजा के न्यायालय [King's Court] बन गए और वहां जो न्यायाधीश बैठते थे वे तथ्य की दृष्टि से नहीं तो कम से कम सैद्धान्तिक रूप में क्राउन के सेवक बन गए। जितने भी स्थानीय अधिकार-क्षेत्र थे उन सभी का झुकाव केन्द्रीय शक्तियों की ओर हो गया।

सन् १३०० के बाद शेरिफ [Sheriff] के अधिकार एवं स्तर घट गए तो शान्ति के न्याय [Justice of the Peace] ने सत्ता गृहण कर ली। यद्यपि नार्मन काल में सेक्सन काल की सभी नागरिक संस्थाओं को बदल दिया गया किन्तु धार्मिक संस्थाएं प्रायः पूर्ववत् बनी रहीं। पेरिश का पादरी अपनी शिक्षा एवं विशेषाधिकार के द्वारा जनता के अधिकारों पर पर्याप्त शक्ति रखता था। वह अपने सभी पेरिशवालों को चर्च में बुला सकता था जहां कि जमींदार और किसान, स्त्री और पुरुष सभी समानता की दृष्टि से मिलते थे। यहां जनता की स्वतन्त्रताओं के बारे में विचार-विमर्श किया जाता था और पादरी से यह आशा की जाती थी कि वह गरीबों का पक्षपाती बन कर उनके हितों का ध्यान रखेगा। चर्च की सभाओं में इस प्रकार की बैठक करने का रिवाज एक सभा के प्रति उत्तरदायी था जिसे कि वेस्ट्री [Vestry] कहा जाता था।

चौदहवीं शताब्दी में आकर नए आर्थिक परिवर्तनों ने राष्ट्रीय सामाजिक जीवन को प्रभावित करना प्रारम्भ किया। इसके परिणाम-स्वरूप स्थानीय सरकार के प्रशासन में भी भारी परिवर्तन हुए।

धीरे-धीरे सामन्तशाही व्यवस्था की जड़ें हिलने लगीं। मेनोरियल व्यवस्था में श्रमिक को सामन्तशाही मालिक की जमीन के साथ बांध दिया जाता था। वह मेनर को छोड़ नहीं सकता था और नहीं बिना स्वीकृति के अपने व्यवसाय को बदल सकता था। इसके बदले में मजदूर को सामान्य भूमि का एक भाग और एक झोंपड़ी दी जाती थी। जब तक परिस्थितियां सामान्य बनी रहीं उस समय तक यह व्यवस्था भी चलती रही। किन्तु विदेशी शत्रुओं से रक्षा की आवश्यकता ने इस व्यवस्था को चुनौती दी। चौदहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में जब इंगलैण्ड में प्लेग फैला तो भारी संख्या में उससे मौतें हुईं। मेनरों के पास मजदूर नहीं रहे, मजदूरों की बहुत कमी आ गई। मांग और पूर्ति की शक्तियों ने मजदूरों को सौदेबाजी करने की शक्ति दी और वे अब अधिक रोजनदारी तथा अच्छी दशाओं के लिए एक जगह से दूसरी जगह जाने लगे। परिवर्तन के ज्वार को रोकने के लिए व्यवस्थापिका द्वारा प्रयास किए गये किन्तु सब असफल रहे। पुरानी परि-स्थितियों को दुबारा से लादने के लिए मजदूरों के सम्बन्ध में कई प्रकार के कानून बनाए गए। मजदूरों की मांगों पर रोक लगाने के लिए भूस्वामियों ने कई एक कदम उठाये। जमीन पर खेती नहीं की जाने लगी और उसे भेड़ चराने के काम में लाया जाने लगा। जो सामान्य भूमियां थीं उन्हें भी इसी काम में लिया गया; इसके परिणामस्वरूप ऊन का उत्पादन बढ़ गया। मजदूर लोग कस्बों की ओर भागने लगे जहां पर कि नए कारखाने खुल रहे थे। इस प्रकार एक कृषक क्रान्ति ने जन्म लिया। इस आन्दोलन के परिणाम-स्वरूप राजपत्रित बारोज का विकास होने लगा। राजा द्वारा कस्बों को जो चार्टर दिये गये उनसे उसे पर्याप्त आर्थिक लाभ हुआ; किन्तु साथ ही बैरनों (Barons) की शक्ति बढ़ने लगी। राजा को दिए जाने वाले भुगतानों के कारण भुगतान करने वाले को उन भुगतानों से स्वतन्त्र कर दिया गया जो कि सामन्तशाही व्यवस्था से सम्बन्धित थे। निगम निकाय को जो विशेषा-धिकार मिले, उसने उनका दुरुपयोग किया और परिणामस्वरूप कुप्रशासन का जन्म हुआ। इसी से प्रभावित होकर सन् १८३५ के नगर निगम अधि-नियम द्वारा सुधार करने की आवश्यकता महसूस की गई।

मध्य युग

नार्मन समय को प्रायः मध्य युग में ही सम्मिलित किया जाता है। नार्मन काल में शेरिफ की सत्ता इतनी बढ़ गई कि उसे प्रान्तीय वायसराय कहा जाने लगा। वह प्रायः एक काउन्टी का गृह-स्वामी होता था। वह राजा की जायदाद से होने वाली आय को इकट्ठा करता था। इसके अतिरिक्त अन्य बकाया एवं न्यायिक भुगतानों की भी उगाई करता था, साथ ही राजा के हितों का ध्यान रखता था। यद्यपि शेरिफ एक शाही अधिकारी था किन्तु कभी-कभी वह तानाशाही रूप में व्यवहार करता था। इस प्रकार मध्य युग का इंगलैण्ड मुख्य रूप में कृषि प्रधान था, औद्योगिक कस्बे बहुत कम थे और जनसंख्या विस्तृत रूप से फैली हुई थी। स्थानीय सरकार की दृष्टि से पूरे देश को कई काउन्टियों में विभाजित किया जाता था; प्रत्येक काउन्टी का प्रशासन अब भी क्राउन द्वारा नियुक्त नगराधिप या शेरिफ द्वारा किया जाता

था। वह यद्यपि पूर्ण रूप से प्रान्तीय वायसराय नहीं था किन्तु वह सभी शायरों तथा फ्रीमैंनों से बने काउन्टी न्यायालय की अध्यक्षता करता था। उसके कार्य आंशिक रूप से न्यायिक थे किन्तु वह मुख्यतः काउन्टी के लिए स्थानीय सत्ता था। उसके बाद में हन्डरेड होते थे। प्रत्येक हन्डरेड में एक हन्डरेड न्यायालय होता था जिसकी बैठकें प्रति माह होती थीं। इसकी अध्यक्षता जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है बेलिफ द्वारा की जाती थी जिसको कि नगराधिपति नियुक्त करता था। हन्डरेड न्यायालय जमीन से सम्बन्धित झगड़ों को तय करते थे और वे प्रारम्भिक फौजदारी कानून व्यवस्था अर्थात् फ्रेन्क प्लेज को क्रियान्वित करने के लिए भी उत्तरदायी थे। फ्रेन्क प्लेज व्यवस्था के आधीन सभी व्यक्तियों को दस-दस की टोलियों में बांट दिया जाता था और प्रत्येक टोली के प्रत्येक व्यक्ति को एक दूसरे के साथ अच्छे व्यवहार के लिए पारस्परिक रूप से उत्तरदायी बनाया जाता था। नगराधिपति का यह एक कर्त्तव्य माना जाता था कि वह प्रत्येक हन्डरेड न्यायालय का वर्ष में दो बार निरीक्षण करे और यह देखे कि क्या दस व्यक्तियों वाले समूह (Tithing) बने हुए हैं, क्या वे पूर्णतः मजबूत हैं तथा यदि इसके किसी भी सदस्य ने कोई अपराध किया है तो क्या उसको उपयुक्त दण्ड दिया गया है। मध्ययुगीन स्थानीय सरकार के पदसोपान में सबसे छोटा क्षेत्र 'विल' (Vill) था। प्रत्येक विल क्षेत्र प्रायः मेनर के सहवृत होता था। जिन विलों को राजा द्वारा शाही चार्टर के आधार पर विशेषाधिकार प्रदान कर दिए जाते थे उसे बारो मान लिया जाता था। जब प्रत्येक बारो को एक संसदीय चुनाव क्षेत्र मान लिया गया और उसे कामन्स सभा के लिए एक सदस्य भेजने का अधिकार दिया गया तो यह प्रश्न अत्यन्त महत्वपूर्ण बन गया कि अमुक कस्बा बारो है या नहीं है। मध्य युग के उत्तर काल में चार्टर बारो का सर्वेसर्वा बन गया। मध्य युग के समाप्त होते हीं नगराधिपति की शक्तियां खतरे में पड़ गई। सन् ११९४ से काउन्टी न्यायालय द्वारा नगराधिपति की सत्ता को कम करने के लिए कोरोनरों (Coroners) को नियुक्त किया जाने लगा। शाही न्यायालय की न्याय के क्षेत्र में बढ़ी हुई शक्तियों ने स्थानीय न्यायालयों तथा प्रशासन के महत्व को कम कर दिया। चौदहवीं शताब्दी को सामाजिक अव्यवस्था एवं नागरिक मुसीबतों का समय माना जाता है। इसके परिणामस्वरूप जो अनुशासनहीनता एवं कानून के अभाव की स्थिति पैदा हुई उसके कारण स्थानीय शान्ति के रक्षकों की नियुक्ति की जाने लगी।

एडवर्ड तृतीय के शासनकाल में विभिन्न काउन्टियों में शान्ति की स्थापना का कार्य इन शान्ति रक्षकों को सौंपा गया। ट्यूडर काल आते ही नगराधिप को स्थानीय सरकार के मुखिया पद से हटा दिया गया और यह पद शान्ति के न्यायाधीशों (Justices of the peace) को सौंप दिया गया। इन शान्ति के न्यायाधीशों को अनेक प्रकार के प्रशासकीय एवं न्यायिक कर्त्तव्य सौंप दिए गये। शान्ति के न्यायाधीशों की नियुक्ति क्राउन द्वारा एक विशेष काउन्टी के लिये की जाती थी और इनकी प्रीवी परिषद द्वारा नियन्त्रित किया जाता था। कुछ बारोज को अपने न्यायाधीश नियुक्त करने का अधि-

कार मिला हुआ था। सामन्तशाही के समाप्त होने के कारण मेनोरियल न्यायालय भी शक्तिहीन बन गये और इनकी शक्तियां शान्ति के लिये न्यायाधीशों को सौंप दी गईं। चौदहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध के अन्तिम दिनों (१३४८–४९) में प्लेग के कारण देश की आर्थिक व्यवस्था अस्त-व्यस्त हो गई। ऐसी स्थिति में शान्ति के न्यायाधीशों को ही यह कार्य सौंपा गया कि इस संकट के समय जो श्रमिक व्यवस्थापन किया गया है उसे क्रियान्वित करें। इसी प्रकार एलिजाबेथ प्रथम के शासनकाल में जब गरीबों को सार्वजनिक कोष से मुक्ति दिलाने की व्यवस्था का विकास किया गया तो सरकार ने नई नीति के प्रभावशाली प्रशासन के लिए शान्ति के न्यायाधीशों की ओर देखा। अठारहवीं शताब्दी में शान्ति के न्यायाधीश का कार्यालय और भी अधिक महत्वपूर्ण बन गया क्योंकि उस समय स्थानीय न्याय काउन्टी का मूल आधार बन गया था। शान्ति के न्यायाधीश को मध्य युग से वर्तमान युग के संक्रमण काल का अधिकारी बताया जाता है। यह उस समय की विशेषता है जब कि सोलहवीं शताब्दी के बाद पेरिश (Parish) ने स्थानीय सरकार की इकाई के रूप में दुबारा स्थान ग्रहण कर लिया। ज्यों-ज्यों समय गुजरता गया शान्ति के न्यायाधीश कामन्स सभा के सदस्य बनते चले गये। इस निकाय द्वारा जो कार्य सम्पन्न किये जाते थे वे पेरिश के क्षेत्र के लिए अपर्याप्त समझे जाने लगे। इस के परिणामस्वरूप न्यायाधीशों ने कानून पास करके तथा पेरिश के कर्त्तव्यों को सम्पन्न न करने की अपनी असमर्थता को स्वीकार करके उन्होंने अपने ही न्यायालय के एक भाग को नए एव अधिक विस्तृत कर्त्तव्यों का निर्वाह करने का दायित्व सौंप दिया। इस प्रकार उन्होंने काउन्टी की सड़कों तथा पुलों की मरम्मत करने के लिए काउन्टी अधिकारियों की नियुक्ति की तथा एक प्रकार से काउन्टी सरकार (County Govt.) की व्यवस्था को प्रारम्भ किया।

सत्रहवीं एवं अठारहवीं शताब्दी के अधिकांश समय में इंगलैण्ड की स्थानीय सरकार बहुत कुछ सीमा तक दुखपूर्ण स्थिति में रही। स्थानीय सरकार का मुख्य कार्य अभागों को राहत देना था और यह कार्य पेरिश पर छोड़ा गया। पूरे देश को लगभग १५००० पेरिशों में विभाजित कर दिया गया जिसमें कि खेती करने वाली समाज की बिखरी हुई जनता रहती थी। प्रत्येक पेरिश में प्रायः चालीस से साठ परिवार तक रहते थे। इसके जो निवासी वेस्ट्री के सदस्य होते थे जो हर ईस्टर को बैठक करते थे। वेस्ट्री (Vestry) उस क्षेत्र के सभी निवासियों का प्रतिनिधि निकाय नहीं होता था पेरिश के अधिकारियों में मुख्य रूप से चर्चवार्डन, कांस्टेबल, सड़कों का सर्वेक्षणकर्त्ता और गरीबों पर दृष्टि रखने वाले होते थे। ये सभी अधिकारी अवैतनिक होते थे और ये सेवाएं आवश्यक होती थीं! इसलिए पेरिश के अधिकांश लोग चर्चवार्डन के पद को छोड़ कर अन्य पदों को ग्रहण करने में हिचकिचाते थे। चर्चवार्डन के पद को थोड़ा सम्मान मिला हुआ था। पेरिश एक ऐसा क्षेत्र होता था जो कि चर्च के चारों ओर रहने वाली जनसंख्या का केन्द्र होता था और इसीलिए दो, तीन या चार चर्चवार्डनों को धार्मिक एवं नागरिक क्षेत्रों में कुछ कार्य सौंपे जाते थे। इनको वेस्ट्री द्वारा प्रति वर्ष

निर्वाचित किया जाता था और इनका काम केवल चर्च की मरम्मत करना अथवा उसे सजाना या उसमें सीटों का ठीक तरह से रखना ही नहीं था वरन् यह गरीबों को राहत देने वाले पर्यवेक्षकों के साथ भी मिलकर कार्य करते थे। पेरिश कांस्टेबल की नियुक्ति न्यायाधीशों द्वारा की जाति थी तथा वह उनके निर्देशन में रहकर कार्य करता था। वह पेरिश में कानून और व्यवस्था की स्थापना के लिए उत्तरदायी होता था। पेरिश वेस्ट्री द्वारा न्यायाधीशों को कुछ व्यक्तियों की एक सूची प्रस्तुत की जाती थी जिसमें से न्यायाधीशों द्वारा सड़कों के सर्वेक्षणकर्त्ता छांटे जाते थे। कुछ अपवादों को छोड़ कर पत्येक पेरिशवासी को साल में छः दिन सड़कों पर परिश्रम करना होता था। सडक सर्वेक्षणकर्त्ताओं का यह कर्त्तव्य होता था कि वे देखें कि क्या ऐसा श्रम प्रत्येक व्यक्ति द्वारा किया गया है, जो नहीं करे उस पर जुर्माना किया जाना चाहिये। ये सभी अधिकारी स्थानीय न्यायाधीशों के घनिष्ट पर्यवेक्षण के आधीन कार्य करते हैं। यद्यपि इस संकठन में प्रजातन्त्रात्मक स्थानीय सरकार का रंग दिखाई देता है किन्तु वास्तविकता यह है कि पेरिश वेस्ट्रियों की शक्तियां अत्यन्त सीमित थी। मुख्य नियन्त्रण न्यायाधीशों के हाथ में रहता था। न्यायाधीशों की नियुक्ति क्राउन द्वारा होती थी। वह अपनी खुशी से कभी भी इन्हें हटा सकता था। इन्हें प्रिवी परिषद द्वारा निर्देशित किया जाता था। असल में वे केन्द्रीय सत्ता के साधन मात्र थे जिनके हाथ में स्थानीय सरकार पर नियन्त्रण रखने की शक्तियां नहीं थीं। गृह युद्ध के दौरान स्थानीय सरकार पर प्रिवी परिषद का शक्तिशाली केन्द्रीय नियन्त्रण बढ़ गया। जेम्स द्वितीय ने स्थानीय सरकार में कुछ परिवर्तन किये जिनके परिणामस्वरूप बारोज पर केन्द्रीय नियंत्रण बहुत बढ़ गया। किन्तु सन् १०८८ की क्रान्ति के बाद यह एक निश्चित सिद्धान्त बन गया कि केन्द्रीय सरकार स्थानीय सरकार के मामलों में कम से कम हस्तक्षेप करेगी।

अठारहवीं शताब्दी में स्थानीय सरकार बहुत कुछ स्वायत्तशासी बन गई। न्यायाधीशों को उनके जिलों में प्रशासन की पूरी शक्तियां प्रदान की गई। राजा के बैन्च के न्यायालय ने उन पर केवल नाममात्र का नियंत्रण रखा। क्वार्टर सैशन अब भी एक मुख्य न्यायिक-निकाय था, किन्तु जनसंख्या की वृद्धि के कारण, व व्यापार उद्योग एवं यातायात बढ़ने के कारण, प्रकाश, सड़क पुल नालियों आदि की मांग के कारण इसको प्रशासकीय कर्त्तव्य भी सौंपे गये। इन समस्यायों पर विचार करने के लिए न्यायिक प्रक्रिया को अपर्याप्त समझा गया। अतः यह प्रथा प्रारम्भ की गई कि क्वार्टर सेशन पहले तो न्यायिक कार्य करे और उसके बाद न्यायाधीश काउन्टी का कार्य करने के लिए आपस में विचार-विमर्श करे। इस शताब्दी में कुछ विशेष सेवाओं के लिए उन क्षेत्रों में सामयिक सत्ताएं बनायीं जिनसे कि वर्तमान स्थानीय सरकार के क्षेत्र मेल नहीं खाते। ससद ने भी स्थानीय अधिनियमों द्वारा आयुक्तों के विभिन्न निकाय स्थापित किये जो कि आंशिक रूप से करदाताओं एवं यायाधीशों तथा नगरपालिका निगमों के अधिकारी प्रतिनिधियों द्वारा नियुक्त किये जाते थे। इनके द्वारा ऐसे विषयों पर विचार किया जाता था जैसे गलियों की सफाई, सड़कें, जनता की सुरक्षा आदि।

ये कर लेने की शक्ति भी रखते थे। ये जनसंख्या के उन नये केन्द्रों के लिए उपयोगी थे जो कि समय के साथ-साथ उदित हो रहे थे और जिनका कोई नगर-पालिका संगठन या बॉरो स्तर नहीं था।

स्थानीय न्यायाधीशों के अठारहवीं शताब्दी के विभिन्न प्रकार के कर्त्तव्यों को देखने के बाद इसमें कोई आश्चर्य नहीं होता कि उन्हें सर्वेसर्वा कहा जाता है। शांति के न्यायाधीश काउन्टी के लार्ड लेफ्टीनेन्ट द्वारा नामजद किये जाने पर लार्ड चान्सलर द्वारा नियुक्त किये जाते थे। उनके कर्त्तव्य प्रशासकीय, न्यायिक एवं व्यवस्थापन सम्बन्धी भी थे। ये अवैतनिक कार्यकर्ता वर्ष में चार बार त्रै-मासिक सत्रों पर मिलते थे। देहाती क्षेत्रों में उल्लेखनीय न्यायाधीश क्लर्जीमैन होता था। न्यायाधीशों में से कुछ लोग सजग प्रशासक होते थे किन्तु इनमें से अधिकांश संकीर्ण मस्तिष्क वाले अकार्यकुशल, कैथोलिक तथा ऐसे लोग होते थे जो कि कट्टर व अस्वीकारात्मक प्रकृति के होते थे। शहरी क्षेत्रों में कुछ न्यायाधीश अकुशल एवं भ्रष्टाचारी होते हैं तथा न्याय का व्यापार करके कमाते हैं।

जब मजदूरों को उनकी भूमि से वंचित कर दिया गया और उनको असुविधाएं देने के लिए विभिन्न व्यवस्थापन किये गये तो उनकी हालत काफी बदतर हो गई। उनके घर और भूमि छूट गये। केवल यही नहीं वरन् उनकी जीविका के साधन भी अनिश्चित हो गये। इनमें से अनेक ने अपने घरबार और गांव छोड़े तथा यहां से वहां पर्यटन किया। ऐसे लोगों के साथ मिलकर जरूरतमन्द और प्रभावित व्यक्तियों ने भी समस्या को बदतर बना दिया। जब हैनरी तृतीय के शासनकाल में मोनास्ट्रियों को समाप्त कर दिया गया, उपयुक्त एवं अनुपयुक्त सभी अभागे राष्ट्र के कंधों पर भार बन गये। इस बुराई को फैलाने के लिए उत्तरदायी और भी अनेक कारण थे। खराब फसल एवं मुद्रा के अवमूल्यन ने खाद्य वस्तुओं के मूल्यों को बहुत बढ़ा दिया। ऐसी स्थिति में गरीबों को राहत देने के लिए उठाये जाने वाले कदम महत्व-पूर्ण बन गये। गरीबों के पर्यवेक्षकों द्वारा मूल्यांकन किये गये। इस प्रकार जो कानून बनाये गये उन सबको मिलाया गया और गरीब-राहत अधि-नियम १६०१ (Statute 43 Eliz., C 2—The Poor Relief Act, 1601) द्वारा सशक्त बनाया गया। अठारहवीं शताब्दी के प्रारम्भ तक स्थानीय सरकार के विकास की गति अत्यन्त धीमी थी और वह मुख्य रूप से गरीबों को राहत देने से सम्बन्धित थे। उसके बाद उद्योगों में एक आश्चर्यजनक परिवर्तन आया जिसे कि औद्योगिक क्रान्ति कहा जाता है। अठारहवीं शताब्दी के अन्तिम तथा उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भिक दिनों में फैक्ट्रियों का तीव्र गति से विकास हुआ और नये बड़े कस्बे बनने लगे। औद्योगिक क्रान्ति के परिणामस्वरूप स्थानीय सरकार के कार्य बढ़ गये। इसके अतिरिक्त बीमारियां फैल जाने से, वैज्ञानिक ज्ञान का विकास हो जाने से, और राजनैतिक जीवन में परिवर्तन हो जाने से भी स्थानीय सरकार के उत्तरदायित्वों में परिवर्तन आये। कृषि प्रधान ग्रेट ब्रिटेन जब एक महान औद्योगिक शक्ति बना तो अनेक नयी समस्याएं पैदा हो गई

जिनको सुलझाने के लिए अठारहवीं शताब्दी की स्थानीय सरकार की व्यवस्था पूर्णतः अनुपयुक्त थी। जब अधिकांश जनसंख्या यार्कशायर, लंकाशायर तथा मिडलैण्ड आदि औद्योगिक नगरों एवं नव-स्थापित फैक्ट्रियों के नगरों में केन्द्रित होने लगी तो इससे अनेक गम्भीर प्रशासकीय कठिनाइयां उत्पन्न हो गई। स्थानीय सरकार की जिस व्यवस्था को बिखरी हुई जनसंख्या वाले देहाती क्षेत्रों के लिए संगठित किया गया था और जो अपना कार्य करने के लिए अवैतनिक पैरिश अधिकारियों पर निर्भर रहती थीं वह घनीभूत औद्योगिक क्षेत्रों की समस्याओं को सुलझाने में सफल नहीं हो सकी। अब उस पर अनेक नये उत्तरदायित्व आ गये, जैसे-अधिक मात्रा में शरण देना, बीमारियों को रोकना तथा नदियों को बांधना, गन्दी बस्तियों को समाप्त करना, संगठित अत्याचारों को दबाना आदि। नये औद्योगिक क्षेत्रों में स्थानीय सरकार के पतन को रोकने के लिए यह जरूरी हो गया कि अधिक से अधिक सामयिक निकाय बनाये जायें।

उन्नीसवीं शताब्दी—इस शताब्दी को ब्रिटेन की स्थानीय सरकार के इतिहास में सुधार की शताब्दी कहा जाता है। १८३२ के सुधार अधिनियम के बाद स्थानीय सरकार के क्षेत्र में सुधारों की एक कड़ी को प्रारम्भ किया गया। १८३२ के सुधारों के परिणामस्वरूप संसदीय मताधिकार को बदल दिया गया और अनेक राजनैतिक बुराइयों का दूर कर दिया गया। इसके परिणामस्वरूप ग्रेट ब्रिटेन की सरकार धनिक लोगों के हाथ से निकलकर मध्यम वर्ग के हाथों में चली गई। यह स्वाभाविक था कि सुधार अधिनियम के पास होते ही स्थानीय सरकार व्यवस्था को अधिक प्रजातंत्रात्मक एवं कुशल आधार पर विकसित करने की मांग की जाती। स्थानीय सरकार के सुधारों को १८३४ के निर्धन भूमि सुधार अधिनियम (Poor Land Amendment Act) के द्वारा प्रभावित किया गया तथा बारोज को पुनर्गठित करने वाले नगरपालिका नियम द्वारा अधिनियम १८३५ ने भी इस दृष्टि से महत्वपूर्ण कार्य किया। इन सब सुधारों को करते समय विह्ग (Whig) सरकार मि० बैन्थम द्वारा दिये गये दार्शनिक कार्यक्रम से प्रभावित थी। मि० बैन्थम का विचार था कि ऐतिहासिक परम्पराओं को पूरी तरह से भुला दिया जाय और स्थानीय सरकार के क्षेत्रों का नियोजन पूर्णतः व्यवहारिक उपयोगिता के आधार पर किया जाय। उसने स्थानीय निकायों के जनप्रिय चुनाव का समर्थन किया, किन्तु साथ ही इनकी क्रियाओं को केन्द्रीय विभागों द्वारा कठोरतापूर्वक निगंत्रित, निर्देशित और निरीक्षित करने की भी बात कही। रोयल कमीशन की रिपोर्ट के बाद १८३४ का गरीब कानून संशोधन अधिनियम पास किया गया। गरीबों से सम्बन्धित कानून में सुधार करने की बात बहुत पहले से चल रही थी।

नैपोलियन के युद्धों ने देश के आर्थिक जीवन पर एक बड़ा भार डाला और इसके परिणामस्वरूप मूल्य बढ़े। १७९५ के वसंत में इन बढ़े हुए भावों के कारण देश के विभिन्न भागों में खाद्य सम्बन्धी आन्दोलन हुए। १७९५ के बाद काउन्टी के न्यायाधीशों के द्वारा कृषक मजदूरों की रोजनदारी में एक निश्चित स्तर पर निर्धन सहायता को जोड़ना जरूरी हो गया। यह

सहायता रोटी के मूल्य और प्राप्तकर्त्ता के परिवार के आधार पर दी गई थी। १८३२ में रोयल कमीशन को गरीब कानून के प्रशासन के सम्बन्ध में जांच करने के लिये इस कारण नियुक्त किया गया क्योंकि गरीब राहत के कार्यों पर खर्चा बढ़ता जा रहा था। इस अधिनियम में सुधार हो जाने के बाद पेरिस को जो कि ऐलिजाबैथ प्रथम के शासन काल से ही गरीब कानून प्रशासन की इकाई थी, अब बदल दिया गया और उसके स्थान पर पेरिसों के संघ या समन्वय को रखा गया। इसको प्रशासित करने वाले निकाय संरक्षकों का एक निर्वाचित मंडल था जिसे कि अपना कार्य सम्पन्न करने के लिए सवैतनिक कार्य अधिकारी नियुक्त करने की शक्ति दी गई। अब तक स्थानीय सरकार के कार्यों का संचालन बहुत कुछ स्थानीय संस्था पर छोड़ दिया गया था किन्तु १८३४ के अधिनियम के द्वारा गरीब कानून आयुक्तों के रूप में एक शक्तिशाली केन्द्रीय निकाय गठित किया गया। इसे संरक्षकों के स्थानीय मंडल पर नियंत्रण की विस्तृत शक्तियां दी गई। यह आशा की गई थी कि प्रशासन के क्षेत्र को व्यापक बनाने से तथा केन्द्रीय नियन्त्रण को बढ़ाने से गरीब कानून के प्रशासन में पर्याप्त मितव्ययिता हो जायगी। यह लक्ष्य अगले कुछ वर्षों में कुछ सीमा तक पूरा हुआ। १८३४ के अधिनियम के द्वारा यह व्यवस्था की गई कि इंगलैण्ड और विल्स के प्रत्येक पेरिस या निर्धन कानून संघ में एक सुयोग्य मेडीकल व्यक्ति नियुक्त किया जाय और सन् १८३६ में जन्म, मृत्यु, शादी आदि को पंजीकृत करने के बारे में एक अधिनियम बनाया गया जिससे मृत्यु संख्या का सांख्यकीय अध्ययन सम्भव हो गया।

जिस समय रोयल कमीशन निर्धन अधिनियम से सम्बन्धित जांच के बारे में अपनी रिपोर्ट तैयार कर रहा था उसी समय बारोज के कार्यों की जांच करने के लिए एक अन्य रायल कमीशन नियुक्त किया गया। इन नगर पालिकाओं में से अधिकांश नगरपालिकाएं अब भी उन चार्टरों पर निर्भर थी जो कि हैनरी अष्टम और १६८८ की क्रान्ति के बीच में दिये गये थे। एक बारो को प्राप्त सामान्य विशेष अधिकारों में मुख्य उल्लेखनीय यह थे कि वे कामन्स सभा को अपना प्रतिनिधि भेज सकते थे बाजार खोल सकते थे, व्यापारियों पर टाल (Toll) लगा सकते थे और वे स्वयं के न्यायालय चला सकते थे। न्यायालय न्याय का प्रशासन सबसे अधिक मूल्य-वान अधिकार क्षेत्र समझा जाता था क्योंकि इसमें बारो के न्यायपालिका अधिकारी ही मामलों को तय कर सकते थे तथा न्यायालय से सम्बधित फीस या जुर्माना भी उन्हीं को प्राप्त होता था। अधिकांश बारोज में प्रशासकीय निकाय के सदस्यगण पूरे जीवन भर तक सेवा करते थे और उनके रिक्त स्थानों की पूर्ति सहवृत्ति द्वारा की जाती थी। बहुत कम बारोज को आधुनिक अर्थ में प्रजातन्त्रात्मक नगरपालिकाएं कहा जा सकता था। उनके जो सदस्य होते थे वे धार्मिक एवं राजनैतिक क्षेत्रों में कट्टर पक्षपात रखते थे। नगर-पालिकाओं के दान से सम्बन्धित प्रशासन में भी पक्षपात दिखाया जाता था। बारो के धनिकतन्त्र का सम्बन्ध मुख्य रूप से न्याय के प्रशासन निगम की सम्पत्ति के प्रबन्ध आदि से था। स्थानीय सरकार के मुख्य कार्य उदाहरण के

लिए ये थे - गरीबों को राहत पहुंचाना, सड़कों की मरम्मत करना, जीवन और सम्पत्ति की रक्षा करना आदि। ये सभी कार्य व्यक्तिगत पेरिसों के अवैतनिक पेरिस अधिकारियों द्वारा प्रयुक्त किये जाते थे जिन में प्रायः कस्बे को विभाजित किया जाता था।

अठारहवीं शताब्दी के मध्यकाल में जिन बारोज की जनसंख्या बढ़ रही थी वहां स्थानीय सरकार को कुछ अन्य महत्वपूर्ण कार्य भी सौंप दिये गये। अधिकांश नगरपालिकाएं टोरी (Tory) थीं और इसलिये ह्विग सरकार ने सुधार से सम्बन्धित विचार करने में कोई समय नहीं लगाया। १८३३ में नियुक्त रायल कमीशन में उन्नीस बैरिस्टर थे। इनमें से अधिकांश की सहानुभूति विग्ह के प्रति थी। इन्होंने पूरे देश का दौरा किया और सूचना एकत्रित की। नगरपालिकाओं से सम्बन्धित रायल कमीशन की रिपोर्ट में यह कहा गया था कि इंगलैण्ड और वेल्स में नगर निगमों के संविधान को निश्चित रूप से प्रभावित करना कठिन होगा। यह निश्चित है कि इन संस्थाओं में से अनेक की स्थापना व्यवहार में कानून द्वारा निर्धारित होने से पहले ही हो चुकी थी। आयोग यह नहीं खोज पाया कि बारोज के चुनाव क्षेत्र बनाने में किसी सामान्य सिद्धान्त को अपनाया गया है और न ही वह यह जान सका कि किसी भी काल में पूरे क्षेत्र के अन्दर नीति की या सामान्य कानून अधिकार की एक ही व्यवस्था का प्रभुत्व रहा हो। नगरपालिका निगम अधिनियम १८३५ ने दो सौ छियालीस कस्बों में से एक सौ अठहत्तर के लिये सरकार की एक जैसी व्यवस्था की स्थापना की। राजनैतिक बुराइयों को दूर किया गया, प्रशासकीय एवं न्यायिक शक्तियां पृथक-पृथक की गईं, व्यापार पर से एकाधिकार को हटाया गया, रेट देने वालों के मताधिकार को बढ़ाया गया और बारो आडिट व्यवस्था को प्रारम्भ करके वित्तीय प्रशासन को पुनर्गठित किया गया। एक विशेष निरीक्षक समिति के आधीन बारो की पुलिस शक्ति को रखा गया। १८३५ के नगर निगम अधिनियम में अनेक सुधार किये गये और अन्त में इन सब को १८८२ के नगर निगम अधिनियम में समूहीकृत कर दिया गया। १८३५ के अधिनियम ने तीन वर्ष के लिये पारषदों के निर्वाचन की व्यवस्था की। पारषदों के द्वारा ऐल्डरमेनों के निर्वाचन का भी प्रावधान रखा गया जिनकी संख्या पारषदों की संख्या का एक तिहाई थी। ऐल्डरमैन को छः वर्ष के लिए निर्वाचित किया जाता था। पहले बारो में शान्ति के न्यायाधीशों का निर्वाचन नगरपालिका द्वारा किया जाता था, बाद में इस व्यवस्था को समाप्त कर दिया गया। अधिनियम के अनुसार इनको क्राउन के द्वारा नियुक्त किया जाता था।

१८३५ के बाद स्थानीय सरकार के कार्यों का क्षेत्र बढ़ गया किन्तु अनेक नई समस्याएं पैदा हो गईं। नई सामयिक स्थानीय सत्ताएं बनाई गईं और इन्हें स्थित ढांचे पर थोप दिया गया। इस काल में स्थापित स्वास्थ्य के स्थानीय मण्डल, सड़क मंडल, स्कूल मंडल तथा स्कूल उपस्थिति समिति आदि अनेक सामयिक सत्ताएं उत्पन्न हुईं, उनके बीच क्षेत्रों एवं कार्यों की दृष्टि से अतिराव था। इन सत्ताओं की वित्तीय व्यवस्था बहुत कुछ

असमन्वित थी और इनमें से कोई भी सत्ता स्थानीय रुचि को आकर्षित करने में पर्याप्त महत्वपूर्ण नहीं थी। १८८५ में स्थानीय सरकार की बनावट के सम्बन्ध में यह ठीक ही कहा गया था कि उसमें क्षेत्रों, मताधिकार सत्ताओं और रेट की उलझनें थीं। सामयिक सत्ताओं द्वारा जो प्रशासकीय भ्रम पैदा किया गया था उसे मिटाने के लिये स्थाई स्थानीय सत्ताएं बनाई गई। १८८८ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने काउन्टी परिषदों और काउन्टी बारो परिषदों की रचना की तथा १८९४ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने शहरी एवं देहाती जिला परिषदें, पेरिस परिषदें और पेरिस बैठकें स्थापित की। १९०२ के शिक्षा अधिनियम ने शिक्षा के उत्तरदायित्वों को स्कूल मण्डलों एवं स्कूल उपस्थिति समितियों से लेकर अन्य स्थानीय सत्ता को स्थानान्तरित कर दिया। १९२९ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने गरीब कानून संरक्षकों को समाप्त कर दिया और उनके कार्यों को काउन्टी परिषदों तथा काउन्टी बारो परिषदों को हस्तान्तरित कर दिया। काउन्टी सरकार के सुधार को उस समय पूरा माना गया जबकि बारोज का पुनर्गठन कर दिया गया।

सन् १८३० के बाद शान्ति के न्यायाधीशों को काउन्टी का प्रशासक बनाने के विरुद्ध प्रतिक्रिया होने लगी; और १८३५ तक न्यायाधीशों को अनेक महत्वपूर्ण अधिकारों से वंचित कर दिया गया। न्यायाधीशों की अलोकप्रियता का मुख्य कारण यह था कि काउन्टी सरकार के लिए प्रतिनिधित्वपूर्ण रूप का भारी समर्थन किया गया। न्यायाधीशों के स्थान पर एक निर्वाचित सत्ता को लाने का प्रथम प्रयास १८३६ में किया गया किन्तु देहाती जनता की गरीबी एवं अशिक्षा के कारण यह प्रयास सफल न हो सका और वहां प्रजातन्त्रात्मक सरकार की स्थापना का कार्य अत्यन्त कठिन हो गया। फिर भी ट्रेड यूनियन वालों तथा सुधारवादी विचारकों के निरन्तर प्रयासों के परिणामस्वरूप यह भी स्पष्ट हो गया कि प्रतिनिधित्वपूर्ण मार्ग की ओर काउन्टी सरकार के सुधारों को अधिक दिन तक रोका नहीं जा सकता। १८८८ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने उन प्रशासकीय कार्यों को रेट देने वाले लोगों द्वारा चुनी गई काउन्टी परिषद को सौंप दिया गया जिनका प्रयोग पहले शांति के न्यायाधीशों द्वारा त्रैमासिक सत्रों में किया जाता था। पचास हजार से अधिक जनसंख्या वाले कस्बों को काउन्टी के नियंत्रण से बाहर कर दिया गया तथा उन्हें काउन्टी बारोज बना दिया गया। इनकी अपनी एक निर्वाचित परिषद होती थी। इन काउन्टी बारोज ने अपने क्षेत्रों में समस्त स्थानीय सरकार की सेवाओं का उत्तरदायित्व सम्भाल लिया।

स्थानीय सत्ताओं के संविधान एवं शक्तियों से सम्बन्धित सुधार— ग्रेट ब्रिटेन की स्थानीय सत्ताओं के संविधान एवं शक्तियों के क्षेत्र में समय समय पर अनेक सुधार किये गये। इस दृष्टि से महत्वपूर्ण अधिनियमों में सर्वप्रथम उल्लेखनीय १८८२ का नगर निगम अधिनियम है। १८३५ के नगर निगम अधिनियम के बाद इस समय तक बयालीस अधिनियम और पास हो चुके थे। १८८२ के अधिनियम ने उन सभी को और अन्य सभी अधिनियमों को आंशिक रूप से संयुक्त कर लिया। इस अधिनियम द्वारा तत्कालीन

स्थिति में अधिक परिवर्तन नहीं किया गया किन्तु फिर भी इसका मूल्य इस बात में निहित है कि इसने सभी अधिनियमों को समूहीकृत कर दिया। १८२६ का अधिनियम केवल उन बारोज पर लागू होता था जो कि उस अधिनियम की 'ए' और 'बी' अनुसूचियों में दिये गये थे। १८७६ में उन बारोज की जांच करने के लिए एक रायल कमीशन नियुक्त किया गया, जिनका कि सुधार नहीं हुआ था। इस आयोग ने सौ से भी अधिक ऐसे कस्बों को खोजा जिन पर कि १८३५ का अधिनियम लागू नहीं होता था। इनमें से ७४ पर अधिनियम के प्रावधान लागू किये जा सकते थे और ३२ को बारोज के लिए उपयुक्त नहीं समझा गया। १८८२ के नगर निगम अधिनियम ने इन प्रस्तावों को क्रियान्वित किया और बारो सरकार की एक जैसी व्यवस्था की स्थापना की।

दूसरा उल्लेखनीय अधिनियम १८८८ का स्थानीय सरकार अधिनियम था। इस अधिनियम ने स्थानीय सरकार और बोर्ड के इतिहास में एक नये युग का प्रारम्भ किया। इस अधिनियम के द्वारा शांति के न्यायाधीशों की प्रशासकीय सत्ता निर्वाचित निकायों को देने के अतिरिक्त और भी कई महत्वपूर्ण कार्य किये गये। इसने सरकारी कोष और स्थानीय सत्ताओं के बीच वित्तीय प्रबन्धों का पुनर्गठन किया। काउन्टी परिषदों को यह शक्ति दी गई कि वे अपने कार्यों को सम्पन्न करने की शक्ति को समितियों अथवा आन्तरिक स्थानीय सत्ताओं को हस्तान्तरित कर सकें। काउन्टी-कान्सटेबलों का नियंत्रण काउन्टी परिषदों को नहीं सौंपा गया। इसे एक स्थायी संयुक्त समिति के हाथों में रखा गया जिसमें कि त्रै-मासिक सत्र द्वारा नियुक्त न्यायाधीश होते थे तथा काउन्टी परिषद द्वारा नियुक्त पारषद होते थे। दोनों की संख्या को बराबर रखा गया। राजधानी प्रदेशों पर लागू करते समय इस अधिनियम को संशोधित कर दिया गया। यह प्रावधान रखा गया कि लण्डन में अलग से एक नगराधिप हो, एक शांति का आयोग हो, एक त्रै-मासिक सत्र न्यायालय हो और एक सवैतनिक सभापति हो। वैस्ट्री तथा जिला बोर्डों को अप्रभावित छोड़ दिया गया और इन पर १८६६ के लंदन सरकार अधिनियम में विचार किया गया।

एक तीसरा महत्वपूर्ण अधिनियम १८६४ का स्थानीय सरकार अधिनियम था। इस अधिनियम का उद्देश्य उन प्रस्तावों को प्रभावपूर्ण बनाना था जो कि १८८८ के अधिनियम में रखे गये थे। इसके द्वारा काउन्टी जिलों में देहाती एवं शहरी जिला परिषदों की स्थापना की गई। इस अधिनियम को किसानों का चार्टर भी कहा जाता है, क्योंकि इसके द्वारा पेरिस मिटिंग एवं परिषदों की व्यवस्था करके प्रजातंत्रात्मक स्थानीय सरकार का प्रचार किया गया। देहाती पेरिसों में यह प्रावधान रखा गया कि प्रत्येक पेरिस मीटिंग बुला सके जो कि उस पेरिस के मतदाताओं की सभाएं होती थीं। अधिक जनसंख्या वाले पेरिसों में यह व्यवस्था की गई कि पेरिस परिषदों का निर्वाचन किया जाय और उन्हें पेरिस मीटिंगों की शक्तियां सौंपने के अतिरिक्त कुछ शक्तियां और दी जायं। स्थानीय सरकार के रूप एवं शक्तियों में सुधार की दृष्टि से १८६६ का लंदन सरकार अधिनियम भी महत्वपूर्ण है।

इस अधिनियम का उद्देश्य यह था कि अनेक वैस्ट्रियों एवं जिला बोर्डों के स्थान पर कुछ स्थानीय सत्ताएं बनाई जायं जो कि स्थानीय सरकार के आधुनिक सिद्धान्तों के अनुरूप हों। लंदन को अठाईस राजधानी बारोज में विभाजित किया गया। नयी बारो परिषदों का संविधान उन्हीं सिद्धान्तों पर आधारित था जिन पर कि प्रान्तीय बारो परिषद निर्भर थी किन्तु इनमें कुछ अन्तर था। एल्डरमैन की संख्या पारषदों की संख्या का छटा भाग कर दी गई। परिषद में अधिक से अधिक दस एल्डरमैन और साठ पारषद हो सकते थे। पारषद में से एक-तिहाई प्रतिवर्ष सेवा निवृत्त हो जाते थे। लंदन, सूरे, केन्ट, एसक्स, मिडिल सैक्स आदि की काउन्टी परिषदों को लंदन क्षेत्र में किसी भी परिवर्तन को सुनने की शक्ति दी गई। क्षेत्र के अन्दर एवं बीच में आने वाले मंदिरों को नगर के अन्तर्गत ही माना गया। १८०२ में शिक्षा अधिनियम पास किया गया और स्कूल बोर्डों तथा स्कल उपस्थिति समितियों को समाप्त कर दिया गया। १८२९ के स्थानीय सरकार अधि-नियम ने संरक्षकों की बोर्ड को समाप्त कर दिया और इस प्रकार स्थानीय सरकार के संगठन का कार्य सम्पन्न किया गया।

लंदन सरकार अधिनियम १८९९ के द्वारा लंदन काउन्टी परिषद को अनेक कार्यों के लिए उत्तरदायी ठहराया गया जैसे शिक्षा, कल्याण, वित्तीय स्वास्थ्य, नियोजन, बच्चों की देखभाल, अग्नि रक्षा, गृह निर्माण, गंदी बस्तियों की सफाई, बड़े पार्क, मुख्य नालियां और सार्वजनिक नियंत्रण के अनेक कार्य आदि। राजधानी बारोज को जो उत्तरदायित्व सौंपे गये वे थे गृह निर्माण, जन-स्वास्थ्य, पुस्तकालय, मनोरंजन, सड़कें एवं सार्वजनिक कार्य, छोटे खुले मैदान आदि। इन्हीं के द्वारा रेट (कर) लगाये जाते थे। ये अपने अधिमानों में लंदन काउन्टी परिषद की आवश्यकताओं का अनुमान लगा लेते थे। लंदन क्षेत्र में सामान्यत: लंदन सरकार के इलाके में आने वाली सेवाओं पर विशेष प्रबन्ध किये जाते थे। राजधानी की पुलिस शक्ति का उत्तरदायित्व गृह सचिव पर होता था और इसे क्राउन द्वारा नियुक्त आयुक्त द्वारा आन्तरिक रूप से प्रशासित किया जाता था। लगभग पंद्रह मील के घेरे पर तथा आठ मिलियन जनसंख्या पर इसका अधिकार था।

इसके अतिरिक्त लंदन सत्ता का बंदरगाह (The Port of London Authorities), थेम्स की बोर्ड (The Thames Conservancy Board), लंदन यातायात कार्यपालिका (London Transport Executive), राजधानी जल बोर्ड (The Metropolitan Water Board) आदि विभिन्न सत्ताएं लंदन के प्रशासन से सम्बन्धित कार्य करने लगीं। लंदन की स्थानीय सरकार साठ साल से भी अधिक समय तक अपरिवर्तनशील बनी रही। इस समय में परिवर्तन एवं प्रसार की प्रक्रिया जारी रही। जनसंख्या बहुत बड़ी मात्रा में अर्द्ध शहरी इलाकों की ओर बसने लगी। सड़क और रेल के यातायात ने इस प्रक्रिया को सहारा दिया किन्तु जब सड़कों पर खतरनाक रूप से भीड़ रहने लगी और रेलों के द्वारा बढ़ती हुई आवश्यकताओं को पूरा नहीं किया गया तो उद्देश्य पूरा न हो सका। जब राजधानी का प्रसार हो गया तो लंदन काउन्टी परिषद का क्षेत्र अवास्तविक बन गया। बीसवीं शताब्दी के

मध्य में विशाल लंदन क्षेत्र की स्थानीय सरकार का उत्तरदायित्व अनेक सत्ताओं को दिया गया। इनमें छ: काउन्टी, तीन काउन्टी बारो, अठाईस राजधानी क्षेत्र बारोज तथा अनेक गैर–काउन्टी बारो और शहरी जिले थे। एक रायल कमीशन ने इस व्यवस्था में परिवर्तन के लिए अनेक सुझाव प्रस्तुत किये। इन सिफारिशों को बहुत कुछ स्वीकार कर लिया गया और १८६३ के लंदन सरकार अधिनियम में इन्हें मान लिया गया जिसके अनुसार विशाल लंदन परिषद् की स्थापना की गई और ३२ बारोज बनाये गये। लंदन नगर को पुनर्गठित नहीं किया गया किन्तु केवल नयी व्यवस्था में संयुक्त कर लिया गया। एक सामान्य परिषद् लंदन बारो के कार्यों का निर्वाह करती है। विशाल लंदन की सामान्य आवश्यकताओं एवं सेवाओं का उत्तरदायित्व विशाल लंदन की परिषद् को सौंपा गया।

बीसवीं शताब्दी में स्थानीय सरकार—स्थानीय सत्ताओं से सम्बन्धित कानूनों को सरलीकृत करके उनकी बनावट में पुनर्गठन किया गया। बीसवीं शताब्दी में स्थानीय सरकार से सम्बन्धित जो अधिनियम पारित किये गये उनका विवरण क्लार्क महोदय द्वारा दिया गया है। इनमें से मुख्य निम्न प्रकार हैं :—

शिक्षा अधिनियम (१९०२ से १९२१ तक)—सन् १९०२ में मि० बालफर का शिक्षा अधिनियम पारित हुआ। इसने स्कूल बोर्डों एव स्कूल उप-स्थिति समितियों को समाप्त कर दिया और शिक्षा के नियन्त्रण को नयी स्थानीय शिक्षा सेवाओं को हस्तान्तरित कर दिया गया। उच्च शिक्षा से सम्बन्धित सभी विषयों के लिए काउन्टी तथा काउन्टी बारो परिषदों को उत्तरदायी बनाया गया। प्राथमिक शिक्षा के लिए शहरी जिला परिषदें उत्तरदायी बनाई गई। कुछ मामलों में काउन्टी तथा काउन्टी बारो परिषदों को सभी प्रकार की शिक्षा के लिए उत्तरदायी बनाया गया। स्थानीय शिक्षा सत्ता ने एक शिक्षा समिति नियुक्त करदी थी जो कि शिक्षा मण्डल द्वारा स्वीकृत प्रशासन के कार्यक्रम के अनुरूप होती थी। जो व्यक्ति परिषद् के सदस्य नहीं होते थे उनको भी समिति में नियुक्त किया जा सकता था किन्तु समिति में बहुमत परिषद् के सदस्यों का ही होता था। १९०२ से १९१४ तक शिक्षा सम्बन्धी विकास के क्षेत्र में विशेष सेवाएं सामने आयीं। १९०६ में स्थानीय शिक्षा सत्ताओं को यह शक्ति दी गई कि वे जरूरतमन्दों के लिए भोजन का प्रबन्ध कर सकें। १९०७ में उन्हें विद्यार्थियों के स्वास्थ्य एवं सुन्दर जीवन के लिये प्रयास करने की शक्ति भी दी गई। वे खेल के केन्द्र, स्कूल के स्नानगृह एवं बगीचे, कैम्प, वजीफे देना आदि कार्यों से सम्बन्धित कर दिये गये। मेडीकल देखभाल का कर्तव्य भी उन पर डाल दिया गया। १९१० में उन्हें व्यवसायिक निर्देशन देने का प्रबन्ध किया गया। मानसिक कमजोरी अधि-नियम १९१३ के अन्तर्गत उन्हें यह शक्ति दीगई कि सात साल से ऊपर वाले ज छात्र मानसिक रूप से कमजोर हो उनकी सोलह वर्ष तक अलग प्रकार : खभाल की जाय। १९१९ के पुस्तकालय अधिनियम द्वारा यह प्रावधान रखा गया कि काउन्टी बारों के बाहर यदि अधिनियम को लागू किया जाये त ऐसा काउन्टी की परिषदों द्वारा ही किया जा सकता है। १९२१ के

शिक्षा अधिनियम ने संसद के लगभग बाईस अधिनियमों को एकीकृत कर दिया।

स्थानीय सरकार अधिनियम, १९२९—इस अधिनियम का उद्देश्य स्थानीय सरकार की तत्कालीन व्यवस्था में सुधार करना था। इसने संरक्षकों के मंडल को समाप्त कर दिया और उसके कार्यों को काउन्टियों की परिषदों तथा काउन्टी बारोज को सौंप दिया। इसके अतिरिक्त निर्धन कानून संघों को भी मिटा दिया गया। इस प्रकार का प्रावधान रखा गया कि शिक्षा, मानसिक कमजोरी, अस्पताल, बालकल्याण आदि से सम्बन्धित निर्धन कानून को भविष्य में हस्तान्तरित किया जा सके।

निर्धन कानून अधिनियम, १९३०—निर्धन कानून व्यवस्थापन को एकीकृत करने का कार्य १९२७ के निर्धन कानून अधिनियम द्वारा किया गया। १९२९ के अधिनियम द्वारा कई मौलिक परिवर्तन किये गये क्योंकि १९२७ के अधिनियम ने कई बातों को अधूरा छोड़ दिया था और उन्हें एकीकृत किया जाना जरूरी था।

स्थानीय सरकार अधिनियम, १९३३—सन् १९३० में स्वास्थ्य मंत्री द्वारा स्थानीय सरकार और जन-स्वास्थ्य को एकीकृत करने वाली समिति नियुक्त की गई। इस समिति के प्रयासों के परिणामस्वरूप यह अधिनियम पास हुआ। यह समिति स्थानीय सरकार पर रायल कमीशन के अध्ययन के परिणामस्वरूप नियुक्त की गई थी। इस आयोग ने यह सिफारिश की थी कि एकीकरण का कार्य शीघ्र ही हाथ में लिया जाय। यह अधिनियम सामान्यत: लंदन पर लागू नहीं होता था।

जन-स्वास्थ्य अधिनियम, १९३६—यह अधिनियम स्थानीय सरकार और जन-स्वास्थ्य एकीकरण समिति की दूसरी अन्तरिम रिपोर्ट के बाद पास किया गया। इस रिपोर्ट के साथ ही स्वास्थ्य मंत्री ने जन-स्वास्थ्य विधेयक का प्रारूप भी जनवरी १९३६ में संसद के सम्मुख प्रस्तुत किया।

गृह निर्माण अधिनियम, १९३६—इससे पूर्व गृह निर्माण के क्षेत्र में पास किये गये अधिनियम १९२५ में एकीकृत कर लिये गये थे और बचे हुए अधिनियमों को १९३६ में एकीकृत कर लिया गया।

स्थानीय सरकार की सेवाओं का इतिहास
[The History of Local Government Services]

स्थानीय सरकार द्वारा व्यक्तिगत या सामूहिक रूप से जो सेवाएं सम्पन्न की जाती हैं वे सामाजिक एवं आर्थिक नीतियों पर आधारित रहती हैं। इनको स्पष्टत: समझने के लिए इनकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को समझना जरूरी है। स्थानीय सरकार की जो सेवाएं इस समय प्राप्त होती हैं उनमें से अधिकांशत: तुलनात्मक रूप से नयी हैं किन्तु कई एक उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भिक भाग में पैदा हुई हैं। यह कहा जा सकता है कि वे पूर्णत: औद्योगिक क्रांति के परिणाम हैं। कुछ सेवाएं ऐसी भी हैं जैसे-बाजारों की व्यवस्था या जल वितरण का कार्य आदि जो कि मध्य युग से ही चली आ रही हैं, कन्तु औद्योगिक क्रान्ति के बाद अनेक नयी सेवाओं की आवश्यकता हुई योंकि इस यान्त्रिक युग में रहन-सहन के नये तरीकों के अनुसार इन

सेवाओं का होना जरूरी था। औद्योगिक युग के प्रारम्भिक समय में स्थानीय सत्ताओं की सेवाएं दो विरोधी मार्गों पर विकसित हुई। सर्वप्रथम एक औद्योगिक सभ्यता की कुछ अपनी आवश्यकताएं होती हैं जिनके अनुसार वह सरकारी सेवाओं की मांग करती है। उदाहरण के लिए प्रतियोगी व्यक्तिगत उद्यम उस समय तक कार्य नहीं कर सकते जब तक कि राज्य द्वारा जीवन और सम्पत्ति की सुरक्षा का प्रबन्ध न किया जाय।

इसके अतिरिक्त उत्पादन की गति को तेज करने के लिए प्रकाश, अच्छी गतियां आदि उपयुक्त दशाएं प्रदान करना भी जरूरी था। जब औद्योगिकरण के परिणामस्वरूप बड़े आकार के शहर बनने लगे तो इन स्थानों पर सफाई सेवाओं की आवश्यकता अत्यन्त महत्वपूर्ण बन गयी। गरीब हों चाहे धनवान, समाज के हर व्यक्ति का अस्तित्व स्थित रहने लगा कि उसे सफाई की सेवाएं पर्याप्त मात्रा में प्रदान की जा रही हैं या नहीं। नगरपालिका सेवाओं की स्थापना की एक दूसरी प्रेरणा उन सामाजिक बुराइयों की प्रतिक्रिया से प्राप्त हुई जो कि औद्योगिकरण के परिणामस्वरूप उत्पन्न हुई थी और व्यक्तिवादी आर्थिक सिद्धान्तों के फलस्वरूप जिनका प्रसार हुआ था। यह प्रतिक्रिया उन्नीसवीं शताब्दी तक बनी रही। इसके परिणामस्वरूप अनेक सामाजिक सेवाएं उत्पन्न हुई–इनमें से कुछ को राज्य के हाथों में सौंपा गया और कुछ को स्थानीय सत्ताओं को दिया गया। इस प्रकार की सेवाओं की स्थापना के लिए पहल प्राय: स्थानीय सत्ताओं द्वारा की गई और निर्धन कानून तथा स्थानीय व्यक्तिगत अधिनियमों के सहारे उन्होंने अनेक प्रयोग किये। संसद ने बाद में इस प्रयोग को मान्यता दी और इन सामाजिक प्रयासों को राष्ट्रीय स्तर प्रदान किया। आज ये सामाजिक सेवाएं विशुद्ध रूप से स्थानीय सरकार की ही विषय रही हैं।

व्यक्तिवादी विचारधारा के विरुद्ध जो प्रतिक्रिया हुई उसके परिणामस्वरूप स्थानीय सरकार की सेवाओं में एक नयी श्रेणी और जुड़ गई जिसे व्यापारिक सेवाएं कहा जा सकता है। इनमें जल-वितरण, गली-यातायात आदि को लिया जा सकता है। ये उद्यम चाहे व्यक्तिगत हाथों में रहें अथवा कम्पनी के हाथों में, ये आर्थिक उद्यम होते हैं; इनको सार्वजनिक उपयोगिता के उद्यम भी कहा जा सकता है। इस प्रकार की सेवाओं का इतिहास उस समय प्रारम्भ होता है जब कि औद्योगिक क्रान्ति वाले नये नगरों के लिए गैस तथा जल पहुंचाने का प्रबन्ध किया गया। व्यक्तिवादी आर्थिक विचारधारा से प्रभावित होने के कारण ये क्षेत्र व्यक्तिगत उद्योगों के लिए भी खुले छोड़ दिये गये। इसके परिणामस्वरूप एक ही गली में तीन या चार प्रतियोगी कम्पनियां बन जाती थीं। यह प्रक्रिया इतनी अपव्ययपूर्ण रही कि व्यक्तिवादी आर्थिक सिद्धान्त को इस क्षेत्र से वापस खींचना पड़ा। इस प्रकार की प्रतियोगिता होने पर सेवाओं के मूल्य लागत से थोड़े ही ज्यादा हो पाते थे। इस प्रतियोगिता का उस समय तक अन्त नहीं था जब तक कि अधिक सम्पत्ति वाली कम्पनी इस प्रकार एकाधिकार न करले। प्रतियोगिता के परिणामस्वरूप शीघ्र ही संयोग हुआ और स्थानीय एकाधिकार हो गया। इन सेवाओं का अन्तिम पहलू वह था जब कि उपभोक्ताओं ने स्थानीय सत्ताओं के माध्यम

से संसद के एकाधिकार को विनियमित करने के लिए वाध्य किया। व्यक्तिगत अधिनियमों से उन्होंने कम्पनियों को खरीदने की शक्ति प्राप्त करली और उन्हें स्वयं ही संचालित किया। युद्धोत्तर राष्ट्रीयकरण की दिशा में किये जाने वाले प्रयासों में नगरपालिका का एवं कम्पनी के गैस तथा विद्युत उद्योगों को एकीकृत कर दिया गया और इन्हें राज्य के स्वामित्व एवं संचालन में ला दिया गया। इस समय स्थानीय व्यापार सेवाओं का क्षेत्र पहले की अपेक्षा संकीर्ण है।

स्थानीय सरकार की सेवाओं का विकास
[The Development of Local Government Services]

प्रारम्भ में स्थानीय सरकार को मुख्य रूप से नियमन कार्य शक्तियों एवं पुलिस अधिकार प्राप्त थे; किन्तु जब स्थानीय सरकार की इकाइयों में सुधार किया तो उनका कार्य क्षेत्र भी बदला। जब संशोधित नगरपालिका बारो का संगठन हुआ तो उसको प्रजातन्त्रात्मक रूप से नवनिर्वाचित बारो परिषदों का मुख्य कार्य प्रशासन का सौंपा गया। वे निरीक्षकों की समिति द्वारा और नयी पुलिस सत्ता द्वारा इस कर्त्तव्य को पूरा कर सकते थे। यह कहा जाता है कि प्रारम्भ में स्थानीय सरकार के कार्य केवल पुलिस कार्य ही नहीं थे वरन् महारानी ऐलीजाबेथ के समय से ही चले आ रहे निर्धन कानून के अंतर्गत जो सेवाएं सम्पन्न की जाती थी वे पुलिस सेवाएं नहीं थी। यह कहना यद्यपि कुछ सत्यता रखता है किन्तु असल में इन सेवाओं का प्रारम्भिक रूप भी सामाजिक सहायता या मानवता की भावना से प्रेरित होने की अपेक्षा अनुशासनात्मक अधिक था। बाद में नगरपालिका प्रशासन के क्षेत्र में किये गये विकासों ने इसे मानवीय बनाया।

स्थानीय सरकार की सेवाओं का प्रसार सर्वप्रथम उस समय प्रारम्भ हुआ जब कि कस्बे की सफाई के लिए मि० चाडविक और साइमन [Chadwick & Simon] के नेतृत्व में आन्दोलन छेड़ा गया। परिणामस्वरूप १८४८ का जन स्वास्थ्य अधिनियम पारित किया गया। १८६९ के सफाई आयोग ने इस विषय पर कानून बनाने के लिए ध्यान आकर्षित करने को कहा। अगले कुछ वर्षों में इस दिशा में अनेक प्रयास किये गये। १८७५, १८९०, १९०७, १९२५ और १९३६ में जनस्वास्थ्य से सम्बन्धित व्यवस्थापन किया गया। शहर की सफाई के लिए छेड़े गये आन्दोलन की भांति सार्वजनिक शिक्षा से सम्बन्धित आन्दोलन भी पर्याप्त प्रभावपूर्ण रहा। इस सेवा के लक्ष्य अनेक प्रकार के होते हैं; इनको आंशिक रूप से साम्प्रदायिक और सामाजिक सेवा कहा जा सकता है। प्रारम्भ में मजदूर वर्ग को स्वेच्छापूर्ण संस्थानों द्वारा शिक्षा प्रदान की जाती थी। स्वेच्छापूर्ण शिक्षा व्यवस्था की जड़ें पर्याप्त गहरी जम गई और कई शताब्दियों तक शिक्षण की नीति को दी जाने वाली सहायता के प्रसार से सम्बन्धित रखा गया। सन् १९०२ के शिक्षा अधिनियम ने यह बताया कि स्वेच्छापूर्ण स्कूलों को कुछ सहायता अवश्य दी जानी चाहिए। सन् १९४४ के शिक्षा अधिनियम द्वारा भी स्वेच्छापूर्ण शिक्षा व्यवस्था को बनाये रखा गया यद्यपि उसमें अनेक परिवर्तन कर दिये गये।

शिक्षा सेवाओं के अतिरिक्त सामाजिक चेतना एवं मजदूर वर्ग के दबावों ने भी सामाजिक सेवाओं को जन्म देने के लिए आन्दोलन चलाया। इसके परिणामस्वरूप वर्तमान शताब्दी में अनेक सेवायें पैदा हुई। सन् १८६० में जब गृह-निर्माण अधिनियम पास किया गया तो गृह-निर्माण के क्षेत्र में सेवाओं का प्रारम्भ हुआ। प्रथम विश्व युद्ध के बाद कई एक कारणों से मजदूर के लिए घरों की समस्या मुख्य बन गई। इस सम्बन्ध में संसद द्वारा अनेक अधिनियम पास किये गये। वर्तमान शताब्दी में ही अनेक ऐसी मेडीकल सेवाओं का प्रारम्भ हुआ जिनका मूल उद्देश्य समाज की रक्षा करना नहीं था वरन् व्यक्ति का कल्याण करना था। छूत की बीमारियों पर नियंत्रण के सम्बन्ध में १८७५ में अधिनियम बनाया गया और उसके बाद स्कूलों की मेडीकल सेवा गर्भवतियों एवं बालकों के कल्याण के लिए व्यवस्था आदि के सम्बन्ध में व्यवस्थापन किये गये। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में गैस, जल, विद्युत एवं गली-यातायात का नगरपालिकीकरण कर दिया गया। गैस और जल के क्षेत्रों में नगरपालिका सेवाएं व्यक्तिगत उद्यमों को समाप्त करने के बाद स्थापित हुईं। जल-वितरण का कार्य बहुत कुछ स्थानीय सत्ताओं के हाथ में आ गया।

नगरपालिका द्वारा नागरिकों को प्रदान की जाने वाली विभिन्न सेवाओं को मुख्य रूप से चार भागों में विभाजित किया जा सकता है। नगरपालिका सेवाओं के विकास के सम्बन्ध में यह कहा जाता है कि इनमें औद्योगिक क्रान्ति के बाद से सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक शक्तियों का प्रभाव प्रतिबिम्बित होता है। यही कारण है कि इन सभी को एकरूप नहीं माना जा सकता। एक सेवा के सम्बन्ध में व्यवस्थापिका ने जो रुख अपनाया वह दूसरी सेवा के सम्बन्ध में अपनाये गये रुख से भिन्न था। संसद ने स्थानीय सत्ताओं द्वारा इन सेवाओं के संचालन के लिए जो नियम बनाये वे भी एक जैसे नहीं थे। विभिन्न सेवाओं को जिन समूहों में बांटा जा सकता है वे हैं—सुरक्षात्मक सेवाएं, सामुदायिक सेवाएं, सामाजिक सेवाएं एवं व्यापारिक सेवाएं।

सुरक्षात्मक सेवाओं (Protective services) में पुलिस सेना तथा अग्निरक्षा सेवा को लिया जा सकता है। इनके अतिरिक्त इसमें वह विनियमन कार्य एवं निरीक्षणात्मक कार्य भी आता है जो कि इनके द्वारा सफाई, भवन विनियमन, खाद्य वितरण का नियंत्रण, माप और तौल का निरीक्षण तथा ऐसे ही अन्य कार्यों से सम्बन्ध रखता है। पुलिस सेवाओं एवं अग्नि-रक्षक सेवाओं के लिए शर्तें राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित की जाती हैं किन्तु इन शर्तों को स्थानीय सत्ताओं द्वारा क्रियान्वित किया जाता है। इन दोनों सेवाओं के व्यय का एक भाग राज्य द्वारा विनिमय किया जाता है और दूसरे भाग के लिए स्थानीय सत्ताएं अपने राजस्व में से प्रबन्ध करती हैं। अन्य सुरक्षात्मक सेवाओं के संचालन का व्यय सामान्यतः स्थानीय सत्ताओं पर ही पड़ता है और वे इनका प्रशासन करने में पूरी तरह से स्वतंत्र रहती हैं। इस सम्बन्ध में उन पर केन्द्रीय पर्यवेक्षण नहीं रहता। इसी प्रकार की सेवाएं सामुदायिक सेवाएं (Communial services) हैं। इनको सामुदायिक

सेवा इसलिए कहा जाता है क्योंकि इन सेवाओं की सभी स्थानीय निवासियों को आवश्यकता रहती हैं। ये सेवाएं उन सभी की सेवा करती हैं और सभी निवासियों द्वारा सामूहिक रूप से इनका भुगतान किया जाता है। राज्य द्वारा केवल कुछ सड़कों के सम्बन्ध में अनुदान दिया जाता है। देहाती सफाई के सम्बन्ध में अनुदान दिया जाता है, इसके अतिरिक्त अन्य सभी सेवाएं वहां के निवासियों द्वारा ही प्रबन्धित की जाती हैं। इन सेवाओं में हम सार्वजनिक सफाई, सार्वजनिक प्रकाश, नालियों की व्यवस्था, गलियों और सड़कों की व्यवस्था आदि को ले सकते हैं। इन सेवाओं के स्थानीय जनता द्वारा प्रबन्ध का एक ऐतिहासिक कारण है। ये सेवाएं शहरी जीवन की आवश्यक दशाओं को उत्पन्न करती हैं। ये प्राय: स्वेच्छापूर्ण संस्थाओं द्वारा प्रारम्भ की गई थीं, बाद में नगरपालिका क्षेत्र में ज्यों ज्यों विकास हुए इन सेवाओं की स्वेच्छापूर्ण प्रकृति को बनाये रखा गया।

प्रारम्भ में इन सेवाओं का प्रबन्ध करने के लिए प्रमुख व्यक्तियों की संस्थाएं बनादी जाती थीं। ये प्रमुख व्यक्ति नगर–आयुक्त बन जाते थे और दी जाने वाली किसी विशेष सेवा के लिए रेट (कर) लगाने की शक्ति रखते थे। रेट को इसलिए रखा जाता था क्योंकि किए गये खर्चे को सही-सही आंकना बड़ा कठिन होता है; क्योंकि वह वास्तविक सम्पत्ति जिसका कि मूल्यांकन किया जाता है और जिसके ऊपर रेट आधारित रहती है वह उपभोक्ता द्वारा उपयुक्त की गई एवं उसके द्वारा चुकाये गये मूल्य, दोनों में अनुपात हो जाता है। ये सेवाएं उन पड़ोसियों के लिए प्रदान नहीं की जाती थीं जो इनका खर्चा सहन नहीं करते थे किन्तु उनके लिए प्रदान की जाती थीं जो इनका भार वहन कर सकते थे। उस समय औद्योगिक क्रान्ति के नये कस्बों के अधिकांश निवासी अत्यन्त गरीब होते थे और वे इन आरामदायक सुविधाओं को सहन नहीं कर सकते थे। धीरे-धीरे इस प्रकार की सेवाओं को पूरे कस्बे में संचालित करने की नीति बन गई। स्थानीय सरकार का ज्योंही विकास हुआ उसने इन सेवाओं पर लगाये गये अनेक रेटस को एक ही सामान्य रेट में समूहीकृत कर दिया। इन सेवाओं को सामुदायिक सेवाएं इसलिए भी कहा जा सकता है क्योंकि समाज द्वारा प्रत्येक व्यक्ति की आवश्यकता के अनुसार उनकी सेवा की जा रही है और व्यक्ति बदले में अपनी भुगतान करने की योग्यता के अनुसार भुगतान कर रहा है। एक बार स्थानीय अधिकार में दे देने के बाद इन सेवाओं का उत्तरदायित्व स्थानीय संस्थाओं पर ही आ जाता है और वे ही इन्हें अपनी इच्छानुसार प्रदान करती हैं। इनकी मात्रा भी स्थानीय आवश्यकता के अनुसार तय होती है। शहर से दूर के प्रदेशों में सेवाओं की इतनी आवश्यकता नहीं होती। पूर्णतया देहाती इलाकों में प्रकाश की सेवा की आवश्यकता हो सकती है किन्तु वहां नालों की व्यवस्था इतनी महत्वपूर्ण नहीं होती।

सेवाओं के तीसरे समूह को सामाजिक सेवाएं कहा जा सकता है। इसमें शिक्षा सम्बन्धी सेवाओं से मिलती–जुलती सेवाएं आती हैं। गृह-निर्माण, बाल कल्याण तथा अन्य कल्याणकारी सेवाएं जैसे गूंगे, बहरे, अंधों एवं वृद्धों की रक्षा आदि। इस प्रकार की सेवाओं द्वारा जनता के एक बड़े

के शब्दों में इस देश में स्थानीय सरकार हमारी परम्पराओं में गहरी जड़ जमा चुकी है और हमारे प्रजातंत्र की रचना का यह एक भाग है।*

स्थानीय सरकार और राष्ट्रीय सरकार का एकीकरण

(The Integration of Local Govt. and National Government)

स्थानीय सरकार महत्वपूर्ण है। यह समय की आवश्यकता और स्थानीय जनता की उपयोगिता की दृष्टि से अपरिहार्य है। इतना होने पर भी इसकी कुछ अपनी समस्याएं एवं कठिनाइयाँ हैं। स्थानीय संस्थाओं में व्यवहार करते समय वहां के लोगों का दृष्टिकोण अपनी स्थानीय सीमाओं में संकुचित हो जाता है और वे आगे की बात कम सोच पाते हैं। उनके विचार का स्वरूप मुख्य रूप से तात्कालिक परिणाम एवं स्थानीय आवश्यकताएं रहती हैं। अपने क्षेत्र की जरूरतों के बारे में सोचते-सोचते तथा उनको पूरा करने के लिए प्रयास करते-करते उनका दृष्टिकोण इतना संकुचित हो जाता है कि वे समस्याओं पर व्यापक एवं राष्ट्रीय दृष्टिकोण से विचार नहीं कर पाते। कई बार राष्ट्रीय सरकार के हित, स्थानीय आवश्यकताओं एवं मूल्यों से टकराते हैं। इस प्रक्रिया से देश का सामान्य विकास तो रुकता ही है किन्तु साथ ही देशप्रेम एवं राष्ट्रभक्ति की भावनाएं भी एक सीमा तक मर्यादित होती हैं। राष्ट्रीय सरकार एवं स्थानीय निकायों के बीच अनेक बातों को लेकर मनमुटाव पैदा हो जाता है। उदाहरण के लिये आकार और क्षेत्र का औचित्य, वित्त कार्यों का प्रसार तथा स्थानीय प्रशासन का सामान्य स्तर आदि पर विचार करते समय यह मनमुटाव और भी बढ़ जाता है।

स्थानीय निकायों में कार्य करने वाले पारषद एवं अधिकारी लोग भी इस विरोधपूर्ण स्थिति से सजग रहने की अपेक्षा अधिक संदेहशील बन जाते हैं। वैसे यदि देखा जाय तो स्थानीय सरकार और राष्ट्रीय सरकार की कार्य-विधि में कोई स्पष्ट विभाजित रेखा नहीं है इसलिए उनमें मनमुटाव या भेद-भाव उत्पन्न नहीं होना चाहिए। सरकार के दोनों स्तरों में वे ही नागरिक होते हैं, उनका अन्तिम लक्ष्य एक जैसा होता है अर्थात् राष्ट्र को ऐसा बनाना जहां पर कि अच्छा जीवन पनप सके। स्थानीय सरकार को जिन स्थानों से सम्बन्ध रखना होता है वे साधारण रूप से प्रदेश या क्षेत्रीय नहीं हैं वरन् ऐसे स्त्री और पुरुषों के समूह जो कि पड़ौसियों की तरह से रह रहे हैं और यह अनुभव करते हैं कि केन्द्रीय सरकार के शासन में रहने वाले अन्य लोगों से वे कुछ भिन्न हैं और इसलिए वे अपनी वास्तविक आवश्यकताओं एवं अपने विचारों के अनुरूप एक जैसे नियम बनाने की स्वेच्छा का दावा करते हैं। कई बार जब स्थानीय कार्यों में अव्यवस्था होने लगती है तो उन्हें राष्ट्रीय सरकार द्वारा सम्भाल लिया जाता है और दूसरे अवसरों पर जब राष्ट्रीय सरकार कुछ असुविधा का अनुभव करती है तो वह अपने कार्य

---

* "Local Government in this country is firmly rooted in our traditions and forms part of the frame-work of our democracy."

—*Clarke*, Op. Cit. Page 57.

स्थानीय सत्ताओं को सौंप देती है। सन् १९४७ में कार्य से सम्बन्धित मंत्रालय के गृह निर्माण के कार्यों की सभी लाइसेन्स देने की शक्तियां स्थानीय निकायों को हस्तान्तरित करदी गई थीं, क्योंकि स्थानीय सरकार यथा-स्थान होने के कारण कालाबाजारी को रोकने में अधिक योग्य रहती है और लाइसेंस से सम्बन्धित शक्तियों का दोहरे रूप से उत्पन्न भ्रम भी पैदा नहीं होने पाता।

आजकल कई कारणों से केन्द्रीयकरण की ओर प्रवृत्ति बढ़ रही है, क्योंकि जब हम व्यवस्था की स्थापना करना चाहते हैं तो इसके लिए एक जैसे नियम बनाने होते हैं, ऐसे नियम बनाने की शक्ति केन्द्रीय संसद को प्रदान करनी होती है। तथा केन्द्रीय नागरिक सेवा और न्यायालय भी धीरे-धीरे महत्व में आने लगते हैं इससे केन्द्रीय प्रवृत्ति प्रारम्भ हो जाती है। आधुनिक राज्य को जो विभिन्न प्रकार की क्रियाएं सौंपी गई हैं और प्रत्येक विशेष शाखा में जो उसकी रुचि जागृत की गई है उसके कारण केन्द्रीय सरकार को खतरा बढ़ गया है; इसकी प्रतिक्रियास्वरूप स्थानीय सरकार स्वतन्त्रता की मांग करती है। केन्द्रीयकरण के पक्ष में बचत का तर्क दिया जाता है किन्तु यह बचत सबसे ज्यादा हानिकारक होती है। सरकारी कार्यों में बचत का अर्थ होता है खर्चीले सेवकों को कम से कम संख्या में रखा जाय और उनके द्वारा सेवित व्यक्तियों की संख्या बढ़ा दी जाय। इसके परिणामस्वरूप सरकार अपने आदेशों एव परामर्शों को लिखित रूप में प्रदान करेगी। इस प्रक्रिया के द्वारा नौकरशाही का प्रभाव बढ़ेगा। इस नौकरशाही के खतरे को रोकने के लिए स्थानीय सरकार मुख्य कार्यालय पर बहुत बड़ा स्टाफ नियुक्त कर लेंगी और स्थानीय स्तर पर भी इनकी संख्या को बढ़ा लेगी किन्तु ऐसा करने पर सरकार का व्यय बहुत बढ़ जायेगा। इस प्रकार केन्द्रीयकरण की हानियां तो हैं किन्तु फिर भी वर्तमान परिस्थितियों में यह स्वाभाविक सा होता जा रहा है।

स्थानीय एवं केन्द्रीय सरकार के कार्यों में कोई विभाजित रेखा नहीं है, क्योंकि केन्द्रीयकरण की प्रवृत्ति बहुत बढ़ती चली जा रही है और इसकी प्रतिक्रिया के रूप में स्थानीय स्वतन्त्रता एवं स्वायत्तता की मांग भी जोर पकड़ रही है, क्योंकि राष्ट्रीय एवं स्थानीय सरकारों के बीच मन-मुटाव बढ़ता जा रहा है और स्थानीय अराजकता एवं अव्यवस्था पर रोक लगानी है तथा इसी प्रकार के अन्य कारणों से आजकल यह जरूरी समझा जाने लगा है कि स्थानीय सरकार एवं राष्ट्रीय सरकार के निकायों का एकीकरण कर दिया जाय।

केन्द्रीय एवं स्थानीय सरकारों के बीच मनमुटाव के कई कारण हैं प्रथम तो यह है कि केन्द्रीय सरकार की नीतियाँ चाहे स्थानीय सत्ताओं के कितने भी अनुकूल क्यों न हो किन्तु उनके तरीकों एवं तकनीकों में अन्तर रहता ही है। स्थानीय एवं केन्द्रीय सत्ताओं में कार्य करने वाले व्यक्ति अलग अलग प्रकृति, शिक्षा एवं अनुभव वाले होते हैं। किसी भी व्यक्ति को ऐसे तथ्यों एवं मतों को स्वीकार करने के लिए वाध्य नहीं किया जा सकता जिनमें कि वह स्वयं विश्वास नहीं करता। ज्ञान को विकसित किया जा

सकता है किन्तु रुचि को बदलना बड़ा कठिन होता है। स्थानीय जीवन की सीमाओं में रहते हुए जिस सत्य का साक्षातकार होता है वह सत्य उससे भिन्न होता है जो कि राष्ट्रीय स्तर के तथ्यों पर आधारित है। दूसरे, स्थानीय एवं व्यक्तिगत परिस्थितियों में जो अन्तर रहता है वह भी अत्यन्त प्रभाव डालता है। इस सम्बन्ध में हरमन फाइनर लिखते हैं कि भौगोलिक दृष्टि से, आर्थिक दृष्टि से तथा व्यवहार, रीति रिवाज, बोलचाल एवं स्थानीय परम्पराओं के सम्बन्ध में विभिन्नतापूर्ण क्षेत्र में फैले हुये चालीस मिलियन लोगों के बीच उद्देश्य, चरित्र एवं व्यवहार के अन्तर रहना जरूरी है।* इसका अर्थ यह हुआ कि देश में जितने हजार स्थानीय प्रतिनिधि निकाय होंगे उनके बीच उतनी ही विभिन्नताएं होंगी।

केन्द्रीय एवं स्थानीय संस्थाओं के बीच सदैव हितों का संघर्ष रहा है। केन्द्रीय सरकार अधिक से अधिक नियन्त्रण रखने का प्रयास करती रही और स्थानीय सरकारें स्वायत्तता की मांग करती रही हैं। केन्द्रीय सरकार एवं स्थानीय सरकार के बीच जो विरोध की भावना है और कटुता उत्पन्न करने के कारण हैं उनको केवल तभी दूर किया जा सकता है जब कि दोनों इकाइयों का एकीकरण कर दिया जाये। स्थानीय सत्ताएं और केन्द्रीय सरकार एक ही सरकार व्यवस्था के आवश्यक भाग हैं। उनका आर्थिक सम्बन्ध एक सावयवी में भागीदार तथा सहयोगी का है जो कि एक सामान्य लक्ष्य रखते हैं तथा उस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए एकीकृत संस्थाओं की व्यवस्था रखते हैं। यह बात तथ्यों से स्पष्ट होती है कि स्थानीय सरकार के निकाय सरकार की बनावट के एकीकृत भाग होते हैं तथा वे उन कार्यों में सहयोग प्रदान करते हैं जो कि स्वयं उनसे अधिक महत्वपूर्ण हैं। इस सन्दर्भ से अधिक या बाहर उनका कोई कार्य नहीं होता तथा उनको एवं उनकी समस्याओं को केवल उनमें ही पहचाना जा सकता है। सामाजिक एवं आर्थिक नियोजन के युग में स्थानीय सत्ताओं का यह एकीकृत रूप और भी अधिक महत्वपूर्ण बन जाता है। केन्द्रीय स्तर पर जो सेवाएं प्रदान की जाती हैं वे अन्तिम रूप से स्थानीय जनता को ही प्राप्त होती हैं।

इसके अतिरिक्त कई एक केन्द्रीय अधिनियमों में स्थानीय विषयों को समाहित कर लिया जाता है। उदाहरण के लिए सन् १९४५ के जल अधिनियम को लिया जा सकता है जिसकी प्रथम धारा में कहा गया था कि स्वास्थ्य मन्त्री का यह कर्त्तव्य होगा कि वह जल के स्रोतों की रक्षा एवं उचित प्रयोग को प्रोत्साहन दे तथा इंगलैण्ड और वेल्स में जल वितरण का प्रबन्ध करे तथा उसके निर्देशन एवं नियन्त्रण में पानी वाले जल उद्योगों के प्रभावशाली क्रियान्वयन को जल से सम्बन्धित राष्ट्रीय नीति के अनुसार

*"In a population of fourty million, scattered over an area diversified, egeologically, topo-graphically, economically and in relation to manners, customs, dialect and Local tradition. They are found to be differences of purpose, character and behaviour

—Herman Finer: Op. Cit. P. 7.

संचालित करे। कहने का अर्थ यह है कि स्थानीय निकायों के कार्य पर केन्द्रीय निकायों का पर्याप्त नियन्त्रण एवं निर्देशन रहने का प्रावधान है। इस वस्तु स्थिति से यह नहीं समझा जाना चाहिये कि ग्रेट ब्रिटेन के स्थानीय निकायों के अपने स्वयं के कोई कार्य ही नहीं हैं अथवा उनका महत्व केवल उसी बात में है कि वे केन्द्रीय निकायों के सहयोग में कार्य करें। उनके स्वयं के भी कार्य होते हैं किन्तु वे अपेक्षाकृत कम हैं तथा कम महत्वपूर्ण हैं। ग्रेट ब्रिटेन के स्थानीय प्रशासन का सही-सही विकास तथा उसकी वित्तीय संस्थाओं को उस समय तक ठीक तरह से नहीं समझा जा सकता जबकि हम यह मान कर चले कि स्थानीय सत्ताएं एक ही जीवित सावयवी के विभिन्न सेल हैं। यह दृष्टिकोण उन्नीसवीं शताब्दी में नहीं पाया जाता था। आज भी इस दृष्टिकोण का कुछ लोगों द्वारा विरोध किया जाता है। यदि किसी प्रतिवेदन अथवा जाँच में इसका उल्लेख भी किया जाता है तो बड़े अप्रत्यक्ष रूप में। यद्यपि स्थानीय सरकार के जो सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य समझे जाते है वे हैं शिक्षा, जनसहयोग, जनस्वास्थ्य, पुलिस एवं सड़कों का प्रशासन, आदि। इन विभिन्न सेवाओं के क्षेत्र में स्थानीय निकाय अन्य सत्ताओं से अलग रहकर एकीकृत दृष्टिकोण अपनाए बिना कार्य नहीं कर सकती। यह सही है कि स्थानीय स्वतन्त्रता का अपना महत्व होता है किन्तु उनके कार्य एवं इच्छा एक स्वतन्त्र सीमा में रह कर ही सम्भव बन सकती है।

हरमन फाईनर ने चार प्रमुख कारण ऐसे बताये हैं जिनके परिणाम-स्वरूप ब्रिटिश स्थानीय सरकार का अधिक पूर्ण एकीकरण सम्भव बनता है। इनमें प्रथम कारण है सरकार की विभिन्न सेवाओं के बारे में वैज्ञानिक ज्ञान का विकास। स्थानीय परिषदों द्वारा जो विभिन्न सेवाए प्रदान की जाती हैं उन सेवाओं की मात्रा अत्यन्त व्यापक हो गई है। पहले इन सेवाओं का क्षेत्र व्यक्तिगत अधिक था। उदाहरण के लिए निर्धनों की राहत के क्षेत्र में सन् १८३४ की स्थानीय सरकार इस मान्यता के आधार पर संचालित होती थी कि कुछ लोग अभागे इसलिए हैं क्योंकि उनके कुछ व्यक्तिगत नैतिक अभाव हैं। और अभागेपन के कारण व्यक्तिगत थे इसलिए उनका इलाज करने के लिए यन्त्र भी स्थानीय हो सकता था। किन्तु बाद में उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध एवं बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में आर्थिक एवं समाजशास्त्री विशेषज्ञों ने यह बताया कि अभाव का कारण केवल व्यक्तिगत नहीं होता किन्तु यह अनेक प्रादेशिक दशाओं एव राष्ट्रीय परिस्थितियों से उत्पन्न होता है। अकार्यकुशल शिक्षा व्यवस्था, अपर्याप्त जन-स्वास्थ्य प्रशासन एवं राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय श्रम बाज़ार का विघटन आदि भी इसके कारण होते हैं। जब किसी दोष के कारण स्थानीय नहीं है तो उनका इलाज कैसे स्थानीय हो सकता है। ज्यों-ज्यों देश अधिक से अधिक घनिष्ट एकीकृत समाज बनता चला जा रहा है त्यों-त्यों स्थानीय प्रकृति महत्वहीन बनती चली जाती है। उचित सरकारी प्रवन्ध जल्दी या बाद में उसी व्यवस्था को अपना लेता है जो कि वैज्ञानिक है। जब सन् १९३४ में बेरोजगार सहायता अधिनियम पास हुआ तो अनेक स्थानीय उत्तरदायित्वों को केन्द्रीय सत्ताओं के लिए हस्तांतरित कर दिया गया। स्थानीय सेवाओं के एकीकरण का उदाहरण स्वास्थ्य सेवाओं से दिया जाता है।

काउन्टी बारो की रचना की जाए किन्तु ऐसा केवल तभी किया जा सकता है जब कि स्थित काउन्टी की भौगोलिक सीमाओं पर आघात किया जाए। दूसरी ओर बदलती हुई सामाजिक परिस्थितियाँ एवं दबाव, काउन्टी बारो के विकास को आवश्यक भी बना सकते हैं। ऐसा हो जाने पर काउन्टी का क्षेत्र घट जाता है, उसके करों की मात्रा कम हो जाती है और उसकी जनसंख्या भी कम हो जाती है। क्षेत्र कम हो जाने के बाद काउन्टी की सेवा के सम्बन्ध में जो प्रावधान थे उनके सम्बन्ध में कई कठिनाइयां उत्पन्न हो जाती हैं। एक मोटे अनुमान के अनुसार यह कहा जा सकता है कि जब से १८८८ का अधिनियम पारित हुआ उस समय से काउन्टियों ने काउन्टी बारोज के प्रसार या निर्माण की वजह से लगभग आधी मिलियन एकड़ भूमि, लगभग बीस मिलियन पौंड कर का राजस्व तथा तीन मिलियन से भी अधिक जनसंख्या को खोया है। ऐसी स्थिति में काउन्टी परिषद द्वारा पूरी तरह से नए काउन्टी बारोज बनाने या स्थित का प्रसार करने का प्रयास किया जाता है।

ब्रिटिश स्थानीय सरकार की विशेषताएं
[The Characteristics of British Local Government]

प्रत्येक मानवीय संस्था देश, काल एवं परिस्थितियों के अनुसार अपनी स्वयं की विशेषताएं रखती है। ब्रिटिश स्थानीय सरकार की भी कुछ अपनी विशेषताएं हैं जो कि वहां के लोगों के चरित्र, आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक स्थिति तथा देश की भौगोलिक बनावट आदि से निर्धारित हुई हैं। वहां की स्थानीय सरकार की सर्वप्रथम विशेषता यह बताई जाती है कि इसकी प्रकृति विकासशील है। आज वहां स्थानीय सरकार का जो रूप हमें मिलता है वह सदियों के विकास का परिणाम है, यह क्रमिक गति से एवं धीरे-धीरे हुआ। ब्रिटेन की अन्य संस्थाओं की भाँति स्थानीय सरकार को भी इतिहास का शिशु कहा जाता है। प्रारम्भ में स्थानीय स्तर पर जो संगठन जिस रूप में भी कार्य करते थे उनसे स्थानीय सरकार का जन्म हुआ। स्थानीय सत्ताओं का निर्माण भी विकास की विभिन्न श्रेणियों में होकर गुजरा है। जिस समय उसको स्थापित किया गया था उनका उद्देश्य एवं रूप कुछ और ही था। बाद में समय की मांग एवं परिस्थितियों को आवश्यकताओं ने उनको अपने अनुकूल समायोजित होने के लिए प्रभावित किया। इनमें से किसी भी संस्था को केन्द्रीय सरकार द्वारा एक दिन में या किसी एक कानून द्वारा नहीं बना दिया गया।

ब्रिटिश स्थानीय सरकार की एक दूसरी विशेषता यह मानी जाती है कि इसकी रचना लिखित कानून द्वारा हुई। संसद ने समय-समय पर अधिनियम पास कर के इनके संविधान एवं उत्तरदायित्वों का स्वरूप निर्धारित किया। प्रत्येक स्थानीय सत्ता जो भी कार्य करती है उसके लिए उसे संसद के कानून की सत्ता प्राप्त है। वह ऐसा कोई कार्य नहीं कर सकती जिसे करने के लिए कानून द्वारा उसे शक्ति न सौंपी गई हो।

मि० हरमन फाईनर द्वारा
तीन विशेषताएं बताई गई हैं
चतुर्थ विशेषता-

मतानुसार ब्रिटिश स्थानीय सरकार केन्द्रीयकरण के गम्भीर खतरे के विरुद्ध एक प्रतिक्रिया है। इसलिए यह स्वाभाविक था कि इसका रूप विकेन्द्रित होता। मि० फाईनर के शब्दों में विकेन्द्रीयकरण का अर्थ एक ऐसी व्यवस्था से है जिसमें सरकार के स्थानीय एवं केन्द्रीय अनेक केन्द्र होते हैं तथा प्रत्येक को स्वतन्त्र अस्तित्व एवं कार्यों का अधिकार प्राप्त होता है।* वर्तमान ब्रिटिश स्थानीय सरकार की रचना में काउन्टी बारोज को पूर्णतः स्वतन्त्र निकाय बनाया गया है। कुछ अपवादों को छोड़ कर काउन्टी द्वारा शेष भाग की सेवा की जाती है। नगरपालिका बारोज को भी अधिकांश स्वतन्त्र शक्तियां प्राप्त हैं। उनके क्षेत्र में कुछ कार्य काउन्टी परिषद द्वारा सम्पन्न किए जाते हैं जैसे कि प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा, पुलिस, जनस्वास्थ्य तथा बड़ी सड़कें आदि। शहरी जिलों [Urban Districts] में भी इन शक्तियों का प्रयोग काउन्टी परिषद द्वारा किया जाता है वरन् वे स्वतन्त्र निकाय होते हैं। वैसे देहाती जिलों को अपेक्षाकृत कम कार्य प्राप्त होते हैं। वे शिक्षा सेवाओं, पुलिस कार्यों एवं महत्वपूर्ण सड़कों के सम्बन्ध में कोई महत्वपूर्ण शक्ति नहीं रखते हैं। पेरिस मीटिंग्स तथा पेरिस परिषदों के पास पर्याप्त ज्ञान एवं आर्थिक साधन नहीं होते हैं इसलिए उनको स्वतन्त्र शक्ति प्राप्त नहीं होती।

विकेन्द्रीयकरण की जो परिभाषा मि० फाईनर ने दी है उसके आधार पर वे कहते हैं कि यह संदिग्ध है कि इस प्रकार की व्यवस्था कभी इस देश में रही हो। असल में विकेन्द्रीयकरण का यह रूप कानून अथवा व्यवहार की दृष्टि से यहां कभी भी नहीं रहा। स्थानीय. संस्थाएं अपने प्रारम्भिक काल में उन दायित्वों को पूरा करने के लिए उत्तरदायी थीं जो कि केन्द्रीय सरकार द्वारा उसे सौंपे गए थे। यद्यपि यह सच है कि वे अविनियमित क्षेत्र में बहुत कुछ स्वेच्छा एवं स्वतन्त्रता का प्रयोग करते थे। नगरपालिका बारोज में १८३५ में जब सुधार किए जाने पर जो स्थिति बनी वह इस कथन से भिन्न नहीं थी। फिर भी यह कहा जाता है कि यदि विकेन्द्रीयकरण स्थानीय प्रशासन की विशेषता नहीं है तो उसे होना चाहिए। इसी विचार के आधार पर समाज के लोग स्थानीय सरकार की स्वतन्त्रताओं का सम्मान कर पाएंगे। ब्रिटिश स्थानीय सरकारों की स्थिति का सही वर्णन करते हुए हरमन फाईनर ने यह लिखा है कि हमारे यहां विन्द्रीयकरण नहीं है वरन् पूर्ण स्वतन्त्रता का एक छोटा भाग है, जो कि मुख्यतः राष्ट्रीय इच्छा पर आधारित संगठित एकीकरण के साथ मिल कर इसे स्वतन्त्र इच्छा द्वारा स्थानीय परिस्थितियों के अनुकूल क्रियान्वित करने का प्रयास करता है। इस व्यवस्था को क्या नाम दिया जाना चाहिए हम नहीं जानते।†

---

*"By decentralization is meant a system in which there are many centres of Government, local and central, each with a recognized right of independent existence and functions."

—*Herman Finer*, Op.Cit., p. 20.

†"We have not Decentralization, but a small sphere of almost complete freedom, side by side with an organi-

पांचवें, ब्रिटिश स्थानीय सरकार की एक अन्य विशेषता यह है कि स्थानीय सत्ताएं अपने कानून एवं प्रादेशिक क्षेत्र में अन्य स्थानीय सत्ताओं के नियंत्रण से स्वतन्त्र रहती हैं। इसके कुछ अपवाद भी हैं। हरमन फाइनर लिखते हैं कि इंगलैण्ड की स्थानीय सत्ताएं उन निकायों द्वारा नियन्त्रित नहीं की जाती जो कि केन्द्रीय सत्ता एवं उनके बीच में होती हैं।* ये निकाय प्रत्यक्ष रूप से संसद और केन्द्रीय विभागों द्वारा नियन्त्रित होते हैं। इसके मुख्य रूप से ये अपवाद हैं–[i] अधीनस्थ सत्ताओं द्वारा कुछ मामलों को प्रस्तावित करने के लिए काउन्टी परिषद की स्वीकृति प्राप्त करनी होती है। [ii] काउन्टी परिषद कुछ मामलों में स्थानीय सत्ताओं की अवहेलना कर सकती है चूंकि इसे ऐसा करने का अधिकार है। [iii] काउन्टी परिषद को अन्य स्थानीय सत्ताओं की भांति कुछ मामलों में समान अधिकार है। [iv] काउन्टी परिषद विशेष मामलों में अधीनस्थ सत्ताओं पर सामान्य निरीक्षण रखती है। पदसोपान वाली एवं गैर-पदसोपान वाली स्थानीय सरकार की व्यवस्थाओं में केन्द्रीय तथा स्थानीय सत्ताओं के बीच सम्बन्ध का अन्तर होता है तथा यह अनुदान, आडिट एवं निरीक्षण आदि प्रश्नों को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करता है।

ब्रिटिश स्थानीय सत्ताओं की एक छटी विशेपता यह है कि उनकी प्रकृति संयुक्त होती है; यहां तक कि शक्तिहीन पेरिस भी पर्याप्त संयुक्त प्रकार की शक्तियों का प्रयोग करती है। इसका अर्थ यह नहीं है कि वे सारे कार्य स्वयं करती है किन्तु यह है कि वह विशेप रूप से किसी एक कार्य को करने के लिए बाधित नहीं है। उनको सामयिक [Adhoc] सत्ताएं प्राप्त नहीं है। आज ग्रेट ब्रिटेन की स्थानीय सत्ताएं पूरी तरह से या संयुक्त रूप से अनेक सेवाओं के लिए उत्तरदायी रहती हैं। यह स्थिति १८३४ से लेकर १९३० तक के विकासों का परिणाम है। १८३० तक स्थानीय सरकार की मुख्य सत्ताएं जैसे काउन्टी बारो एवं पैरिस आदि कई एक मिलेजुले कार्य करती थीं। इनमें से कुछ की तुलना आज के कार्यों से की जा सकती है। उस समय विशेषीकृत प्रकृति की केवल कुछ ही सत्ताएं थीं जिन्हें केवल विशेष कार्य सौंपे गये थे; जैसे विकास आयुक्त, चौकसी एवं प्रकाश मंडल, निर्धनों का संरक्षक मंडल आदि। १८३१ में स्वास्थ्य का स्थानीय मडल बनाया गया। इसी प्रकार से अभावग्रस्तों की सहायता के लिए, शहरी एवं ग्रामीण सफाई के लिए, सड़कों के लिए तथा शिक्षा के लि[illegible] शेष सत्ताओं का

संगठन किया गया। इनमें से प्रत्येक कार्य के लिए अलग–अलग प्रशासकीय निकाय बनाया गया। इस प्रकार स्थानीय सत्ता के कार्यों को अनेक छोटे २ निकायों में बांट दिया गया जो कि अधिकार-क्षेत्र एवं स्रोतों की दृष्टि से अल्प थे। इस व्यवस्था के अपने कई दुष्परिणाम रहे। प्रत्येक की वित्तीय व्यवस्था अलग-अलग थी और उसमें समन्वय नही था। एक की नीति का अन्यों की नीति से कोई सम्बन्ध नहीं था। समन्वय के अभाव में इसके सम्बन्ध केन्द्रीय सत्ता के साथ आवश्यक रूप से जटिल एवं भ्रमपूर्ण थे। कोई सत्ता अपने आप में ऐसी नहीं कि वह पर्याप्त रूप से स्थानीय रुचि को आकर्षित कर सके। इस सारी स्थिति को देखने के बाद मि० गोसेन (Gosche) ने स्थानीय सत्ताओं के, केन्द्रीय सत्ताओं के साथ वित्तीय एवं प्रशासकीय सम्बन्धों का वर्णन करते हुए यह उक्ति कही जो कि अत्यन्त लोकप्रिय है कि हमारे यहां सत्ताओं के सम्बन्ध में उपद्रव है, रेट के सम्बन्ध में उपद्रव है, और इन सब उपद्रवों से भी बद्तर क्षेत्रों के सम्बन्ध में उपद्रव है।†

इस सम्बन्ध में वस्तुस्थिति का सही अध्ययन करतें हुए तथा उसके परिणामों से अवगत रहते हुए जॉन स्टूअर्ट मिल (John Stuart Mill) ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'प्रतिनिधि सरकार' (Representative Government) में जो कुछ भी लिखा वह अत्यन्त महत्वपूर्ण था। उन्होंने बताया कि मुख्य सिद्धान्त के अनुसार एक स्थानीय क्षेत्र में सभी स्थानीय कार्यों को करने के लिए एक ही निर्वाचित निकाय होना चाहिए; इसके विभिन्न भागों के लिए अलग-अलग निकाय नहीं। श्रम-विभाजन का यह अर्थ नहीं होता कि प्रत्येक कार्य को छोटे २ भागों में बांट दिया जाय। इसका अर्थ केवल यही है कि एक व्यक्ति जिन कार्यों को अच्छी प्रकार से सम्पन्न कर सके उन्हें एक ही निकाय के हाथों में दिया जाये और उन कार्यों को अलग कर दिया जाये जो कि दूसरे व्यक्ति द्वारा अच्छी प्रकार सम्पन्न किये जा सकते हैं। निर्वाचित निकाय का यह अर्थ नहीं होता कि वह स्वयं कार्य करे बल्कि उसका कार्य तो केवल यह देखना है कि जो कार्य सौंपा गया है वह ठीक प्रकार से सम्पन्न होता रहे और किसी भी आवश्यक कार्य को बिना किए नहीं छोड़ा जाये। एक ही निकाय में एक बस्ती के सभी कार्यों को एकीकृत करने का एक अन्य कारण भी है, वह यह है कि जब एक निम्न मानसिक स्तर वाले व्यक्ति द्वारा स्थानीय संस्थाओं को सदैव संचालित किया जाता है तो उनमें पर्याप्त अपूर्णता आजाती है और वे प्रायः असफल हो जाते हैं। इसलिए यह उपयोगी रहेगा कि इन संस्थाओं की प्रकृति अनेकरूपी रहे। इससे ये संस्थाएं अधिक लाभदायक रहेंगी और साथ ही ये नागरिकों की राजनैतिक सामर्थ्य एवं सामान्य बुद्धि के लिए एक प्रशिक्षणशाला का कार्य भी करेंगी।

---

† "We have a chaos as regards authorities, a chaos as regards rates, and a worse chaos than all as regards areas."
—*Goschen*, Reports and Speeches on Local Taxation, 1872, P. 190.

जब कार्यों को अलग-अलग रखा जाता है तो उन्हें सम्पन्न करने के लिए किसी एक व्यक्ति को ढूंढना बड़ा मुश्किल पड़ जाता है, जैसे कि किसी नाला-प्रायोग के लिए या मार्ग निर्माता मंडल के लिए सदस्यों के स्थान पर सामाजिक या बौद्धिक दृष्टि से उच्च वर्ग के लोगों को नियुक्त नहीं किया जा सकता। यह उचित भी नहीं है क्योंकि जिन लोगों की योग्यताओं का पूरे देश को लाभ उठाना चाहिए या पूरे क्षेत्र को लाभान्वित होना चाहिए, यदि उनको एक कोने में डाल दिया जाय।

सन् १८८८ के बाद इन सत्ताओं के बीच समन्वय की नीति ने जन्म लिया। यह विकास तत्कालीन भ्रम एवं कठिनाइयों को दूर करने के लिए किया गया। इसके अतिरिक्त पुराने निकायों को नये कार्य सौंपना अधिक सरल था अपेक्षाकृत इसके कि उन्हें करने के लिए नये निकायों की रचना की जाती। इसके बाद एक सिद्धान्त प्रतिपादित किया गया कि स्थानीय जनता के हितों की रक्षा तब अच्छी प्रकार की जा सकती है जब कि सारे देश में संयुक्त सत्ताओं की स्थापना की जाय। यह विचारधारा सामयिक [Adhoc] या कार्यात्मक सत्ता के विपरीत थी। इसके अनुसार स्थानीय सत्ताओं को छः वर्गों में विभाजित कर दिया गया, ये थे—काउन्टी, काउन्टी परिषद, नगरपालिका या गैर-काउन्टी बारो, शहरी जिले, देहाती-जिले और पैरिस। यह स्थिति सन् १९४७ तक काफी प्रभावशील रही।

सातवें, ब्रिटिश स्थानीय लोक प्रशासन की विशेषता यह बताई जाती है कि यहां राष्ट्रीय एवं स्थानीय स्तर की सत्ताओं के बीच समन्वय की दृष्टि से एकीकरण का जन्म हो रहा है। यह एकीकरण वर्तमान परिस्थितियों की एक अनिवार्य उपज है। प्रारम्भ में स्थानीय सरकार एवं केन्द्रीय सरकार को परस्पर विरोधी समझा जाता था किन्तु आज स्थिति बदल चुकी है और सरकार के इन दोनों रूपों को केवल विरोधी ही नहीं समझा जाता बल्कि एक दूसरे का पूरक माना जाता है। केन्द्रीय सरकार की अतिशय नियन्त्रण की मांग और स्थानीय सरकारों की अतिशय स्वतन्त्रता की मांग के बीच विरोध के कारण पहले जो स्थिति पैदा हो गई थी उसके फलस्वरूप इन दोनों इकाइयों के बीच पारस्परिक कटुता की भावना ने जन्म लिया। किन्तु समय के प्रभाव ने ऐसी स्थिति ला दी जिसमें कि ये दोनों एक दूसरे के सहायक और हिस्सेदार बन गये। दोनों ने राष्ट्रीय जीवन को श्वेत बनाना अपना उद्देश्य स्वीकार कर लिया।

स्थिति और कार्य । कार्यों के क्षेत्र में जो विभिन्नता होती है उनको पहचानना बड़ा मुश्किल पड़ता है, किन्तु अन्य क्षेत्रों की विभिन्नताओं को आसानी से जाना जा सकता है । स्थानीय सत्ताओं के बीच जो संख्या एवं विभिन्नताओं का अस्तित्व रहता है वह एक दृष्टि से अपरिहार्य माना जाता है । ये सभी एक अव्यवस्थित ऐतिहासिक विकास के परिणाम हैं । शताब्दियों के लम्बे समय में इन सत्ता के भवनों में यहां तहां कुछ हिस्से जोड़े गये और कुछ ईंटें कुछ स्थानों से हटाली गईं । इस प्रकार एक लम्बे नियोजन के परिणाम-स्वरूप इन सेवाओं का वर्तमान रूप हमारे सामने आया । उन्नीसवीं शताब्दी का मध्यकाल गुजरने के बाद कुछ नये क्षेत्र बनाये गये जैसे शहरी और देहाती जिले तथा नगरपालिका बारो और काउन्टी बारो का प्रसार किया गया ।

नवें, ब्रिटिश स्थानीय प्रशासन की एक अन्य विशेषता यह है कि इसमें समिति व्यवस्था का अतिशय प्रयोग किया जाता है । प्र० लास्की (Lasky) एवं अन्य के कथनानुसार ग्रेट ब्रिटेन की स्थानीय सरकार समितियों द्वारा एवं समितियों के माध्यम से संचालित की जाती है । प्रो० फाइनर के मतानुसार समितियां स्थानीय सरकार के वास्तविक कारखाने होती हैं । इनका प्रायः समस्त कार्य समितियों द्वारा सम्पन्न किया जाता है । स्थानीय निकायों की परिषद् समितियों के माध्यम से कार्य करती है । ये समितियां प्रायः पांच प्रकार की होती हैं - स्थायी समितियां (Standing Committees), सुझावदात्री समितियां (Persuasive Committees), विशेष एवं सामयिक समितियां (Special and Alhoc Committees), कानूनी समितियां (Statuatory Committees) और उप समितियां (Sub-Committees) । इन समस्त समितियों के द्वारा स्थानीय सत्ताएं अपने विभिन्न उत्तरदायित्वों को सम्पन्न करने का प्रयास करती हैं । वित्तीय समितियों द्वारा विभिन्न स्थानीय निकायों के बीच समन्वय स्थापित किया जाता है ।

दसवें, दलीय राजनीति को ब्रिटिश स्थानीय प्रशासन की विशेषता कहा जाता है । वैसे सैद्धान्तिक रूप से कई बार इस बात का समर्थन किया जाता है कि स्थानीय स्तर पर दलीय राजनीति को सक्रिय नहीं बनाना चाहिये, क्योंकि इससे लाभ होने की अपेक्षा हानियां अधिक होने की सम्भावना होती है । क्षेत्रीय जनता दलीय आधार पर विभाजित हो जाती है और स्थानीय विषयों के संचालन के लिए जिस एकता की आवश्यकता होती है तथा जो सहयोगपूर्ण प्रयास अनिवार्य होते हैं वे सम्भव नहीं हो पाते । सैद्धान्तिक रूप से यह सब ठीक होते हुए भी व्यावहारिक रूप से उतना उपयोगी नहीं रहता और न ही व्यावहारिक रूप से सम्भव बन पाता है । ग्रेट ब्रिटेन में यह एक स्पष्ट तथ्य है कि कई एक स्थानीय सत्ताओं में दलीय राजनीति सक्रिय रूप से कार्य करती है । उनमें राजनैतिक दल अच्छी प्रकार से संगठित रूप में प्राप्त होते हैं । चुनाव प्रायः दलीय आधार पर लड़े जाते हैं । ये दल (Parties) अपने राजनैतिक संगठनों के द्वारा सदस्यों पर दलीय अनुशासन का प्रयोग करते हैं फिर भी कुछ संगठन राजनैतिक दलों के हस्तक्षेप से मुक्त रहते हैं । उदाहरण के लिये देहाती क्षेत्र में एवं कुछ

काउन्टी परिषदें, किन्तु ऐसे संगठनों की संख्या बहुत कम है और सामान्य रूप से दलीय राजनीति का प्रभाव रहता है। बड़े औद्योगिक क्षेत्रों की काउन्टियों में जो स्थानीय सरकार की सत्ताएं कार्य करती हैं वे राजनैतिक दलों से प्रभावित रहती हैं। सन् १९४५ के बाद से ही राष्ट्रीय एवं कुछ स्थानीय दल, स्थानीय चुनावों में अधिक रुचि दिखा रहे हैं।

ब्रिटिश स्थानीय सरकार की ग्यारहवीं विशेषता यह है कि इसमें एकरूपता का अभाव रहता है। एक इकाई, दूसरी से संविधान एवं बनावट की दृष्टि से पर्याप्त अन्तर रखती है। उनके नियम और उपनियम अलग-अलग होते हैं। कभी तो एक स्थानीय निकाय को जनसंख्या के आधार पर संगठित किया जाता है और कभी प्रदेश के आधार पर। दूसरे अवसरों पर वित्त अथवा अन्य कोई आधारों पर इन निकायों को संगठित किया जाता है।

बारहवें, ब्रिटेन की स्थानीय सरकार के सम्बन्ध मे एक विशेष उल्लेखनीय बात यह है कि उसके विभिन्न निकायों का क्षेत्र परस्पर अतिराव करता है। इस व्यवस्था में कई बार ऐसा हो जाता है कि एक काउन्टी बारो के नागरिक की समस्त सेवाएं उसकी काउन्टी बारो परिषद द्वारा प्रदान की जाती हैं जबकि एक बारो का नागरिक या शहरी जिले का नागरिक यह पाता है कि उसकी कुछ सेवाएं बारो या शहरी जिलों वालों द्वारा प्रदान की जाती हैं और अन्य सेवाएं काउन्टी परिषद द्वारा प्रदान की जाती हैं। इस उदाहरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि क्षेत्रों एवं कार्यों की दृष्टि से विभिन्न स्थानीय सत्ताओं के बीच स्पष्ट विभाजन नहीं है।

तेरहवें, ग्रेट ब्रिटेन में शहरी एवं देहाती क्षेत्रों के प्रशासन के बीच पर्याप्त अन्तर है। दोनों क्षेत्रों में सेवा के लिये अलग अलग सत्ताएं प्रदान की जाती हैं। ऐसा कई दृष्टियों से आवश्यक माना जाता है जैसे कि प्रदान की हुई सेवाएं स्थानीय आवश्यकताओं के अधिक अनुरूप बन पाती हैं। यह आर्थिक दृष्टि से भी कम खर्चीली रहती है। देहाती क्षेत्रों के वित्तीय साधन क्षीण एवं कमजोर होते हैं और शहरी क्षेत्रों की तुलना में उनकी सामर्थ्य बहुत कम होती है।

चौदहवें, ब्रिटेन की स्थानीय सरकार के राजस्व का मुख्य साधन रेट (कर) होती हैं। रेट एक प्रकार का स्थानीय कर है जो सम्पत्ति के वार्षिक मूल्य पर लगाया जाता है। जब किसी सम्पत्ति का व्यक्ति द्वारा लाभ के साथ स्वामित्व किया जाता है तो स्थानीय सत्ता द्वारा उससे एक प्रकार का किराया वसूल किया जाता है। इस प्रकार के कर सर्वप्रथम गरीबों को राहत प्रदान करने के लिए प्रारम्भ किये गये थे। सन् १६०१ में महारानी ऐलिजाबेथ के शासनकाल में निर्धन अधिनियम पारित किया गया था जिसके अनुसार पर्यवेक्षकों द्वारा अधिनियम के लक्ष्यों को प्राप्त करने का प्रयास करना था। सामान्य रेट सब के लिए आवश्यक होती है। एक देहाती जिला परिषद को विशेष रेट लगाने का अधिकार होता है ताकि वह क्षेत्र की अनेक रूपी आवश्यकताओं को पूरा कर सके। लगाये गये रेट की उपयुक्तता एवं न्यायपूर्णता को देखने के लिए स्थानीय मूल्यांकन न्यायालय होते हैं जो कि नागरिकों की रेट से सम्बन्धित अपीलों एवं विरोधों को सुनते हैं।

२

स्थानीय सरकार का क्षेत्र एवं बनावट

[THE AREA AND STRUCTURE OF LOCAL GOVERNMENT]

स्थानीय सरकार के विभिन्न स्तर होते हैं। इन स्तरों के बीच प्रायः उच्चतर एवं निम्नतर का सम्बन्ध रहता है। यह सम्बन्ध प्रायः एक पिरामिड के समान समझा जाता है और इसमें उच्चस्तर पर स्थित निकाय, निम्नस्तर वाले निकायों पर पर्यवेक्षण एवं नियन्त्रण रखते हैं; किन्तु यह स्थिति प्रत्येक अवसर पर जरूरी नहीं है, अर्थात् यह आवश्यक नहीं है कि नीचे के स्तर पर उच्चस्तर का सदैव ही नियन्त्रण रहे। जब स्थानीय सरकार के विभिन्न स्तरों का वर्णन किया जाता है तो प्रायः इस प्रकार की निर्वाचित व्यवस्था को भी इंगित किया जाता है। उदाहरण के लिये यदि एक संगठन में तीन सूत्र (Tier) हैं तो यह हो सकता है कि निम्न सूत्र के निकाय का चुनाव उसी क्षेत्र द्वारा किया जाय और मध्यम निकाय के चुनाव निम्नतम निकाय के निर्वाचित सदस्य करें तथा सर्वोच्च निकाय के सदस्यों का निर्वाचन मध्यम सूत्र के निर्वाचकों द्वारा किया जाय। ऐसी स्थिति में यद्यपि किसी भी स्तर का निकाय अपने उच्चतम के नियन्त्रण या निर्देशन में कार्य नहीं करता किन्तु फिर भी उनके बीच स्तर का विभाजन रहता है। ब्रिटिश स्थानीय सरकार में जब हम स्तरों की बात करते हैं तो वहां इसका अर्थ न तो निर्वाचन सम्बन्धी संगठन से होता है और न ही नियन्त्रण एवं पर्यवेक्षण वाली पूर्व वर्णित व्यवस्था से वरन् यहां जैसा कि मि०आर०एम० जैक्सन (R. M. Jackson) लिखते हैं, प्रत्येक स्तर उन शक्तियों का प्रयोग करता है जो कि उसे कानून द्वारा सौंपी गई हैं और इन शक्तियों का प्रयोग वह अन्य किसी परिषद के पर्यवेक्षण के बिना स्वयं के अधिकार के रूप में करता है।†

---

†"In the English pattern each level exercises assigned to it by the Law, and exercises these powers in its

ग्रेट ब्रिटेन में यह व्यवस्था है कि स्थानीय निकायों को जो कार्य सौंपे गये हैं उनके सम्बन्ध में वे मंत्रालय से सीधी वार्ता कर सकते हैं। उन्हें मंत्रालय से सम्पर्क स्थापित करने के लिए मध्यस्थ इकाईयों की सहायता लेने की जरूरत नहीं होती। इन स्तरों को यहां चुनाव के लिए भी काम में नहीं लिया जाता। प्रत्येक स्तर पर जो परिषद चुनी जाती है उसके लिए पृथक निर्वाचन होता है। सुविधा एवं बचत की दृष्टि से पैरिस पद परिषद तथा देहाती जिला परिषद के निर्वाचन एक ही साथ कर दिये जाते हैं किन्तु उनके लिए अलग मत पत्र का प्रयोग किया जाता है। यहां एक बात ध्यान में रखने योग्य यह है कि कोई व्यक्ति एक समय में पेरिस परिषद, देहाती जिला परिषद एवं काउन्टी परिषद का सदस्य हो सकता है। इसे सौभाग्य का विषय समझा जाता है कि विभिन्न परिषदों के सदस्यों के बीच परस्पर सम्बन्ध रहे। परिषदों के कर्मचारी वर्ग भी पृथक होते हैं।

प्रशासन की दृष्टि से ग्रेट ब्रिटेन में स्थानीय सरकार की सत्ताओं को कई भागों में विभाजित किया गया है जो कि विभिन्न क्षेत्रों की सेवा करते हैं। एक स्थानीय निकाय का क्षेत्र कितना होना चाहिये, यह प्रश्न अत्यन्त महत्वपूर्ण है और स्थानीय सरकार का संगठन करते समय इस प्रश्न की अवहेलना नहीं की जा सकती। वैसे इसका संतोषजनक उत्तर प्रत्येक देश की भौगोलिक, सामाजिक, राजनैतिक एवं आर्थिक परिस्थितियों के आधार पर प्राप्त किया जाता है। फिर भी इस सम्बन्ध में कुछ सामान्य सिद्धान्त हैं जो कि प्रायः प्रत्येक देश पर लागू होते हैं चाहे वहां की परिस्थितियां किसी प्रकार की ही क्यों न हों। इस सम्बन्ध में एक सिद्धान्त यह है कि व्यावहारिक दृष्टि से एक छोटे स्थान द्वारा वे सेवाएं प्रदान नहीं की जा सकतीं जो कि एक बड़े स्थान द्वारा प्रदान की जा सकती हैं। इसका एक स्पष्ट कारण यह है कि छोटे स्थानों के पास उनके अपने स्रोत नहीं होते और इन स्रोतों के बिना उनकी योजनाएं तथा लोगों की आकांक्षाएं अधूरी रह जाती हैं। इसलिए यह जरूरी माना जाता है कि स्थानीय संस्था का आधार कम से कम इतना हो कि वह अपने कार्यों एवं उत्तरदायित्वों को सम्पन्न करने योग्य साधन स्रोतों को उपलब्ध कर सके। स्थानीय निकायों के क्षेत्र एवं रूप के बारे में समानता के सिद्धान्त को नहीं अपनाया जाना चाहिए क्योंकि ऐसा करने पर प्रदान की जाने वाली सेवाओं के बीच पर्याप्त स्थानीय अन्तर आ जायेंगे और इस प्रकार छोटे स्थानों के जीवनस्तर में भारी अन्तर आ जायेगा। दूसरे, राज्य को ऐसे स्थानों के लिए सेवाएं प्रदान करनी पड़ेंगी जो कि घनिष्ट रूप से बसे हुए हैं, जबकि कस्बों द्वारा ये सेवाएं इसलिए प्रदान की जायेंगी क्योंकि वे स्थानीय सरकार का अंग है। तीसरे, आसपास के समाज आपस में मिल कर संयुक्त रूप से एक ऐसी सेवा को प्रदान करने का प्रयास करेंगे जो कि उन

---

own right and without supervision by any other Council."

—*R. M. Jackson,* The Machinery of Local Government, Macmillan & Co., 1958. P. 15.

में से कोई भी अकेले रह कर नहीं कर सकता। इस प्रकार विशेष उद्देश्य के लिए सत्ता की रचना करनी होगी।

वर्तमान काल में विश्व के प्रायः सभी देशों में यह मान्यता है कि एक ही देश के विभिन्न स्थानों पर नागरिकों को प्रदान की जाने वाली सुख सुविधाओं के बीच अधिक अन्तर नहीं रहना चाहिए। उदाहरण के लिए एक बालक को शिक्षा से सम्बन्धित सभी सुविधायें प्राप्त होनी चाहिये चाहे उसके माता पिता की आमदनी कुछ भी हो और वह किसी देहाती इलाके में रह रहा हो अथवा बड़े शहर में। इसका अर्थ यह हुआ कि जिन सेवाओं में अधिक खर्चे की आवश्यकता होती है वे या तो राज्य दवारा संचालित की जानी चाहिए या उन्हें पर्याप्त आकार वाली स्थानीय सत्ताओं को सौंप देना चाहिये कि आवश्यक संस्थाओं को चलाने के लिये आवश्यक धन का प्रबन्ध कर सके।

ग्रेट ब्रिटेन में स्थानीय सरकार की परम्परागत इकाईयां मुख्य रूप से काउन्टियां, चार्टर द्वारा निर्धाहित कस्बे और पेरिस हैं। यदि हम कुछ समय के लिये चार्टर द्वारा घोषित कस्बों एवं बिना चार्टर के कस्बों तथा बड़े कस्बों की विशेष स्थिति को अलग रखदें तो हमें ब्रिटिश स्थानीय सरकार की व्यवस्था में तीन स्तर प्राप्त होते हैं। इसका निम्न स्तर गांव है, मध्य स्तर देहाती जिले हैं जिनमें अनेक गांव और साधारण कस्बे भी आ जाते हैं और सर्वोच्च स्तर काउन्टी होता है। सैद्धान्तिक दृष्टिसे काउन्टी परिषद को उन सभी विषयों पर विचार करना चाहिये जो कि सम्पूर्ण काउन्टी को प्रभावित करते हैं और प्रशासन एवं वित्तीय की दृष्टि से उसे बड़े से बड़े क्षेत्र पर अधिकार रखना चाहिए। मध्य स्तर वाले देहाती जिलों और छोटे कस्बे को ऐसे विषयों पर विचार करना चाहिये जो कि इन क्षेत्रों के लिए उपयोगी हैं तथा गांव को शुद्ध रूप से उन विषयों से सम्बन्ध रखना चाहिये जो कि गांव के क्षेत्र से सम्बन्धित हैं। इस प्रकार इस व्यवस्था के अन्तर्गत गांवों में रहने वाले लोग यह पायेगे कि उनके ऊपर तीन सत्तायें कार्य कर रही हैं, ये हैं पेरिस परिषद, जिला परिषद, और काउन्टी परिषद। जो लोग छोटे या बीच के स्तर के कस्बों में रहते हैं उनके ऊपर दो सत्ताएं कार्य करती है कस्बे की परिषद और काउन्टी की परिषद।

ग्रेट ब्रिटेन में सूत्रों की योजना को दो तथ्यों द्वारा अत्यन्त जटिल बना दिया जाता है, इनमें से प्रथम है बारो (Borough)। बॉरो उस कस्बे को हा जाता है जिसे कि शाही चार्टर दिया जा चुका है। चार्टर देने की प्रक्रिया सदियों तक चली। इसके परिणामस्वरूप स्थिति ऐसी उत्पन्न हो गई कि आज बॉरो नाम सुन कर न तो किसी विस्तृत आकार का ही पता लगता है और न उनके महत्व के बारे में ही, केवल यही ज्ञात होता है कि इतिहास के किसी चरण में इनको शाही चार्टर दिया गया होगा। सदियों पहले जो स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण था अब हो सकता है कि उसका महत्व घट गया हो किन्तु यह एक तथ्य है कि उसको अभी भी बारो का स्तर दिया हुआ है। कई एक ऐसे बारोज हैं जिनकी जनसंख्या पांच हजार से भी कम है। दूसरी ओर अनेक स्थानों की जनसंख्या काफी बढ़

चुकी है किन्तु अभी तक उनको बारो का स्तर प्राप्त नहीं हो सका है। स्थानीय सरकार की दृष्टि से साधारण बारो एवं शहरी जिलों के बीच बहुत थोड़ा ही अन्तर है। दोनों के बीच केवल नागरिक सम्मान का अन्तर है बारो में मेयर, एल्डरमेन, पार्षद तथा नागरिक जीवन का एक परम्परागत रूप होता है जबकि शहरी जिले में एक सभापति और पार्षद ही होते हैं।

स्थानीय सरकार की दृष्टि से बड़े आकार वाले कस्बों द्वारा अनेक प्रकार की समस्यायें उठाई जाती हैं। कई दृष्टियों से विचार करने के बाद यह निर्णय लिया गया कि बड़े कस्बे काउन्टी परिषदों के शासन क्षेत्र में नहीं आने चाहिये। बड़े कस्बे जिनकों कि काउन्टी बारोज कहा जाता है, अपने आप में स्वतन्त्र इकाई होते हैं। स्थानीय सरकार की दृष्टि से इन शहरों के चारों ओर दीवाल रहती है। ये भौगोलिक दृष्टि से तो काउन्टी में ही रहते हैं किन्तु वैसे काउन्टी परिषद के अधिकार क्षेत्र से पूरी तरह बाहर रहते हैं। कई बार काउन्टी बारोज को एकसूत्रीय संस्था कह दिया जाता है किन्तु यह शब्दों का गलत प्रयोग है क्योंकि सूत्र (Tier) जहां भी होता है वहां कम से कम दो निकायों का होना जरूरी है। इन निकायों की स्थिति ब्रिटिश स्थानीय सरकार के अन्य स्तरों जैसे गैर काउन्टी बारो, शहरी जिले एवं गांव आदि से भिन्न होती है। कई सूत्रीय व्यवस्था में अनेक प्रकार की परिषदें होती हैं। उनके बीच कार्य का स्पष्ट रूप से विभाजन किया जाता है। अतः निकाय सामान्य उद्देश्य वाली सत्तायें (General Purpose Authority) कही जा सकती हैं किन्तु काउन्टी बारोज सर्वोद्देश्यी सत्ता (All Purpose Authority) होते हैं।

उद्देश्य के आधार पर क्षेत्र का निर्धारण
(Determination of Area on the Basis of Purposes)

क्षेत्र के आधार पर स्थानीय सत्ताओं के लक्ष्य की प्रवृति एवं प्रसार में भारी अन्तर आ जाता है। उद्देश्य की दृष्टि से स्थानीय निकायों को प्रायः तीन प्रकार का माना जाता है। इन उद्देश्यों को हम स्थानीय सरकार के क्षेत्र निर्धारण का आधार भी कह सकते हैं। हम इसका प्रथम आधार इस मान्यता को कह सकते हैं कि स्थानीय निकायों द्वारा इतनी सेवायें संचालित की जानी चाहिए जितनी कि की जा सकें। एक सेवा के लिए क्षेत्र को संतोषजनक होना चाहिए। इस प्रकार हम स्थानीय सरकार से सम्बन्धित एक-एक सेवा को लें और यह विचार करें कि इसके लिए उपयुक्त क्षेत्र क्या रहेगा। दूसरे शब्दों में हमें इस पर विचार करना होगा कि केचमेन्ट क्षेत्र (Catchment Area) क्या है। यह एक सामान्य पद है जिसका अर्थ होता है एक ऐसा क्षेत्र जो कि किसी संस्था का पोषण करे (An area which seeds some institution).

इस प्रकार एक स्कूल या अस्पताल का केचमेन्ट क्षेत्र वह कहलायगा जहां से कि विद्यार्थी या मरीज प्राप्त किये जा सकें। अलग अलग प्रकार के स्कूलों के केचमेन्ट क्षेत्र भी अलग-अलग होंगे। सोचने का एक अन्य तरीका यह हो सकता है कि इन संस्थाओं के आकार के बारे में विचार करें कि क्या यह संतोषजनक रूप मेंपर्याप्त सेवा प्रदान कर सकेगा। एक स्कूल में इतना

योग्य एवं पर्याप्त स्टाफ होना चाहिए कि वह अध्यापक के दायित्व को सम्भाल सके। यंत्रों एवं अन्य साधनों के अपनाने से भी क्षेत्र के आकार में पर्याप्त अन्तर आ जाता है। बहुत वर्ष हुए तब यह माना जाता था कि अग्नि-रक्षकों का सेवित क्षेत्र छोटा होना चाहिए ताकि अग्नि के इंजन को अग्नि तक शीघ्र ही ले जाया जा सके, किन्तु अब स्थिति बदल चुकी है। आज अग्नि बुझाने वाला यन्त्र एक जगह से दूसरी जगह बिना अधिक समय लगाए जा सकते हैं। इसलिए यदि हम उसके कार्यकर्ताओं को कार्य में संलग्न रखना चाहते हैं तो इस सेवा के क्षेत्र को बड़ा बनाना होगा। प्राय: ऐसा कम हो पाता है कि किसी भी सेवा के क्षेत्र में हम यह कह दें कि इसका सर्वश्रेष्ठ क्षेत्र यही है और इसमें कोई परिवर्तन करने की जरूरत नहीं पड़ेगी। जल वितरण जैसी सेवा के कुछ स्वाभाविक क्षेत्र होते है। हम यह कह सकते हैं कि पानी एक विशेष स्थान से आएगा और उसे इस क्षेत्र में वितरित किया जा सकेगा किन्तु अधिकतर सेवाओं के सम्बन्ध में स्वाभाविक क्षेत्र (Natural Area) नहीं होता। उनके सही क्षेत्र का निर्धारण दो बातों के आधार पर किया जा सकता है। प्रथम है सम्बन्धित जनता की सुविधा और दूसरी है बचत एवं कार्यकुशलता के लिए क्रियान्विति का उपयुक्त स्तर। इस प्रकार के विषयों में प्रत्येक सेवा के लिए अलग सत्ता की रचना करनी होती है। इस दृष्टि से हमें स्कूलों के लिए उपयुक्त प्रत्येक क्षेत्र के लिए एक स्कूल बोर्ड बनाना होगा, जल वितरण उद्यम के लिए उपयुक्त क्षेत्र के लिए जल मण्डल बनाना होगा और इसी प्रकार यातायात मण्डल, अस्पताल मण्डल, आदि बनाने होंगे। ये निकाय विशेष उद्देश्य के लिए बनाई गई या सामयिक (Ad-hoc) सत्ता कही जा सकती हैं। जब अलग-अलग क्षेत्रों में प्रदान की जा रही स्कूल, जल-वितरण, यातायात एवं स्वास्थ्य से सम्बन्धित सेवाएं कुछ समझौता करके एक ही सत्ता के आधीन आ जाती हैं तब वह सत्ता सामान्य उद्देश्य वाली सत्ता कहलाती है। इसे बहुउद्देश्यीय सत्ता भी कहा जा सकता है। इस प्रकार स्थानीय सत्ताओं के बीच बहुउद्देश्यीय एवं विशेष उद्देश्यीय के रूप में अन्तर किया जा सकता है।

दूसरे, किसी विशेष सत्ता की रचना के प्रस्ताव पर प्रायः शीघ्र ही सामान्य स्वीकृति प्राप्त हो जाती है। उदाहरण के लिए यदि कोई गांव कुछ सुधार करना चाहता है और इस दृष्टि से वह जल-वितरण की व्यवस्था करना चाहता है तो उसके कुछ निवासी विशेष जल-वितरण सत्ता के संगठन की मांग कर सकते हैं और वे कह सकते हैं कि इस सत्ता के क्षेत्र में किसी के द्वारा हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए तथा इसको पानी काम में लाने वालों के भुगतान द्वारा समर्थित किया जाना चाहिए ; ऐसे प्रस्ताव का सम्भवतः कोई भी विरोध नहीं करेगा।

तीसरे, जब विशेष उद्देश्य के लिए एक सत्ता की रचना की जाती है तो यह सम्भव बन जाता है कि उसका प्रशासकीय मण्डल कुछ हितों का प्रतिनिधित्व करेगा। नालियों से सम्बन्धित मण्डल में उस भूमि के स्वामी एवं उपभोक्ताओं को प्रतिनिधि बनाया जा सकता है जिनकी भूमि की नालियों को साफ किया जाता है। दूसरी ओर सामान्य उद्देश्य वाली परिषद प्रायः निर्वाचित होती है और यह निश्चित नहीं होता कि विशेष हितों का प्रतिनिधित्व किया जाएगा।

चौथे, विशेष उद्देश्य वाली सत्ता को वहां भी अपनाया जा सकता है जहां के क्षेत्र सामान्य उद्देश्य वाली सत्ता के लिए अनुपयुक्त हों। कुछ परिस्थितियों में विशेष उद्देश्य वाली सत्ता अपरिहार्य बन जाती है।

पांचवें, विशेष उद्देश्य वाली सत्ताओं को कभी-कभी यह सोच कर बना दिया जाता है कि उनका प्रशासन बिना दलीय राजनीति के सम्पन्न किया जा सकेगा। इंगलैण्ड में प्रसारण के लिए राष्ट्रीय-मण्डल और राष्ट्रीय-उद्योग इसके उदाहरण हैं।

विशेष उद्देश्य के लिए बनाई गई संस्थाओं के कुछ नुकसान भी होते हैं जो कि सामान्य उद्देश्य के लिए बनाई जाने वाली सत्ता के लाभ बन जाते हैं। इनमें प्रथम है कि यदि विशेष उद्देश्य वाली सत्ताओं को जनता द्वारा निर्वाचित किया जाए तो इसके लिए अनेक निर्वाचन करने पड़ेंगे और यदि इनको अलग-अलग समय कराया गया तो उनमे लगातार परेशानी बनी रहेगी और यदि उनको एक ही साथ कराया गया तो उनसे भ्रम पैदा हो जाएगा। दूसरे, विशेष उद्देश्यों वाली सत्ताओं के संगठन से जनता की असुविधा बढ़ जाती है। उनको यह पता नहीं रहता कि किस काम के लिए किस सत्ता के पास जाना चाहिए। उदाहरण के लिए एक बच्चे के मां-बाप स्पष्टतः यह नहीं जान पाते कि कुछ मामले शिक्षा विभाग के अन्तर्गत आते है अथवा स्वास्थ्य सेवाओं के युद्ध-कालीन अनुभवों से यह स्पष्ट हो गया था कि सारी सेवाएं एक ही स्थान एवं अभिकरण द्वारा प्राप्त करना सुविधा-जनक रहता है। तीसरे, सामान्य उद्देश्य वाली सत्ता में विभिन्न सेवाएं परस्पर सम्बन्धित रहती है और ऐसा रहने पर ही वे प्रभावित जनता की अच्छी प्रकार सेवा कर पाती हैं। यह सम्भव है कि यातायात, गृह-निर्माण, जल-वितरण एवं विद्युत आदि सेवाओं को अलग से रखा जाए और उनका प्रशासन किया जाए। विकास की दृष्टि से उनको समन्वित किया जाना जरूरी होजाता है। गृह-निर्माण में विकास का अर्थ होता है कि इसके लिए

अधिक स्कूल तथा अन्य सुविधाओं की आवश्यकता होगी। केवल सामान्य उद्देश्य वाली सत्ता रखने पर ही यह निश्चित रूप से माना जा सकता है कि उनके बीच समन्वय रहेगा। चौथे, समाज की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए यह जरूरी होजाता है कि लोग जिन कार्यों को करना चाहते हैं उन्हें करने के लिए उनके पास पर्याप्त धन हो। रहन-सहन का स्तर, घर की बनावट, शिक्षा, स्वास्थ्य एवं अस्पताल आदि के क्षेत्र में सुधार केवल तभी किए जा सकते हैं जब कि धन पर्याप्त मात्रा में हो; किन्तु ऐसा प्रायः नहीं होता और यही कारण है कि अपने प्रतिदिन के कार्यों में स्थानीय सरकार को कुछ महत्वपूर्ण कार्यों को प्राथमिकता देनी ही पड़ती है। प्राथमिकता की इस प्रक्रिया के मार्ग में विशेष उद्देश्य वाली सत्ता व्यवस्था में अत्यन्त कठिनाई रहेगी और यह तय करना मुश्किल रहेगा कि प्रसार कहां किया जाना चाहिए। यद्यपि सामान्य उद्देश्य वाली सत्ता में कठिनाई तो होती ही है किन्तु यह कठिनाई अपेक्षाकृत कम रहती है। उन्नीसवीं शताब्दी में ग्रेट ब्रिटेन की स्थानीय सरकार में अनेक विशेष उद्देश्य वाली सत्ताएं थीं किन्तु धीरे-धीरे ये मिटती चली गईं।

स्थानीय सरकार के विभिन्न क्षेत्र

[Different Areas of Local Government]

ग्रेट ब्रिटेन में स्थानीय प्रशासन के मुख्य रूप से तीन क्षेत्र पाए जाते हैं– इनमें प्रथम है काउन्टी, दूसरा है नगरपालिका बारो और तीसरा है पेरिश। काउन्टी स्थानीय सरकार का सबसे व्यापक क्षेत्र है। यह सूत्रीय व्यवस्था का सर्वोच्च स्तर माना जाता है। ब्रिटिश स्थानीय प्रशासन में क्षेत्र के सम्बन्ध में विभिन्न प्रश्न उठते हैं, जैसे इन क्षेत्रों की मूल विशेषताएं क्या हैं, इनका आपसी सम्बन्ध क्या है, क्या कार्य की दृष्टि से ये क्षेत्र उपयुक्त हैं, इनमें विकास की दृष्टि से क्या किया जाना चाहिए। इन क्षेत्रों के बारे में व्यापक रूप से अध्ययन करने से पूर्व यह उपयुक्त रहेगा कि इनकी विभिन्न सत्ताओं की एक सामान्य जानकारी प्राप्त करली जाए। इन संस्थाओं को निम्न चित्र द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है—
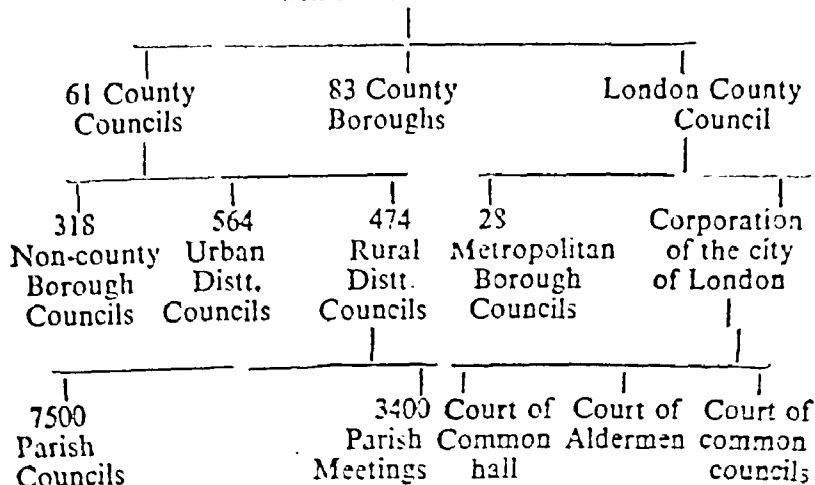
प्रत्येक काउन्टी में कई इकाइयाँ होती हैं किन्तु सन् १८८८ के अधिनियम के बाद से ही काउन्टी बारोज पर इसका कोई नियन्त्रण नहीं रहता। काउन्टी बारोज स्तर की दृष्टि से काउन्टियों के समान होते हैं तथा इनके अधिकार क्षेत्र से स्वतन्त्र रहते हैं। काउन्टी की परिषद पूरे काउन्टी के क्षेत्र पर अधिकार रखती है। किन्तु यह काउन्टी बारो की सीमा आते ही रुक जाता है नगरपालिका बारो एवं शहरी तथा देहाती जिलों तथा पेरिशों पर काउन्टी परिषद का पूरा नियन्त्रण रहता है। इसके कुछ अपवाद भी हैं। सन् १९४६ तक काउन्टी परिषद नगरपालिका बारो की पुलिस के सम्बन्ध में कोई अधिकार नहीं रखती थी। सन् १९४४ तक प्राथमिक शिक्षा के सम्बन्ध में उसे कोई अधिकार नहीं था। काउन्टी बारोज पूर्णतः स्वतन्त्र शक्तियों वाला निकाय है। उनके क्षेत्र में कुछ शक्तियों का प्रयोग काउन्टी परिषद द्वारा किया जाता है। इसके अतिरिक्त वे स्वतन्त्र रूप से अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हैं। नगरपालिका बारो के क्षेत्र में जिन सेवाओं का सम्बन्ध प्राथमिक शिक्षा, माध्यमिक शिक्षा, पुलिस, व्यक्तिगत स्वास्थ्य सेवाएं आदि से होता है वे काउन्टी परिषद द्वारा सम्पन्न किए जाते हैं। शहरी जिलों में भी इन सेवाओं को काउन्टी परिषद ही सम्पन्न करती है। देहाती जिले छोटे निकाय होते हैं, इनकी शक्तियां भी कम होती हैं। इनको शिक्षा, पुलिस या महत्वपूर्ण सड़कों के बारे में कोई शक्ति प्राप्त नहीं है।

नगरपालिका बारो, शहरी जिलों एवं देहाती जिलों को मिला कर पहले काउन्टी जिले का नाम दे दिया जाता था। इस प्रकार कुल मिला कर स्थानीय सरकार के निकायों की संख्या छः हो जाती है। ये हैं—काउन्टी बारो, प्रशासकीय काउन्टी, नगरपालिका या गैर काउन्टी बारो, देहाती जिला, शहरी जिला और पेरिश। लन्दन की काउन्टी परिषद में अनेक बारोज हैं जिनको राजधानी बारोज की संज्ञा दी जाती है। लन्दन शहर में लगभग अट्ठाईस राजधानी बारो परिषदें हैं। इसके अतिरिक्त लन्दन नगर के लिए एक निगम है। ब्रिटिश स्थानीय प्रशासन में कार्य कर रहे विभिन्न निकायों के क्षेत्र सदियों के विकास का परिणाम हैं। सन् १८३५ के नगर निगम अधिनियम ने बारोज को निर्वाचन के आधार पर पुनर्गठित किया। सन् १८८८ के अधिनियम ने एक नए प्रकार के बारो की स्थापना की, यह था काउन्टी बारो। इस अधिनियम में काउन्टी परिषदें भी स्थापित थीं। सन् १८९४ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने शहरी, देहाती और पेरिश परिषदें स्थापित कीं और इनको नगरपालिका बारोज के साथ प्रशासकीय काउन्टी के स्वरूप में निश्चित कर दिया। जब सन् १८८८ में अन्य काउन्टी परिषदों की स्थापना की गई तभी लन्दन काउन्टी परिषद को भी बनाया गया किन्तु राजधानी बारोज की स्थापना सन् १९०० में हुई। वर्तमान स्थानीय सरकार की मूल विशेषता यही मानी जाती है कि वहां काउन्टी बारो की इकाई एवं क्षेत्र अन्य इकाइयों से भिन्न हैं।

सन् १९२६ तक काउन्टी बारो की स्थापना के लिए कम से कम पचास हजार जनसंख्या का होना जरूरी था; किन्तु बाद में नए काउन्टी बारो की स्थापना के लिए कम से कम जनसंख्या पचहत्तर हजार कर दी गई।

सन् १९४३ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने यह मात्रा एक लाख तक कर दी। आज भी यदि कोई गैर काउन्टी बारो काउन्टी बारो का स्तर प्राप्त करना चाहता है तो उसमें कम से कम एक लाख जनसंख्या का होना जरूरी है। प्रायः प्रत्येक गैर काउन्टी बारो यह प्रयास करता है कि वह काउन्टी बारो बन जाए ताकि वह जिस काउन्टी में स्थित है उसके अधिकार क्षेत्र से बच सके। विभिन्न काउन्टी बारोज की जनसंख्या एवं आकार में भारी अन्तर वर्तमान है। उदाहरण के लिए बिर्मिंघम में ग्यारह लाख छः हजार जनसंख्या और ८० वर्ग मील क्षेत्र है जबकि केन्टरबरी में तीस हजार जनसंख्या है और सात वर्ग मील का क्षेत्र है। काउन्टी बारोज में से हो कर एक प्रशासकीय काउन्टी के क्षेत्र में आने वाले प्रत्येक नगरपालिका बारो, शहरी जिले एवं देहाती जिले तथा देहाती पेरिशें काउन्टी परिषद के अधिकार क्षेत्र में रहती हैं। इन काउन्टी क्षेत्रों में सेवाओं को काउन्टी परिषद, नगरपालिका बारो परिषद, शहरी जिला परिषद, देहाती जिला परिषद और पेरिशों में बांट दिया जाता है। नगरपालिका बारोज एवं जिलों द्वारा इतना राजस्व इकट्ठा किया जाता है जो कि काउन्टी एवं उनके स्वयं के लिए काम में आ सके।

इस प्रकार काउन्टी बारो का एक नागरिक जो सेवाएं प्राप्त करता है वे केवल काउन्टी बारो परिषद द्वारा दी जाती हैं। किन्तु नगरपालिका बारो या शहरी जिलों का व्यक्ति यह पाता है कि उसे कुछ सेवाएं नगरपालिका बारो या शहरी जिला परिषद द्वारा दी जा रही हैं और अन्य सेवाएं काउन्टी परिषद द्वारा। यदि वह जनता जो कि देहाती जिलों में रह रही हो तो उसे कुछ सेवाएं काउन्टी परिषद द्वारा दी जाएंगी। कुछ देहाती जिला परिषद द्वारा और अन्य सेवाएं पेरिश परिषदों द्वारा या मिटिंगों द्वारा दी जाएंगी। नगरपालिका बारो शहरी जिले, देहाती जिले और पेरिश परिषदें, यद्यपि ये सभी काउन्टी परिषद के क्षेत्र में कार्य करते हैं किन्तु ये उसके मातहत नहीं होते। काउन्टी क्षेत्र के अन्तर्गत प्रत्येक प्रकार की परिषद उसे सौंपे गए कार्य को सम्पन्न करने के लिए स्वतन्त्र रूप से उत्तरदायी है।

ग्रेट ब्रिटेन की स्थानीय सरकार के निकाय बनावट एवं कार्यों की दृष्टि से इतने जटिल होते हैं कि उन्हें समझना कई बार बड़ा कठिन बन जाता है। यदि कोई व्यक्ति यह प्रश्न करना चाहे कि ब्रिटिश स्थानीय प्रशासन में शहर (City) का क्या स्थान है तो इसका उत्तर यही दिया जाएगा कि स्थान वास्तविकता की दृष्टि से कुछ भी नहीं है। ग्रेट ब्रिटेन के बड़े से बड़े शहर जैसे लिवरपूल, मेनचेस्टर आदि में काउन्टी बारोज के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। इस प्रकार नगर (City) शब्द केवल एक सम्मान-सूचक पद है जो कि स्थानीय प्रशासन की दृष्टि से कोई महत्व नहीं रखता।

१९६० की वस्तुस्थिति के अनुसार देश में ६२ प्रशासकीय काउन्टीज थीं। प्रशासकीय काउन्टी वह होती है जिसमें से काउन्टी बारोज को अलग निकाल लिया जाता है। यदि ऐसा नहीं किया जाए तो ऐसी स्थिति में भौगोलिक

काउन्टी की सीमाओं से मिलती हैं। लन्दन एक भौगोलिक काउन्टी नहीं है। बल्कि प्रशासकीय काउन्टी है। राजधानी लन्दन सरकार, लन्दन काउन्टी परिषद के क्षेत्र की जनसंख्या ३२ लाख है। प्रान्तीय प्रशासकीय काउन्टियों में आकार की दृष्टि से पर्याप्त विभिन्नताएं वर्तमान हैं। लंकाशायर और मिडिलसेक्स (Middlesex) की जनसंख्या दो मिलियन से अधिक है जब कि रूटलैण्ड (Rutland) की जनसंख्या केवल २३ हजार है। तेरह काउन्टियां ऐसी हैं जिनकी जनसंख्या एक लाख से कम है। काउन्टी बारोज की संख्या ८३ है। भविष्य में केवल उन्हीं प्रदेशों को काउन्टी बारो बनाया जा सकता है जिनकी जनसंख्या कम से कम एक लाख हो। इस श्रेणी के लगभग ३४ कस्बों की जनसंख्या इस मात्रा से कम है। केन्टरबरी की जनसंख्या केवल तीस हजार है। इनमें से लगभग बीस कस्बों की जनसंख्या करीब दो लाख है। ये सभी मिले-जुले शहरी समाज हैं।

नगरपालिका बारोज की संख्या ३१८ है और मैट्रोपोलिटन बारोज की संख्या २८ है। इनमें से लगभग ३६ नगरपालिका बारोज की जनसंख्या ५००० और १०००० के बीच में है और करीब पचास की जनसंख्या ५००० से नीची है तथा करीब पचास की जनसंख्या २५०० से भी कम है। मोन्टगोमरी में केवल ८८० निवासी रहते हैं। ये छोटे-छोटे कस्बे अधिकतर प्राचीन केन्द्र रहे हैं। इनको औद्योगिक क्रान्ति से पूर्व पर्याप्त स्तर एवं सम्मान मिला हुआ था किन्तु बाद में नए कस्बों के बनने से ये क्षीण हो गए। दूसरी ओर लगभग १५ नगरपालिका बारोज की जनसंख्या एक लाख से भी ज्यादा है। यह सब बीसवीं शताब्दी के दौरान विशाल लन्दन शहर में अर्द्ध-शहरी विकास के कारण हुआ।

शहरी जिलों की संख्या ५६४ है। इनमें से दो की जनसंख्या एक लाख से भी ज्यादा है किन्तु करीब २५४ जिले दस हजार से भी कम जनसंख्या वाले हैं। इस वर्ग के निकायों में कई एक का आकार अत्यन्त छोटा है। १२२ शहरी जिले तो ५००० से भी कम जनसंख्या वाले हैं। देहाती जिलों की संख्या ४७४ है। इनमें से पांच का क्षेत्रफल दो लाख एकड़ से भी ज्यादा है जो कि छः काउन्टी परिषदों के व्यक्तिगत क्षेत्रफल से भी ज्यादा है। इनमें से किसी की भी जनसंख्या एक लाख से भी अधिक नहीं है और इस समूह में आने वाली लगभग $\frac{4}{6}$ इकाइयों की जनसंख्या ५००० से लेकर तीस हजार तक है किन्तु ३६ इकाइयां ५००० से भी कम जनसंख्या वाली हैं। कुछ ऐसे पेरिशों की संख्या ७५०० है जहां पर कि प्रशासन व्यवस्था परिषद द्वारा संचालित की जाती है। दूसरी ओर करीब ३४०० पेरिशें बैठकों (Meetings) द्वारा प्रशासित होती हैं।

स्थानीय सरकार सीमा आयोग के कार्य

[The Functions of Local Government Boundry Commission]

ग्रेट ब्रिटेन की स्थानीय सरकार का जो क्षेत्र निर्धारित कर दिया गया है वह अत्यन्त जटिल, असम्पूर्ण एवं उलझा हुआ है। सन् १८८८ में जबकि वर्तमान स्थानीय सरकार के रूप का निश्चय किया गया था उस समय यह अनुभव किया गया कि समय-समय पर यह जरूरी होगा कि

सामान्य एवं आर्थिक विकासों के सन्दर्भ में इस बनावट में परिवर्तन किए जाएं। सन् १८८८ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने, स्थानीय सरकार मण्डल को स्थानीय सरकार के क्षेत्र में परिवर्तन करने का कार्य सौंपा गया तथा यह भी शक्ति दी गई कि नई सत्ताएं बना सके और वर्तमान सत्ताओं को मिला सके। सन् १९२९ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने यह प्रावधान रखा कि हर बीस साल के बाद इन सत्ताओं की पुनरीक्षा कर ली जाए। इन दोनों अधिनियमों द्वारा जो परिवर्तन लाए गए वे तीव्र गति से परिवर्तित होती हुई सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियों के अनुकूल नहीं थे। सन् १८८८ के बाद स्थानीय सरकार निकायों को कई नए उत्तरदायित्व सौंप दिए गए हैं। शिक्षा, स्वास्थ्य एवं गृह निर्माण के क्षेत्र में इनकी शक्तियां बढ़ गई हैं। दूसरी ओर उनके अनेक उत्तरदायित्व छीन भी लिए गए है और इन्हें केन्द्रीय सरकार या राष्ट्रीय निगमों को दे दिया गया है।

ग्रेट ब्रिटेन की स्थानीय सरकार की यह विशेषता मानी जाती है कि वहां काउन्टी तथा काउन्टी बारोज के बीच सदैव ही संघर्ष छिड़ा रहता है। सन् १८८८ के अधिनियम ने ६१ कस्बों को काउन्टी बारो बना दिया। इनमें से प्रत्येक की जनसंख्या ५०००० से ज्यादा थी। अधिनियम में यह भी कहा गया कि कम से कम इतनी जनसंख्या प्राप्त कर लेने के बाद अन्य काउन्टी बारोज बनाए जा सकेंगे। काउन्टी बारोज की सीमा के प्रसार की भी व्यवस्था की गई। सन् १८८८ से लेकर सन १९२६ तक अनेक बारोज को प्रावधित आदेश द्वारा काउन्टी बारोज के रूप में पदोन्नत कर दिया गया, और इससे भी अधिक काउन्टी बारो की सीमा का प्रसार किया गया। जब किसी गैर काउन्टी बारो को काउन्टी बारो का स्तर दे दिया जाता तो इससे काउन्टी परिषदों को बहुत बुरा मालूम होता था क्योंकि अब वे उन पर किसी शक्ति का प्रयोग नहीं कर सकती थीं। उनके राजस्व के स्रोत भी कम हो गये थे अतः काउन्टी परिषद द्वारा किसी गैर काउन्टी बारो को काउन्टी बारो का स्तर दिया जाना एक ऐसा बड़ा आपरेशन समझा जाता था जिसकी मरीज द्वारा कभी भी क्षति-पूर्ति न की जा सके। सन् १९२६ के अधिनियम द्वारा यह व्यवस्था की गई कि भविष्य में कोई भी नया काउन्टी बारो केवल संसद के अधिनियम द्वारा ही बनाया जा सकता था। स्थानीय सरकार की सत्ताओं के बीच का मन-मुटाव और विरोध केवल काउन्टी एवं काउन्टी बारो तक ही सीमित नहीं था वरन् शहरी और देहाती जिला परिषदें भी लगातार काउन्टी बारो सत्ताओं के हस्तक्षेप का विरोध करती रहती थीं जो कि उनके अधिकार क्षेत्र में हाथ डाल कर अपनी सीमाओं का प्रसार करना चाहते थे। देहाती एवं शहरी जिला परिषदों ने यह मांग की कि काउन्टी परिषदें काउन्टी जिलों को यथासम्भव कार्य हस्तान्तरित कर दें किन्तु काउन्टी परिषदों ने अपने कार्य दूसरे सूत्र की सत्ताओं कोसौंपने में अरुचि दिखाई।

इन विभिन्न मत विरोधों को दूर करने के लिए तथा स्थानीय सरकार की बनावट को हमेशा देखते रहने के लिये १९४५ के स्थानीय सरकार सेवा आयोग अधिनियम ने एक स्थानीय सरकार सीमा आयोग की स्थापना की।

यह आयोग एक स्थाई आयोग था, इसे विस्तृत शक्तियां प्रदान की गई। यह स्थानीय निकायों के क्षेत्र में परिवर्तन कर सकता था, नई स्थानीय सत्ताओं को बना सकता था, नगरपालिका बारोज को काउन्टी बारोज के रूप में पदोन्नत कर सकता था तथा काउन्टी बारोज के पद को कम कर सकता था। अधिनियम के अनुसार केवल एक लाख से अधिक जनसंख्या वाले प्रदेश ही काउन्टी बारो बनने के लिए प्रार्थना पत्र दे सकते थे तथा साठ हजार से अधिक जनसंख्या वाले काउन्टी बारोज के पद को नीचा नहीं किया जा सकता था। लन्दन को इस आयोग के अधिकार क्षेत्र से अलग रखा गया तथा यह आयोग मिडिल सैक्स की किसी भी काउन्टी के भाग को काउन्टी बारो नहीं बना सकता था। सन् १९४७ में इस आयोग ने अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की जिसके अनुसार इसके अधिकारी एवं सदस्यों को स्थिति का अध्ययन करने का अवसर मिला। वे इस निर्णय पर पहुंचे कि स्थानीय निकायों की सीमाएं आवश्यक रूप से उनके कार्यों से सम्बन्ध रखती हैं और उनके कार्य सीमा आयोग के अधिकार क्षेत्र से बाहर के विषय हैं अतः केवल सीमाओं के बारे में प्रस्ताव करना बेकार था। इस प्रकार १९४७ में आयोग द्वारा प्रस्तुत की जाने वाली रिपोर्ट के अन्दर न केवल स्थानीय सरकार की बनावट से सम्बन्धित सुधारों का ही वर्णन था वरन् स्थानीय सरकार के कार्यों के पुनर्वितरण पर भी विचार किया गया था। इनमें से कुछ प्रस्तावों को क्रियान्वित करने के लिए व्यवस्थापन की आवश्यकता थी।

किसी सेवा का आकार निश्चित करते समय आयोग का यह उद्देश्य रहता था कि प्रशासन के क्षेत्र को इतना छोटा बना दिया जाय ताकि एक कार्यकुशल सेवा प्राप्त की जा सके। इस सिद्धान्त को स्वीकार करते समय आयोग ने यह दृष्टिकोण अपनाया कि स्थानीय हितों की साधना करना सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य है। प्रतिवेदन में कहा गया कि प्रशासन को प्रभावशाली इकाई बनाने के लिए छोटी काउन्टियों को मिला देना चाहिये और बड़ी काउन्टियों को दो या अधिक काउन्टियों में विभाजित कर देना चाहिये ताकि प्रत्येक काउन्टी में दो लाख से लेकर दस लाख तक की जनसंख्या रह सके। जो वर्तमान काउन्टी बारो दो लाख से अधिक जनसंख्या वाले हैं उनको काउन्टी का नाम दिया जाना चाहिए और इस प्रकार एक नये प्रकार की स्थानीय सत्ता स्थापित की जानी चाहिये। काउन्टी बारो को उसके क्षेत्र की

निर्णय ले लिया और १९४५ के अधिनियम को बदलने की सोची जो कि इस आयोग का आधार था। १९४९ के अधिनियम द्वारा ये दोनों बातें क्रियान्वित करदी गई। इसके परिणामस्वरूप उन समस्याओं को बिना सुलझी हुई छोड़ दिया गया जिन्हें सुलझाने के लिए इस आयोग की स्थापना की गई थी, और इस प्रकार स्थानीय सरकार के सुधार को अनिश्चय के हाथों में छोड़ दिया गया।

स्थानीय सत्ताओं के क्षेत्र का भविष्य
[Future of areas of Local Authorities]

स्थानीय सरकार की सत्ताओं का भविष्य क्या हो सकता है इस सम्बन्ध में किसी निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए दो बातों पर ध्यान देना आवश्यक है। प्रथम तो हमें अब तक हुए विकास के परिणामों को देखना होगा और दूसरे, यह देखना होगा कि वर्तमान सत्ताओं में संयुक्त कार्यक्रमों के लिए कौन कौन से प्रवन्ध किये गये और इस सम्बन्ध में क्या सिफारिशें की गई। यदि हम ब्रिटिश स्थानीय सरकार का अध्ययन करे तो पायेंगे कि वहां स्थानीय सत्ताओं ने छोटे क्षेत्रों से बड़े क्षेत्रों की ओर प्रगति की है। इसके अतिरिक्त स्थानीय सत्ताओं के बीच किये गये कार्यों के वितरण में स्पष्टता नहीं थी। संयुक्त कार्यक्रमों के लिए जो प्रवन्ध किये गये अथवा बड़ी सत्ताओं ने छोटी सत्ताओं को जो शक्तियां हस्तान्तरित की उससे पर्याप्त उलझनें एवं अस्पष्टताएं सामने आईं। पुलिस सेवाएं पेरिश से लेकर काउन्टी तक संचालित होती थी। कुछ नगरपालिका बारोज को भी थोड़ी सी शक्तियां सौंपी गई। शिक्षा स्कूल बोर्ड जिलों से प्रारम्भ हुई थी और तीस साल के अन्दर अन्दर यह काउन्टी तथा काउन्टी बारो के हाथ में चली गई। निर्धनों की राहत का कार्य पेरिशों से प्रारम्भ हुआ था। किन्तु बाद में पेरिसों के संघ में चला गया। उसके बाद उसे काउन्टियों एवं काउन्टी बारो के हाथ में दिया और अन्त में यह सरकारी विभाग के हाथ में चला गया। विद्युत वितरण का कार्य पहिले छोटी शहरी सत्ता के हाथ में था, बाद में इसे काउन्टी द्वारा प्रशासित किया जाने लगा और अन्त में विशेष विद्युत क्षेत्र स्थापित कर दिये गये। ऐसी भी कुछ सेवाएं थीं जो कि प्रारम्भ से ही काउन्टी या काउन्टी बारोज के हाथों में रही।

यह विकास आसानी से या बिना किसी मनमुटाव के नहीं हुआ वरन् इस विकास के दौरान छोटी सत्ताओं ने विरोध एवं असन्तोष के भाव पूरी तरह से प्रदर्शित किये। एक लम्बे विकास के परिणामस्वरूप जिन कार्यों के लिए बड़े आकार के संगठन की आवश्यकता थी उन्हें काउन्टी या काउन्टी बारोज को सौंप दिया गया, संरक्षकों जैसे विशेष निकायों को समाप्त किया गया। छोटी सत्ताओं द्वारा जिन कार्यों को कुशलतापूर्वक किया जा सकता था उन्हें बारो एवं जिलों के हाथों में सौंपा गया। विकास के परिणामस्वरूप पेरिसों को इतना शक्तिहीन एवं कार्यहीन बना दिया कि स्थानीय प्रशासन में उनका कोई महत्व ही न रहा।

स्थानीय सरकार के क्षेत्र में सम्भवतः परिवर्तन की या बड़े स्तर के परिवर्तन की कोई आवश्यकता ही नहीं होती यदि स्थानीय सत्ताओं ने स्वेच्छा-

पूर्वक उन्हें सौंपी गई शक्तियों का प्रयोग किया होता। यदि ये स्थानीय सत्तायें सद्‌भावना एवं सहयोग के साथ कार्य करती तो बिना संसदीय हस्तक्षेप के या क्षेत्रों के पुनर्गठन के ही वे उन सेवाओं के संचालन के लिये आवश्यक संयुक्त प्रबन्ध कर लेती जिनमें कि बचत एवं तकनीकी की दृष्टि से एक बड़े क्षेत्र की आवश्यकता होती है। सहयोग की यह समस्या अंग्रेजी स्थानीय सरकार के विकास की एक मुख्य समस्या रही है।

केन्द्रीय सरकार द्वारा संयुक्त कार्यक्रमों (Joint Schemes) की व्यवस्था की गई ताकि स्थित सत्ताएं इसे अपना कर उन कार्यों को सम्पन्न करने के लिए पूर्ण एवं आत्मनिर्भर क्षेत्र बन सकें जिन्हें सम्पन्न करने के लिए बड़े क्षेत्र की जरूरत होती है। इस व्यवस्था के कारण स्थित अपर्याप्त क्षेत्रों को भी बनाये रखा जा सकता है क्योंकि उनके सम्बन्ध में भावनात्मक प्रेरणाएं उदित हो जाती हैं। इन कार्यक्रमों के द्वारा सत्ताओं को स्वयं का व्यक्तित्व बनाये रखने की सुविधा दी जाती थी, साथ ही कम दामों में अच्छी सेवाएं भी प्रदान की जाती थीं। इस प्रकार के संयुक्त कार्यक्रमों की सम्भावनाएं तो अनेक थीं। इन्हें मुख्यतः चार वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। इनके द्वारा सत्ताओं के उन विभिन्न वर्गों में भी संयुक्त कार्यक्रमों का प्रबन्ध कर दिया जाता था जो एक दूसरे से भिन्न रहते थे और एक ही वर्ग के विभिन्न सदस्यों के बीच भी, चाहे वे पर्याप्त शक्तियां रखते हों अथवा नहीं ये सभी कुछ अपवादों को छोड़ करके स्वेच्छापूर्ण थी। इन योजनाओं के इतिहास को आशावादी नहीं कहा जा सकता। इनमें से कई एक तो अनेक समझौतों के बाद जन्म ले पाते थे और वह भी ऐसी स्थिति में जबकि इन्हें न अपनाया जाता तो भारी हानि होने की सम्भावना थी। कई बार इन्हें न अपनाने का प्रभाव अप्रत्यक्ष होता था अर्थात् प्रशासकीय अकार्य-कुशलता, परेशानी एवं करों में वृद्धि आदि बातें पैदा हो जाती थी। इस प्रकार की संयुक्त योजनाओं के प्रति प्रायः स्थानीय जनता का विरोध ही रहता है। इसका कारण एक न होकर अनेक है। इसका एक कारण यह है कि संयुक्त योजना में सम्मिलित होने पर उन्हें यह डर रहता है कि एक बड़े क्षेत्र की आवश्यकता के पीछे उनको अपनी कुछ आवश्यकताओं एवं कार्यों का बलिदान करना पड़ेगा तथा एक या दो कार्य किसी अन्य सत्ता को सौंपने को बाध्य होना पड़ेगा। दूसरे, उन्हें यह डर भी रहता है कि यदि वे संयुक्त प्रबन्ध में सम्मिलित हो गये तो इसका अर्थ यह हुआ कि उन्होंने उस सेवा की आवश्यकता स्वीकार करली और संयुक्त बोर्ड के बहुमत के आधार पर उन्हें नये खर्च करने के लिए बाध्य किया जा सकता है जिसका अर्थ होगा, अधिक कर लगाना। तीसरे, वे अपनी स्वतंत्रता के प्रति सजग रहते हैं। साथ ही उनमें पड़ोसियों के प्रति ईर्ष्या की भावना भी रहती है। इसके परिणामस्वरूप वे किसी संयुक्त प्रबन्ध में सम्मिलित होने से पीछे हटते हैं। इस प्रकार के कार्य-क्रमों में उचित नेतृत्व का अभाव रहता है और इसलिए इनमें अधिक परेशानियां उत्पन्न हो जाती हैं।

स्थानीय सरकार के क्षेत्र के सम्बन्ध में एक सबसे बड़ी कठिनाई यह होती है कि इनके क्षेत्र को सही रूप में तय नहीं किया जा सकता। यह

देखना बड़ा कठिन है कि कौनसा क्षेत्र सबसे अधिक तकनीकी लाभ दे सकेगा। केवल कुछ सेवाओं में ही इसे निश्चित किया जा सकता है किन्तु यदि हम शिक्षा के सम्बन्ध में विचार करें तो स्पष्ट रूप में मालूम हो जायेगा कि हम यह नहीं कह सकते कि शिक्षा से सर्वश्रेष्ठ क्षेत्र में रहने वाली जनसंख्या एक मिलियन हो, डेढ मिलियन हो या आधी मिलियन हो या केवल एक लाख लोग ही हों। कितनी जनसंख्या रहने पर कैसा परिणाम प्राप्त होगा हम यह निश्चित रूप से नहीं जान पाते। ऐसे उदाहरणों में विभिन्न लोगों द्वारा सार्वजनिक कार्यों में ली जाने वाली रुचि से एवं प्रशासकीय योग्यता की मात्रा से बहुत प्रभाव पड़ता है। प्रो० फाइनर के मतानुसार स्थानीय सरकार का अनुभव यह प्रदर्शित करता है कि आप अपने क्षेत्र को चाहे कितना भी बड़ा कर लीजिये उसमें सीमा सम्बन्धी समस्याएं सदैव ही रहेंगी जब तक कि सभी अपना सर्वश्रेष्ठ क्षेत्र केन्द्रीय सत्ता द्वारा प्रशासित इंगलैण्ड को न बना लें। वे लिखते हैं कि इस प्रकार से कोई क्षेत्र कभी पूर्ण नहीं हो सकता और संयुक्त प्रबन्ध की आवश्यकताओं को कभी दूर नहीं किया जा सकता।*

स्थानीय क्षेत्र से सम्बन्धित समस्याओं को सुलझाने के लिए क्षेत्रीय या प्रान्तीय प्रबन्धों का सुझाव दिया जाता है। किन्तु यह सुझाव भी अनेक दोषों से पूर्ण है और इसलिए उसे भी मान्यता प्रदान नहीं की गई। कोई भी यह विश्वास नहीं करता कि काउन्टी बारो के लिए दो सूत्रीय कार्यक्रम अच्छा रहेगा या काउन्टियों के लिए तीन सूत्रीय कार्यक्रम श्रेष्ठ रहेगा। अतः फाइनर के मतानुसार स्थानीय सरकार के क्षेत्र का भविष्य यह प्रदर्शित करता है कि भविष्य में कुछ सेवाओं के केन्द्रीयकरण पर जोर दिया जायेगा, जिलों, काउन्टियों एवं बारोज की पुनः रचना की जायेगी, मुख्य इकाइयों का आकार बढ़ा दिया जावेगा और उनके बीच अच्छा सहयोग उत्पन्न किया जायेगा। कुल मिला कर ग्रेट ब्रिटेन में स्थानीय सरकार के क्षेत्र की समस्याएं इसी प्रकार बनी रहेंगी जिस प्रकार कि अन्य देशों का स्थानीयसरकारों में बनी रहती हैं किन्तु इन समस्याओं के प्रसार एवं प्रभाव को यहां तहां कुछ परिवर्तन करने के बाद कुछ कम किया जा सकता है और ऐसा बनाया जा सकता है कि वे अपने लक्ष्यों को अधिक से अधिक संतोषप्रद रूप में प्राप्त कर सकें।

स्थानीय सत्ताओं की बनावट
(The Structure of Local Authorities)

ग्रेट ब्रिटेन की स्थानीय सरकार को विभिन्न इकाइयों का अध्ययन करने के बाद यह उपयोगी एवं अनिवार्य हो जाता है कि इन विभिन्न इकाइयों का संगठन, अधिकार क्षेत्र आदि के विषय में थोड़ा अध्ययन किया जाय। यहाँ स्थानीय निकायों की रचना इसी सिद्धान्त के आधार पर की गई

---

*"Short of that, the area can never be perfect; nor can one ever avoid the necessity of joint arrangements."
—*Herman Finer,* Op. Cit. P. 180

है। इस तथ्य को यदि दूसरे रूप में कहा जाय तो अच्छा रहेगा क्योंकि असल में इन निकायों की एक समय में किसी एक व्यक्ति के प्रयास से नहीं की गई है बल्कि ये धीरे-धीरे परिस्थितियों एवं आवश्यकताओं के परिवेश में विकसित हुई हैं। ऐसी स्थिति में यह कथन भी एक विरोधाभास प्रतीत होता है कि स्थानीय सत्ता की रचना का गठन करते समय पूर्वनिर्धारित एवं तर्कपूर्ण मान्यताओं को आधार बनाया गया है। समय की परिस्थितियां अनिश्चित रहने के कारण उनसे प्रभावित कोई भी कार्य निश्चित सिद्धान्तों पर आधारित हो भी कैसे सकता है किन्तु फिर भी इतना अवश्य है कि पिछली शताब्दी में एक ऐसा रास्ता बन चुका था जिस पर चल करके स्थानीय सरकार की संस्थाएं अपना विकास कर सकें।

स्थानीय निकायों के विकास में प्रथम मान्यता यह बन गई कि स्थानीय सत्ताओं को संयुक्तरूपी होना चाहिए अर्थात उन्हें कई एक प्रकार के कार्य करने चाहिएं। केवल एक कार्य के लिए पृथक से किसी सत्ता की रचना करना गलत माना गया क्योंकि इस व्यवस्था के कुछ अपने दोष थे। दूसरे, स्थानीय सत्ताओं के क्षेत्र के रूप में कस्बों तथा काउन्टियों को मुख्य बनाया गया। दोनों ही क्षेत्रों के लिए अलग से सत्ताएं स्थापित की गई। औद्योगिक क्रान्ति के द्वारा जिन सेवाओं एवं अभिकरणों के विकास को आवश्यक बनाया गया उन्हें जब कस्बा और काउन्टी के आधार पर विकसित किया गया तो इस व्यवहार का अधिक विरोध नहीं किया गया। तीसरे, जब स्थानीय आधार पर विभिन्न सत्ताओं की रचना की गई तो यह आवश्यक बना दिया गया कि इन सत्ताओं के द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाओं में होने वाले खर्चे का भार स्थानीय समाज पर ही डाला जाय। यह व्यववस्था इसलिए की गई क्योंकि प्रत्येक क्षेत्र की अपनी कुछ विशेष आवश्यकताएं होती हैं और उस क्षेत्र के लोगों को ऐसी विशेष सुविधाओं की जरूरत होती है जो कि अन्य क्षेत्र के लोगों के लिए कोई महत्व नहीं रखती। ऐसी स्थिति में उन लोगों पर अतिरिक्त सेवाओं का भार डालना उचित प्रतीत नहीं होता। इसी आधार पर देहाती एवं शहरी क्षेत्रों के बीच अंतर किया गया। चौथे, बाद में इस मान्यता का विकास हुआ कि बड़े कस्बों के बाहर संयुक्त यंत्र ऐसा होना चाहिए जो कि बड़े क्षेत्र के लिए आवश्यक सेवाएं प्रदान कर सके, साथ ही वह अन्य छोटे क्षेत्रों के लिए आवश्यक नियंत्रण एवं प्रशासन की व्यवस्था कर सके।

इन विभिन्न सिद्धान्तों या मान्यताओं को अपनाकर स्थानीय सरकार ने कई एक महत्वपूर्ण लक्ष्यों की प्राप्ति की। संयुक्त संगठनों के सिद्धान्तों को लेकर प्रशासन में बचत लाने का प्रयास किया गया क्योंकि इसमें विभिन्न सेवाओं को परस्पर समन्वित किया जा सकता था और साधनों की सम्पन्नता एवं नये कार्यों के सम्बन्ध में लोचशीलता के कारण इस प्रकार की सत्ताओं में अधिक उपयोगिता की सम्भावना थी। काउन्टी बारोज में इस सिद्धान्त को पूरी तरह काम में लाया गया क्योंकि वे बारोज सर्वोद्देशीय सत्ता होते थे। शहरी एवं देहाती क्षेत्रों को अलग कर रखने की प्रक्रिया से प्रशासन एवं सुविधा की दृष्टि से उपयोगी प्रबन्ध की व्यवस्था की गई। उदाहरण के

लिए काउन्टी क्षेत्र में जो शहरी एवं उन्नत क्षेत्र थे उनको अलग से काउन्टी बारोज का स्तर दे कर उनके व्यक्तित्व को अलग रखा गया। ये शहरी क्षेत्र यद्यपि छोटे थे किन्तु फिर भी यहां के निवासियों के हित को ध्यान में रख कर इनके लिए पृथक ही प्रबन्ध किया गया। शहरी एवं देहाती इलाकों में कुछ अन्तर इसलिए रखे गए ताकि ऐसी व्यवस्था की जा सके जिसमें शहरी क्षेत्र अपने खर्च के लिए स्वय ही योगदान दें और जहां इन सुविधाओं की आवश्यकता नहीं है वहां की जनता पर अतिरिक्त भार न डाला जाए।

प्रशासकीय काउन्टी
[The Administrative County]

प्रशासकीय काउन्टी ब्रिटिश स्थानीय सरकार का प्रादेशिक दृष्टि से सबसे बड़ा क्षेत्र है। इसका जन्म सन् १८८८ के स्थानीय सरकार अधिनियम द्वारा हुआ था। इससे पूर्व काउन्टी सरकार, काउन्टी या शायर के पुराने रूप से मिलती-जुलती थी। सन् १८८८ के अधिनियम ने मुख्य रूप से दो उद्देश्यों की पूर्ति की। इसने काउन्टियों में निर्वाचित परिषद को प्रशासकीय सत्ता के रूप में रखा। इसके अतिरिक्त इसने ५०००० और इससे अधिक जनसंख्या वाले क्षेत्रों को नगरपालिका बारो के रूप में एक अलग ही स्वतन्त्र स्थानीय सत्ता बना दिया। साथ ही कुछ प्राचीन काउन्टियों को इसने अधिक प्रबन्ध योग्य प्रशासकीय काउन्टियों में विभाजित कर दिया। इस प्रकार कुल मिला कर अंग्रेजी स्थानीय सरकार में लन्दन सहित ६२ प्रशासकीय क्षेत्र बन गए। प्रशासकीय काउन्टी में जो क्षेत्र आता है वह संयुक्त प्रकृति का होता है अर्थात् उसमें शहरी एवं देहाती दोनों ही प्रकार के क्षेत्र रहते हैं। विभिन्न काउन्टियों की परिषद की सत्ता, अधिकार एवं संगठन परस्पर पर्याप्त भिन्नता रखते हैं। उनकी विभिन्नता का आधार उनके स्थानीय प्रशासकीय निकाय का स्तर होता है। दूसरे, काउन्टी एवं छोटे क्षेत्रों के बीच प्रदान की जाने वाली सेवाओं के सम्बन्ध में जो प्रवन्ध रहता है वह भी दोनों के बीच अन्तर का आधार है। काउन्टी बारो की जनसंख्या के अनुसार उनकी पुलिस, शिक्षा, आदि सेवाओं के क्षेत्र में काउन्टी की शक्तियां निर्धारित होती हैं।

जन्मकाल से ही काउन्टी द्वारा विभिन्न प्रकार के कार्य सम्पन्न किए जाते हैं। इन कार्यों की संख्या इतनी अधिक होती है कि इनका वर्णन करना सम्भव नहीं है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक काउन्टी की प्रगति के स्तर में अन्तर होता है इसलिए उन सभी की शक्तियां एवं अधिकार क्षेत्र भी एक जैसे नहीं होते हैं। एक काउन्टी को जो विभिन्न कार्य करने होते हैं उनमें प्रथम उल्लेखनीय कार्य शिक्षा है। काउन्टी बारोज को छोड़ कर प्रशासकीय काउन्टी को प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा में पूरा-पूरा अधिकार रहता है। कुछ काउन्टियों में जनसहयोग को अधिक महत्व दिया जाता है और उनके द्वारा इन कार्यों पर अधिक खर्च किया जाता है। तीसरे, सड़कों एवं स्थापना से सम्बन्धित कार्य मुख्य रूप से काउन्टी द्वारा किए जाते हैं। चौथे, पुलिस का नाम लिया जा सकता है जिसके सम्बन्ध में काउन्टी को महत्वपूर्ण अधिकार प्राप्त हैं। इन विषयों में आने वाली सेवाएं काउन्टी की सेवाओं का ६० प्रतिशत भाग होती हैं। इनके अतिरिक्त जनस्वास्थ्य के क्षेत्र

में प्रत्यक्ष नियन्त्रण बहुत कुछ कम रहता है। इसलिए काउन्टी को इन सेवाओं से सम्बन्धित महत्वपूर्ण अधिकार प्राप्त रहते हैं। कुछ विषय जैसे मेडिकल अधिकारियों का वेतन, उनका निरीक्षण, उनके कार्यों का मूल्यांकन आदि कुछ सीमाओं तक काउन्टियों द्वारा ही किए जाते हैं। काउन्टी द्वारा बड़े देहाती क्षेत्रों का प्रबन्ध भी किया जाता है जैसे जानवरों की बीमारी आदि कार्यों पर भी इनके द्वारा खर्च किया जाता है। इन सभी कार्यों को काउन्टी परिषद द्वारा किया जाता है। इनके लिए वह उत्तरदायी होती है और इनमें वह खर्च करती है। इन सेवाओं में से कई एक सेवाएं प्रशासकीय तथा वितीय दृष्टि से काउन्टी परिषद एवं उसके क्षेत्र में आने वाले स्थानीय निकायों के बीच बंटी रहती हैं। काउन्टी द्वारा व्यापारिक सेवाएं सम्पन्न नहीं की जातीं।

प्रत्येक कान्उटी को जिन विभिन्न समस्याओं का सामना करना पड़ता है उनमें से कुछ तो उसके आन्तरिक समायोजनों से सम्बन्धित रहती हैं और कुछ का सम्बन्ध बाह्य समायोजनों से रहता है। काउन्टी की इन विभिन्न समस्याओं को तथा उसके वास्तविक स्वरूप को समझने के लिए काउन्टी के इतिहास का अवलोकन करना उपयोगी रहेगा। काउन्टी का जन्म नार्मन काल के शायरों से ही हुआ है। आज भी कई एक काउन्टियों का आकार एवं प्रकार प्राय: वही है जो कि उनका जन्म के समय था। वे देश की आवश्यकताओं की प्रतिक्रिया के रूप में सैकड़ों वर्ष पूर्व उदित हुईं। जो क्षेत्र उस समय निर्धारित किए गए वे सैनिक उद्देश्य के लिए अधिक थे, प्रशासकीय उद्देश्य के लिए कम। क्षेत्रों को निर्धारित करते समय आवागमन के साधनों का भी पूरा ध्यान रखा गया। चौदहवीं शताब्दी में स्थानीय क्षेत्र के सैनिक, न्यायिक, कर सम्बन्धी सड़क सम्बन्धी आदि अधिकार नगराधिपों में निहित थे जो कि बाद में शान्ति के न्यायाधीशों को सौंप दिए गए। नगराधिप लोग केन्द्रीय महत्व के अधिकारी थे। उनका मुख्य उद्देश्य क्राउन और काउन्टी के बीच सम्बन्ध स्थापित करना था। ये लोग काउन्टी के निवासी होते थे और उनको वहां की जनता द्वारा मान लिया जाता था। काउन्टी के न्यायालय द्वारा जो दीवानी, फौजदारी एवं प्रशासकीय कार्य सम्पन्न किया जाता था उसमें नगराधिप उसका पूरा-पूरा सहयोग करते थे।

केन्द्रीय नियन्त्रण स्थापित करने के लिए राजा की परिषद एवं खजान्ची होते थे। नियन्त्रण की यह व्यवस्था राजा और काउन्टियों के बीच संतोषजनक सम्बन्ध स्थापित नहीं कर पाती थी। इसी कारण रिचार्ड प्रथम द्वारा सन् ११९५ में शान्ति के न्यायाधीशों की स्थापना की गई। समस्त प्राचीन शक्तियां उनके हाथों में सौंप दी गईं। स्थानीय न्याय एवं पुलिस का कार्य पूरी तरह से उनके हाथों में सौंप दिया गया। चौदहवीं शताब्दी के मध्यकाल से लेकर सन् १८८८ तक ब्रिटिश स्थानीय प्रशासन में जो व्यवस्था चल रही थी वह यह थी कि कस्बों एवं पेरिशों के प्रशासन के लिए केन्द्र द्वारा नियुक्त अधिकारी होते थे। वे मनोनीत सदस्य अर्थात् न्यायाधीश प्रशासकीय परिषदों के नियन्त्रण में रह कर कार्य नहीं कर सकते थे। उनकी सहायता के लिए एक बड़ा नियमित वैतनिक स्टाफ होता था तथा कार्यालय का [illegible]

एक उचित संगठन रहता था। गरीबों से सम्बन्धित कानून के न्यायाधीशों की शक्ति और भी अधिक बढ़ा दी थी। स्थानीय जनता की दिन प्रतिदिन की आवश्यकताएं यद्यपि पेरिश और पेरिश-अधिकारियों द्वारा पूरी की जाती थीं किन्तु इन पर न्यायाधीशों का निकट का नियन्त्रण रखा जाता था। जब उनके कार्य बढ़ गए तो नियमित अधिकारियों की नियुक्ति की जाने लगी। इन अधिकारियों को प्रारम्भ में फीस देने की व्यवस्था की गई और बाद में इन्हें वेतन दिया गया। प्रशासकीय कार्यों को यहां-तहां न्यायाधीशों की समितियों द्वारा सम्पन्न किया जाता था। न्यायाधीश उच्चवर्ग के लोग होते थे जो कि कामन्स सभा में संसद पर नियन्त्रण रखते थे और लार्डस सभा में न्यायाधीशों का कार्य करते थे। अपने संसद मित्रों के माध्यम से वे ऐसी व्यवस्था कर देते थे कि उन्हें काउन्टी के प्रशासन के सम्बन्ध में अकेला ही छोड़ दिया जाए।

औद्योगीकरण युग प्रारम्भ होते ही सरकार के ऊपर अनेक नए उत्तरदायित्व बढ़ गए। उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में इन बढ़ते हुए उत्तरदायित्वों को काउन्टी के अतिरिक्त सत्ता द्वारा सम्पन्न किया जाना अधिक उपयुक्त समझा जाने लगा। जब काउन्टी को अधिक शक्तियां सौंपी गई तो इसका एक मौलिक प्रभाव यह हुआ कि कार्यकुशलता प्राप्त करने के लिए इन सेवाओं के सम्बन्ध में नीति एवं व्यवहार सम्बन्धी एकरूपता तथा एक बड़े क्षेत्र को आवश्यक समझा गया।

ब्रिटिश स्थानीय सरकार के क्षेत्र में काउन्टीज के कार्यों का जो विस्तार किया गया है उनकी कोई निश्चित प्रक्रिया अथवा रूप नहीं था। इनमें सुधार करने वालों की मुख्य समस्या यह थी कि काउन्टी को केन्द्र द्वारा नियुक्त शान्ति के न्यायाधीशों द्वारा प्रशासित करने के तरीके को किस प्रकार समाप्त किया जाए और इनके स्थान पर स्थानीय जनता द्वारा निर्वाचित परिषद को शक्तियां सौंपी जाएं। काउन्टी के विकास मार्ग की सबसे बड़ी बाधा को सन् १८८८ के अधिनियम द्वारा दूर किया गया। इसके द्वारा काउन्टी को न केवल कुछ कार्यों में स्वतन्त्र अधिकार क्षेत्र प्राप्त हो गया वरन् कुछ कार्यों को मध्यस्थ के रूप में केन्द्रीय सरकार तथा छोटी सत्ताओं के बीच प्रबन्धित करने के लिए इन्हें सौंप दिया गया ताकि स्थानीय निकायों पर नियन्त्रण रखा जा सके। काउन्टी को केन्द्रीय शक्तियां सौंपने के बाद केन्द्रीय संसद को कार्य भार से मुक्त कर दिया गया। सन् १८८८ के बाद अनेक ऐसे अधिनियम पारित किए गए जिनके द्वारा काउन्टियों को सड़क, शिक्षा, जनस्वास्थ्य, जन-सहायता, जिलों का पुनर्गठन, करों का मूल्यांकन आदि के क्षेत्रों में महत्वपूर्ण अधिकार सौंपे गए। काउन्टियों की प्रगति एवं विकास की कुछ विशेषताएं हैं। प्रथम यह है कि इसकी शक्तियों का न केवल क्षेत्र ही बढ़ाया गया वरन् अन्य सत्ताओं की तुलना में इसकी सत्ता की कुल मात्रा भी बढ़ गई। दूसरे, इसकी शक्तियां इसलिए बढ़ाई गईं क्योंकि बड़े क्षेत्र में बचतपूर्ण एवं कुशल सेवाएं प्राप्त की जा सकती हैं। तीसरे, इन्हें प्रशासनिक निर्देशन की शक्तियां सौंपी गई तथा छोटी सत्ताओं को नियन्त्रित एवं पर्यवेक्षित करने का अधिकार भी सौंपा गया। यदि छोटी

में प्रत्यक्ष नियन्त्रण बहुत कुछ कम रहता है । इसलिए काउन्टी को इन सेवाओं से सम्बन्धित महत्वपूर्ण अधिकार प्राप्त रहते हैं। कुछ विषय जैसे मेडिकल अधिकारियों का वेतन, उनका निरीक्षण, उनके कार्यों का मूल्यांकन आदि कुछ सीमाओं तक काउन्टियों द्वारा ही किए जाते हैं। काउन्टी द्वारा बड़े देहाती क्षेत्रों का प्रबन्ध भी किया जाता है जैसे जानवरों की बीमारी आदि कार्यों पर भी इनके द्वारा खर्च किया जाता है। इन सभी कार्यों को काउन्टी परिषद द्वारा किया जाता है। इनके लिए वह उत्तरदायी होती है और इनमें वह खर्च करती है। इन सेवाओं में से कई एक सेवाएं प्रशासकीय तथा वितीय दृष्टि से काउन्टी परिषद एवं उसके क्षेत्र में आने वाले स्थानीय निकायों के बीच बंटी रहती हैं। काउन्टी द्वारा व्यापारिक सेवाएं सम्पन्न नहीं की जातीं।

प्रत्येक कान्उटी को जिन विभिन्न समस्याओं का सामना करना पड़ता है उनमें से कुछ तो उसके आन्तरिक समायोजनों से सम्बन्धित रहती हैं और कुछ का सम्बन्ध बाह्य समायोजनों से रहता है। काउन्टी की इन विभिन्न समस्याओं को तथा उसके वास्तविक स्वरूप को समझने के लिए काउन्टी के इतिहास का अवलोकन करना उपयोगी रहेगा। काउन्टी का जन्म नार्मन काल के शायरों से ही हुआ है। आज भी कई एक काउन्टियों का आकार एवं प्रकार प्रायः वही है जो कि उनका जन्म के समय था। वे देश की आवश्यकताओं की प्रतिक्रिया के रूप में सैंकड़ों वर्ष पूर्व उदित हुई। जो क्षेत्र उस समय निर्धारित किए गए वे सैनिक उद्देश्य के लिए अधिक थे, प्रशासकीय उद्देश्य के लिए कम। क्षेत्रों को निर्धारित करते समय आवागमन के साधनों का भी पूरा ध्यान रखा गया। चौदहवीं शताब्दी में स्थानीय क्षेत्र के सैनिक, न्यायिक, कर सम्बन्धी सड़क सम्बन्धी आदि अधिकार नगराधिपों में निहित थे जो कि बाद में शान्ति के न्यायाधीशों को सौंप दिए गए। नगराधिप लोग केन्द्रीय महत्व के अधिकारी थे। उनका मुख्य उद्देश्य क्राउन और काउन्टी के बीच सम्बन्ध स्थापित करना था। ये लोग काउन्टी के निवासी होते थे और इनको वहां की जनता द्वारा मान लिया जाता था। काउन्टी के न्यायालय द्वारा जो दीवानी, फौजदारी एवं प्रशासकीय कार्य सम्पन्न किया जाता था उसमें नगराधिप उसका पूरा-पूरा सहयोग करते थे।

केन्द्रीय नियन्त्रण स्थापित करने के लिए राजा की परिषद एवं खजान्ची होते थे। नियन्त्रण की यह व्यवस्था राजा और काउन्टियों के बीच संतोषजनक सम्बन्ध स्थापित नहीं कर पाती थीं। इसी कारण रिचार्ड प्रथम द्वारा सन् ११९५ में शान्ति के न्यायाधीशों की स्थापना की गई। समस्त प्राचीन शक्तियां उनके हाथों में सौंप दी गई। स्थानीय न्याय एवं पुलिस का कार्य पूरी तरह से उनके हाथों में सौंप दिया गया। चौदहवीं शताब्दी के मध्यकाल से लेकर सन् १८८८ तक ब्रिटिश स्थानीय प्रशासन में जो व्यवस्था चल रही थी वह यह थी कि कस्बों एवं पेरिशों के प्रशासन के लिए केन्द्र द्वारा नियुक्त अधिकारी होते थे। ये मनोनीत सदस्य अर्थात् न्यायाधीश प्रशासकीय परिषदों के नियन्त्रण में रह कर कार्य नहीं कर सकते थे। उनकी सहायता के लिए एक बड़ा नियमित वैतनिक स्टाफ होता था तथा कार्यालय का भी

एक उचित संगठन रहता था। गरीबों से सम्बन्धित कानून के न्यायाधीशों की शक्ति और भी अधिक बढ़ा दी थी। स्थानीय जनता की दिन प्रतिदिन की आवश्यकताएं यद्यपि पेरिश और पेरिश-अधिकारियों द्वारा पूरी की जाती थीं किन्तु इन पर न्यायाधीशों का निकट का नियन्त्रण रखा जाता था। जब उनके कार्य बढ़ गए तो नियमित अधिकारियों की नियुक्ति की जाने लगी। इन अधिकारियों को प्रारम्भ में फीस देने की व्यवस्था की गई और बाद में इन्हें वेतन दिया गया। प्रशासकीय कार्यों को यहां-तहां न्यायाधीशों की समितियों द्वारा सम्पन्न किया जाता था। न्यायाधीश उच्चवर्ग के लोग होते थे जो कि कामन्स सभा में संसद पर नियन्त्रण रखते थे और लार्डस सभा में न्यायाधीशों का कार्य करते थे। अपने संसद मित्रों के माध्यम से वे ऐसी व्यवस्था कर देते थे कि उन्हें काउन्टी के प्रशासन के सम्बन्ध में अकेला ही छोड़ दिया जाए।

औद्योगीकरण युग प्रारम्भ होते ही सरकार के ऊपर अनेक नए उत्तरदायित्व बढ़ गए। उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में इन बढ़ते हुए उत्तरदायित्वों को काउन्टी के अतिरिक्त सत्ता द्वारा सम्पन्न किया जाना अधिक उपयुक्त समझा जाने लगा। जब काउन्टी को अधिक शक्तियां सौंपी गई तो इसका एक मौलिक प्रभाव यह हुआ कि कार्यकुशलता प्राप्त करने के लिए इन सेवाओं के सम्बन्ध में नीति एवं व्यवहार सम्बन्धी एकरूपता तथा एक बड़े क्षेत्र को आवश्यक समझा गया।

ब्रिटिश स्थानीय सरकार के क्षेत्र में काउन्टीज के कार्यों का जो विस्तार किया गया है उनकी कोई निश्चित प्रक्रिया अथवा रूप नहीं था। इनमें सुधार करने वालों की मुख्य समस्या यह थी कि काउन्टी को केन्द्र द्वारा नियुक्त शान्ति के न्यायाधीशों द्वारा प्रशासित करने के तरीके को किस प्रकार समाप्त किया जाए और इनके स्थान पर स्थानीय जनता द्वारा निर्वाचित परिषद को शक्तियां सौंपी जाएं। काउन्टी के विकास मार्ग की सबसे बड़ी बाधा को सन् १८८८ के अधिनियम द्वारा दूर किया गया। इसके द्वारा काउन्टी को न केवल कुछ कार्यों में स्वतन्त्र अधिकार क्षेत्र प्राप्त हो गया वरन् कुछ कार्यों को मध्यस्थ के रूप में केन्द्रीय सरकार तथा छोटी सत्ताओं के बीच प्रबन्धित करने के लिए इन्हें सौंप दिया गया ताकि स्थानीय निकायों पर नियन्त्रण रखा जा सके। काउन्टी को केन्द्रीय शक्तियां सौंपने के बाद केन्द्रीय संसद को कार्य भार से मुक्त कर दिया गया। सन् १८८८ के बाद अनेक ऐसे अधिनियम पारित किए गए जिनके द्वारा काउन्टियों को सड़क, शिक्षा, जनस्वास्थ्य, जन-सहायता, जिलों का पुनर्गठन, करों का मूल्यांकन आदि के क्षेत्रों में महत्वपूर्ण अधिकार सौंपे गए। काउन्टियों की प्रगति एवं विकास की कुछ विशेषताएं हैं। प्रथम यह है कि इसकी शक्तियों का न केवल क्षेत्र ही बढ़ाया गया वरन् अन्य सत्ताओं की तुलना में इसकी सत्ता की कुल मात्रा भी बढ़ गई। दूसरे, इसकी शक्तियां इसलिए बढ़ाई गई क्योंकि बड़े क्षेत्र में बचतपूर्ण एवं कुशल सेवाएं प्राप्त की जा सकती हैं। तीसरे, इन्हें प्रशासनिक निर्देशन की शक्तियां सौंपी गईं तथा छोटी सत्ताओं को नियन्त्रित एवं पर्यवेक्षित करने का अधिकार भी सौंपा गया। यदि छोटी

सत्ताएं अपने उत्तरदायित्वों को पूरा नहीं कर सकें तो इन्हें काउन्टी के लिए सौंपा जाता था।

वर्तमान काल में काउन्टीज का विकास इस प्रकार हुआ कि इन निकायों की परिषदों को अनेक विषयों पर प्रत्यक्ष नियन्त्रण की शक्ति प्राप्त हो गई। बड़ी सड़कों, पुलों, पृथक अस्पतालों, पागलखानों, नदी व्यवस्था, भोजन एवं दवाओं की बिक्री, माप और तोल, विज्ञापन का विनियमन प्राव-धान, हवाई अड्डों की व्यवस्था, अन्धों का कल्याण, जानवरों की बिमारियां, प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा, विद्युत उत्पादन एवं वितरण, नालियों की व्यवस्था, गर्भवती एवं बाल-कल्याण, सार्वजनिक पुस्तकालय, नगर नियोजन, हैजा की व्यवस्था, आदि से सम्बन्धित विभिन्न उत्तरदायित्व एवं शक्तियां इन निकायों को प्राप्त हो गईं। बाद में विभिन्न अधिनियमों द्वारा इन शक्तियों के क्षेत्र में छोटे-मोटे विभिन्न परिवर्तन किये गये।

काउन्टी परिषद को पहले जो पर्यवेक्षण सम्बन्धी शक्तियां प्राप्त थीं उनके क्षेत्र में उल्लेखनीय वृद्धि हो गई। यह कई विषयों के सम्बन्ध में देहाती एवं शहरी जिलों के क्षेत्रों पर नियन्त्रण रखने लगी। ये विषय थे—इन क्षेत्रों की रचना एवं रूप परिवर्तन, इनकी सड़कें, देहाती गृह-निर्माण तथा अन्य दूसरे विषय। प्रारम्भ में छोटी सत्ताओं द्वारा काउन्टीज को उनके एवं केन्द्रीय सरकार के बीच मध्यस्थ नहीं माना गया। उनको मध्यवर्ती के रूप में कार्य करना चाहिये - यह बात सर्वप्रथम संसद सदस्य लार्ड रावर्ट मोनटेग्यू द्वारा रखी गई। सन् १८८८ के अधिनियम के दसवें भाग द्वारा स्थानीय सरकार मण्डल को यह शक्ति दी गई कि वह समय-समय पर काउन्टी परिषदों के स्थानान्तरण के लिये प्रावधिक आदेश जारी कर सके। काउन्टी बारोज ने काउन्टी परिषद की इस शक्ति का विरोध किया और उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि उनकी शक्तियों पर काउन्टी परिषद को नियन्त्रण का अधिकार न हो तथा वे केन्द्रीय सत्ता से प्रत्यक्ष सम्बन्ध रख सकें। दूसरी ओर काउन्टी परिषदें छोटी सत्ताओं के ऊपर स्वीकृति एवं नियन्त्रण की शक्ति रखने के पक्ष में थीं और इसके लिए पूरी तरह से सह-मत थीं। इस विषय पर काउन्टी परिषद एवं अन्य छोटी सत्ताओं के बीच जो संघर्षपूर्ण स्थिति पैदा हो गई वह कई कारणों से महत्वपूर्ण थी।

प्रथम, इससे यह जाहिर हो गया कि शहरी सत्ताएं स्वतन्त्रता की सशक्त भावना रखती हैं तथा उनकी पारस्परिक ईर्ष्या हमेशा धधकती रहती है किन्तु यह सम्भावना है कि वह किसी भी समय लपटें ग्रहण कर ले। दूसरे, इससे यह भी जाहिर हो गया कि छोटी स्थानीय सत्ताएं बड़ी स्थानीय सत्ताओं के नियन्त्रण की अपेक्षा केन्द्रीय सरकार का नियन्त्रण अधिक पसन्द करती हैं। तीसरे, काउन्टीज अधिक शक्ति लेने के लिए इच्छुक थीं चाहे इसके परिणामस्वरूप छोटी सत्ताओं की शक्तियां एवं स्तर कम क्यों न हो जाये। सन् १६०० के बाद से अब तक सामान्य स्थिति में अधिक परिवर्तन नहीं आया। सन् १६२५ के करारोपण एवं मूल्यांकन अधिनियम के द्वारा करा-रोपण व्यवस्था में परिवर्तन किए गये। सन् १६२६ की स्थानीय सरकार पर शाही आयोग के द्वितीय प्रतिवेदन ने जन-स्वास्थ्य के क्षेत्र में महत्वपूर्ण

परिवर्तन किये तथा जिलों के पुनर्गठन को भी प्रभावित किया। जन-स्वास्थ्य प्रशासन में काउन्टी के अन्तर्गत मुख्य कार्यपालिका सत्ताएं गैर काउन्टी वारोज़ और शहरी तथा देहाती जिले थे। अनेक कारणों से क्षेत्र, ज्ञान, सार्वजनिक भावना एवं वित्त आदि के क्षेत्र में अभाव की स्थिति वर्तमान थी और इस सब का जन-स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ा। ऐसी स्थिति में केवल तीन ही उपाय किये जा सकते थे। स्वयं स्थानीय सत्ताओं द्वारा एक एकीकृत व्यवस्था स्थापित की जा सकती थी किन्तु ऐसा नहीं किया गया। दूसरे केन्द्रीय सरकार एक नियन्त्रणकर्त्ता सत्ता को नियुक्त कर सकती थी किन्तु इसका विश्वास नहीं किया गया। तीसरे, स्वयं केन्द्रीय सरकार नियन्त्रण की शक्तियों का प्रयोग कर सकती थी। इस तीसरे विल्कप को अपनाया गया, इसके परिणामस्वरूप काउन्टी परिषद की शक्ति कुछ कम हो गई क्योंकि अब वह जिला सत्ताओं द्वारा किसी कार्य की अवहेलना का प्रतिवेदन मिलने पर प्रतिनिधित्व नहीं कर सकती थी। स्वेच्छापूर्वक तरीके से कोई भी स्थानीय सत्ता यह लिख कर नहीं दे सकती थी, और न ही प्रार्थना कर सकती थी कि उसकी नालियां और नाले गन्दे पड़े हुए हैं।

अनेक जिला सत्ताओं के पास केवल आंशिक समय के मेडीकल अधिकारी थे जो कि प्रायः अपने व्यक्तिगत व्यवसाय में व्यस्त रहते थे। जन-स्वास्थ्य से उनका सम्बन्ध इतना निरन्तर एवं विस्तृत नहीं था कि वे बीमारियों को रोकने में सफल हो पावे। इसके अतिरिक्त अवहेलना से सम्बन्धित शक्तियां भी बहुत कम प्रयुक्त की जाती थी क्योंकि यदि किसी सार्वजनिक निकाय के प्रति अवहेलना करने का दोषारोपण किया जाता था तो बड़ा महा लगता था और किए जाने पर उसकी सफलता की सम्भावनाएं भी कम होती थीं। काउन्टी के पास पर्यवेक्षण की सामान्य शक्तियां हैं इस विचार का नगर निगमों द्वारा विरोध किया गया और काउन्टी परिषदों ने कुशलता के साथ इसे पास नहीं किया। इसके अतिरिक्त अवहेलना होने पर किया जाने वाला कार्य इतना उलझा हुआ था कि इससे स्थानीय सत्ता को बड़ी जल्दी ठेस पहुंच सकती थी तथा केन्द्रीय एवं स्थानीय सत्ताओं ने यह अधिक पसन्द किया कि कानूनी झगड़ों के लिए स्थानीय स्वायत्त सरकार के आधार पर परस्पर सहयोग रखा जाये क्योंकि यह हथियार अत्यन्त भारी था इसलिए इसका प्रयोग नहीं किया गया। इस शक्ति के प्रयोग के सम्बन्ध में शाही आयोग के द्वितीय प्रतिवेदन में पर्याप्त विचार किया गया और अनेक महत्वपूर्ण सुझाव प्रस्तुत किये गये।

स्वास्थ्य मंत्रालय के एक प्रतिनिधि डब्ल्यू० ए० राबिन्सन ने सुझाया- (१) काउन्टी परिषद की मंत्रालय के लिए प्रतिनिधित्व करने की शक्ति का आधार अब की तरह से स्वास्थ्य के जिला मेडिकल अधिकारी का प्रतिवेदन नहीं होना चाहिए बल्कि इसे सामान्य रूप से स्पष्ट किया जाना चाहिए। (२) भविष्य में कानून द्वारा यह व्यवस्था की जानी चाहिये कि मन्त्री प्रतिनिधित्व पर विचार करे और वह स्थानीय जांच कराये। (३) यदि पर्याप्त जांच के बाद यह ज्ञात हो कि किसी काउन्टी जिले की परिषद स्वास्थ्य सेवा का प्रशासन एक स्तर के

अनुसार नहीं कर रही है और यदि मन्त्री की राय में परिषद द्वारा उचित समय में कोई सन्तोषजनक कदम नहीं उठाया गया है तो कानूनन उसे कुछ शक्तियां दी जानी चाहिये जैसे काउन्टी जिला की परिषद काउन्टी परिषद की सहमति से और मंत्री की स्वीकृति से उस सेवा से सम्बन्धित अपने उत्तर-दायित्वों को काउन्टी परिषद को सौंप दे या काउन्टी परिषद को यह शक्ति दी जाये कि वह आवश्यक कार्य सम्पन्न करे और ऐसा करने के लिए काउन्टी जिला परिषद द्वारा काउन्टी परिषद को कर्जे के रूप में रकम चुकाई जाये या उस सेवा से सम्बन्धित प्रशासन का उत्तरदायित्व मन्त्री की आज्ञा से काउन्टी परिषद को सौंप दिया जाये। (४) यह प्रक्रिया केवल उन कर्त्तव्यों पर ही लागू होनी चाहिये जो कि काउन्टी जिलों की परिषदों पर डाले गए हैं न कि उन सेवाओं पर जो कि उनको सौंपी गई हैं।

इसके अतिरिक्त यह प्रावधान रखा गया था कि काउन्टी परिषदों को काउन्टी जिलों के जल वितरण एवं नाली योजनाओं के बारे में योगदान करना चाहिये। इस कार्यक्रम के अनुसार इस क्षेत्र की योजनाएं स्वास्थ्य मन्त्रालय, काउन्टी परिषद एवं काउन्टी जिलों द्वारा संयुक्त रूप से प्रबन्धित की जाती थीं। इस प्रकार एक पर्यवेक्षणकर्त्ता सत्ता के रूप में काउन्टी का स्तर बढ़ गया, उसे छोटी स्वास्थ्य सत्ताओं को वित्तीय सहायता देने की शक्ति प्राप्त हो गई। काउन्टी जिलों में केवल दो ही महत्वपूर्ण शक्तियां रह गईं स्वास्थ्य एवं गृह निर्माण; किन्तु इनके क्षेत्र में भी काउन्टी परिषदों को पर्यवेक्षणकर्ता एवं शिकायतकर्ता के अधिकार प्राप्त थे।

सन् १९४५ के स्थानीय सरकार अधिनियम द्वारा काउन्टी के अन्तर्गत आने वाले क्षेत्रों का पुनर्गठन कर दिया गया। इस अधिनियय ने सन् १९२६ एवं सन् १९३२ के स्थानीय सरकार अधिनियम द्वारा स्थापित प्रतिक्रियाओं को प्रभावहीन बना दिया। काउन्टी परिषद जिले के प्रतिनिधियों का सम्मेलन करने के बाद एक कार्यक्रम बनाती थी जिसके अनुसार वह पेरिशों की सीमाओं को पारिभाषित कर सके, जिलों और पेरिशों को एकीकृत कर सके, जिलों या पेरिशों के भागों को दूसरों के लिए स्थानान्तरित कर सके, देहाती जिलों या उनके भागों को शहरी जिलों में परिवर्तित कर सके अथवा इसका उलटा कर सके एवं नये जिले या पेरिश बना सके। ये सभी काउन्टी एवं गैर काउन्टी बारोज के साथ समायोजन के प्रबन्ध थे। मन्त्री को प्रत्येक विषय में अन्तिम शब्द कहने का अधिकार था।

काउन्टीज का मार्ग प्रगतिशील है। उसकी शक्तियों में निरन्तर विकास होता रहता है। यह विकास काउन्टी की शक्तियों को आगे बढ़ाने की ओर होता है। यदि काउन्टीज को खुला छोड़ दिया जाये तो निश्चय ही वे अपनी शक्तियों को और भी अधिक बढ़ा लेंगी। शाही आयोग के लिये उन्होंने यह प्रस्तावित किया था कि उनकी शक्तियों को उन सेवाओं के क्षेत्र में बढ़ा दिया जाये जो सेवाएं काउन्टी परिषदों के अनुसार एक विस्तृत प्रशासनिक क्षेत्र की मांग करती हैं और जो कि संस्थाओं की रचना के प्रावधानों को आवश्यक बनाते हैं। इसके बाद परिषदें अपनी शक्तियों को छोटी स्थानीय सत्ताओं के लिये हस्तान्तरित कर दें। इसके परिणामस्वरूप

भी काउन्टी परिषदों को अनेक पर्यवेक्षण की शक्तियां प्राप्त होने को थीं। इन प्रस्तावों का छोटी सत्ताओं ने विरोध किया और कहा कि काउन्टी परिषदों के पहले ही इतने कार्य हैं जिनको कि वे सन्तोषजनक रूप से सम्पन्न नहीं कर पातीं अतः अधिक शक्तियां देना उचित नहीं रहेगा। स्वास्थ्य मन्त्रालय ने भी काउन्टी परिषदों की शक्तियों को बढ़ाने का विरोध किया और कहा कि कार्यों का विभाजन कर देने पर उनका संचालन सन्तोषजनक रूप से नहीं कर पायेगा। असल में यह स्पष्ट था कि काउन्टी परिषद द्वारा जो सिद्धान्त प्रतिपादित किये गये उन्हें केवल तभी अपनाया जा सकता था जबकि सभी काउन्टी परिषदें कम से कम स्तर से ऊपर उठ जाये और वे सभी वित्तीय दृष्टि से, प्रादेशिक रूप से तथा जनसंख्या की दृष्टि से पर्याप्त हों। हम यदि सन् १८८८ से लेकर आज तक के काउन्टी प्रशासन के इतिहास को देखें तो पाएंगे कि ये शर्तें कभी पूरी नहीं की जा सकीं और न की जा रही हैं।

काउन्टी बारोज

(County Boroughs)

काउन्टी बारोज को भी सन् १८८८ के स्थानीय सरकार अधिनियम के द्वारा बनाया गया। जिस नगरपालिका बारो की जनसंख्या पचास हजार से अधिक थी उसको काउन्टी बारो का स्तर दे दिया गया अर्थात् उनको काउन्टी परिषद के अधिकार क्षेत्र से पूर्णरूपेण अलग कर दिया गया। अब वे केवल केन्द्रीय सरकार की सत्ता के आधीन थे। यह केन्द्रीय सत्ता संसदीय, प्रसासकीय, न्यायिक अथवा स्वायत्तशासी सत्ताए हो सकती थी। सन् १९२१ में इनकी संख्या ८२ थी बाद में यह बढ़कर ८३ हो गई। बड़े आकार के संगठन के लाभों को प्राप्त करने के लिये इन बारोज ने अपने क्षेत्र को पर्याप्त विस्तृत कर लिया और अपने क्षेत्र में अर्ध-शहरी तथा विभिन्न प्रकार की स्वतन्त्र सत्ताओं को भी मिला लिया किन्तु ये मिलाए गए प्रदेश अलग अलग संस्कृति, अर्थव्यवस्था एवं भूगोल विज्ञान वाले नहीं थे। काउन्टी बारोज का अब तक का इतिहास पर्याप्त प्रशंसनीय रहा है। उनका प्रशासन कुशल एवं बहुत कुछ सन्तोषजनक रहा है। अधिकांश बारोज को देखने के बाद यह स्पष्ट हो जाता है कि इनका क्षेत्र अपेक्षाकृत बड़ा होता है और जनसंख्या उसकी तुलना में कम होती है।

सरकार के कार्य एवं सामाजिक जीवन के विभिन्न उत्तरदायित्व जनसंख्या के एक विशेष वर्ग द्वारा सम्पन्न किये जाते हैं ऐसी स्थिति में नागरिक जीवन की व्यापकता के लिये अनेक अवसर प्राप्त होते हैं और निवासियों की रुचि सार्वजनिक कार्यों में जागृत होती है। वे स्थाई रूप से सार्वजनिक महत्व के कार्यों में रुचि लेने लगते हैं। छोटी जनसंख्या होने के कारण प्रत्येक नागरिक के लिये सरल हो जाता है कि वह दूसरों को जान सके और दूसरों को यह सरल हो जाता है कि वे उसे जान सकें। काउन्टी बारोज में एक अन्य सुविधा और होती है वह यह कि वहां कई एक ऐसे समाचारपत्र होते हैं जिनको कि राष्ट्रीय स्तर एवं सम्मान प्राप्त होता है और वे स्थानीय समस्याओं तथा उपलब्धियों के समाचार प्रकाशित करते रहते हैं। प्रोफेसर फाईनर लिखते हैं कि कुछ अपवादों को छोड़ कर काउन्टी बारोज अंग्रेजी

सरकार की इकाई के रूप में वे स्थानीय लोगों की स्थानीय आवश्यकताओं के परिणामस्वरूप उदित हुए और संगठित होकर उन आवश्यकताओं को पूरा करने का प्रयास करने लगे। ये केन्द्रीय सत्ता की रचना नहीं थे यद्यपि इनको इसी के द्वारा नियमित किया गया एवं कानूनी रूप दिया गया। स्थानीय लोगों के इस समूह में स्थानीय गर्व, समुदाय के भाव, प्रतिबन्धित एवं स्वतन्त्र महत्वाकांक्षाए विकसित हुईं। मि० स्टब्स (Stubbs) ने बारो एवं टाऊन शब्दों की व्युत्पत्ति का उल्लेख किया है। उनके मतानुसार 'बारो' शब्द को सेक्सन युग के 'बर्ग' (Burgh) से लिया गया है। यह एक ऐसा प्रदेश होता था जिसकी पहाड़ों एव खाईयों से किलेबन्दी की जाती थी। टाउन शब्द को टन' (Tun) से लिया गया है जो कि एक कृषक की चारदीवारी युक्त भूमि होती थी।* बारो प्रदेश से अर्थ एक ऐसे प्रदेश से था जिसके लोग परस्पर घनिष्ट रूप से सम्बन्धित हों। ऐसी स्थिति में यह स्वाभाविक था कि युद्ध की दृष्टि से महत्वपूर्ण केन्द्र, समुद्री बन्दरगाह, मछियारे गांव, बाजार, औद्योगिक समूह, आदि क्षेत्रों में बारोज की स्थापना की गई। वेब्स (Webbs) के मतानुसार बारोज उत्पादकों की संस्थाएं थीं जो कि आर्थिक उद्देश्यों के लिए सामान्य रूप से नियमित होते थे, उनकी सामान्य सम्पत्ति होती थी। इनके धन्धे, व्यवसाय एवं स्थिति भी पृथक पृथक होती थी। इसी कारण प्रत्येक बारो का संविधान एवं बनावट अलग-अलग होती थी।

एंग्लो-सेक्सन समय से ही बारो के विकास की प्रक्रिया दोहरी रही है। बाह्य रूप से इसे अन्य स्थानीय सत्ताओं के अधिकार क्षेत्र से अधिक स्वतन्त्रता प्राप्त हुई और आन्तरिक रूप से ये अधिक पूर्ण एवं जटिल बनते चले गए। प्रोफेसर फाईनर के कथनानुसार इसका प्रशासकीय निकाय मेयर, एल्डरमैन और बर्गीज के रूप में संगठित हुये। एल्डरमैन वे लोग थे जो कि गिल्डों के वरिष्ठ सदस्य थे और बर्गीज वे थे जो कि विशेष अधिकार प्राप्त नागरिक थे।† बारोज के विकास में एक नया कदम बारोज के व्यक्तित्व को कानूनी मान्यता देना था। जब शाही चार्टर द्वारा उनको कानूनी मान्यता दे दी गई तो ये निगम के रूप में संगठित हो गये तथा सम्पत्ति के स्वामी एवं प्रशासन के संचालक बन गये। अब यह मुकदमें चला सकती थी तथा इस पर मुकदमें चलाये जा सकते थे। इस काल में काउन्टी बारोज नगरपालिका बारोज की तुलना में परिपक्व थे और इनकी कई एक विशेषताएं थीं, जैसे यह चार्टर द्वारा प्राप्त एवं आंशिक रूप से रीति रिवाज द्वारा प्राप्त प्रशासकीय शक्तियों का एक निकाय रखती थी। दूसरे, यह एक घरेलू सरकार का रूप थी जिसे विस्तृत रूप से

**Stubbs*, Constitutional History, Vol. I, P. 105.

†The governing became organized as Mayor, Alderman and Burgesses : The Alderman, the senior members of the Guilds, and the Burgesses, the preveleged persons." —*Herman Finer*, Op.Cit., P.62

चार्टर द्वारा परिभाषित किया गया और व्यवहार द्वारा परिवर्तित किया गया। तीसरे, इसे संसदीय प्रतिनिधित्व का अधिकार दिया गया। चौथे, इनके शक्ति के पृथक अधिकारी होते थे जिनको कि क्राउन द्वारा नियुक्त नहीं किया जाता था किन्तु वे स्वयं के प्रशासकीय संगठन द्वारा नियुक्त होते थे। कुछ बारोज आंशिक रूप से और कुछ पूर्ण रूप से काउन्टी न्यायाधीशों के अधिकार क्षेत्र से बाहर थे उनका स्वयं का संविधान और स्तर था और शांति बनाने के लिए वे स्वतन्त्र शक्ति एवं उत्तरदायित्व रखते थे।

नगरपालिका निगमों की अपनी कुछ कमजोरियां तथा कुछ स्वाभाविक समस्याएं थीं जिनके परिणामस्वरूप उनमें सुधार करना जरूरी हो गया सन् १८३५ मे नगरपालिका अधिनियम बनाया गया जिसके द्वारा इन दोषों को दूर किया जा सके। इस अधिनियम का अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रभाव हुआ। विभिन्न शहरी निकाय जो कि अनेक विभिन्नताएं रखते थे उनको एक नाम दिया गया, कानूनी स्तर प्रदान किया गया और एक प्रशासकीय ढांचा बनाया गया। दूसरे, इस प्रकार से जो स्थानीय इकाईयां बनाई गईं वे क्षेत्र एवं जनसंख्या की दृष्टि से अनेकरूपी थीं। इनमें सबसे बड़ा क्षेत्र लिवरपूल को दिया गया जिसमें एक लाख पच्चासी हजार लोग रहते थे और सब से छोटा क्षेत्र ब्रैडफोर्ट को दिया गया जिसमें एक हजार पांच सौ लोग रहते थे। तीसरे, बारो परम्पराओं, कर के मूल्यों तथा अपने अधिकारियों की कुशलता की दृष्टि से पर्याप्त भिन्नताएं रखते थे ये विभिन्नताएं पूरी उन्नीसवीं शताब्दी में व्याप्त रहीं। यही कारण है कि बारो शब्द कहते ही हमारे मस्तिष्क में कोई एक चित्र नहीं उभरता। चौथे, बारोज के निवासियों द्वारा बराबर यह मांग की जाती रही कि उनको काउन्टी एवं केन्द्रीय सत्ता से स्वतन्त्रता प्रदान की जाये। यह भी मांग की गई कि अर्धशहरी क्षेत्रों को बारो के इकहरे अधिकार क्षेत्र में ला दिया जाए। पांचवें, प्रकाश, निरीक्षण, सुधार आयुक्त, आदि विशेष सत्तायें यद्यपि उपयोगी थीं किन्तु फिर भी उन्होंने कस्बे की नागरिक एकता को तोड़ दिया और वे बहुत वर्षों तक ऐसा ही करती रहीं। बाद में बारो परिषद द्वारा उन्हें अपने में मिला दिया गया।

सन् १८३५ के अधिनियम ने १७८ बारोज को नियमित किया और अनेक को बिना नियमित किये छोड़ दिया। सन् १८३५ से लेकर सन् १८८२ तक बारोज का विकास चार रूपों में हुआ। प्रथम विशेष आयुक्तों को धीरे धीरे मिटाया गया। दूसरे, कुछ बारोज के आसपास के जिलों को उनमें मिला कर उनका आकार बढ़ा दिया गया। तीसरे, नये बारोज बनाये गये। चौथे, एक के बाद एक अधिनियम पारित करके बारोज से सम्बन्धित अधि-नियम में संशोधन किये गए। सन् १८७५ तक अविनियमित बारोज को भुला दिया गया। एक जांच आयोग बैठाया गया और इसके परिणामस्वरूप सन् १८८२ का अधिनियम पारित हुआ। अब तक बारोज को काउन्टी की सरकार से सम्बन्धित करने का कोई प्रयास नहीं किया गया, काउन्टी की भी पुन-र्रचना नहीं की गई। तथा पुलिस, शिक्षा, सड़क, आदि विषयों में अधिक बड़े क्षेत्र की मांग नहीं की गई।

सन् १८८८ में काउन्टी का पुनर्गठन किया गया और उसमें लोकप्रिय निकाय का गठन किया गया। यह मान्यता जोर पकड़ने लगी कि काउन्टी को केन्द्रीय सत्ता और स्थानीय निकायों के बीच का अंग बनाया जाए। कई लोग इस बात का समर्थन कर रहे थे कि केन्द्रीय सरकार की सत्ता का काउन्टियों में विकेन्द्रीयकरण कर दिया जाए। इसके परिणामस्वरूप कस्बे जागरूक हो गए। उन्होंने अपनी स्वतन्त्रता को बनाए रखने के लिए प्रत्येक सम्भव प्रयास किया। सन् १८८८ के अधिनियम रचियता काउन्टी को एक एकीकृत क्षेत्र बनाना चाहते थे जो कि स्थानीय जनता को आवश्यक सेवाएं प्रदान कर सके और इसीलिए देहाती एवं शहरी क्षेत्रों की संयुक्त व्यवस्था को अपनाया गया।

बारोज के सम्बन्ध में एक मुख्य समस्या उसके उचित एवं सन्तोषजनक आकार की है। कितनी जनसंख्या एवं क्षेत्र वाले प्रदेश को काउन्टी बारो का पद दिया जाए, यह एक पर्याप्त गम्भीर समस्या थी जिसका समाधान भी उतना ही गम्भीर एवं महत्वपूर्ण था। बारोज अपनी स्वायत्तता पर इतना अधिक जोर दे रहे थे कि काउन्टी परिषदें उनका पूरी तरह से विरोध करने के लिए कटिबद्ध हो गईं। कस्बों को यह डर होने लगा कि वित्तीय भार उन्हीं के ऊपर पड़ेगा क्योंकि काउन्टियों में जो सुधार किए गए हैं वे देहाती क्षेत्रों की प्रगति के लिए किये गए हैं इसलिए उनके हित खतरे में हैं।

जब सन् १८८८ का अधिनियम प्रभाव में आया तो दो प्रकार के बारोज गठित किए गए—एक तो काउन्टी बारोज थे और दूसरे गैर काउन्टी बारो। काउन्टी बारोज तथा नगरपालिका बारोज के बीच मुख्य अन्तर यह है कि काउन्टी बारोज के पास काउन्टी तथा कस्बे की संयुक्त शक्ति रहती है और वे काउन्टी परिषद की प्रशासकीय क्रियाओं से पूर्णरूपेण स्वतन्त्र रहते हैं। दूसरी ओर नगरपालिका बारोज काउन्टी के भाग होते हैं और उन्हें पुलिस, प्राथमिक शिक्षा, मुख्य सड़क आदि के लिए काउन्टी की ओर निहारना पड़ता है। कुछ अन्य विषयों में भी उन्हें काउन्टी की सत्ता का मातहत होना पड़ता है। यहां इस बात का उल्लेख करना भी उपयोगी रहेगा कि गैर काउन्टी बारोज एवं शहरी जिलों के बीच पर्याप्त अन्तर रहता है। दोनों यद्यपि शहरी क्षेत्र होते हैं तथा शहरी जिलों के ही भाग हैं किन्तु फिर भी दोनों के बीच अन्तर है।

प्रथम बारोज का प्रशासन मेयर, एल्डरमैन तथा नागरिकों के एक निगम द्वारा किया जाता है और जिले की परिषद का प्रशासन केवल सभापति और पारषदों द्वारा किया जाता है। दूसरे, बारोज को यह शक्ति होती है कि वे उपनियम बना सकते हैं ताकि कस्बे का अच्छा शासन कर सकें; किन्तु शहरी जिलों को केवल कुछ ही क्षेत्रों में उपनियम बनाने की शक्ति है। तीसरे, नगरपालिका बारो के संविधान के लिए एक नियमों का निकाय स्थापित कर दिया गया है और इन नियमों के अनुसार शहरी जिलों को नगरपालिका बारोज के रूप में विकसित किया जा सकता है। ये नियम मुख्य रूप से ये हैं कि उस क्षेत्र में कम से कम उनमें एक लाख की जनसंख्या होनी

चाहिए, उनमें ऐतिहासिक तारतम्य व नागरिक दृष्टि से एकरूपता होनी चाहिए तथा जनस्वास्थ्य के विषयों मे प्रशासनिक अभिलेख अच्छा रहना चाहिए। चौथे, नगरपालिका बारोज को सन् १८८८ के अधिनियम के अनुसार यह अधिकार दिया गया है कि वे काउन्टी बारो के रूप में विकसित हो सकते हैं किन्तु शहरी जिले अपना विकास इस प्रकार नहीं कर सकते। रचना की दृष्टि से पर्याप्त अन्तर एवं असमानताएं होते हुए भी शहरी जिले अनेक ऐसी शक्तियों का प्रयोग करते हैं जिनको नगरपालिका बारोज द्वारा प्रयुक्त नहीं किया जाता। कुछ उदाहरणों में उनका खर्च भी नगरपालिका बारोज की अपेक्षा अधिक होता है। दोनों सत्ताओं के बीच जनसंख्या एवं करों की दृष्टि से भी पर्याप्त अन्तर रहता है। यद्यपि दोनों ही वर्ग शहरी समाज होते हैं और दोनों में समान सेवाओं की आवश्यकता होती है किन्तु भिन्नता भी स्वाभाविक है। दोनों के बीच मुख्य अन्तर स्तर का है।

सन् १८८८ के अधिनियम बनाने के बाद से लेकर सन् १९२६ का अधिनियम बनने तक नगरपालिका बारोज यह प्रयास करते रहे कि उनको काउन्टी बारो बना दिया जाए ताकि वे काउन्टी परिषद की भांति स्वायत्त शक्तियों का उपयोग कर सकें। काउन्टी बारो बनने के लिए नगरपालिका बारो मन्त्री को यह प्रदर्शित करता था कि उसकी जनसंख्या ५०००० या उससे अधिक हो गई है तथा यदि उसे काउन्टी बारो बना दिया जाए तो यह जनहित में रहेगा। मन्त्री पहले यह देख लेता था कि प्रदेश कहीं ऐसा तो नहीं है जो कि समुद्री किनारे पर हो, जहाँ की जनसंख्या स्थायी नहीं होती और बहुत कम समय में ही बदलती रहती है। इसके अतिरिक्त वह यह भी देखता था कि क्या परिस्थितियां इस प्रकार की हैं कि उसे काउन्टी बारो बना दिया जाए। इसके लिए वह पूरी जांच करता था। जब कोई काउन्टी बारो अपने प्रदेश को बड़ा करना चाहता तो इसी प्रकार की प्रक्रिया अपनाई जाती थी। दोनों स्थितियों में निर्णय लेते समय मन्त्री जिस बात का ध्यान रखता था वे प्रायः एक जैसी थीं। आजकल की प्रवृत्ति के अनुसार यदि कोई नगरपालिका बारो उच्च स्तर प्राप्त करना चाहता है तो मन्त्री द्वारा इसके मार्ग में अनेक बाधाएं उत्पन्न की जाती हैं। वह इस बात पर पर्याप्त सोच-विचार करता है कि यदि नगरपालिका बारो को काउन्टी से पूर्णरूपेण स्वतन्त्र कर दिया गया तो काउन्टी की सरकार को इससे हानि तो नहीं होगी।

अनेक काउन्टी बारोज को जब एक बार बना दिया जाता है तो वे समय के साथ साथ—अपना क्षेत्र बढ़ा लेते हैं तथा उनकी जनसंख्या भी बढ़ जाती है। अपनी बढ़ती हुई जनसंख्या को समायोजित करने के लिए ही वे अपने आसपास के अर्ध-शहरी-क्षेत्रों को अपनी ओर ले लेते हैं। अपना क्षेत्र बढ़ाने का इच्छुक काउन्टी बारो पूरे विस्तार के साथ स्वास्थ्य मन्त्री के लिए स्मृति-पत्र भेजता है जिसमें वह यह स्पष्ट करता है कि उसे अतिरिक्त क्षेत्र क्यों चाहिए। साथ ही जिस क्षेत्र को वह मिलाना चाहता है उसके साथ उसके आर्थिक एवं अन्य सम्बन्ध क्या हैं, उसका भी वह पूरा-पूरा उल्लेख करता है। इस प्रार्थना पत्र की प्रतियां प्रभावित क्षेत्र की सत्ताओं को भेज दी

जाती हैं ताकि वे यदि चाहें तो अपने विरोध प्रस्तुत कर सकें। ऐसी स्थितियों में मन्त्री तीन प्रकार के वैकल्पिक निर्णय ले सकता है। प्रथम, वह बिना आगे किसी प्रकार की जांच किए ही प्रावधिक आदेश जारी कर सकता है। ऐसा बहुत कम किया गया और प्राय: उन्हीं अवसरों पर किया गया जहां कि योजना के विरुद्ध किसी ने कोई आपत्ति ही नहीं उठाई। दूसरा विकल्प यह हो सकता है कि वह सम्बन्धित स्थानीय क्षेत्र में जांच के लिए एक निरीक्षक को भेज दे और उसका प्रतिवेदन आने पर यह निर्णय करे कि प्रावधिक आज्ञा प्रसारित की जाए अथवा नहीं। प्राय: इस प्रकार की जांच स्थानीय कानूनी जांच की प्रारम्भिक अवस्था होती है। यह जांच उसी समय की जाती है जब कि मन्त्री को यह विश्वास हो जाय कि जांच के सम्बन्ध में खर्च किया गया धन उपयोगी रहेगा। इस प्रकार की जांच के लिए एक अभियन्ता निरीक्षक को भेजा जाता था जो कि जनता में इस प्रकार की जांच करता था। इस अधिकारी ने क्षेत्र में जांच करने से पूर्व प्राय: विस्तृत निरीक्षण का तरीका अपनाया। पर्याप्त पूछ-ताछ करने के बाद निरीक्षक द्वारा मन्त्री को अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया जाता था। इसमें गवाहों के निर्णय एवं विश्लेषण होते थे तथा स्वयं निरीक्षक का व्यक्तिगत मत भी रहता था कि प्रावधिक आदेश दिया जाए अथवा नहीं। निरीक्षक द्वारा की गई सिफारिश को मानने के लिए मन्त्री बाध्य नहीं था। वह उसे ठुकरा भी सकता था। इस प्रकार का निर्णय पूरी तरह से मन्त्री की स्वेच्छा पर ही निर्भर रहते थे।

जब कोई नगरपालिका बारो, काउन्टी बारो बनने की प्रार्थना करता था तो इसी सामान्य प्रक्रिया को अपनाया जाता था। जब मन्त्री किसी काउन्टी बारो का क्षेत्र बढ़ाता था तो वह मुख्य रूप से इन बातों पर विचार करता था कि क्या बढ़ा हुआ क्षेत्र आर्थिक रूप से प्रशासित होने की सामर्थ्य रखता है? दूसरे, क्षेत्र का प्रसार हो जाने के बाद क्या सम्बन्धित क्षेत्रों में अच्छी एवं बचतपूर्ण सरकार कार्य कर सकती है? तीसरे, काउन्टी बारो के क्षेत्र में सम्मिलित प्रदेशों के निवासी क्या इस परिवर्तन से सहमत हैं? चौथे, क्या वह क्षेत्र काउन्टी बारो का ही आगे का विकास है? पांचवें, यदि प्रसार नहीं किया गया तो क्या काउन्टी बारो उन करों से वंचित रह जाएगा जो कि न्यायिक दृष्टि से उसी को मिलने चाहिए? छठे, सम्मिलित किए गए क्षेत्र के साथ करों का जो समायोजन किया जाएगा क्या वह उचित है? सातवें, क्या कस्बे को अच्छी प्रकार से प्रशासित किया गया है? आठवें, जिस क्षेत्र को मिलाया जाना है क्या उसके सामाजिक हित एक जैसे हैं? नवें, क्या कस्बा इतना अधिक विकसित हो गया है कि उसके क्षेत्र को प्रशासित करने की आज्ञा दे दी जाए?

नए काउन्टी बारो बनाने एवं काउन्टी बारोज के क्षेत्र का प्रसार करने के प्रश्न ऐसे थे जो कि अत्यन्त गम्भीर परिणाम वाले थे। इनके सम्बन्ध में कोई भी निर्णय लेने से पूर्व पर्याप्त सोच-विचार करना जरूरी था। जब कभी ऐसा किया जाता था तो यह स्वाभाविक था कि जनसंख्या एवं करों की शक्ति उच्च सत्ताओं के प्रशासन से निकल कर काउन्टी बारोज के हाथ में आ जाती थी। इन परिवर्तनों के परिणामस्वरूप सबसे अधिक हानि काउन्टी

परिषदों को होती थी और इसलिए वे इसका सबसे अधिक विरोध करती थीं और करती हैं। हितों का विरोध होने के कारण काउन्टी तथा अधिक विकसित शहरी क्षेत्रों के दृष्टिकोण में जमीन आसमान का फर्क होता है। उनके दृष्टिकोण में विरोध की भावना स्वाभाविक थी। यदि विभिन्न जांचों की गवाहियों का निरीक्षण किया जाए तो हम पाएंगे कि वे इनसे असन्तुष्ट थीं, उनसे ईर्ष्या करती थीं और उनके विरुद्ध अयोग्यता का दोषारोपण करती थीं। काउन्टी यह चाहती थीं कि उनको शहरी विकास के पृथक्करण वाले परिणामों के विरुद्ध गारन्टी दी जाए; यहां तक कि उन क्षेत्रों की शक्तियों को भी न बढ़ने दिया जाए। दूसरी ओर कस्बे यह चाहते थे कि उन्हें स्वायत्तता के लिए कम खर्चीला मार्ग बताया जाए। दोनों ही अपने पक्ष के समर्थन में तर्क प्रस्तुत करते थे।

काउन्टीज के तर्क—काउन्टीज ने यह बताया कि तत्कालीन प्रक्रिया बहुत कुछ कस्बों के पक्ष में है अतः इस प्रक्रिया की कोई आवश्यकता नहीं है; क्योंकि काउन्टी स्वयं अपने समस्त क्षेत्र को सहयोग एवं विकेन्द्रीयकरण के तरीकों से बड़ी अच्छी तरह प्रशासित कर सकती है। काउन्टीज का यह भी कहना था कि सन् १८८८ का अधिनियम कभी भी यह नहीं कहता था जो कि किया गया है।

काउन्टीज ने बताया कि शहरी स्वायत्तता का विकास एक गलत विकास था और इसके परिणामस्वरूप अनेक बुरे परिणाम सामने आए। सर्वप्रथम इसका एक परिणाम यह हुआ कि उन सम्पन्न क्षेत्रों को बाहर ले लिया गया जो कि काउन्टी के वित्तीय आधार थे। नियमानुसार शहरी क्षेत्र प्रायः सम्पन्न क्षेत्र होते हैं। यदि उनको स्वायत्त बना दिया जाए तो काउन्टी परिषद के पास प्रशासन के लिए केवल ऐसे क्षेत्र रह जाएंगे जो कि तुलनात्मक रूप से गरीब हैं। इस व्यवस्था के कुछ आवश्यक परिणाम निकलेंगे। आय के साधन कम होने के कारण या तो काउन्टी को अपनी सेवाएं कम करनी होंगी अथवा उसके अनुदान के लिए केन्द्रीय सत्ता की ओर निहारना पड़ेगा। ये दोनों ही विकल्प उचित नहीं हैं। अनुदान के कारण स्थानीय सरकार का मूल उद्देश्य भी समाप्त हो जाता है। ब्रिटिश स्थानीय सरकार के इतिहास को देखने के बाद यह कहा जा सकता है कि जब केन्द्रीय सरकार अनुदान देती है तो वह पर्याप्त नियन्त्रण भी रखती है और इस प्रकार स्थानीय जनता को कई प्रकार की परेशानियां उत्पन्न हो जाती हैं।

दूसरे, इसका एक परिणाम यह होगा कि शहरी एवं देहाती जिलों के बीच सन्तुलन प्राप्त करने के लिए उचित क्षेत्र मिल जायगा। काउन्टी के विचार में तथा उसके क्षेत्र में जो कि पर्याप्त बड़ा होता है, कई प्रकार की जनसंख्या रहती है। गरीब जिलों में जनसंख्या अपेक्षाकृत अधिक घने रूप से बसी हुई होगी और अन्य जिलों में जनसंख्या यहां तहां बसी होगी। ऐसी स्थिति में पूरी काउन्टी की सेवाओं का खर्चा सभी लोगों पर बराबर पड़ेगा और कुल मिला कर इस व्यवस्था के परिणामस्वरूप काउन्टी के अधिक धनवान लोग गरीबों की सहायता करेंगे। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि काउन्टी में एक ही सत्ता के आधीन शहर एवं कस्बे दोनों

रहेंगे और जो सेवाएं पूरे क्षेत्र में प्रदान की जाएंगी उनके लिए पूरे क्षेत्र के लोगों द्वारा खर्चा प्रदान किया जायगा। इससे सेवाओं का सुगमतापूर्वक संचालन सम्भव हो सकेगा। काउन्टी परिषद बड़े एवं मिले-जुले क्षेत्रों के प्रशासक के रूप में सर्वोच्च होती है तथा इसमें गरीब देहाती क्षेत्रों को धनवान शहरी क्षेत्रों के दम पर सहयोग दिया जाता है।

तीसरे, एक तर्क यह दिया जाता है कि प्रशासन में बचत एवं कुशलता लाने के लिए यह जरूरी है कि सरकार का बड़ा क्षेत्र होना चाहिए। जब तक एक उपयुक्त आकार नहीं होता उस समय तक संस्थाओं को बनाया नहीं जा सकता, उनको क्रियान्वित नहीं किया जा सकता। काउन्टी द्वारा बचत की दृष्टि से यह तर्क दिया जाता है कि संयुक्त व्यवस्था में शहरी कस्बों द्वारा जो योगदान दिया जाता था उसमें उनके अतिरिक्त देहाती क्षेत्रों का भी प्रशासन चलता था किन्तु अब जब कि वे अपना प्रबन्ध स्वयं करते हैं तो उन्हें उतना ही खर्चा करना होता है। काउन्टी तथा कस्बे दोनों के हित के लिए यह जरूरी है कि संयुक्त व्यवस्था अपनाई जाए। इस तर्क के विरुद्ध काउन्टी की तीन आधारों पर आलोचना की जा सकती है। प्रथम यह है कि यदि काउन्टियां बाहर किये गये कस्बों से गरीब थीं तो उनको चाहिए था कि वे अन्य कस्बों के साथ मिल जातीं। दूसरे, यद्यपि केन्द्रीय प्रशासन के पक्ष में बहुत कुछ कहा जा सकता है किन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि काउन्टी प्रशासन का सर्वश्रेष्ठ क्षेत्र है। तीसरे, एक कुशल सरकार का मापदण्ड केवल यह नहीं है कि वह कम पैसों में सेवाएं प्रदान करे। इसके लिए उन्हें यह भी देखना होता है कि विशेष क्षेत्र एवं विशेष जनता के लिए उचित एवं आवश्यक सेवाएं प्रदान की गई हैं या नहीं।

चौथे, काउन्टीज के द्वारा यह तर्क दिया गया कि काउन्टी बारो व्यवस्था की अपेक्षा काउन्टी व्यवस्था अधिक स्थानीय स्वायत्त सरकार है, अधिक प्रजातन्त्र है क्योंकि काउन्टी में सभी सेवाएं काउन्टी परिषद और अनेक गैर काउन्टी बारोज तथा शहरी एवं देहाती जिलों में बंटी रहती हैं। यद्यपि यह कहना सही है कि काउन्टी व्यवस्था में लोगों को प्रशासनिक कार्यों में भाग लेने का अधिक अवसर प्राप्त होता है किन्तु जब हम वास्तव में मतदान करने वाले लोगों की संख्या का पता लगाते हैं तो घोर निराशा होती है।

पांचवें, काउन्टीज द्वारा यह तर्क दिया गया कि स्वायत्त शहरी क्षेत्रों के प्रसार से न केवल उनकी वित्तीय स्थिति चिन्ताजनक हो गई वरन् प्रशासनिक दृष्टि से भी उनकी हालत नाजुक बन गई क्योंकि उन्हें एक ऐसे क्षेत्र का प्रशासन करना होता था जो कि यहां से वहां फैला रहता था और जिनके बीच परस्पर अनेक विभिन्नताएं पाई जाती हैं। क्षेत्र के कुछ निवासी यहां रहते हैं कुछ वहां रहते हैं, कुछ बस्तियां घनी हैं कुछ अत्यन्त कम आबादी वाली हैं। ऐसी स्थिति में उनको स्कूल, प्राथमिक शिक्षा, पुस्तकालय एवं पुलिस आदि सेवाएं किस प्रकार प्रदान की जा सकती हैं।

छठे, कुछ अन्य विचार भी इस सम्बन्ध में किये गये जैसे कि परिवर्तन के परिणामस्वरूप काउन्टीज की विकास योजनाएं रुक जाएंगी,

उनके अधिकारीगण कार्य से विमुख हो जायेंगे। इसलिए काउन्टी सेवाएं स्थापित ही क्यों की जाएं जब कि कुछ दिनों बाद इन विषयों में बारोज अपने स्वामी स्वयं बन जायंगे। इसके अतिरिक्त संसदीय कार्यभार को केवल तभी कम किया जा सकता है जब कि काउन्टी को एक बड़ा क्षेत्र दिया जाय तथा उसे अधिक प्रशासकीय एवं पर्यवेक्षण सम्बन्धी सत्ताएं सौंपी जाएं।

बारोज के तर्क—बारोज ने काउन्टी से स्वतन्त्र रह कर अपने प्रशासन को संगठित करने के क्षेत्र में कई तर्क दिये। सर्वप्रथम उन्होंने काउन्टी प्रशासन के लिए किए जाने वाले अपने वित्तीय योगदान का उल्लेख किया। उन्होंने यह तर्क दिया कि कई एक सेवाओं में उनके द्वारा प्राप्त सेवाओं की अपेक्षा अधिक धन प्रदान किया जा रहा है। इन सेवाओं को वे अपने प्रयास से भी प्राप्त कर सकते हैं तथा अपेक्षाकृत अधिक सस्ती प्राप्त कर सकते हैं और यदि सस्ते नहीं तो कम से कम वे उस ढंग से प्राप्त कर सकते हैं जिससे कि वे चाहें। उनका यह तर्क था कि जो सेवाएं उनके क्षेत्र के लिए उपयुक्त नहीं हैं उनका भार उन पर क्यों डाला जाए अथवा वे दूसरे क्षेत्रों के लिए योगदान क्यों दें। उन्होंने यह इच्छा प्रकट की कि वे अपने भाग्य के विधाता स्वयं बनें तथा उन क्षेत्रों का वित्तीय भार अपने ऊपर न लें जिनके साथ उनकी सामान्यताएं बहुत कम हैं और जिनमें कि वे बहुत कम रुचि रखते हैं।

दूसरे, अपने क्षेत्रों के प्रसार के पक्ष में तर्क देते हुए बारोज ने यह बताया कि इन अर्ध-शहरी क्षेत्रों ने औद्योगिक एव व्यापारिक विकासों के कारण तथा यातायात के समुचित प्रबन्ध के कारण अपनी सीमाओं का विकास कर लिया है तथा यहां के लोग काम के लिए केन्द्र की ओर दौड़ते हैं और बाद में आराम के लिए इन क्षेत्रों में आजाते हैं। इस प्रकार जीविका के साधन सांस्कृतिक रुचियां, नागरिक सुविधाएं, शहर का नियोजन, फैक्ट्री निवास स्थान, स्कूल, जल वितरण आदि सभी दृष्टियों से यह क्षेत्र एक इकाई है। जब गलियां और सड़कें एक बस्ती से दूसरी बस्ती तक मुड़ कर जाती हैं तो दोनों की एकता के बारे में प्रश्न ही नहीं उठता। इसे राष्ट्रीय दृष्टि से महत्वपूर्ण माना गया कि शहरी एकीकरण के आर्थिक महत्व को समझा जाए और बारो के लिए प्रसार की सुविधाएं दे कर एवं उन्हें काउन्टी से स्वतन्त्रता प्रदान करके इस प्रवृति को बढ़ावा दिया जाए।

तीसरे, जब यह प्रश्न किया गया कि क्या काउन्टी परिषदें इन सम्बन्धित क्षेत्रों के बीच पर्याप्त सहयोग स्थापित करके बारोज की सेवाओं को प्रदान नहीं कर सकती तो बारोज ने तर्क दिया कि वे ऐसा करने में असमर्थ हैं क्योंकि अर्ध-स्वायत्त सत्ताओं के बीच सहयोग स्थापित करना अत्यन्त कठिन है क्योंकि वे अपनी सीमित स्वतन्त्रता के प्रति ईर्ष्यालु होते हैं। इसके अतिरिक्त यदि सहयोग प्राप्त भी कर लिया जाय तो एक संयुक्त कार्यक्रम का प्रबन्धित करना इतना सरल नहीं है जितना कि नियोजन धन एवं क्रियान्वयन के लिए उत्तरदायी इकहरी सत्ता होती है। काउन्टी द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाओं के बारे में यह कहा गया है कि काउन्टी परिषद में बड़े बारोज को चाहे कितना ही उदार प्रतिनिधित्व प्रदान किया जाए किन्तु उसमें देहाती एवं छोटे शहरी जिलों के प्रतिनिधियों की संख्या हमेशा ज्यादा

होगी क्योंकि इस प्रकार के जिलों की वास्तविक संख्या अधिक है। इसके परिणामस्वरूप काउन्टी परिषद शहरी विकास के प्रति असहानुभूति पूर्ण बन जाती है। करों की दृष्टि से भी वे अपनी रुचियों में पक्षपातपूर्ण हो जाती है।

चौथे, शहरी क्षेत्रों को यह स्पष्ट था कि स्थानीय सरकार वहीं पर श्रेष्ठ कार्य कर सकती है जहां कि एक क्षेत्र हो, उसका एक परिषद द्वारा प्रतिनिधित्व किया जाए, सभी सेवाओं के वित्त को एवं सेवाओं को समन्वित किया जाए। यह बहुत कुछ सही सिद्धान्त था। इसके विरुद्ध काउन्टी परिषदों का यह कहना था कि वे यह समझने में असमर्थ हैं कि एक निश्चित जनसंख्या वाला विशेष क्षेत्र सभी सेवाओं के लिए उचित क्षेत्र बन जाएगा और न ही यह तर्क किया जा सकता है कि काउन्टी का क्षेत्र और जनसंख्या अधिक उचित थे। असल में इन दोनों को ही एक संयुक्त सत्ता के आधीन प्रबन्धित किया जाना चाहिए था। काउन्टी बारोज के पक्ष में एक अन्य महत्वपूर्ण बात उनका व्यक्तिगत सम्मान का भाव था। उनमें हमारा कस्बा, हमारी परिषद एवं अहम की भावनाएं पनपने के कारण पृथक्करण की नीतियों का प्रभाव बढ़ा।

इस प्रकार काउन्टी की ओर से अनेक तर्क दिए गए और दूसरी ओर काउन्टी बारोज ने तर्क प्रस्तुत किए। दोनों ओर से जो वाद-विवाद उत्पन्न हुए उनके परिणामस्वरूप सन् १९४५ में एक सीमा आयोग स्थापित करना जरूरी हो गया।

शहरी जिले
[Urban Districts]

एक प्रशासकीय काउन्टी में स्थानीय सरकार की जो विभिन्न सत्ताएं रहती हैं शहरी जिले उनमें से ही एक है। सन् १९४८ में शहरी जिलों की संख्या ५७२ थी। प्रत्येक काउन्टी में शहरी जिलों की संख्या बराबर नहीं थी किन्तु ये जिले मुख्य रूप से स्वास्थ्य, सड़कें एवं गृह-निर्माण से सम्बन्धित सत्ताएं होती हैं। सन् १९०१ में जिन शहरी ज़िलों की जनसंख्या २०००० थी उनको प्राथमिक शिक्षा का भी कार्य सौंपा गया। वे यह कार्य सन् १९४४ तक करती रहीं, बाद में ये शक्तियां काउन्टीज को दे दी गई। शहरी जिले कुछ ऐसे थे जो कि उच्च रूप से केन्द्रित शहरी क्षेत्र थे तथा उनमें कोई भी देहाती विशेषता नहीं थी। कुछ ऐसे क्षेत्र थे जो कि शहरी बनाम देहाती थे। उनमें एक या दो छोटी शहरी नाभियां थीं और उनको चारों ओर से देहाती इलाकों ने घेरा हुआ था। आकार एवं व्यय के आधार पर भी शहरी जिलों के बीच बड़े, मध्य के तथा छोटे क्षेत्रों के बीच अन्तर था। इनमें से कुछ कस्बे तो पर्याप्त संगठित थे तथा दूसरी ओर कुछ क्षेत्र कम जनसंख्या वाले थे। इनके निवासियों का नागरिक जीवन परस्पर भिन्न था, शहरी ज़िलों के निवासियों का प्रशासन दो सत्ताओं द्वारा किया जाता था। ये थीं—काउन्टी परिषद और शहरी जिला परिषद। काउन्टी परिषद के लिए क्षेत्र के कुछ प्रतिनिधि चुने जाते थे जिनको जिले के प्रतिनिधि कहा जाता था यद्यपि कानून की दृष्टि से वे पारषद थे।

शहरी जिलों को विभिन्न कार्य सौंपे गए थे। किस शहरी जिले के द्वारा क्या कार्य किया जाता था यह एक विस्तृत अध्ययन का विषय है। यहाँ केवल उन्हीं कार्यो का उल्लेख किया जा सकता है जो कि कानूनी रूप से इन निकायों को सौंपे गए। सामाजिक एवं धन सम्बन्धी महत्व के कारण इन निकायों को जो शक्तियां सौंपी गईं वे मुख्य रूप से चार विभागों में विभाजित की जा सकती हैं। प्रथम भाग में वे शक्तियां आती हैं जो कि उनके स्तर के कारण उन्हें सौंपी गई हैं, चाहे उनकी जनसंख्या कुछ भी हो। इनमें से कुछ शक्तियां स्वेच्छापूर्ण होती हैं तथा बाध्यकारी होती है। जबकि अन्य सहमतिपूर्ण होती हैं मजदूरों के लिए घर बनाने की शक्ति एक उत्तरदायित्वपूर्ण शक्ति है जब कि स्नानागार आदि का प्रावधान सहमतिपूर्ण शक्तियों का उदाहरण है। दूसरी श्रेणी में वे शक्तियां आती हैं जिनका प्रयोग केवल एक ही निश्चित आकार वाले जिले ही कर सकते हैं। उदाहरण के लिए दस हजार से अधिक जनसंख्या वाले शहरी जिले एक अंश-विभाग समिति (Allotment Committee) नियुक्त करेंगे जब कि बीस हजार से अधिक की जनसंख्या वालों को एक कस्बा नियोजन कार्य-क्रम बनाना चाहिए और प्राथमिक शिक्षा के लिए प्रावधान बनाने चाहिए। तीसरे वर्ग में वे शक्तियां आती हैं जिनको कि वैकल्पिक रूप से या तो शहरी जिले काम में ले सकते हैं या काउन्टी परिषद ऐसी शक्तियों का सम्बन्ध सार्वजनिक पुस्तकालयों, खुले मैदानों की रचना एवं संस्थापन, एक गैस-परीक्षक की नियुक्ति आदि से रहता है। चौथे, कुछ शक्तियां ऐसी होती हैं जिनको कि मिलेजुले रूप से शहरी जिला परिषद अपने जिले के लिए तथा काउन्टी परिषद प्रशासकीय काउन्टी के लिए सम्पन्न करती हैं। उदाहरण के लिए वे संसद में व्यक्तिगत विधेयक को प्रोत्साहित कर सकती हैं या उसका विरोध कर सकती हैं और यदि आवश्यक हो तो नदियों को गन्दा किए जाने से रोक सकती हैं। शहरी जिलों की शक्तियों के बीच एक ही काउन्टी में आकार के आधार पर विभिन्नताएं होती हैं और एक ही आकार के विभिन्न शहरी जिलों के बीच विभिन्न काउन्टियों में अन्तर होता है।

शहरी जिलों की स्थापना सन् १८९४ के स्थानीय सरकार अधिनियम द्वारा की गई थी। ये पूर्ववर्ती शहरी जिलों पर आधारित थे जिनको कि जन-स्वास्थ्य अधिनियम के आधीन निर्मित किया गया था। शहरी जिले जैसा कि इनके नाम से प्रतीत होता है, आकार की दृष्टि से अत्यन्त छोटे होते हैं। इनमें दो या दो से अधिक छोटे कस्बे मिले रहते हैं अथवा ऐसे छोटे कस्बे होते हैं जो कि चारों ओर से गांवों द्वारा घिरे हुए हों। विभिन्न शहरी जिलों का क्षेत्रफल दो से ले कर चालीस वर्ग मील तक है और उनकी जनसंख्या एक लाख से लेकर लगभग सात सौ पचास तक है

देहाती जिले
[Rural Districts]

देहाती जिलों की स्थापना सन् १८९४ के स्थानीय सरकार अधिनियम द्वारा की गई। ये पूर्ववर्ती स्थानीय सफाई जिलों पर आधारित थे। ऐसे जिलों की संख्या ४७५ के लगभग थी। ये काउन्टी के विस्तृत क्षेत्र एवं

दूर बसी हुई जनता पर प्रशासन करते थे। देहाती जिलों के क्षेत्र तीन से लेकर साढ़े चार सौ वर्ग मील तक के थे और जनसंख्या की दृष्टि से इनमें १५०० से लेकर १०२००० तक लोग रहते थे।

पेरिश

[The Parish]

पेरिश स्थानीय सरकार की सबसे छोटी इकाई है। इसका एक लम्बा और एकीकृत इतिहास है। लगभग पांच सौ वर्ष तक विशेषकर ट्यूडर काल से उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ तक ये पेरिशें स्थानीय सरकार के सर्वाधिक महत्वपूर्ण क्षेत्र थे। उसके बाद में व्यवस्थापन द्वारा इनकी शक्ति एवं महत्व को कम कर दिया गया। निर्धन कानून का सुधार एवं सन् १८३४-३५ में नगर निगमों की स्थापना के कारण पेरिशों की शक्तियां घटती चली गईं और बाद में होने वाले भौतिक एवं आर्थिक विकास के परिणामस्वरूप इनकी शक्तियां और भी कम हो गईं। इस प्रक्रिया के परिणामस्वरूप यह आशंका होने लगी कि कहीं पेरिशें पूरी तरह से समाप्त न हो जाएं और इसी आशंका के परिणामस्वरूप सन् १८९४ में एक अधिनियम पास करके पेरिशों को छोटी-मोटी शक्तियां सौंपी गईं। पेरिशों को पूर्ण विनाश से बचाने में तथा उनके अस्तित्व को बनाए रखने में ग्राम्य प्रजातन्त्र एवं कृषि-श्रम ने महत्वपूर्ण रूप से भाग लिया। सन् १८९४ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने देहाती पेरिशों के प्रशासकीय रूप को पूरी तरह से बदल दिया। उसके बाद भी शहरी पेरिशें कुछ धार्मिक कार्य करती हैं और कुछ पंजीकरण से सम्बन्धित कार्य करती हैं। इनके अतिरिक्त उनका कोई भी कार्य नहीं है।

सन् १८९४ के अधिनियम ने पेरिश मीटिंग तथा पेरिश परिषद की स्थापना की। देहाती जिलों के साथ सम्मिलित प्रत्येक देहाती पेरिश में पेरिश परिषद उस समय रहती थी जब कि उसकी जनसंख्या ३०० से अधिक हो अथवा यदि उसकी जनसंख्या १०० से ३०० लोगों के बीच में हो तो यह पेरिश परिषद की स्थापना की इच्छा प्रकट कर सकती थी। यदि इसकी जनसंख्या १०० से भी कम हो तो भी यह पेरिश परिषद का संगठन कर सकती थी यदि ऐसा करने के लिए उसे काउन्टी परिषद द्वारा अनुमति प्रदान कर दी जाए। जहां कहीं देहाती पेरिश के पास पेरिश परिषद नहीं होती थी वह पेरिश मीटिंग की स्थापना करती थी। इंगलैण्ड तथा वेल्स में देहाती पेरिशों की संख्या कुल मिला कर लगभग १२८५० है जबकि शहरी पेरिशें १५२० हैं। पेरिश परिषदों की संख्या ६२२० है। ये परिषदें ७२०० पेरिशों से सम्बन्ध रखती हैं। पेरिश मीटिंगों की संख्या लगभग ५६५० है। इनमें से केवल ३५० ही प्रत्यक्ष रूप से वित्तीय कार्यों को सम्पन्न करती हैं। काउन्टी परिषद की स्वीकृति से कुछ पेरिशें मिल कर अपनी एक ही पेरिश परिषद बना सकती थीं। ऐसा वे तभी करती थीं जबकि उनकी पेरिश मीटिंगों में ऐसा करने के लिय निर्णय ले लिया जाय।

पेरिश मीटिंग में पेरिश के स्थानीय सरकार के निर्वाचक रहते हैं जो कि वर्ष में एक या दो बार निर्णय लेने के लिए मिलते हैं वे अपना एक सभापति चुनते हैं। वह सभापति एवं स्थानीय देहाती जिला परिषद में उनका

प्रतिनिधि पेरिश के मान्य अधिकारी बन जाते हैं। सन् १८९४ के अधिनियम तथा उसके बाद बनने वाले दूसरे अधिनियमों ने पेरिश परिषदों एवं पेरिश मीटिंगों को कुछ शक्तियों एवं कार्यों के उत्तरदायित्व प्रदान किए। इनमें से कुछ बाध्यकारी थे और दूसरे स्वीकृति योग्य। पेरिश मीटिंग द्वारा दो कर सम्बन्धी सत्ताएं नियुक्त कर दी जाती थीं। यह पेरिश परिषद के चुनाव के लिए प्रावधान बनाती थी। यह चुनाव हर तीसरे साल किए जाते थे। इन अनिवार्य कर्त्तव्यों के अतिरिक्त पेरिश मीटिंगों के पास करने के लिए कोई महत्वपूर्ण कार्य नहीं था। एक महत्वपूर्ण शक्ति पेरिश मीटिंगों के पास यह होती थी कि वे काउन्टी परिषद में देहाती जिला परिषद के विरुद्ध शिकायत कर सकती थीं कि परिषद के द्वारा देहाती गृह-निर्माण के कार्य-क्रमों के क्षेत्र में अवहेलना बरती जा रही है अथवा जल वितरण प्रावधानों या जन स्वास्थ्य अधिनियमों के बारे में बेपरवाही की जा रही है।

पेरिश परिषद हर तीसरे वर्ष वार्षिक पेरिश मीटिंग में निर्वाचित की जाती थी। यह पेरिश मीटिंग से स्थानीय सरकार की सत्ताओं में स्तर की दृष्टि से कुछ उच्च होती है और इसलिए उसके पास अधिक शक्तियां होती हैं। सन् १८९४ के अधिनियम ने पेरिश परिषदों को यह शक्ति दी कि वह अपने न्यायोचित एवं वैधानिक खर्चों के लिए पेरिश मीटिंग की स्वीकृति से कर लगा सके। वास्तविक व्यवहार में पेरिश परिषद या पेरिश मीटिंग में एक पेरिशनर ऐसा होता था जो कि देहाती जिला परिषद का भी सदस्य होता था और इस प्रकार उच्चतर निकायों को निम्नतर निकायों के साथ मिलाया गया। किन्तु यह केवल घटनावश ही हुआ क्योंकि देहाती जिला परिषद में जो पेरिश के प्रतिनिधि होते हैं उनको पेरिश परिषद का सदस्य होना जरूरी नहीं होता। दोनों ही निकायों के बीच यदि पारस्परिक सम्बन्ध की व्यवस्था कर दी जाए तो निश्चय ही अत्यन्त उपयोगी कार्य समझा जायगा। क्योंकि उनके द्वारा किए जाने वाले प्रशासकीय कार्य प्रायः परस्पर अतिराव की स्थिति में होते हैं और उनमें अनावश्यक व्यय की सम्भावना अधिक होती है। देश के विभिन्न भागों में देहाती जिला परिषदों ने विभिन्न समितियां गठित की हैं ताकि इस प्रकार का एकीकरण स्थापित किया जा सके।

देहाती पेरिशें स्थानीय सरकार में आज भी अपना योगदान करती है यद्यपि उनका योगदान अधिक महत्वपूर्ण नहीं होता। जब स्थानीय सरकार पर शाही आयोग ने पेरिश परिषद एवं पेरिश मीटिंगों की कार्यवाही के सम्बन्ध में विशेष जांच की तो कई एक महत्वपूर्ण गवाहियों ने यह बताया कि एक पेरिश में जहां पर कि पेरिश परिषद नहीं होती, पेरिश मीटिंग द्वारा गांवों के हितों की रक्षा के साधन के रूप में अत्यन्त मूल्यवान कार्य किया जाता है। किन्तु इन हितों की रक्षा वे तभी करती है जब कि किसी के द्वारा उनको चुनौती दी जाए, नहीं तो एक प्रशासकीय संगठन के रूप में या गांव को सुधारने के कार्यक्रमों की पहल करने वाले के रूप में इनका महत्व बहुत कम होता है। जहां तक पेरिश परिषदों का सम्बन्ध है वे अत्यन्त महत्वपूर्ण होती हैं और इनको अधिक उपयोगी बनाने के लिए प्रयास किया जाना चाहिए।

3

स्थानीय सत्ताओं के कार्य

[THE FUNCTIONS OF LOCAL BODIES]

ग्रेट ब्रिटेन की स्थानीय सरकार में जो विभिन्न सत्ताएं हैं तथा जिनको मिला कर स्थानीय जनता की सेवा करने का प्रयास किया गया है उनके द्वारा अनेक प्रकार की सेवाएं सम्पन्न की जाती हैं। स्थानीय सत्ताओं द्वारा की गई सेवाओं की प्रकृति अनेक प्रकार की है और ये जीवन के प्रायः प्रत्येक पहलू में सम्बन्ध रखती हैं। केन्द्रीय सरकार एवं राष्ट्रीय निगमों द्वारा जो सेवाएं प्रदान की जाती हैं उनकी तुलना में स्थानीय सेवाएं अधिक विस्तृत क्षेत्र को अपने आप में समाहित करती हैं। काउन्टी बारो परिषदें अपने क्षेत्र में स्थानीय सरकार की सभी सेवाओं के लिए उत्तरदायी होती हैं। दूसरी ओर काउन्टी परिषदें स्वास्थ्य, सड़क, शिक्षा, अग्नि सुरक्षा, नियोजन, बालकों की रक्षा आदि कार्यों के लिए स्थानीय सत्ता के रूप में उत्तरदायी होती हैं और साथ ही काउन्टी के न्यायाधीशों से मिल कर पुलिस के ऊपर संयुक्त नियन्त्रण लागू रखने का कार्य करती हैं। काउन्टी जिला परिषदों द्वारा अर्थात् गैर काउन्टी बारोज की परिषदों एवं शहरी तथा देहाती जिलों की परिषदों द्वारा जो कार्य किए जाते हैं उनमें सफाई गृह निर्माण, पार्कों की रचना, खुले मैदान बनाना आदि मुख्य हैं। पेरिश का सम्बन्ध मुख्य रूप से कम महत्व की सेवाओं के साथ रहता है। कुछ पेरिशें स्नानागार, धोबीघाट एवं पुस्तकालय आदि का कार्य भी करती हैं। एक ही स्तर वाली स्थानीय सत्ताओं द्वारा जो सेवाएं प्रदान की जाती हैं वे एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में कई आधारों पर भिन्न होती हैं। इनकी भिन्नता के कारणों में प्रथम यह है कि स्थानीय सत्ताओं द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाओं में कुछ तो बाध्यकारी होती हैं जब कि अन्य ऐच्छिक।

बाध्यकारी कार्य (Obligatory functions) वे होते हैं जिनके सम्बन्ध में व्यवस्थापन करते समय यह कहा जाता है कि इनको स्थानीय सत्ता सम्पन्न करेगी ही (Shall do)। दूसरी ओर स्वेच्छाचारी शक्तियां होती हैं जिनके बारे में व्यवस्थापन द्वारा यह कहा जाता है कि स्थानीय सत्ता इन कार्यों को कर सकती है (May do)। जब 'करेगी' शब्द का प्रयोग

किया जाता है तो यह स्पष्ट हो जाता है कि उन कार्यों को सम्पन्न करना सत्ता का एक वैधानिक कर्त्तव्य है किन्तु जब 'सकती हैं' शब्दों का प्रयोग किया जाता है तो स्थानीय सत्ताएं उनको सम्पन्न करने या न करने के लिए स्वतन्त्र होती हैं। वैधानिक कर्त्तव्यों को लागू कराने के तरीके कई होते हैं और जैसा कि मि० आर० एम० जेक्सन लिखते हैं यदि आप कहीं भी व्यवस्थापन का 'करेगी' पाए तो यह मान कर चलिए कि यदि वे कार्य नहीं किए गए तो कोई न कोई ऐसी सत्ता जरूर होगी जो कि इस कार्य को न करने की स्थिति में कानूनी कार्यवाही कर सकेगी।* जहां तक ऐच्छिक कार्यों का सम्बन्ध है उनको सम्पन्न करने के लिए स्थानीय सत्ता द्वारा कोई समिति नियुक्त की जा सकती है। जिन कार्यों को स्थानीय सत्ता की राय में समिति के द्वारा अच्छी प्रकार सम्पन्न किया जा सकता है, वे कार्य इन समितियों द्वारा प्रबन्धित एवं नियमित होने के लिए छोड़ दिए जाते हैं। अधिनियम द्वारा कुछ स्वेच्छापूर्ण शक्तियां इस प्रकार की भी सौंपी जाती हैं जिन पर कुछ शर्तें लगा दी जाती हैं तथा कुछ सीमाएं निश्चित कर दी जाती हैं। इन शक्तियों को वह इस प्रकार नियुक्त समितियों को हस्तान्तरित कर सकती हैं। ऐसा करने में इसके ऊपर कोई प्रतिबन्ध या सीमा नहीं रहती किन्तु वह कर लगाने या धन इकट्ठा करने की शक्ति किसी समिति को नहीं सौंप सकती।

स्थानीय सत्ताओं द्वारा सम्पन्न की जाने वाली सेवाओं में अन्तर का एक दूसरा कारण यह है कि कुछ स्थानीय सत्ताओं को स्थानीय अधिनियम द्वारा सेवाओं का प्रशासन करने के लिए अतिरिक्त शक्तियां प्रदान कर दी जाती हैं। इन सेवाओं को वे सामान्य कानून के आधीन प्रदान नहीं कर सकते। इस प्रकार बर्मिंघम नगर को सन् १६१६ के अधिनियम द्वारा एक नगरपालिका बैंक स्थापित करने की अतिरिक्त शक्ति प्राप्त हो गई है। तीसरे, केन्द्रीय सरकार द्वारा किसी व्यक्तिगत स्थानीय सत्ता को वह शक्ति सौंपी जा सकती है जो कि सामान्य रूप से किसी अन्य वर्ग की स्थानीय सत्ता को प्राप्त होती। गृह निर्माण एवं स्थानीय सरकार मन्त्री द्वारा देहाती जिला परिषद को वे शक्तियां सौंपी जाती हैं जो कि वैसे शहरी जिला परिषद को सौंपी जानी चाहिए थीं। चौथे, हस्तान्तरित करने की शक्तियों का प्रयोग कुछ सत्ताओं द्वारा अन्यों की अपेक्षा अधिक काम में लाया जाता है। उदाहरण के लिए काउन्टी परिषद् सड़क निर्माण से सम्बन्धित अपनी किसी भी शक्ति को गैर काउन्टी बारो, शहरी जिलों या देहाती जिलों की परिषदों को सौंप सकती है। जब इन शक्तियों को सीमित रूप में प्रयुक्त किया जाता है तो काउन्टी परिषद द्वारा अधिक सेवाओं का प्रशासन किया जाता है जबकि

---

*"The methods of enforcing legal duties are various, but it is safe to assume that whenever you find a legislative 'shall', then somehow and somewhere there is someone. He can take legal steps if an authority fails in his duties."

—*R. M. Jackson*, Op. Cit., P. 43.

दूसरी ओर जो काउन्टी परिषदें अपनी अधिकांश शक्तियों को हस्तान्तरित कर देती हैं तो उनके स्वयं के पास प्रशासित करने के लिए अपेक्षाकृत कम सेवाएं रह जाती हैं। पांचवें, कुछ स्थानीय सत्ताओं को उसी श्रेणी की किन्तु कम जनसंख्या वाली स्थानीय सत्ताओं की अपेक्षा अधिक शक्तियां होती हैं। इस प्रकार कम से कम ४०००० जनसंख्या वाले नगरपालिका बारो और शहरी जिला परिषदों को भोजन एवं औषधि से सम्बन्धित सत्ताएं भी बना दिया जाता है। छठे, कई बार कुछ स्थानीय सत्ताएं विशेष कार्यों को सम्पन्न करने के लिए संयुक्त मण्डल बनाने को परस्पर मिल जाती हैं। उदाहरण के लिए इस प्रकार के अनेक मण्डल मिल सकते हैं। इन सब कारणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि एक ही श्रेणी की स्थानीय सत्ताओं द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाएं भी विभिन्न स्थानीय सत्ताओं के सन्दर्भ में भिन्न हो सकती हैं।

स्थानीय सत्ताओं को जो शक्तियां सौंपी जाती हैं उन शक्तियों को उसी अधिनियम के द्वारा नियन्त्रित भी किया जा सकता है तथा उनको सम्पन्न करने का तरीका भी बताया जा सकता है। स्थानीय सरकार अधिनियम सन् १९४८ के अनुसार स्थानीय सत्ताओं को यह शक्ति सौंपी गई है कि वे नाट्यघर, सम्मेलन-घर एवं नृत्य घर की व्यवस्था कर सकते हैं। वे साज और संगीत का भी प्रबन्ध कर सकते हैं। वे ऐसे किसी व्यक्ति या संस्था को भी सहायता दे सकते हैं जो कि इन सेवाओं को सम्पन्न कर रहा है। कोई भी स्थानीय सत्ता इन कार्यों पर कितना खर्च कर सकती है इसकी सीमाओं को निर्धारण कर दिया जाता है। यह निर्धारण इन स्थानों से होने वाली आमदनी को देख कर किया जाता है। व्यय को सीमित करने वाला एक अन्य प्रावधान नागरिक रेस्तरां अधिनियम, १९४७ में पाया जाता है। इसके अनुसार स्थानीय सत्ताओं को रेस्तरां चलाने की शक्ति दी गई है किन्तु उस सत्ता से यह शक्ति छीन ली जाएगी जो कि लगातार तीन वर्ष तक हानि उठाती रहें। एक मन्त्री को यह अधिकार दिया गया है कि यदि वह सोचे कि कुछ समय बाद रेस्तरां अपना खर्चा अपनी आय में से निकाल लेगा तो वह रेस्तरां को जारी रखने की आज्ञा दे सकता है। सन् १९५४ में मन्त्री ने लन्दन काउन्टी परिषद को रेस्तरां चलाने से मना कर दिया क्योंकि उसमें नुकसान हुआ था और मन्त्री को यह भरोसा नहीं था कि यदि इसे जारी रखा गया तो यह अपना खर्चा स्वयं निकाल लेगा। अधिनियम में यह भी कहा गया था कि यदि किसी रेस्तरां की शक्ति छीन ली जाए और बाद में यदि परिस्थितियां बदल जाएं तो मन्त्री उन शक्तियों को पुनः वापस कर सकता है।

एक सामान्य प्रावधान के अनुसार कोई भी स्थानीय सत्ता कार्य केवल तभी कर सकती है जब कि वह मन्त्री से स्वीकृति प्राप्त कर ले। उदाहरण के लिए जब व्यय के हेतु धन उधार लिया जाए तो उस पर मन्त्री की स्वीकृति ली जाती है। यहां यह बात ध्यान में रखने योग्य है कि मन्त्री के पास में कोई रक्षित अधिकार नहीं होते जिनको कि वह स्थानीय सत्ताओं को सौंप सके। इस सम्बन्ध में उसकी शक्तियां केवल उन्हीं शक्तियों तक सीमित हैं
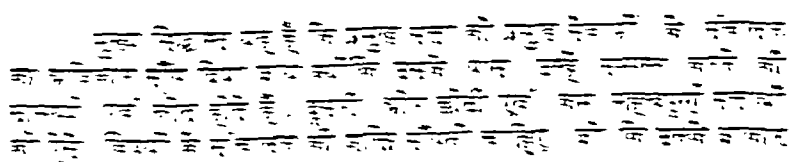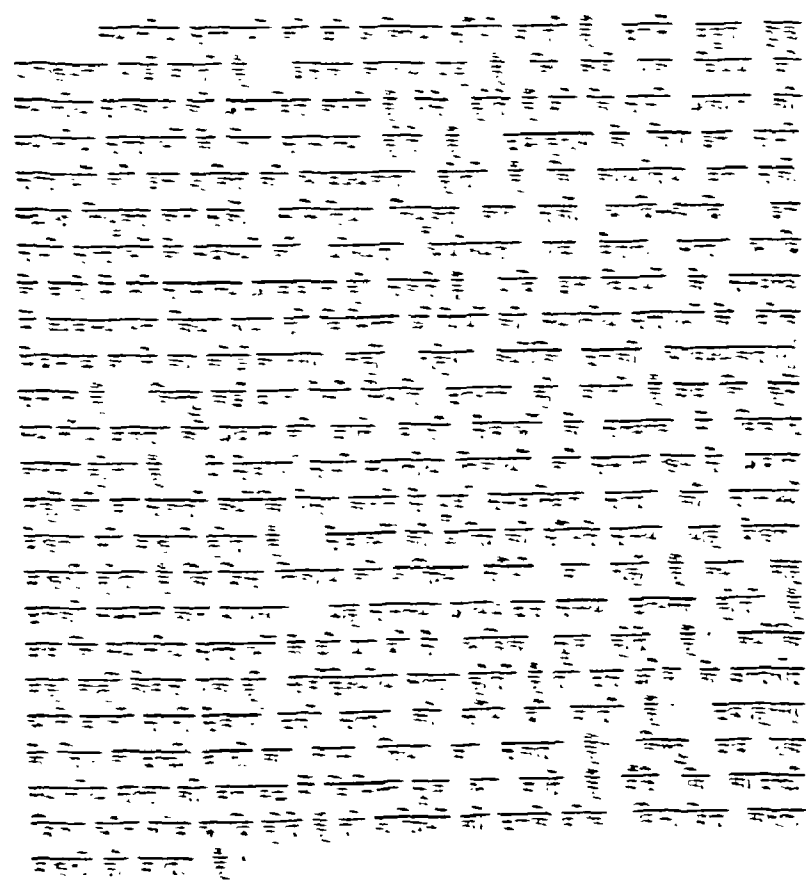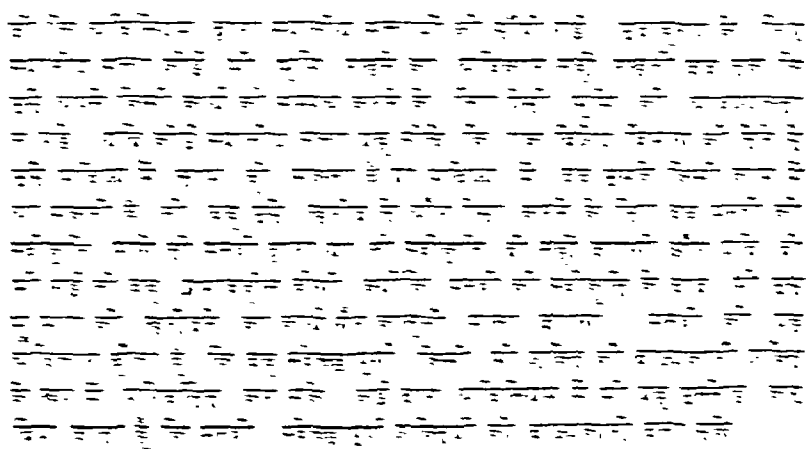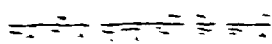
श्रोर स्रोतों के अनुकूल हो। यह सिद्धान्त तो उपयुक्त है किन्तु जब व्यावहारिक रूप में इसे प्रयुक्त किया जाता है तो कठिनाई उत्पन्न होती है। विभिन्न स्थानीय सत्ताओं के बीच कार्यों के वितरण की समस्या उस समय अत्यन्त सरल हो जाती जब कि कानूनी दृष्टि से एक ही श्रेणी में आने वाली सत्ताओं की जनसंख्या एवं क्षेत्रफल एक जैसा होता किन्तु स्थानीय सत्ताओं के बीच प्रदेश एवं जनसंख्या का विभाजन इस प्रकार नहीं किया गया है। आकार की दृष्टि से काउन्टीज अनेक प्रकार की होती हैं, इसी प्रकार जिले और गांव भी विभिन्नताएं रखते हैं। एक काउन्टी का एक जिला इतना बड़ा एवं महत्वपूर्ण हो सकता है जितनी कि दूसरी जगह एक काउन्टी होती है। इन विभिन्नताओं को समय-समय पर स्थानीय सरकार की बनावट में परिवर्तन करके अर्थात कुछ क्षेत्रों को मिला करके और कुछ को अलग करके कम किया जा सकता है किन्तु इन्हें पूरी तरह से समाप्त नहीं किया जा सकता।

स्थानीय सत्ताओं की बनावट में एकरूपता लाना असम्भव है। विभिन्न समाजों को कभी-कभी प्राकृतिक अवरोधों जैसे नदी, पहाड़, जल या जंगल आदि द्वारा अथवा सामाजिक या सांस्कृतिक विभिन्नताओं द्वारा अलग-अलग किया जा सकता है। इन अवरोधों के प्रभाव को कम किया जा सकता है किन्तु पूरी तरह से नहीं मिटाया जा सकता। हो सकता है कि दो स्थानों की संस्कृति में किसी प्रकार का अन्तर न हो किन्तु फिर भी उन स्थानों के निवासियों में स्थानीयता की भावना अधिक हो तो वे अपने आपको अलग इकाई रखने में रुचि लेंगे और वे न तो विभाजित होना चाहेंगे और न किसी में मिलना चाहेंगे। आकार भी किसी स्थानीय सत्ता की सामर्थ्य का स्पष्ट प्रतीक नहीं कहा जा सकता। हो सकता है कि एक बड़ा कस्बा एक विशेष सेवा को सम्पन्न करने में समर्थ हो किन्तु एक छोटा कस्बा अपने इतिहास, स्थानीय भावना, एवं परिस्थितियों के कारण उन्हीं सेवाओं को सम्पन्न न कर पाये किन्तु फिर भी उन विभिन्न स्थितियों से दोनों को समान स्तर मिला हुआ है। यदि कानून द्वारा काउन्टी को कुछ शक्तियां सौंपी जा रही हैं तो वे शक्तियां छोटी काउन्टी को भी उसी प्रकार प्राप्त होंगी जिस प्रकार कि एक बड़ी काउन्टी को। यह बहुत सम्भावित है कि बड़ी काउन्टी उन्हें आसानी से सम्पन्न कर सकेगी जब कि छोटी काउन्टी को ऐसा करने में कठिनाई आएगी और हो सकता है कि वह असफल रहे। फिर भी व्यवस्थापन द्वारा यह प्रयास किया जाता है कि छोटे एवं कमजोर वर्गों को यह शक्ति न सौंपी जाए।

स्थानीय सत्ताओं द्वारा विभिन्न प्रकार की सेवाएं प्रदान की जाती हैं। जीवन के विभिन्न पहलुओं से सम्बन्धित होने के कारण ये सेवाएं ही स्थानीय जनता को अपने कर्त्ता के अस्तित्व का ज्ञान कराती हैं। स्थानीय सत्ताओं की क्या शक्तियां हैं, उनके द्वारा कौन-कौन से कार्य सम्पन्न किये जाते हैं, आदि बातों की जानकारी प्रत्येक व्यक्ति को नहीं होती। केवल वे ही लोग इनके बारे में जान पाते हैं जो कि स्थानीय सरकार की व्यवस्था में सक्रिय रूप से जुटे रहते हैं। सामान्य व्यक्ति को तो उनका भान तभी

होता है जब कि उसे कोई सेवा प्रदान की जाती है। उदाहरण के लिए गलियों में चलने वाला व्यक्ति तो केवल यह जानता है कि नगरपालिका द्वारा उसके मार्ग में पड़ने वाली गलियों के कूड़ा-भण्डारों को साफ किया जाता है। यदि उस व्यक्ति से स्थानीय सत्ताओं के अन्य कार्यों के बारे में पूछा जाय तो वह कुछ भी जवाब नहीं दे सकेगा; जब कि तथ्य यह है कि स्थानीय सरकार निरन्तर जनता की सेवा करती है। उसकी सेवाएं व्यक्ति के जन्म लेने से पूर्व ही प्रारम्भ होती हैं और उसकी मृत्यु के बाद तक भी चलती रहती हैं। इस प्रकार स्थानीय सरकार की सेवाओं का क्षेत्र बड़ा व्यापक है, उनकी कोई सूची नहीं बनाई जा सकती।

स्थानीय सत्ता के कुछ सामान्य कर्त्तव्य होते हैं। इनका प्रथम मुख्य कार्य यह है कि जनता को ये उन सेवाओं को प्रदान करे जिनके लिए कि इनको कर या रेट के रूप में धन दिया जाता है। स्थानीय सत्ता को यह शक्ति प्राप्त होती है कि वह रेट लागू कर सके और सार्वजनिक धन का व्यय कर सके। संसद द्वारा उसे ऐसा करने की शक्ति दी जाती है। इस शक्ति के बिना कोई भी स्थानीय सत्ता कार्य नहीं कर सकती। स्थानीय सत्ता का एक दूसरा मुख्य कार्य यह है कि क्षेत्र में रहने वाली जनता की क्रियाओं पर आवश्यकता के अनुसार नियन्त्रण रखे। इस कर्तव्य का निर्वाह करने के लिए स्थानीय सत्ता उप कानून बनाती है और जो लोग इन कानूनों का पालन करने में असफल रहते हैं उन पर दण्ड लगा सकती है।

स्थानीय सत्ताओं की शक्तियों के बीच विभिन्न अन्तर पाये जाते हैं। ये अन्तर केवल श्रेणी के आधार पर ही नहीं होते वरन् एक ही श्रेणी की स्थानीय सत्ताओं के बीच भी अन्तर रह सकते हैं। इन अन्तरों के कारणों का उल्लेख पहले ही किया जा चुका है। इस प्रकार एक स्थानीय सत्ता का स्तर आवश्यक रूप से इस बात का एक पूर्ण निर्देशक नहीं बन सकता कि वह सत्ता क्या कर रही है। ऐसी स्थिति में जब हम स्थानीय सत्ताओं के द्वारा सम्पन्न किये जाने वाले कार्यों का अध्ययन करें तो श्रेणीबद्ध रूप में हम ऐसा नहीं कर सकते अर्थात् अलग-अलग विभाजन करके यह नहीं कहा जा सकता कि काउन्टी परिषद ये कार्य करती है, नगरपालिका बारो परिषद ये कार्य करती है और शहरी या देहाती जिला परिषद ये कार्य करती हैं। एक ही प्रकार की स्थानीय सत्ताओं के बीच शक्तियों की विभिन्नता के अति-रिक्त स्थानीय सरकार की कुछ सामान्य शक्तियां भी होती हैं। स्थानीय सत्ताओं को नई शक्तियां सौंपी जाती हैं और पहले जिन शक्तियों का ये सत्ताएं प्रयोग करती थी यदि वे आवश्यक बन जाय तो उनको समाप्त किया जा सकता है या उन्हें दूसरे प्रकार की स्थानीय सत्ता को सौंपा जा सकता है अथवा स्थानीय सरकार के बाहर के निकायों को वे दी जा सकती हैं। वर्तमान प्रवृति के अनुसार काउन्टी जिला परिषदें मुख्य-मुख्य सेवाओं को काउन्टी परिषद के लिए सौंप देती हैं। उदाहरण के लिए प्राथमिक शिक्षा का नाम लिया जा सकता है। इसके अतिरिक्त काउन्टी परिषदें एवं काउन्टी बारो परिषदें अपनी सत्ता अन्य निकायों को सौंप देती है। उदाहरण के

लिए गैस के प्रसारण का कार्य आज कल गैस परिषद द्वारा ले लिया गया है।

सेवाओं के प्रकार
[The Types of Services]

संसद के कानून द्वारा स्थानीय सत्ताओं को समय-समय पर विभिन्न शक्तियां सौंपी गई हैं। ये शक्तियां जिस रूप में विकसित हुई उसे क्रमिक एवं वैज्ञानिक नहीं कहा जा सकता। किन्तु फिर भी समय समय पर जिन सेवाओं का विकास हुआ उन्हें सामान्य विशेषताओं के आधार पर कुछ समूहों में वर्गीकृत किया जा सकता है। मि० पी० स्टोन्स ने इन सेवाओं को चार समूहों में विभाजित किया है। उनके कथनानुसार प्रथम समूह वातावरण सम्बन्धी सेवाओं (Environmental Services) का है। वे सेवाएं है जो कि पूरे समाज की भलाई के लिए संचालित की जाती हैं और इनका उद्देश्य रहने की दशाओं को स्वस्थ एवं आनन्ददायक बनाना है। ये लोगों को सामूहिक रूप से प्रदान की जाती हैं, ये सेवायें बहुत अनिवार्य होती हैं। पहले इनको स्वेच्छापूर्ण निकायों द्वारा सम्पन्न किया जाता था। इन संगठनों में अठारहवीं शताब्दी के नवोदित कस्बों के गणमान्य व्यक्ति होते थे। यही कारण है कि इन सेवाओं का खर्चा मुख्य रूप से रेट द्वारा दिया जाता है। सेवाओं के समूह में नालों की रचना, नालियों की सफाई, गलियों की सफाई, सार्वजनिक प्रकाश, बेकार की चीजों को ठिकाने लगाना आदि बातें आती हैं।

सेवाओं का दूसरा समूह व्यक्तिगत सेवाओं (Personal Services) का होता है। इस समूह में वे सेवाएं आती हैं जो कि मनुष्य के व्यक्तिगत लाभ के लिये प्रदान की जाती हैं। इस समूह में जिन सेवाओं को समाहित किया जाता है वे हैं शिक्षा, गृह निर्माण, स्कूलों का भोजन, गूंगे, बहरे, अन्धे, अनाथ एवं बहिष्कृत बच्चों की देखभाल, आदि। तीसरे प्रकार की सेवाएं व्यापारिक सेवायें (Trading Services) होती हैं। इनकी प्रकृति वाणिज्यिक होती है क्योंकि इन सेवाओं के सम्बन्ध में स्थानीय सत्ताओं को यह आशा रहती है कि वह उन्हें लाभ के साथ संचालित कर सकती हैं और नागरिकों से उसे रेट लेने की जरूरत नहीं रहेगी। इन सेवाओं की सामान्य विशेषता यह है कि जो लोग इन सेवाओं से फायदा उठाते हैं वे इनके लिये भुगतान करते हैं मानों वे इन सेवाओं को किसी व्यक्तिगत संस्था से खरीद रहे हों। इस प्रकार की सेवाओं में हम नागरिक रेस्तरां, होटल, तरण ताल, नागरिक रंगमंच एवं नगरपालिका यातायात, उद्यानों आदि को ले सकते हैं। चौथे प्रकार की सेवाएं गैर व्यापारिक सेवाएं (Non Trading Services होती हैं। इस प्रकार की सेवाओं पर खर्च होने वाला धन सार्वजनिक कोष से दिया जाता है तथा इन सेवाओं पर अनेक प्रकार का नियन्त्रण एवं नियमन रखा जाता है। इस श्रेणी में आने वाली सेवाओं के उदाहरण के रूप में माप-तोल, भवन विनियमन एवं सफाई आदि को ले सकते हैं।

सेवाओं का स्थानान्तरण
[Transfer of Services]

स्थानीय सत्ता के विभिन्न रूपों में सत्ता का स्थानान्तरण किया जाता है। यह स्थानान्तरण छोटी सत्ता से बड़ी सत्ताओं को किया जाता है तथा

स्थानीय सत्ताओं से केन्द्रीय सत्ताओं को, छोटी सत्ताएं बड़ी सत्ताओं को अपने कार्य इसलिये हस्तान्तरित कर देती हैं क्योंकि समय की बदलती हुई परिस्थितियों में उन सेवाओं का उनके लिए कोई महत्व नहीं रह जाता। ज्यों–ज्यों देश की जनसंख्या बढ़ती जाती है और सामान्य संगठन जटिल बनता जाता है त्यों – त्यों छोटी सत्ताएं उनके लिए सौंपे गये कार्यों को सम्पन्न करने में अधिक से अधिक अकार्यकुशल होती चली जाती हैं।

जो सेवाएं पहले पेरिश द्वारा सम्पन्न की जाती थीं वे समय गुजरने के बाद काउन्टी जिला परिषदों द्वारा ले ली गईं और पहले जिन सेवाओं को काउन्टी जिला परिषद सम्पन्न करती थी उन्हें अब काउन्टी परिषद का उत्तरदायित्व बना दिया गया है। इस प्रकार की सेवाओं के उदाहरण के रूप में शिक्षा एवं निर्धन-अधिनियम को लिया जा सकता है। शिक्षा सेवाओं के सम्बन्ध में सन् १८७० के अधिनियम ने उन पेरिशों एवं बारोज में स्कूल बोर्ड स्थापित किये जहां कि स्कूलों के लिए स्वेच्छापूर्ण प्रावधान अपर्याप्त थे। सन् १९०२ के शिक्षा अधिनियम के अनुसार छोटे स्कूल बोर्ड क्षेत्रों को समाप्त कर दिया गया। इस अधिनियम के आधीन काउन्टी परिषद और काउन्टी बारो परिषदों को स्थानीय शिक्षा सत्ताएं बना दिया गया। अधिनियम के भाग तीन के अनुसार बड़े बारोज एव शहरी जिला परिषदों को केवल प्राथमिक शिक्षा के लिए स्थानीय शिक्षा सत्ताएं बना दिया गया। सन् १९४४ के शिक्षा अधिनियम के भाग तीन द्वारा स्थापित शिक्षा सत्ताओं को समाप्त कर दिया। वर्तमान समय में स्थानीय शिक्षा सत्ताएं काउन्टी परिषदें एवं काउन्टी बारो परिषदें हैं। सन् १६०१ के निर्धन कानून अधिनियम ने पेरिशों को गरीबों की राहत के प्रशासन की इकाई बनाया किन्तु जब सन् १८३४ में इस अधिनियम में संशोधन किया गया तो इकाईयों का रूप बड़ा कर दिया गया अर्थात् पेरिशों के सघ को इकाई बनाया गया। सन् १८२९ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने पेरिशों के संघ को समाप्त कर दिया और निर्धन कानून के कार्यों को काउन्टीज तथा काउन्टी बारोज की परिषदों को सौंप दिया।

सेवाओं का स्थानान्तरण स्थानीय सरकार से केन्द्रीय सरकार के लिए भी किया गया। जब छोटी सत्ताएं कमजोर हुई तो उनके बड़े भाईयों ने अपनी शक्ति बढ़ाली। इसी प्रकार से बड़ी स्थानीय सत्ताओं ने भी अपने अनेक कार्य केन्द्रीय सरकार और सरकारी निगमों या राष्ट्रीयकृत उद्योगों को सौंप दिए। ऐसा मुख्य रूप से सन् १९४५ के दौरान किया गया। इस प्रकार के स्थानान्तरण के कई एक उदाहरण प्रस्तुत किए जा सकते हैं। इसका सर्वप्रथम उदाहरण सड़कों से सम्बन्ध रखता है। सन् १९३६ के ट्रंक रोड अधिनियम ने ३६ मुख्य सड़कों को ट्रंक रोड का नाम दे दिया और उनके उत्तरदायित्वों को काउन्टी परिषदों एवं काउन्टी बारो से लेकर यातायात मन्त्रालय को सौंप दिया। इन सड़कों की संरचना के सम्बन्ध में काउन्टी परिषदें तथा काउन्टी बारो परिषदें मन्त्रालय के अभि-करण के रूप में कार्य करेंगी। सन् १९४६ के ट्रंक रोड अधिनियम ने और भी कई सड़कों को ट्रंक रोड घोषित कर दिया और यातायात मन्त्री को यह

अधिकार दिया कि वह किसी भी सड़क को ट्रंक रोड घोषित कर सके। दूसरे, सन् १९२९ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने गरीबों की राहत से सम्बन्धित कार्य काउन्टी परिषद तथा काउन्टी बारो परिषद को सौंपे। वे इस शक्ति का प्रयोग सन् १९४८ तक करती रहीं जब कि राष्ट्रीय सहयोग अधिनियम ने निर्धन कानून को ही समाप्त कर दिया। तीसरे, सन् १९४६ के स्वास्थ्य सेवा अधिनियम ने स्थानीय सत्ता के अस्पतालों को स्वास्थ्य मन्त्रालय के लिए सौंप दिया। चौथे, सन् १९४७ के विद्युत अधिनियम ने विद्युत वितरण के उत्तरदायित्व को स्थानीय परिषदों से लेकर केन्द्रीय विद्युत सत्ता को सौंप दिया।

स्थानीय शक्तियों के इस केन्द्रीयकरण की प्रवृति का प्रायः विरोध किया जाता है किन्तु कई बार यह अपरिहार्य बन जाता है। स्थानीय सेवाओं के लिए बड़े क्षेत्र की व्यवस्था का प्रबन्ध किया जाता है क्योंकि ऐसा करने पर ही वे सेवाओं के वित्तीय भार को ग्रहण कर पाती हैं। बड़े क्षेत्र को यह सुविधा रहती है कि वह कार्यों को सम्पन्न करने के लिए अधिक योग्य एवं समर्थ व्यक्तियों को नियुक्त कर सकता है। इसीलिए बड़े क्षेत्र का प्रशासन अधिक कुशलतापूर्वक संचालित होने की आशा रहती है। स्थानान्तरण की इस प्रक्रिया में यह डर रहता है कि छोटी सत्ताएं अपनी बहुत सी सेवाओं से वंचित रह जाएंगी और कुछ समय बाद स्थानीय सरकार को क्षेत्रीय सरकार का क्षेत्र मिल जाएगा।

जिले की कुछ सेवाएं
[Some District Services]

जैसा कि वस्तु स्थिति से प्रकट है कि विभिन्न सेवाओं को स्थानीय सत्ताओं के आधार पर विभाजित नहीं किया जा सकता किन्तु फिर भी हम क्षेत्रीय आधार पर कुछ वर्गीकरण कर सकते हैं। इस दृष्टि से हम एक ओर तो उन सेवाओं को रख सकते हैं जो कि जिले की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं तथा जिले की सत्ता द्वारा सम्पन्न की जाती हैं और दूसरी ओर कुछ ऐसी सेवाएं हैं जिन्हें क्षेत्रीय महत्व का समझा जाता है। इन सेवाओं को सम्पन्न करने के लिए पृथक संगठनों की रचना करनी पड़नी है। जहां तक जिले की सेवाओं का सम्बन्ध है उनके द्वारा प्रादेशिक एवं क्षेत्रीय विभिन्न समस्याएं उत्पन्न की जाती हैं। किसी विशेष सत्ता के क्षेत्र एवं कार्यों के बीच स्थित सम्बन्धों की जानकारी के लिए इन सेवाओं का अध्ययन किया जाना उपयोगी रहेगा। इनमें सबसे महत्वपूर्ण सेवा जन-स्वास्थ्य से सम्बन्धित है। इस सेवा के लिए स्वास्थ्य के मेडिकल अधिकारी की आवश्यकता होती है। इसके कार्य इतने महत्वपूर्ण होते हैं कि सन् १८७२ से ही केन्द्रीय सत्ता ने स्थानीय स्वास्थ्य सत्ताओं को एक मेडिकल अधिकारी नियुक्त करने को बाध्य किया। इस अधिकारी की आवश्यक योग्यताएं भी निश्चित कर दी गई। यह व्यवस्था करदी गई है कि मेडिकल अधिकारी अपना सारा समय जन सेवाओं में लगाएंगे और व्यक्तिगत कार्य में अपना समय नष्ट नहीं करेंगे।

जब काउन्टी परिषदों को जन-स्वास्थ्य प्रशासन के क्षेत्र में प्रेरक सत्ताएं बना दिया गया तो यह निर्णय ले लिया गया कि काउन्टी परिषद को ही इस बात के लिए उत्तरदायी बनाया जाए कि वह पूरी काउन्टी में पूरे समय कार्य करने वाले मेडीकल अधिकारियों की नियुक्ति का कार्यक्रम बनाए। जब कभी जिले में जगह खाली हो तो जिला परिषद पहले काउन्टी परिषद और किसी अन्य जिले की परिषद से सलाह लेगी और उसके बाद पृथक रूप से अथवा काउन्टी परिषद या अन्य जिला परिषद के साथ संयुक्त रूप से मेडीकल अधिकारी की नियुक्ति करेगी। मन्त्री को यह अधिकार दिया गया है कि वह इस प्रक्रिया का अतिक्रमण कर सके। स्वास्थ्य मन्त्रालय ने काउन्टी को इस सम्बन्ध में कुछ और शक्तियां दी। यह बिना सामान्य कार्यक्रम बनाए कहीं भी खाली जगह होने पर हस्तक्षेप कर सकती है और वहां नियुक्ति के लिए आवश्यक रूप से प्रबन्ध कर सकती है। इससे दोनों ही उद्देश्य पूरे हो जाते हैं अर्थात् एक नियोजित व्यवस्था प्राप्त होजाएगी और पूरे समय के लिए सेवाएं प्राप्त हो जाएंगी; किन्तु इस अवस्था में जिलों को अपनी स्वतन्त्रता के प्रति खतरा हो जाता है।

काउन्टीज ने स्थानीय सरकार के विकास के दौरान उन सभी सेवाओं के अधिकार को प्राप्त करने का प्रयास किया जो कि जिलों में निहित है। काउन्टीज का तर्क था कि उन्हें शक्तियां छोटी सत्ताओं को हस्तान्तरित करने की कानूनी आज्ञा दी गई है। इसके अतिरिक्त शक्तियों का अग्रिम विभाजन उन्हीं के द्वारा किया जाना चाहिए। काउन्टीज के द्वारा जो दावे किए गए और जो सिद्धान्त प्रस्तुत किए गए वे उनके विपरीत थे जिनका जिलों द्वारा प्रतिनिधित्व किया गया। इसके परिणामस्वरूप आवश्यक जांच की गई और संघर्षपूर्ण सिद्धान्तों के बीच समझौते की व्यवस्था का प्रयास किया गया। सेवाओं का निर्धारण करते समय सामान्यतः जिस सिद्धान्त को अपनाया गया उसका वर्णन स्थानीय सरकार पर शाही आयोग के द्वितीय प्रतिवेदन में किया गया है। किसी स्थानीय सत्ता को सेवा का उत्तरदायित्व सौंपते समय पहले उसके विशेष कार्य की प्रकृति को देखा जाता था जिसे कि सौंपा जाना है तथा उसके बाद उस कार्य को प्रशासित करने वाली सत्ताओं की उपयुक्तता को परखा जाता था। इसके अतिरिक्त यह भी महत्वपूर्ण माना गया कि कार्यों का निर्धारण इस प्रकार किया जाए कि प्रशासकीय काउन्टी में विभिन्न सत्ताओं के बीच सहयोग एवं सद्भावना का विकास हो। आयोग का कहना था कि कार्यों के वितरण को पारिभाषित करते समय जनसंख्या, क्षेत्र, वित्तीय स्थिति एवं कार्यकुशलता आदि का ध्यान रखा जाना चाहिए। यहां जिले के महत्व की कुछ सेवाओं का वर्णन किया जा सकता है।

स्कूल से सम्बन्धित मैडीकल सेवा को सन् १९४४ तक प्राथमिक शिक्षा की सभी सत्ताओं द्वारा प्रशासित किया जाता था। काउन्टी परिषद, काउन्टी बारो परिषद, नगरपालिका बारो तथा कुछ शहरी जिलों को इस सेवा की शक्तियां प्राप्त थीं। बाद में केवल काउन्टी परिषद तथा काउन्टी बारो परिषद ही शिक्षा की एकमात्र सत्ताएं बन गई। फलतः काउन्टी

परिषदों द्वारा स्कूलों का संचालन अपनी विभागीय कार्यपालिका द्वारा किया जाने लगा। यह काउन्टी परिषद की स्वेच्छा पर ही छोड़ दिया गया कि वह चाहे तो स्वयं ही स्कूल मैडीकल सेवाओं का प्रबन्ध करे अथवा उनको पूरी तरह या आंशिक रूप से संभागीय कार्यपालिकाओं को सौंप दे।

गर्भवती स्त्रियों एवं बालकों से सम्बन्धित सेवाओं का प्रशासन सन् १९१८ के अधिनियम के अनुसार काउन्टी परिषदों तथा जिला परिषदों द्वारा किया जाता था। व्यवहारिक दृष्टि से जिले की सभी सत्ताओं के पास इससे सम्बन्धित कार्यक्रम होता है। जिला परिषदों में से लगभग २७६ के पास अपना कार्यक्रम होता है किन्तु इन जिलों के पास स्कूल सेवाएं नहीं रहती। १ अप्रैल, १९३९ को ३६५ सत्तायें इस प्रकार की सेवाओं को सचालित कर रही थी। लन्दन को छोड़ कर सभी काउन्टी परिषदें, सभी काउन्टी बारोज, सभी राजधानी बारोज, १५१ गैर काउन्टी बारोज, ५१ शहरी जिले तथा ३ देहाती जिले इस सत्ता को संचालित कर रहे थे। सन् १९४६ के राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा अधिनियम के आधीन काउन्टी परिषद तथा काउन्टी बारोज इस प्रकार की सेवाओं के लिए एकमात्र सत्ता बन गईं। वर्तमान प्रवृति इस ओर है कि स्कूल मैडीकल सेवाओं को बाल कल्याण सेवाओं की ओर आकर्षित किया जाये।

'जन्म' का अभिलेख रखने का कार्य काउन्टी परिषद द्वारा किया जाता था। जिले भी इस कार्य को सम्पन्न कर सकते थे। इस बात का निर्णय केन्द्रीय सत्ता द्वारा किया जाता है। इस सेवा का उद्देश्य सांख्यिकीय अभिलेख रखना है। दूसरे, मातृत्व एवं बाल कल्याण सेवाओं से सम्बन्धित सत्ताओं को जन्मों की सूचना देना है। कुछ क्षेत्रों को इस सेवा का उत्तरदायित्व सौंपा जाता था यद्यपि वे मातृत्व या शिशुकल्याण सेवा से सम्बन्धित कोई भी कार्य नहीं करते थे। शाही आयोग ने इस सेवा के वितरण के सम्बन्ध में कोई सुझाव नहीं दिया किन्तु उसने केवल यह कहा कि प्रत्येक सूचना की एक प्रतिलिपि शीघ्र ही मातृत्व एवं बालकल्याण सत्ताओं को भेज दी जानी चाहिए। १९४६ के राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा अधिनियम के द्वारा यह शक्ति काउंन्टीज तथा काउन्टी बारोज को स्थानान्तरित कर दी गई है।

दाईयों एवं नर्सों के पर्यवेक्षण का कार्य १९०२ के अधिनियम के अनुसार काउन्टी परिषदों द्वारा किया जाता था किन्तु ये अपनी शक्तियों को जिलों को हस्तांतरित कर सकती थीं। सन् १९१८ में हस्तांतरण की यह शक्ति छीन ली गई किन्तु इससे पूर्व किये गये हस्तांतरणों को प्रभावहीन ही रखा गया। यदि काउन्टी परिषदें केन्द्रीय सत्ता को अपील करें तभी कोई परिवर्तन किया जा सकता था। अधिनियम द्वारा काउन्टीज को यह शक्ति सौंपी गई कि वे दाईयों (*Midwives*) की प्रशिक्षित करने में सहयोग दें तथा इस कार्य के लिए अनुदान की व्यवस्था करें। १९३६ में इससे संवन्धित अधिनियम ने दाईयों के पर्यवेक्षण का पूरा उत्तरदायित्व काउन्टीज तथा काउन्टी बारोज को सौंप दिया। सन् १९४६ के अधिनियम ने इस स्थानान्तरण को मान्य बना दिया।

पृथक अस्पतालों की व्यवस्था के प्रावधान के लिये बड़े क्षेत्र को प्राथमिकता दी गई ताकि छूत की बीमारियों के निवारणार्थ इन अस्पतालों की स्थापना के लिए पर्याप्त स्थान एवं साधन प्राप्त हो सके तथा सेवित जनसंख्या भी पर्याप्त हो। यह एक ऐसी सेवा थी जिसे कि बाध्यकारी (Obligatory) होना चाहिये था। १८७५ के जन स्वास्थ्य अधिनियम ने इस सेवा को बाध्यकारी नहीं बनाया तथा शहरी एवं देहाती जिलों को इन सेवाओं के लिए मुख्य क्षेत्र माना गया। यह भी प्रावधान रखा गया कि दो या दो से अधिक जिले संयुक्त प्रबन्ध कर सकें। यदि जिला परिषद द्वारा ऐसा नहीं किया जा सके तो काउन्टी परिषद द्वारा ऐसे अस्पताल खोले जा सकते थे अथवा केन्द्रीय सत्ता से यह प्रार्थना की जा सकती थी कि यह पूरी काउन्टी या उसके कुछ भाग के लिए इस प्रकार के अस्पताल का प्रबन्ध करे।

माप और तोल को प्रशासित करने वाले उचित क्षेत्र से सम्बन्धित समस्याओं के द्वारा भी उन विभिन्न तत्वों को प्रकट किया गया जो कि पर्याप्त स्थानीय सरकार के क्षेत्र की समस्याओं में उलझे हुए थे। सन् १९२९ तक इन विभिन्न तत्वों का प्रभाव यह रहा कि दस हजार से अधिक वाली बारो परिषदों को इनका उत्तरदायित्व सौंपा गया। इस सेवा में तीन बातें मौलिक थीं—प्रथम थी यथा सम्भव क्षेत्र पर स्तर की एकरूपता। चीजों के खरीदार बाहर से भी आ सकते थे, इसके अतिरिक्त बेचने वाले भी बाहर जाकर अपना माल बेच सकते थे जहां कि स्थानीय सत्ता का निरीक्षक कार्य नहीं करता। दूसरे, क्षेत्र ऐसा होना चाहिये कि निरीक्षक एवं व्यापारी, जो कि स्थानीय पार्षद हैं, के बीच ऐसा स्वामी सेवक जैसा सम्बन्ध स्थापित न हो जाये कि निरीक्षकों की निष्पक्षता ही खतरे में पड़ जाये। तीसरे, क्षेत्र पर्याप्त बड़ा होना चाहिए ताकि सर्वश्रेष्ठ तकनीकी योग्यता वाला स्टाफ रखने का खर्चा सहन कर सके। शाही आयोग ने बताया कि इस सेवा को सम्पन्न करने के लिए काउन्टी बारो तथा काउन्टी बारो परिषद सर्वश्रेष्ठ क्षेत्र हैं। ये कार्य पुलिस कार्यों से कुछ सम्बन्ध रखते हैं अतः इनको वितरित करते समय पुलिस कर्त्तव्यों का भी ध्यान रखा जाना चाहिए। अतः यह उचित रहेगा कि इस सेवा को काउन्टी परिषद, काउन्टी बारो परिषद तथा गैर काउन्टी बारो परिषद को सौंपा जाये जिसके पास पृथक से पुलिस सेवा होती है तथा जो पहले से ही इन कार्यों को सम्पन्न कर रहे हैं। गैर-काउन्टी बारोज जब कभी यह अनुभव करें कि वे इन कार्यों को सफलता पूर्वक सम्पन्न नहीं कर पायेंगे तो वे इन्हें काउन्टी परिषदों को सौंप सकते हैं। काउन्टी परिषदों को भी अपने ये कार्य स्वेच्छा पूर्वक जिला परिषदों को हस्तांतरित करने की शक्ति होनी चाहिये।

बारोज तथा काउन्टीज के बीच इसी प्रकार का अबुद्धिपूर्ण प्रबन्ध भोजन एवं दवाइयों के प्रशासन के सम्बन्ध में भी था। इसमें पुनर्व्यवस्था करने के लिए तीन सिद्धान्तों की आवश्यकता थी, अर्थात् एकरूपता, योग्यता एवं स्वतन्त्रता। आयोग द्वारा सिफारिस की गई थी कि इन कार्यों की शक्तियां काउन्टी परिषद तथा काउन्टी बारो परिषद को सौंपी जानी चाहिये।

जिला परिषदों को भी यह अधिकार हो कि वे सीमित अर्थ में इन शक्तियों का प्रयोग करें तथा काउन्टी परिषदों को यह शक्ति हो कि यदि वे उचित समझें तो जिला परिषदों द्वारा जो व्यय किया गया है उसे प्रदान करदें। सन् १६३८ के भोजन एवं औषधियों के कानून द्वारा काउन्टी बारो परिषदों, नगरपालिका बारोज एवं ४० हजार से ऊपर की जनसंख्या वाले शहरी जिलों को इन सेवाओं के प्रशासन का अधिकार सौंपा गया। वे इस अधिकार का प्रयोग उस समय तक कर सकते थे जब तक कि मंत्री की स्वीकृति प्राप्त न हो जाये। मंत्री चाहे तो इन क्षेत्रों के प्रशासन के अधिकार को छीन सकता था। साथ ही वह चाहे तो २० हजार की जनसंख्या वाले शहरी जिलों को भी इस अधिकार को सौंप सकता था।

शाही आयोग द्वारा अन्य कार्यों के बारे में भी जांच की गई तथा स्थानीय सरकार की सेवाओं का वितरण करने के बारे में अनेक सिफारिसें प्रस्तुत कीं।

क्षेत्रीय महत्व की सेवायें

[The Services of Regional Importance]

स्थानीय सरकार द्वारा सम्पन्न की जाने वाली कुछ सेवाएं क्षेत्रीय महत्व की होती हैं। इनका प्रशासन भी यदि क्षेत्रीय आधार पर ही किया जाये तो अधिक अच्छा माना जाता है। इनमें जिन सेवाओं को समाहित कर सकते हैं वे हैं जल-वितरण, नालियां, नदियों की सफाई, शहर नियोजन, गृह-निर्माण, पुलिस, सड़क, शिक्षा, विद्युत, निर्धन सहायता आदि-आदि। ये सभी स्थानीय सरकार की सेवाएं हैं। ये राष्ट्रीय दृष्टि से भी उतनी ही महत्वपूर्ण होती हैं जितनी कि स्थानीय दृष्टि से होती हैं। इनको तकनीकी प्रकार से गठित किया जाता है। वे राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण भाग होती हैं अतः उनका संगठन एवं प्रबन्ध विशेष रूप में करना होता है जैसे कि स्थानीय स्तर पर निकायों का नहीं किया जाता। वर्तमान युग में अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए जिनका महत्व अनुलंघनीय है। तकनीकी का तेजी के साथ विकास हो रहा है, संचार के साधन अधिक गतिवान होते जा रहे है. विज्ञान प्रगति कर रहा है, न्याय, कार्यकुशलता एवं उच्च जीवन स्तर के मूल्यों के प्रति भारी चेतना जागृत हो गई है। यह सब बातें केवल तभी प्राप्त की जा सकती हैं जबकि अधिक जागरूक एवं एकरूप सरकार केन्द्रीय रूप से निर्धारित सिद्धान्तों के आधार पर कार्य करे। इन सिद्धान्तों को सामान्य रूप से नियोजन के रूप में जाना जाता है। इन सेवाओं को प्रदान करते समय इनके क्षेत्र निर्धारित किये जा सकते हैं। प्रशासन की दृष्टि से महत्वपूर्ण सर्व प्रथम लक्ष्य एवं कार्य को समझा जाता है उसके बाद बनावट का नाम आता है। संगठन की बनावट तो गौण होती है, इसकी उपयोगिता एवं सार्थकता भी इस बात पर निर्भर करती है कि इसने लक्ष्यों की प्राप्ति में कितनी सफलता प्राप्त की; इसलिए यहां कुछ महत्वपूर्ण सेवाओं का अध्ययन किया जाना उपयोगी रहेगा।

जल-वितरण [Water Supply]—सन् १६४५ के जल अधिनियम से पूर्व इस सेवा को सम्पन्न करने के लिए किसी प्रकार का नियोजन नहीं किया

गया था। १८७५ के अधिनियम ने शहरी एवं देहाती जिलों को यह अधिकार सौंपा कि वे अपने जिलों में पानी की व्यवस्था कर सकें। सन् १८७८ के अधिनियम में यह कहा गया कि देहाती जिला परिषदें इस बात की निगरानी रखें कि उनके क्षेत्र में आने वाले प्रत्येक घर पर पानी की व्यवस्था की जा सके। ये क्षेत्र केचमेन्ट क्षेत्रों (Catchment areas) की तुलना में अत्यन्त छोटे थे। प्रशासकीय भेद-भाव एवं गड़बड़ी पूर्ण अर्थ-व्यवस्था को मिटाने की गरज से संयुक्त जल-मण्डलों की स्थापना की कई किन्तु इनकी भी सख्या कम थी और आवश्यकता को देखते हुए ये बहुत थोड़ी थीं।

जल वितरण का कार्य या तो व्यक्तिगत जल कम्पनियों द्वारा किया जाता था अथवा स्थानीय सत्ताओं द्वारा किया जाता था जो कि स्वयं के वित्त के आधार पर स्वयं की योजनाएं बनाती थीं। यह व्यवस्था भी अपर्याप्त पाई गई तथा १९२९ के अधिनियम द्वारा काउन्टी को इन्हें सहयोग प्रदान करने की बात कही गई। प्रत्येक सत्ता प्रायः अपनी ही आवश्यकता में उलझी रहती थी उसे अन्य सत्ता के लिए प्रावधान करने का समय ही प्राप्त नहीं हो पाता था। विभिन्न सत्ताओं के बीच पर्याप्त समन्वय का अभाव होने के कारण इन सत्ताओं में कई बार सहयोग की भावना का अभाव देखने को मिलता था। सन् १९२९ के अधिनियम ने जन स्वास्थ्य के क्षेत्रों को विकसित कर दिया और इस प्रकार से कुछ क्षेत्रों में जल-व्यय को काउन्टी तक बढ़ा दिया। स्वास्थ्य मन्त्रालय ने बड़े क्षेत्रों के समन्वय का कार्य सम्भाल लिया। सन् १९२३ मे विभाग के अन्तर्गत एक जल पर परामर्शदाता समिति नियुक्त की गई। प्रति वर्ष मन्त्रालय के प्रतिवेदन द्वारा परिवर्तन का आभास प्राप्त होने लगा, इसके बाद भी बुद्धिपूर्ण स्तर को प्राप्त नहीं किया जा सका। इसके लिये एक क्षेत्रीय प्रतिनिधि समिति को आवश्यक समझा गया जो कि विभाग एवं जल पर परामर्शदाता समिति के साथ मिल कर कार्य कर सके। सन् १९३९ में नौ परामर्शदाता समितियां बनायी गई। इनके अन्तर्गत लगभग आधे नगरपालिका उद्यम आगये। केन्द्रीय परामर्शदाता जल समिति को देखने पर यह स्पष्ट हो जाता था कि ये क्षेत्रीय समितियां विभागीय सम्पर्क रहने पर भी कमजोर थी। इनके कार्यों में देरी लगती थी तथा ये अपने से बड़ी सत्ताओं की शुभकामना पर बहुत कुछ निर्भर रहती थीं। सर्वसम्मत समझौते के अभाव में उनका कार्य असफल हो गया।

केन्द्रीय परामर्शदाता समिति ने यह सिफारिश की कि क्षेत्रीय समिति को कानूनी रूप से लागू किये जा सकने वाले कोटा (Quota) द्वारा समर्थित किया जाये तथा उनके सभापति को मन्त्री द्वारा नियुक्त किया जाये। इन समितियों को अपनी कोई भी योजना बनाने से पूर्व अपने उपयोक्ताओं से परामर्श प्राप्त कर लेना चाहिए। इनको अपना वार्षिक प्रतिवेदन परामर्शदाता समिति को देना चाहिए। इसके अतिरिक्त समिति ने एक महत्वपूर्ण सिफारिस यह की कि क्षेत्र की सीमाएं पानी गिरने की सीमाओं के एकरूप होनी चाहिए जिसमें कि सम्बन्धित जनसंख्या रहती है। मन्त्री को यह अधिकार दिया जाये कि वह नियोजन के लिए अथवा क्षेत्रों में परिवर्तन करने के लिए क्षेत्रीय समितियां नियुक्त करे।

कठिनाई में पड़ जायेंगी; उनको कोई शक्ति नहीं रहेगी और परिणामस्वरूप समग्र क्षेत्र को इससे हानि होगी। †

शहर नियोजन सत्तायें जब कुछ समय तक अकेले रूप में कार्य करेंगी तो वे निराश हो जायेंगी। वे एक निश्चित चौड़ाई वाली सड़कों की योजना बनायेंगी और उनके सीमावर्ती इलाकों में सकड़ी सड़कें हैं, वे अपने घरों के लिए नालों का प्रबन्ध करेंगी तो पड़ोसियों से झगड़े उत्पन्न हो जायेंगे, जब कभी वे अपनी घनी आबादी के विस्थापितों के लिए जगह चाहेंगे तो पड़ोसियों के साथ उनका मतभेद बढ़ेगा। इस प्रकार इन संयुक्त प्रबन्धों के मार्ग में अनेक प्रकार की कठिनाइयां उत्पन्न हो जाती हैं अतः यह उपयोगी रहेगा कि एक क्षेत्र के लिए स्वयं की कार्यपालिका सत्ता बनायी जाये। सम्भावित कठिनाई की स्वाभाविकता का वर्णन करते हुए स्वास्थ्य मंत्रालय ने यह बताया कि योजना की क्रियान्विति सामान्य सह कानूनों तथा सफाई प्रशासन से इस प्रकार सम्बन्धित है कि इन कार्यों के किसी भी गम्भीर क्रायान्वयन से अतिराव एवं भ्रम पैदा होने का भय रहता है। दूसरे, यदि इस नियम का सशर्त पालन किया जाये तो यह अन्यायपूर्ण भी बन सकता है क्योंकि ऐसा भी हो सकता है कि योजना में पर्याप्त महत्त्व के कार्यों को किसी एक जिले के लिए रखा जाये जब कि यदि उसे अन्य जिले के लिए रखा गया होता तो अधिक लाभदायक होता। इस प्रकार की कठिनाइयों से बचने के लिए समिति ने एक जटिल संघीय व्यवस्था का सुझाव दिया। उसने बताया कि गृहनिर्माण एवं शहर नियोजन के कार्य के बीच पर्याप्त सम्बन्ध रखा जाये।

सन १९३२ के शहर एवं देश नियोजन अधिनियम ने क्षेत्रीय नियोजन को कई प्रयासों से सरल बना दिया। अब जिला परिषदें नियोजन के अपने कार्यों को काउन्टी परिषदों को सौंप सकती थीं। दूसरे, संयुक्त समिति की निर्णायक सत्ताओं के बीच खर्च का वितरण अब लोचशील बना दिया गया। तीसरे, मंत्री को यह शक्ति दी गई कि वह अपनी ओर से पहल करके संयुक्त समितियों की रचना के लिए आज्ञायें जारी कर सके। अब भी नियोजन का मुख्य दायित्व छोटी स्थानीय सत्ताओं पर ही छोड़ दिया गया क्योंकि मन्त्री को हस्तक्षेप करने योग्य समय ही नहीं मिलता था। इस दिशा में की गई प्रगति की गति धीमी थी। स्थानीय सत्तायें योजना तो बनाती थीं किन्तु उनका राष्ट्रीय आवश्यकताओं एवं पड़ोसियों के नियोजन से कोई सम्बन्ध नहीं रहता था।

यह स्पष्ट था कि नियोजन के क्षेत्र इस लक्ष्य की दृष्टि से वित्तीय व्यय की दृष्टि से, पूरे राष्ट्र की आवश्यकताओं की दृष्टि से तथा उसके किसी भी क्षेत्र की दृष्टि से अत्यन्त छोटे थे। यदि नियोजन के द्वारा समग्र राष्ट्र के हित की साधना करनी है तो यह जरूरी हो जाता है कि प्रत्येक स्थानीय सत्ता

---

†Royal Commission on Local Government, Part X, Q 30, 500.

को एक राष्ट्रव्यापी सांचे में ढ़ाला जाये। इसके लिए कुछ मौलिक सिद्धान्त बनाये ही जा चुके हैं जैसे—भूमि का कृषि के लिए तथा उद्योगों के लिए प्रयोग, औद्योगिक तकनीक पर आधारित शहर का आकार एवं स्थान, औद्योगिक विकेन्द्रीकरण की सम्भावनायें, स्वास्थ्य, सुविधायें, गृहनिर्माण एवं जनता के यातायात की सुविधायें आदि। प्रत्येक सत्ता जिसका सम्बंध नियोजन से था वह यह जानती थी कि उसके द्वारा जो भी निर्णय लिया जायेगा उसका प्रभाव पड़ौसियों पर अवश्य पड़ेगा।

असल में नियोजन की समस्या को अत्यन्त सरल करके देखा गया तो क्षेत्रीय परिषद मुख्य नियोजन सत्ता बन गई। क्षेत्र की मुख्य आवश्यकताओं को पूरा करने का कार्य इसी के द्वारा किया जाने लगा। कस्बा एवं देश के नियोजन पर जो अधिनियम सन् १९४७ में बनाया गया उसकी मुख्य विशेषतायें तीन थीं। प्रथम यह कि सभी स्थानीय नियोजनों को राष्ट्रीय हित की दृष्टि से किया जाना चाहिए किन्तु इसे स्थानीय जनता के ज्ञान एवं पहल पर आधारित रहना चाहिए। दूसरे, नियोजन अब एक विधायी कार्य बन चुका है, यह अवांछनीय विकास के लिए एक अवरोधक मात्र नहीं है। तीसरे, अब मुआवजे की कठिनाई को प्रायः समाप्त ही कर दिया गया है।

आजकल नियोजन का पूर्ण उत्तरदायित्व केवल एक ही मंत्रालय अर्थात् शहर एवं देश नियोजन मंत्रालय पर ही आ पड़ा है। स्थानीय स्तर पर नियोजन की शक्तियां जिले से काउन्टीज को और काउन्टी बारोज को सौंप दी जाती हैं। इससे नियोजन के लिए बड़े क्षेत्र प्राप्त हो जाते हैं किन्तु मंत्री को यह भी शक्ति प्रदान की गई है कि वह यदि उचित समझे तो इन क्षेत्रों को भी परस्पर मिला दे। नियोजन के सम्बंध में पहल उन स्थानीय सत्ताओं द्वारा की जानी चाहिए जिनको कि अधिनियम के पास होने के तीन साल के अन्तर्गत योजना बनाकर मंत्रालय को प्रस्तुत करनी है। इन योजनाओं के आधार पर कोई कार्य किया जाये इससे पहले इन्हें मंत्रालय द्वारा स्वीकार किया जाना चाहिए। उसके बाद ही स्थानीय सत्तायें इनके अनुसार व्यवहार कर सकती हैं।

मंत्रालय को यह शक्ति प्राप्त है कि वह किसी भी क्षेत्र को एक नये कस्बे के लिए स्थान घोषित कर सकता है। इसको बनाने एवं नियोजित करने के लिए यह एक अस्थायी विकास निगम की नियुक्ति कर सकता है। यह निगम अपने किसी काम के लिए भूमि को आवश्यक रूप से ले सकती है।

पुलिस सेवायें [Polie Services]—सन् १९१८ में इङ्गलैण्ड तथा वेल्स में लन्दन के बाहर १८६ अलग-अलग पुलिस सत्तायें थीं। काउन्टीज में ५८ थीं तथा १२८ काउन्टी बारोज में थीं। प्रथम को बाध्यकारी रूप से सन् १८५६ के अधिनियम द्वारा स्थापित किया गया था और काउन्टी बारोज में इसे १८३५ के नगर निगम अधिनियम तथा १८८२ के अधिनियम द्वारा स्थापित किया गया।

पुलिस सेवा में बरती गई स्वतंत्रता, मितव्ययता एवं कार्यकुशलता के कारण एक हानिकारक तथ्य थी। अलग-अलग संगठित की गई पुलिस सत्ता वैसे कम होती थी किन्तु उसके भवन एवं प्रशासन पर जो भी खर्च होता था वह

जा भी चुके होते थे।

संगठित अव्यवस्था को मिटाने के लिए १८९० में पुलिस अधिनियम पारित किया गया जिसके अनुसार स्थानीय सत्ताओं को [illegible] के मध्य परस्पर व्यक्तिगत उधार देने व लेने की शक्ति प्रदान की गई। यह व्यवस्था कई कारणों से सफल न हो सकी। प्रथम कारण यह था कि एक पुलिस सत्ता को कई एक स्थायी समझौते करने होते थे। ऐसा न करने पर यह सम्भव था कि जिन सत्ताओं के साथ समझौता किया गया है उनको स्वयं ही अतिरिक्त व्यक्तियों की आवश्यकता है अथवा समय पड़ने पर वे प्रदान नहीं कर सकें। दूसरे, आवश्यकता पड़ने पर व्यक्तियों को भेजने के प्रश्न पर पुलिस सत्ता की स्वीकृति लेना जरूरी था और इस कार्य में पर्याप्त समय लगता था। तीसरे, अनेक पुलिस सत्तायें इस प्रकार का समझौता करने में असमर्थ थीं। ऐसे बहुत कम अवसर आते थे जबकि वे इस प्रकार के समझौते करती थीं। इसका मूल करण यह था कि इन सत्ताओं को सदैव ही यह भय रहता था कि उनसे किसी भी ऐसे समय सहायता मांगी जा सकती है जबकि वे ऐसा कर सकने में असमर्थ हों। चौथे, पुलिस सत्तायें इस प्रकार की पारस्परिक सहायता के मूल्य पर एकमत नहीं हो सकीं। डेसबॉरो (Desborough) प्रतिवेदन में सुझाया गया था कि स्वय गृहविभाग इस सम्बंध में मानक शर्तें एवं दरें तय करे। यह सब १९१९ के अधिनियम एवं १९२० के नियम तथा आदेशों के द्वारा किया गया। जब छोटे बारोज की पुलिस सत्ताओं को मिलाया गया तो छोटी सत्ताओं द्वारा इस बात का विरोध किया गया। यह कहा गया कि एक सशक्त प्रशासन के लिए स्थानीय ज्ञान का होना जरूरी है। स्थानीय नियंत्रण से यह सम्भव बनता है कि क्षेत्र की विशेष समस्याओं की ओर अधिक ध्यान दिया जा सके। दूरस्थ सत्ता के द्वारा प्रबन्ध किया जाना उचित नहीं है।

समिति द्वारा यह सिफारिश की गई कि छोटी बॉरो शक्तियों को काउन्टी का सत्ताओं में मिला दिया जाये। वैसे समिति यह चाहती थी कि बारो की पुलिस के लिए एक लाख से अधिक पुलिस सत्ता की सीमा रखदे किन्तु फिर भी प्रशासकीय सुविधा की दृष्टि से उसने केवल गैर काउन्टी बारोज की पृथक पुलिस सत्ता को समाप्त करने की बात कही। किसी काउन्टी बॉरो में उस समय तक कोई नई सत्ता स्थापित नहीं होनी चाहिए जब तक कि गृह विभाग

के कार्यालय को यह संतोष न हो जाये कि पृथक सत्ता की स्थापना के फल-स्वरूप निश्चित प्रशासकीय लाभ प्राप्त हो सकेगा। उसने यह सिफारिश की कि प्रबन्ध का प्रसार करने से व्यवस्था में कुछ लाभ हो सकता है, इसके लिए काउन्टी की कुछ छोटी सत्ताओं को समूहीकृत कर दिया जाये। इन सिफारिशों के परिणामस्वरूप भी परिस्थिति का सामना नहीं किया जा सका अतः समिति ने भर्ती, अनुशासन, प्रशिक्षण एवं वेतन आदि के बारे में नियमों को प्रभावीकृत करने के लिए भी सिफारिश की। पुलिस व्यवस्था की पुनर्स्थापना के बाद छोटी सत्ताओं को मिलाने की नीति का पालन किया गया। सन् १८८२ में छोटे बारोज में पृथक सत्ताओं की संख्या को कम करने के लिए यह व्यवस्था की गई कि किसी भी नये बारो को पृथक पुलिस सत्ता रखने की इजाजत न दी जाये जब तक कि उसकी आबादी बीस हजार से अधिक न हो। गृह-मंत्रालय द्वारा भी यह शर्त रखी गई कि बॉरो को अपनी शक्ति काउन्टी के साथ एकीकृत कर लेनी चाहिए। १८८८ तक जो ५७ बारोज बनाये गये उनमें से केवल सात को ही नयी पुलिस सत्ता की अनुमति दी गई। १८८८ के अधिनियम में यह व्यवस्था की गई कि उन सभी बॉरोज की पुलिस शक्ति १८८१ में काउन्टी की शक्ति के साथ मिला दी जायेगी जो कि दस हजार से कम जनसंख्या रखते हैं।

मितव्ययता एवं पुलिस कार्यकुशलता के विचार से प्रभावित होकर सन् १९३२ में पुलिस सत्ता के संयुक्तीकरण पर एक प्रवर समिति की स्थापना की गई। इस समिति के प्रतिवेदन को पुलिस क्षेत्रों की समस्या पर सर्वाधिक प्रशंसनीय विश्लेषण समझा जाता है। इसमें बताया गया कि क्षेत्र अनेक होने के कारण अनेक प्रकार की जटिलतायें पैदा हो जाती हैं। उनके बीच सीमा बन्धन लगाने पर स्थिति और भी अधिक खराब हो जाती है। इसके बीच परस्पर सहयोग स्थापित करने के बाद भी इनकी कमजोरियों को दूर नहीं किया जा सकता।

पुलिस सेवा में प्रशिक्षण केवल तभी ठीक प्रकार से प्रदान किया जा सकता है जबकि क्षेत्र का आकार पर्याप्त हो। छोटे क्षेत्र में यह बड़ा कठिन होता है कि व्यक्तिगत पक्षपातपूर्ण भावनाओं को रोका जा सके। इसके अतिरिक्त जब अनुशासनात्मक कार्यवाही करते हैं उस समय भी यही दृष्टि-कोण रहता है। अतीत की तुलना में टेलीफोनों के कारण अधिक पक्षपात एवं प्रभाव के लिए अवसर हो गये हैं। बारोज के प्रतिनिधियों ने उन तर्कों का विरोध किया जो कि विलीनीकरण का पक्ष ले रहे थे। उनका कहना था कि गृह मंत्रालय द्वारा जो समन्वय स्थापित किया जा रहा है वही पर्याप्त है। इसके अतिरिक्त काउन्टी की पुलिस शक्ति का प्रशासन भी कुछ अधिक उच्च नहीं कहा जा सकता, वह बारोज के प्रशासन से श्रेष्ठ नहीं था। गैरकाउन्टी बारोज ने यह शिकायत की कि उनका काउन्टी परिषदों में बहुत थोड़ा सा प्रतिनिधित्व है। वे काउन्टी परिषदों को रेटों के रूप में जो धन देती हैं उसकी मात्रा उनके द्वारा प्राप्त सेवाओं से पर्याप्त अधिक है। उनका तर्क था कि उस निकाय का नियन्त्रण अधिक प्रभावशील रहता है जो कि शिकायत करने की दृष्टि से नजदीक है तथा जनता में अधिक विश्वास प्रेरित

कर सकता है। एक दूरस्थ एवं अज्ञात परिषद द्वारा यह सब नहीं किया जा सकता।

गृह मंत्रालय ने उन सभी बारोज की पुलिस शक्ति के विलीनीकरण का सुझाव दिया जिनकी जनसंख्या ७५००० से नीची थी। कान्सटेबुलों के निरीक्षक इस मत से सहमत थे। १९४६ के पुलिस अधिनियम द्वारा संयुक्तिकरण के सिद्धान्त को और भी आगे ले जाया गया। एक अपवाद को छोड़कर ४६ गैर काउन्टी बारो पुलिस शक्तियों को समाप्त कर दिया गया। अधिनियम ने गृहसचिव को यह अधिकार दिया कि वह कितनी ही सत्ताओं के पुलिस निकायों को मिला सके। इस प्रकार के विलीनीकरण में कुछ शर्तें रखी गई। प्रथम तो स्वेच्छापूर्ण वि .नीकरण का प्रयास किया गया किन्तु यह सफल न हो सका। दूसरे, ज कहीं कोई स्थानीय सत्ता यदि विलीनीकरण का विरोध करे तो गृह स.ािव इस सम्बन्ध में जांच कर सकता था। इस सत्य का कामन्स सभा में विरोध किया गया और अन्त में इसे संशोधनकरके स्वीकार कर दिया। इस संशोधन के अनुसार कोई भी काउन्टी परिषद् या काउन्टी बारो परिषद जिसकी संख्या एक लाख या इससे अधिक है उसे उससे (उच्च सत्ता) साथ मिलने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता था।

शिक्षा [Education]—सन् १८७० में प्राथमिक शिक्षा के सम्बन्ध में अधिनियम पास किया गया। इससे पहले शिक्षा का कोई स्थानीय प्रशासन नहीं था। शिक्षा व्यक्तिगत उद्यमों एवं धार्मिक समाजों के हाथ में थी, किन्तु फिर भी राज्य द्वारा अनुदान देकर शिक्षा संस्थाओं की सहायता की जाती थी। इसके साथ ही सन् १८३३ तक राज्य सरकार उसके नियमन एवं नियंत्रण का कार्य करती रही। इसके बाद शिक्षा के संबंध में एक के बाद एक सार्वजनिक प्रावधान रखा गया। १८७० में शिक्षा संबन्धी कार्य स्कूल बोर्ड को सौंप दिए गए। १९०२ में जब कि प्रशासन का क्षेत्र बदल गया तो इंगलैंड और वेल्स को २५६०स्कूल बोर्डों द्वारा प्रशसित किया गया। उस समय तक शहरी जिले सार्वजनिक रूप से स्थापित नहीं हो सकते थे। इस प्रकार कुछ अपवादों को छोड़ कर अन्य क्षेत्र बहुत छोटे थे। १८८९ और १८९१ के तकनीकी निर्देश अधिनियमों ने काउन्टी परिषदों और काउन्टी बारो परिषदों तथा शहरी जिलों को कुछ सीमित शक्तियां दी। १९०२ में जो शिक्षा सम्बन्धी विकास किया गया उसमें वैज्ञानिक रूप से विचार करके काउन्टीज तथा काउन्टीज बारोज को सभी प्रकार की शिक्षा के लिए उत्तरदायी बनाया। किन्तु छोटे बारोज तथा शहरी जिलों में जो सत्ता पहले से ही कार्य कर रही थी वह अपनी शक्ति को छोड़ने के लिए तैयार नहीं थी। उनका तर्क था कि स्थानीय रुचि, ज्ञान एवं व्यक्तिगत सम्पर्क बनाए रखने के लिए यह जरूरी है कि क्षेत्र छोटा होना चाहिए। परिणाम-स्वरूप समझौतेपूर्ण दृष्टिकोण अपनाये गये। प्राथमिक शिक्षा के लिए काउन्टी परिषदों को सत्ता बनाया गया, साथ ही काउन्टी बारोज और दस हजार से अधिक की जनसंख्या वाले गैर काउन्टीज को भी यह शक्ति दी गई। अधिनियम के अनुसार बारोज तथा शहरी जिले अपनी सत्ता छोड़ सकते थे।

उच्च शिक्षा काउन्टी तथा काउन्टी बारोज के हाथों में सौंप दी गई। इनमें ५८ शहरी जिला परिषदें भी थीं। १९०२ के अधिनियम के अनुसार बारोज तथा जिले अपनी शक्तियां काउन्टी के लिये दे सकते थे किन्तु व्यवहार में इस प्रावधान का प्रयोग बहुत कम हुआ। जिन सत्ताओं ने अपनी शक्ति त्याग दी वे स्वयं तथा काउन्टीज दोनों ही इससे लाभान्वित हुए क्योंकि बड़े क्षेत्र में अध्यापक योग्य मिल सकते थे और उसमें प्रति व्यक्ति खर्चा भी कम आता था। कुछ काउन्टीज अपनी शक्ति को उच्च शिक्षा एवं प्राथमिक शिक्षा के बारे में शहरी परिषदों को सौंप सकती थीं। काउन्टी बारो के माध्यमिक स्कूल जब अपना प्रबंध करते थे तो वे काउन्टीज का उपयोग करते थे। इससे काउन्टीज को यह भय हुआ कि कहीं उन पर काउन्टी बारोज का अधिकार न हो जाए। विभिन्न अधिनियमों में अनेक स्थानीय सत्ताओं को मिलाने की व्यवस्था की गई थी। १९१८ के अधिनियम ने परिषदों को इस योग्य बनाया कि वे किसी भी कर्तव्य एवं शक्ति के लिये आपस में मिल सकें। इन प्रावधानों का भी अधिक प्रयोग नहीं किया गया। कुछ काउन्टीज में संगठन का दोहरापन पूर्ण रूप से किया गया। ज्यों-ज्यों दोहराव हुआ त्यों-त्यों अनेक गम्भीर समस्याएं उठती गई।

१९४४ के शिक्षा अधिनियम के द्वारा काउन्टी और काउन्टी बारो परिषदें एकमात्र शिक्षा सत्ताएं बन गई। इस प्रकार १६९ सत्ताओं का अस्तित्व समाप्त हो गया। इन सत्ताओं के बीच समझौता करने के लिए तथा इनके द्वारा किए गए कार्यों की उपयोगिता की हानि को पूरा करने के लिये अधिनियम में कुछ प्रावधान रखे गए। इनमें प्रथम यह था कि जहां कहीं काउन्टी बारोज या काउन्टी परिषदें बहुत गरीब हों और अकेली रहकर कार्य न कर सकें तो वे एक ही संयुक्त शिक्षा मंडल में मिल सकती थी। दूसरे, काउन्टीज के क्षेत्रों को सम्भागीय कार्यपालिका क्षेत्रों में विभाजित करना था जहां कि सम्भागीय कार्यपालिका को शिक्षा सम्बन्धी सभी शक्तियां प्रत्यायोजित की जा सकती थीं। केवल कर लगाने या उसे इकट्ठा करने की शक्ति नहीं सौंपी जा सकती थी। तीसरे, साठ हजार से अधिक जनसंख्या वाले बारोज या जिला परिषदें यदि अपील करें तो उनको उक्त विभाजन से मुक्त किया जा सकता था और वे छोड़े हुए जिले बन सकते थे।

सड़कें (Highways):—१८६२ तक सड़कों का प्रशासन दो सत्ताओं द्वारा किया जाता था। ये थीं टर्नपाइक न्यास (Turnpike Trust) और व्यक्तिगत पैरिसें। सन् १८६२ के अधिनियम में, पैरिसों को, सड़क जिलों (Highways District) में समूहीकृत होने के लिए शक्ति प्रदान की। कुछ समय बाद रेलों के साथ प्रतियोगिता होने के कारण और कानून द्वारा व्यवस्था करने के कारण टर्नपाइकन्यास को समाप्त कर दिया गया। १८७८ में सड़कों को जिलों का उत्तरदायित्व दिया गया। तभी यह भी निश्चित कर दिया गया कि मुख्य सड़क क्या है और उसी के आधार पर उसे अनुदान प्रदान किया जा सके। १८८२ के बाद केन्द्रीय सरकार सड़क सत्ताओं को अनुदान देने लगी। १८८८ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने काउन्टी परिषद को यह उत्तरदायित्व सौंपा कि वह काउन्टी की सभी मुख्य सड़कों की रचना

कराये। किन्तु यदि शहरी सत्ता यह चाहे कि अपने क्षेत्र की सड़क की रचना वह स्वयं ही करे तो उसे ऐसा करने का अधिकार था और उसका खर्चा काउन्टी परिषद द्वारा ही दिया जाना था। दूसरे, काउन्टी परिषद मुख्य सड़क की संरचना के लिए किसी भी देहाती या शहरी सत्ता से ठेका कर सकती थी। उसका व्यय-भार काउन्टी परिषद को उठाना पड़ता था। शेष सड़कें बारोज एवं जिलों के अधिकार क्षेत्र में आई। उस व्यवस्था के मुख्यत: दो दोष थे। प्रथम यह कि काउन्टी बिना किसी बाहरी प्रतिबन्ध के ही इस बात का निर्णय करती थी कि कौनसी सड़क मुख्य सड़क है। इसके परिणामस्वरूप प्रत्येक काउन्टी में सड़क के प्रशासन के सम्बन्ध में पर्याप्त भिन्नता रही। दूसरे, ऐसी कोई सत्ता नहीं थी जो कि जिलों की नीति के बीच समन्वय स्थापित कर सके। यही कारण है कि राष्ट्रीय आधार पर सड़कों के सम्बन्ध में कोई एक जैसी नीति न अपनायी जा सकी।

काउन्टीज, बारोज तथा जिलों के बीच लगातार इस आधार पर संघर्ष बना रहा कि सड़कों पर वे स्वयं ही नियन्त्रण रखे ताकि उनके स्वयं के स्थानीय लक्ष्य आसानी से पूरे किये जा सकें। जब कभी सड़कें जिले से काउन्टी को दी जायें अथवा वे बारो प्रसार योजना में आ जायें तो जिलों को उनके व्यय से मुक्त किया जाये तथा उनके लिए मुआवजा भी सौंपा जाये। काउन्टी परिषद को सड़कों से सम्बन्धित दायित्व सौंपने का सभी छोटी सत्ताओं द्वारा प्राय: विरोध किया गया। यद्यपि अनुभव द्वारा यह स्पष्ट था कि जहां कहीं भी इस प्रकार का स्थानान्तरण किया गया वहां विभिन्न सत्ताओं के बीच मनमुटाव पैदा नहीं हुआ था। दूरवर्ती आवागमन के लिए सन् १९०९ में एक सड़क मंडल की स्थापना की गई। इसका मुख्य लक्ष्य सड़क-सत्ताओं का विकास करना था ताकि सड़कों का सामान्य रूप से सुधार किया जा सके। १९१४ की करारोपण पर विभागीय समिति द्वारा यह सिफारिस की गई कि मुख्य सड़कों को परिभाषित करने की शक्ति सड़क मण्डल को सौंप दी जानी चाहिए जो कि इस शक्ति का प्रयोग करते हुए सड़कों का समय-समय पर वर्गीकरण करती रहे तथा उनके महत्व के आधार पर ही अनुदान की व्यवस्था करे। सन् १९२० में सड़क प्रशासन को सड़क-मण्डल से यातायात मन्त्रालय को स्थानान्तरित कर दिया गया। मन्त्रालय द्वारा सड़कों का वर्गीकरण किया गया। मुख्य सड़क एवं अन्य सड़क के रूप में जो पुराना वर्गीकरण था उसके स्थान पर एक वैज्ञानिक पद्दति को अपनाया गया कि सड़कें प्रथम श्रेणी, द्वितीय श्रेणी एवं अन्य प्रकार की होंगी।

यातायात मंत्रालय के कार्य के बावजूद भी मौलिक कठिनाई यह बनी रही कि जो काउन्टी सड़कें एवं राष्ट्रीय सड़कें थी उनका प्रशासन एवं नियंत्रण छोटे क्षेत्रों द्वारा किस प्रकार किया जाये। जब तक यह समस्या न सुलझादी जाती उस समय तक कोई मौलिक परिवर्तन नहीं आ सकता था सड़कों के सम्बंध में जो संयुक्त कार्यक्रम अपनाया गया वह स्थानीय सरकार पर शाही आयोग की आलोचना का पात्र बना। सन् १९२९ के अधिनियम ने समस्या को एक नये तरीके से ही सुलझाने का प्रयास किया। इसने प्रशासन के क्षेत्र को बढ़ा कर तथा स्थानीय सत्ताओं एवं यातायात मंत्रालय

के बीच सम्बंध को अधिक बढ़ा कर सुधार लाने का प्रयास किया। अब तक सड़क प्रशासन के बारे में जो शक्तियां देहाती जिला परिषदों द्वारा प्रयुक्त की जाती थी अब उनको काउन्टी परिषदों को सौंप दिया गया। नगरपालिका बारोज की तत्सम्बंधी शक्तियों को भी काउन्टी परिषद के हाथ में दिया गया। इन सभी सड़कों को 'काउन्टी सड़क' कहा जाने लगा।

यात्री यातायात सेवायें (Passenger Transport Services)—कई एक स्थानीय सत्तायें ट्राम्वे, ट्राली तथा पैट्रोल बस यातायात के उद्यमों का संचालन कर रही थी। कुछ के द्वारा केवल ट्राम्वेज ही चलाई जा रही थीं। इनको धीरे-धीरे बसों द्वारा बदल लिया गया। कुछ स्थानीय सत्तायें यातायात के उन सभी साधनों का संचालन कर रही थी जो कि गलियों में चलाये जा सकते थे। यातायात के साधनों की दृष्टि से स्थानीय सत्ताओं के बीच पर्याप्त सहयोग की भावना वर्तमान थी। एक सत्ता के ट्रकों या बसों की आवश्यकता के समय दूसरी के द्वारा प्रयुक्त किया जाता था, संयुक्त प्रबंध किया जाता था किन्तु यह कार्य इतना सरल नहीं था। कई बार वर्षों तक प्रयास करने के बाद भी इस कार्य में सफलता प्राप्त नहीं हो पाती थी, यद्यपि इस प्रकार के प्रबन्धों द्वारा मितव्ययता एवं सुविधा होती थी। एक क्षेत्र में यातायात की सुविधायें तथा उनका प्रशासन क्षेत्र की आवश्यकताओं एवं परिस्थितियों पर बहुत कुछ निर्भर करता है। क्षेत्र में औद्योगिक स्थिति क्या है, विद्युत की सुविधायें कितनी प्राप्त हो सकती हैं, तथा उस क्षेत्र में कितने घर हैं आदि बातों का प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से प्रभाव पड़ता है। लगभग नौ संयुक्त यातायात मण्डल बनाये गये जिनके कार्यों को देखने के बाद यह स्पष्ट हो जाता है कि इनकी उपयोगिता कितनी अधिक है।

निर्धन राहत एवं संरक्षकों का मण्डल (Poor Relief and the Board of Guardians)—सन् १९२९ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने निर्धन कानून प्रशासन का एक मौलिक पुनर्गठन तैयार किया। इस अधिनियम ने पहले की सामाजिक सत्ताओं को समाप्त कर दिया तथा १६वीं शताब्दी के सिद्धान्तों तथा संस्थाओं का निराकरण कर दिया। ये सभी परिणाम उस समय तक स्पष्ट नहीं हो सके जब तक कि १९०५ में शाही आयोग द्वारा समस्या की पूरी तरह जाँच नहीं कर ली गई। इस अयोग ने जाँच में प्राप्त दोषों को सुधारने के लिए उपाय सुझाये। सुझाये गये सुधारों के आधार पर १९२९ में सुधार किये गये। इस क्षेत्र में सन् १९०५ से जो कुछ किया गया था उसको कई एक सोपानों द्वारा सम्पन्न किया गया था जैसे १८३४ के सिद्धान्त, उन पर बहुमत एवं अल्पमत के आयुक्तों का दृष्टिकोण एवं वर्तमान अधिनियम की विषयवस्तु १९३४ के सुधार १८३४ की रिपोर्ट पर आधारित थे। इनको दो भागों में विभाजित करके देखा जा सकता है—प्रथम, प्रशासन का यंत्र एवं राहत के सिद्धान्त। गरीब राहत को १५००० पृथक पेरिशों में प्रशासित किया जाता था। अधिनियम ने गरीब कानून संघों को समाप्त कर दिया और इसके परिणामस्वरूप लगभग ६४० संघों की सत्ता कम हो गई। यह सुधार इस तथ्य से प्रभावित होकर किया गया था कि पेरिश एक अत्यन्त ही छोटा क्षेत्र होता है और इसके द्वारा

पर्याप्त धन, कौशल, कार्यक्रम एवं राहत के लिए अन्य आवश्यक चीज उपलब्ध नहीं कराई जा सकतीं। दूसरे, एक निर्धन कानून आयोग का संगठन किया गया जो कि एक केन्द्रीय सत्ता थी तथा जिसका कार्य था संरक्षकों के मण्डल पर नियंत्रण रखना तथा निरीक्षकों की सहायता से यह देखते रहना कि संरक्षकों द्वारा ठीक प्रकार से कार्य किया जा रहा है अथवा नहीं। तीसरे, वोर्ड को चुनाव के आधार पर संगठित किया गया था यद्यपि यह चुनाव 'एक व्यक्ति एक मत' के सिद्धान्त पर आधारित नहीं था फिर भी इसे प्रजातंत्रीय व्यवहार का प्रारम्भ तो मानना ही होगा। अपाहिजों की व्यवस्था का दायित्व परिवार पर ही डाला गया, यदि परिवार ऐसा करने से मना कर दे तो राज्यकोष से उसकी व्यवस्था की जाती थी।

राहत के सिद्धान्त एडम स्मिथ तथा माल्थस की विचारधारा एवं वैन्थम के राजनैतिक मनोविज्ञान पर आधारित थे। व्यक्तियों को यदि सुगम समय दिया जाये तो वे शीघ्र ही स्वीकार कर लेंगे और यदि उनको कोई कष्ट दिया जाये तो वे कम बुराई को छांटेंगे। गरीबों की संख्या कम करने के लिए यह उचित रहेगा कि निर्धन राहत द्वारा दिये जाने वाले लाभों को कम कर दिया जाये। राहत को प्राप्त करना मजदूरी प्राप्त करने से भी अधिक कठिन वना दिया जाये तो उसे केवल जरूरतमन्द ही लेना चाहेंगे। इस सिद्धान्त की क्रियान्विति को इतना त्रुटिरहित एवं स्वचालित बना दिया जाये कि कोई भी बोर्ड, चाहे व कितना ही मूर्ख क्यों न हो इसे क्रियान्वित करने में गलती न करे। इसके लिए यह व्यवस्था की जाये कि जो लोग आश्रम में रहें केवल उनको ही राहत प्रदान की जाये तथा आश्रम में प्रवेश पाने पर भी कठोर प्रतिवन्ध लगा दिया जाये। आश्रम के सम्बन्ध में प्रतिरोव की नीति अपनाने पर स्वत: ही अनुपयुक्त अभागों की संख्या कम हो जायेगी।

एक शताब्दी के अन्दर-अन्दर निर्धन कानून सत्ताये १८३४ के सिद्धान्तों से पृथक हो गई तथा अभागों से सम्वन्ध रखने के नये तरीके अपनाने लगीं। साथ ही नवीन स्थानीय सत्ताओं का भी गठन किया गया जिनका सामान्य लक्ष्य उचित परिस्थितियों में अभागों की समस्या पर ही विचार करना था। १८३४ के आयुक्तों ने जांच करने के बाद उन सही सत्तागतों को अलग कर लिया जो कि अभागों के साथ गलत रूप से मिल कर राहत के लाभों का उपयोग कर रहे थे। निर्धन कानून मण्डल (Poor Law Board) ने धीरे-धीरे अभागों के विभिन्न वर्गों के लिए पृथक-पृथक प्रवन्ध करने की व्यवस्था की। यह व्यवस्था करते समय जिन सिद्धान्तों को अपनाया गया वे न तो अधिक प्रतिरोधात्मक कहे जा सकते थे और न ही कम पहुंच योग्य। आश्रमों में वालकों की शिक्षा, सामान्य मेडिकल सुविधा, आत्म सम्मान की भावना का विकास, गरीबी से उत्पन्न हीनता का विनाश आदि के लिए भी व्यवस्थायें की गई।

१९वीं शताब्दी का प्रारम्भ होते ही व्यक्तिवादी विचारधारा पर आक्रमण होना प्रारम्भ हो गया तथा मजदूरों को मुआवजा देने, शिक्षा जन-

स्वास्थ्य एवं अन्य अनेक साधनों का प्रबन्ध करने के बारे में राज्य का नियमन प्रारम्भ हो गया, समाज अपनी मूल भूल एकता के प्रति जागरूक हो गया और प्रत्येक वर्ग के उत्थान एवं विकास के लिए समान रूप से प्रयास किया जाना प्रारम्भ हो गया। निर्धनों एवं अभागों के कल्याण के लिए भी कई एक संस्थायें गठित की गईं। बाद में संसद द्वारा वृद्धों की पेन्शन पर विचार किया गया ताकि उनको आश्रमों से अलग रखा जा सके। धीरे-धीरे बेरोजगारों, स्कूल के बालकों, आदि की रक्षा के लिए उचित व्यवस्थायें की गईं। इस दिशा में केन्द्रीय एवं स्थानीय सरकारों द्वारा जो प्रयास किये गये उनके परिणामस्वरूप अभागों एवं अपाहिजों की संख्या को कम करने की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किया गया क्योंकि अपाहिजपन की सम्भावना के समय ही रोकने का प्रयास किया जा सकता था। इस प्रकार शारीरिक अपाहिजपन को तो रोका ही जा सकता था। इन सरकारी संस्थाओं द्वारा उनका उपचार किया गया जो कि बीमारी की सामाजिक दुर्घटना, छूत की बीमारी, दुर्घटना, वृद्धावस्था या बेरोजगारी के कारण अभागे बन सकते थे। प्रयास यह किया गया कि समस्त प्रक्रिया प्रतिरोधात्मक बन सके और बजाय इसके कि अभागों का पालन-पोषण किया जाये, उचित यह समझा गया कि उनको प्राथमिक अवस्था में ही अभागे बनने से रोक दिया जाये। एक ही साथ दो प्रकार की प्रशासनिक व्यवस्थायें की गईं। एक ओर तो यह व्यवस्था की जो कि उन सभी नागरिकों के बारे में विचार करती थी जो कि अभागे नहीं थे। अन्य एक विशेष सामयिक अपाहिज सत्ता थी। इन दोनों के बीच कोई आवश्यक सम्बन्ध नहीं था। दोनों के बीच कई जगह अतिराव उत्पन्न हो जाता था। संरक्षक मण्डल द्वारा अनेक संस्थाओं एवं अधिकारियों का संगठन व नियुक्ति की जाती थी। ये गृह, अस्पताल, स्कूल, डाक्टर, अध्यापक आदि की नियुक्ति एवं संगठन करते थे। इनका प्रसार नगरपालिका के समान ही था तो भी यह उससे स्वतन्त्र रह कर कार्य करती थी।

१९०५ में निर्धन कानून के सम्बन्ध में जो शाही आयोग नियुक्त किया गया उसके कारण अभागों की संख्या में कोई बड़ा या स्थायी घटाव नहीं हुआ। संरक्षकों द्वारा इस जटिल सेवा का प्रबन्ध नहीं हो सका और न ही वे अपने क्षेत्रों में अधिक कार्य कुशलता लाने के लिए वित्तीय सहायता प्राप्त कर पाते थे। आयोग के बहुमत एवं अल्पमत दोनों ही इस बात पर एकमत थे कि वे सभी सेवाएं जो कि आश्रम के बाहर सहायता की समस्या पर विचार करती हैं उनको उचित रूप से व्यवस्थित किया जाना चाहिये। उदाहरण के लिए एक वृद्धावस्था पेन्शन कार्यक्रम हो, स्कूलों में चिकित्सालय हों, एक राज्य मैडीकल सेवा हो, तथा श्रम विनिमय कार्यक्रम हों। १९१४ तक ये सभी अच्छी प्रकार कार्य करने लगीं, यद्यपि इस समय ये पूर्ण नहीं थीं। दूसरे, यह माना गया कि प्रशासन का क्षेत्र काउन्टीं तथा काउन्टी बारो ही रहे, उनको विकेन्द्रीकरण की कुछ शक्तियां सौंप दी जायें। इस प्रकार से सेवा का क्षेत्र बढ़ जायेगा और वह निर्धनों को आवश्यक राहत आसानी से प्रदान कर पायेगा।

आयोग कुछ बातों के सम्बन्ध में पर्याप्त मत भिन्नता भी रखता था। अल्पमत का यह कहना था कि उनका अध्ययन तथा सामाजिक इतिहास इस बात को प्रमाणित करते हैं कि निर्धन कानून सत्ता नाम की किसी चीज का अस्तित्व ही नहीं रहना चाहिये। इस सत्ता द्वारा जिस-जिस वर्ग की सेवा की जाती थी उसे अब अलग-अलग समितियों को सौंप दिया जाये। काउन्टी तथा काउन्टी बारोज की ये समितियां होंगी—पीड़ा समिति, शिक्षा समिति, जन–स्वास्थ्य समिति, पेन्शन समिति आदि-आदि। इस प्रकार जन्म के बाद से लेकर जीवन भर तक पर्यवेक्षण बना रहे चाहे वह स्कूल हो या फैक्ट्री अथवा कोई कार्यालय। स्थानीय सत्ता के कार्यों की दृष्टि से गरीब एवं सामान्य नागरिक के बीच किसी प्रकार का अन्तर न रखा जाये। आयोग का बहुमत इस बात से सहमत नहीं था कि नागरिक की नैतिकता की जांच की जाये। यह प्रश्न तो पहले ही आना चाहिए अर्थात् सहायता देने से पूर्व ही यह भली प्रकार से जांच कर ली जाये कि क्या सम्बन्धित व्यक्ति इस सहायता को प्राप्त करने के उपयुक्त हैं। सन् १६०६ से लेकर १६१४ तक अनेक संवैधानिक सुधार किये गये किन्तु अभागों से सम्बन्धित मूल समस्या को अछूता ही छोड़ दिया गया।

१ अप्रेल, १६३० को संरक्षकों के मण्डल का अन्त कर दिया गया तथा निर्धनों की राहत का कार्य पूरी तरह से काउन्टी बारो तथा काउन्टी परिषदों को सौंप दिया गया। इसके अतिरिक्त परिषदों को अपने कार्य सम्पन्न करने के लिए परस्पर संयुक्त होने की सुविधा दी गई। मंत्री को यह अधिकार था कि यदि वह यह सोचे कि इन परिषदों को संयुक्त कर देने से खर्च कम हो जायेगा अथवा जनता को इससे लाभ होगा तो वह अनिवार्य रूप से उन्हें परस्पर संयुक्त कर सकता था। इस प्रकार केन्द्रीय विभाग को हस्तक्षेप की शक्ति सौंप दी गई। परिषदों को स्थानान्तरित कार्यों को सम्पन्न करने के लिए प्रशासकीय योजना बनानी पड़ती थी। इस योजना को स्वीकृति के लिए स्वास्थ्य मन्त्रालय को भेजा जाता था। स्वास्थ्य मंत्रालय को यह अधिकार था कि वह परिवर्तन के साथ अथवा परिवर्तन के बिना ही इस योजना को स्वीकार करे। सन् १६२६ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने कुछ बड़े क्षेत्र को प्रशासन का आधार बनाया। इसके परिणामस्वरूप कर-दाताओं (Tax payers) की संख्या बढ़ गई।

विद्युत के क्षेत्र [Areas of Electricity] उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ तक बारोज तथा जिलों को ही विद्युत प्रसारण की शक्ति दी गई। विद्युत प्रसारण का बड़ा क्षेत्र उस समय तक सम्भव नहीं था जब तक कि सम्बन्धित क्षेत्रों की शक्ति अधिक न हो। इस सम्बन्ध में १६१६, १६२०, १६२२, और १६२६ में अधिनियम पारित किये गये। जब शक्ति की तकनीकी में क्रान्तिकारी विकास हुए तो अधिक बड़ा एवं उचित क्षेत्र प्राप्त करने की समस्या जटिल बन गई। यह समस्या १६१६ के विद्युत प्रसारण अधिनियम से सुलझाई गई। इस अधिनियम के द्वारा विद्युत आयुक्त के रूप में एक निकाय की स्थापना की गई। यह निकाय यातायात मंत्रालय के तत्वावधान में संयुक्त विद्युत व्यवस्था की स्थापना का प्रयास

करता था। इस प्रयास का विभिन्न उद्योगों ने विरोध किया तथा केवल कुछ ही सत्ताएं आपस में मिल सकीं। इसके लिए एक नया दृष्टिकोण अपनाया गया। विद्युत से सम्बन्धित समस्या को दो भागों में बांटा गया अर्थात् विद्युत का उत्पादन और उसका वितरण अथवा विक्रय। इन दो कार्यों को पृथक पृथक रख कर देखा जा सकता था।

विद्युत के उत्पादन के लिए बड़े क्षेत्र का रखा जाना सरल था किन्तु वितरण के लिए बड़े क्षेत्र की आवश्यकता को उपयुक्त बताना कठिन था। १९२६ में एक विद्युत-वितरण-अधिनियम पास किया गया जिसके अनुसार एक सरकारी निगम की स्थापना की गई। राष्ट्रव्यापी विद्युत प्रसारण से सम्बन्धित यह केन्द्रीय विद्युत मंडल अत्यन्त महत्वपूर्ण था। केन्द्रीय विद्युत मंडल के कार्यों की आधारभूमि बनाने के लिए विद्युत आयुक्तों ने दस क्षेत्रों का नियोजन किया जिसमें कि विभिन्नताओं का पर्याप्त ध्यान रखा गया। विद्युत के क्षेत्रों के लिए ऐसा आधार अत्यन्त आवश्यक था। विद्युत को बचा कर नहीं रखा जा सकता क्योंकि यह उपभोक्ता की आवश्यकतानुसार बनती रहती है। अतः यह आवश्यक है कि विद्युत के निर्माण की ऐसी विधि हो जो कि सभी आवश्यकताओं को पूरी कर सके यदि विद्युत उत्पादन के लिए बहुत बड़ा यंत्र लगा दिया जाये जो कि अधिक से अधिक मांग को पूरी कर पाये तो ऐसे यंत्र को उपयोगी बनाने के लिए यह भी जरूरी है कि क्षेत्र इतना बड़ा हो जो कि उस यंत्र को सदैव ही कार्यरत रख सके। क्षेत्रों का निर्धारण करते समय इस विचार को ध्यान में रखा जाये और सभी उद्योगों, सभी व्यापारिक संस्थानों तथा घरों का प्रकाश, ताप एवं अन्य आवश्यकताओं को भी ध्यान में रखा जाये। शक्ति उत्पन्न करने वाले क्षेत्रों में जो सुधार सफलतापूर्वक कार्य कर सकते हैं, यह जरूरी नहीं है कि वे सुधार शक्ति का वितरण करने के कार्य में भी सफलतापूर्वक कार्य क सकेंगे।

१९३८ में ३६४ स्थानीय सत्ताएं एवं २३४ कम्पनियां (Companies) विद्युत वितरण का कार्य कर रही थी। वे आकार, क्षेत्र, जनसंख्या एवं उपयोग की दृष्टि से पर्याप्त विभिन्नताएं रखती थी। इनमें से कुछ के वित्तीय स्रोत इतने कम थे कि प्रशासन के नये तरीकों एवं योग्य अधिकारियों को नियुक्त नहीं कर सकते थे। प्रति यूनिट वितरण का मूल्य उद्यम के आकार पर निर्भर करता था किन्तु फिर भी समर्थ प्रशासन एवं बिक्री की नीतियां, कुछ ऐसे तत्व थे जो कि छोटे उद्यम को वितरण का अधिक मूल्य दे सकते थे कार्य कुशलता भी छोटे क्षेत्र में अधिक रहती थी क्योंकि वह बिक्री से सम्बन्धित समस्याओं पर भली प्रकार विचार कर सकता था और स्थानीय अधिकारियों पर उपभोक्ताओं का प्रभाव भी रहता था। अगस्त, १९३७ में विद्युत आयोग ने अपने प्रस्तावों की रूपरेखा रखी। पच्चीस विद्युत जिलों को जिनमें कि अड़सठ समूह थे यह सुझाया गया कि उनकी स्थानीय सत्ताएं या कम्पनियां अथवा दोनों को ही नये वितरण क्षेत्र बनाने के लिए परस्पर मिला दिया जाय। प्रारम्भ में इसकी प्रतिक्रिया संतोष जनक नहीं रही। नगरपालिकाएं कम्पनियों के साथ कोई समझौता

करने की इच्छुक नहीं थी। छोटे उद्यम भी अपनी कार्यकुशलता के कारण ऐसे ही बने रहना चाहते थे। सन् १९४७ में विद्युत अधिनियम द्वारा विद्युत के वितरण को राष्ट्रीयकृत कर दिया गया। अब एक केन्द्रीय निकाय अर्थात ब्रिटिश विद्युत सत्ता, विद्युत के उत्पादन एवं बिक्री के लिए उत्तरदायी है। स्थानीय वितरण को चौदह क्षेत्रीय मंडलों के हाथ में सौंपा गया है। क्षेत्रीय मंडल द्वारा विद्युत का वितरण, बिक्री आदि की जाती हैं। अपने कार्यों में इनकी सहायता परामर्शदाता परिषदों द्वारा की जाती है जिनको कि स्थानीय सत्ताओं द्वारा नियुक्त किया जाता है।

४

स्थानीय सत्ताओं का रूप एवं रचना

[THE NATURE AND CONSTITUTION OF LOCAL AUTHORITIES]

किसी भी देश की स्थानीय सरकार का अपना स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं होता। वह उस देश की केन्द्रीय सरकार के संगठन का एक अभिन्न भाग होती है और उसी के द्वारा सौंपी गई सत्ता का प्रयोग करती है और दिये गये कार्यों को सम्पन्न करती है। ऐसी स्थिति में स्थानीय सत्ताओं को अपना संविधान स्वयं बनाने का प्रश्न ही नहीं उठता। वे अपना कार्यक्षेत्र एवं अपने कार्यों की प्रकृति भी स्वयं निर्धारित नहीं कर सकते। यह व्यवस्था सही है या गलत है, लाभदायक है या नुकसानदायक है आदि बातें कम महत्व रखती हैं। यदि रखती भी हैं तो कितना, यह एक विवाद का विषय है किन्तु कानून इस सम्बन्ध में स्पष्ट है कि स्थानीय सत्ताओं को कोई ऐसा अधिकार नहीं दिया जायेगा कि वे अपने आपको पृथक एवं स्वतन्त्र निकाय समझने लगें। स्थानीय प्रशासकीय निकायों को जो भी सत्ता सौंपी जाती है वह उनकी इच्छा से अथवा स्वतन्त्रतापूर्वक नहीं सौंपी जाती बल्कि इसे वे केन्द्रीय संसद से प्राप्त करती हैं। फाइनर का यह कहना सही है कि स्थानीय सत्ताओं की बनावट और मतदाता, परिषद का आकार और कार्यकाल, क्षेत्र, समितियों का संगठन आदि से सम्बन्धित मौलिक सिद्धांत स्थानीय सत्ताओं पर थोपे जाते हैं—कभी-कभी आज्ञा के रूप में और कभी कानून द्वारा निर्धारित सीमाओं के अन्तर्गत अनुमति के रूप में।*

---

*The structure of Local authorities, the electorate, the size in term of the council.areas, committee organisation. The fundamental principles of these are imposed upon them, sometimes as a command and sometimes as permission within limits established by statute."

—*Herman Finer*, Op. Cit. P. 189.

स्थानीय सत्ताओं पर संसद का व्यापक नियन्त्रण रहता है। वे क्या खर्च कर सकती हैं; क्या खर्च करना चाहिए तथा वे क्या कार्य कर सकती हैं और क्या उन्हें करना चाहिए आदि बातें संसद द्वारा तय की जाती हैं। संसद द्वारा निर्धारित सिद्धांतों को क्रियान्वित कराने की शक्ति कार्य-पालिका को हस्तांतरित कर दी जाती है। स्थानीय निकायों का क्षेत्र चाहे कितना ही बड़ा हो, उनकी आर्थिक स्थिति चाहे कितनी ही अच्छी हो एवं उनकी जनसंख्या चाहे कितनी ही अधिक क्यों न हो, किन्तु उनका स्वयं का कोई पृथक व्यक्तित्व नहीं होता। स्थानीय सत्ताओं को उनका अस्तित्व एवं कार्य करने की सामर्थ्य बाहर से प्राप्त होती है।

स्थानीय निकायों के इस पराश्रयी व्यक्तित्व का आधार संसद की सम्प्रभुता है। स्थानीय सत्ताएं प्रायः कृत्रिम व्यक्तित्व होती हैं जिन्हें अधि-नियम द्वारा कुछ विशेष पारिभाषित कर्तव्यों एवं शक्तियों को सम्पन्न करने के लिए बनाया जाता है।

स्थानीय सत्ताओं की रचना
(The Constitution of Local Authorities)

ग्रेट ब्रिटेन में जो भी स्थानीय सत्ताएं कार्य कर रही हैं उनका संवि-धान या रचना सम्बन्धी अभिलेख एक स्थान पर प्राप्त नहीं हो सकते। इसका कारण यह है कि कोई भी स्थानीय सत्ता एक समय में एक अधिनियम द्वारा नहीं बनायी गयी। इसके विपरीत प्रत्येक स्थानीय निकाय का विकास हुआ है। यदि हम स्थानीय निकाय की रचना के बारे में जानकारी प्राप्त करना चाहते हैं तो हमें पहले उन सामान्य कानूनों का अध्ययन करना होगा जो कि सभी स्थानीय सत्ताओं से सम्बन्ध रखते हैं और उसके बाद उस विशेष अधिनियम को देखना होगा जिसका सम्बन्ध किसी व्यक्तिगत सत्ता से है। सामान्य कानून में यह बताया जाता है कि स्थानीय स्तर पर कितनी प्रकार की सत्ताएं कार्य करेंगी अर्थात् काउन्टीज, कस्बे, जिले, गाँव या जो भी विभा-जन हों वे सभी स्पष्ट कर दिये जाते हैं, किन्तु यह सामान्य व्यवस्थापन प्रत्येक व्यक्तिगत सत्ता के सीमा सम्बन्धी एवं अन्य विशेष मामलों पर विचार नहीं करता। यह विचार उन अन्य परिपत्रों द्वारा किया जाता है जो कि व्यवस्था-पन की प्रकृति के होते हैं तथा जिनको सामान्य कानून के द्वारा दी गई शक्तियों के आधीन प्रसारित किया जाता है। स्थानीय सत्ता एक प्रादेशिक इकाई होती है और इसलिए इसकी रचना की प्रक्रिया एक निगम (Corpo-ration) जैसी होती है। एक निगम की मुख्य रूप से दो विशेषताएं होती हैं—प्रथम यह कि इसकी रचना किसी एक उच्च सत्ता द्वारा की जाती है और किसी बनाने वाले निकाय द्वारा इसे कभी भी नष्ट किया जा सकता है अथवा विकसित किया जा सकता है, दूसरे, इसके विशेष अधिकारों को अधिनियम द्वारा पारिभाषित कर दिया जाता है। यह परिभाषा प्रतिबंधित रूप में होती है। हरमन फाइनर के कथनानुसार ब्रिटिश स्थानीय सरकार की समस्त सत्ताओं की यही प्रकृति है चाहे उनका जन्म चार्टर द्वारा हुआ हो अथवा

कानून द्वारा।*

ये सभी स्थानीय सत्ताएं अधीनस्थ व्यवस्थापिका एवं कार्यपालि निकाय हैं। वे अपने आपको गठित करने एवं सक्रिय बनाने का निहित अधिकार नहीं रखती। स्थानीय सत्ताओं की भौगोलिक सीमाएं होनी चाहिए। एक नयी स्थानीय सत्ता को बनाने के लिए पृथक भू-भाग की आवश्यकता होती है। यदि कोई ऐसा क्षेत्र है जहां पर कि बहुत सारी भूमि खाली पड़ी हुई है और कोई नहीं रहता तथा लोग यहां वहां कही-कहीं रहते हैं, ऐसी स्थिति में यह सम्भव है कि स्थानीय सरकार को ऐसी व्यवस्था को अपनाना पड़े जो कि पूरे देश को समाहित नहीं करती। इसके लिए यह व्यवस्था अपनानी होगी कि जहां जनसंख्या है वहां स्थानीय सत्ता का संगठन कर दिया जाये और उन इकाईयों के बाहर की भूमि को खुला छोड़ दिया जाये जो कि किसी भी स्थानीय सरकार के अधिकार क्षेत्र में न आये। राज्य इन क्षेत्रों का प्रशासन स्वयं करेगा, उस क्षेत्र में हो कर जो सड़क निकलेंगी और जिन अन्य सेवाओं की आवश्यकता होगी वे सभी राज्य के द्वारा प्राप्त होंगी। ऐसी स्थिति में एक नई स्थानीय सत्ता की रचना कोई कठिनाई उत्पन्न नहीं करती। ज्योंही एक स्थान पर पर्याप्त जनसंख्या एकत्रित हो जाये त्योंही वहां स्थानीय निकाय की स्थापना की जा सकती है।

नयी सत्ता के द्वारा जिस क्षेत्र को आसानी के साथ प्रशासित किया जा सके उसके आधार पर उसकी सीमाएं निश्चित करदी जाती हैं, क्योंकि भौगोलिक रूप में इस नयी इकाई को एक ऐसे क्षेत्र से लिया जाता है जो कि स्थानीय सरकार की दृष्टि से किसी को भी भूमि नहीं है। यह स्थिति जितनी सरल है उतनी ही अप्राप्य भी है; क्योंकि प्रायः स्थानीय सरकार के उद्देश्य से कोई ऐसी भूमि नहीं मिलती जो कि किसी के अधिकार में न हो। प्रत्येक स्थानीय सत्ता की सीमाएं अपनी पास वाली सत्ता से मिली रहती हैं और इस प्रकार पूरा देश मुख्य सत्ताओं के जाल से ढका रहता है। स्थानीय सरकार के संगठन में यदि सूत्र व्यवस्था को अपनाया गया हो तो एक बड़ी सत्ता के क्षेत्र को छोटी सत्ताओं के क्षेत्रों में विभाजित कर दिया जाता है। ऐसी स्थिति में हम कोई परिवर्तन करना चाहें तो इसके लिए दो-तीन तरीके अपनाने होंगे—प्रथम तरीका यह है कि उनकी सीमा में परिवर्तन कर दिया जाय। इसका अर्थ यह है कि स्थानीय सरकार की इकाईयों को तो ज्यों का त्यों रहने दिया जाय और एक सत्ता को भूमि का कुछ भाग दे दिया जाय तथा दूसरी से कुछ भाग ले लिया जाय। काउन्टी बारोज का प्रसार इसी प्रकार किया जाता है। दूसरा तरीका यह है कि स्थित सत्ताओं को समाप्त करके या उनको आपस में मिला करके नयी स्थानीय सत्ता बना दी जाय।

---

*"This the character of all English Local Government authorities; whether originating in a character, or at a time of which the memory of man runneth not to the contrary, or by statute."

—*Herman Finer*, Op. Cit., P. 191.

यह कहा जाता है कि जब दो नजदीक की जिला परिषदों के क्षेत्र का प्रशासन एक ही परिषद द्वारा बहुत अच्छी तरह से किया जा सकता हो तो दो परिषदों को अनावश्यक रूप से क्यों रखा जाय और इसलिए उन दोनों निकायों को मिला कर एक बना दिया जाय। किसी क्षेत्र के गठन की प्रक्रिया प्रायः जनसंख्या के परिवर्तन के बाद सम्भव होती है। जब वर्तमान क्षेत्र जनसंख्या की दृष्टि से अत्यधिक हो जाता है तो यह उचित समझा जाता है कि उसके एक भाग को अलग करके पृथक से ही एक इकाई बनादी जाय। एक तीसरा तरीका स्तर में परिवर्तन करने का है। एक गांव अपने आकार एवं महत्व को इतना बढ़ा सकता है कि उसे कस्बा मानना पड़े और ऐसी स्थिति में वह काउन्टी के अन्तर्गत जिला स्तर पर आ जाता है। उसमें यदि अधिक वृद्धि होती है तो उसे और भी उच्च सत्ता बनाया जा सकता है। ये तीनों ही प्रक्रियाएं व्यवहार में भिन्न-भिन्न नहीं हैं। यह हो सकता है कि किसी सीमा के परिवर्तन का कारण स्तर का परिवर्तन हो और तीनों ही प्रकार के परिवर्तन एक साथ मिल जायं। ये परिवर्तन जहां भी कहीं और जब भी कभी होते हैं इनके आधार पर नयी इकाईयां बन जाती हैं। जब कभी सीमाओं में परिवर्तन किया जायेगा और यदि एक स्तर की सीमा को बढ़ाया जायेगा तो यह स्वाभाविक है कि दूसरी सत्ता की सीमा घट जायेगी। इसी प्रकार से स्तर का परिवर्तन भी सूत्रों की बनावट में संतुलन को बदल देगा। जब एक इकाई को विभाजित किया जायेगा तो उसकी सम्पत्ति के स्रोत भी विभाजित हो जायेंगे। इन सभी बातों को मैत्री एवं सहयोग पूर्ण समझौतों के द्वारा तय किया जा सकता है किन्तु वाद-विवाद के लिए एवं विरोध के लिए इनमें पर्याप्त गुन्जाइश रहती है। ऐसी स्थिति में यह जरूरी हो जाता है कि झगड़ों के बारे में जांच करने और उनको तय करने के लिए किसी यंत्र की स्थापना की जाय। इङ्गलैण्ड की व्यवस्था में देहाती एवं शहरी तथा जिला बारो एवं मुख्य सत्ताओं के बीच स्पष्ट विभाजन किया गया है।

काउन्टी परिषदों को यह कर्त्तव्य सौंपा गया है कि वे पेरिस की सीमाओं तथा देहाती एवं शहरी जिलों का पर्यवेक्षण करें। उनके द्वारा यह कार्य दस साल बाद अथवा आवश्यकता पड़ने पर कभी भी किया जाता है। जब कभी क्षेत्रीय परिवर्तन का कार्य करना होता है तो काउन्टी परिषद स्थानीय जांच कराती है और यह देखती है कि अधिकांश लोगों की क्या राय है। यदि वह यह देखती है कि परिवर्तन किया जाना चाहिये तो वह इससे सम्बन्धित आगे कार्य करके उसे स्वीकृति के लिए स्थानीय सरकार के पास भेजती है। यदि मंत्रालय को यह ज्ञात हो कि प्रभावित परिषद द्वारा इस परिवर्तन का विरोध किया जा रहा है तो वह इसके सम्बन्ध में स्थानीय जांच का प्रबन्ध करता है। इस प्रकार परिवर्तन के बारे में अन्तिम निर्णय मंत्री द्वारा ही लिया जाता है।

बारोज वे कस्बे होते हैं जिनको शाही चार्टर प्राप्त हो चुका होता है। ये चार्टर सदियों पूर्व दिये गये थे। कई एक को तो राजा से सौदे-बाजी के रूप में प्राप्त किया गया। बारोज के निवासियों को सदैव ही कुछ

विशेष अधिकार प्राप्त होते हैं जो कि अन्य सत्ताओं की जनता को नहीं होते। इनका एक महत्वपूर्ण विशेष अधिकार यह माना जाता है कि ये काउन्टी के सामान्य नियन्त्रण से बचे रहते हैं तथा इनको अपने प्रशासन का अधिकार स्वयं को ही होता है। पहले यह व्यवस्था थी कि किसी भी कस्बे के लोग राजा को आर्थिक सहायता प्रदान करके चार्टर प्राप्त कर सकते थे। अब कोई भी कस्बा उस समय तक बारो बनने का स्वप्न नहीं देख सकता जब तक कि उसकी एक निश्चित जनसंख्या न हो तथा उसमें वह सामाजिक एकरूपता तथा सहयोग न हो जो कि उसे सुस्थापित कस्बा बना सके। अब भी शाही चार्टर ही प्राप्त करना होता है किन्तु इसे व्यवस्थापन द्वारा विनियमित कर दिया गया है। इस प्रक्रिया में आज अनेक प्रकार की औपचारिकताओं का निर्वाह किया जाता है। शाही चार्टर में सीमायें, परिषद का आकार एवं स्थानीय सरकार के संगठन के अन्य कई विषयों का वर्णन होता है।

काउन्टी एवं काउन्टी बारोज को मुख्य सत्तायें कहा जा सकता है। ये दोनों परस्पर पर्याप्त भिन्नतायें रखते हैं। काउन्टी बारो एक सूत्र वाली सत्ता है तथा जहाँ तक काउन्टी से इसका सम्बन्ध है यह एक चाहरदीवारी से युक्त नगर होता है। इसका अर्थ यह है कि जब भी कभी एक नया काउन्टी बारो बनाया जाता है अथवा स्थित बारो का प्रसार किया जाता है तो काउन्टी से ही प्रदेश लिया जाता है। ब्रिटिश स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार वहां धन प्रायः शहरों में ही प्राप्त होता है, वह भी बड़े शहरों में। दूसरी ओर जो धन व्यय करना होता है वह प्रायः देहाती इलाकों पर अधिक किया जाता है क्योंकि किसी भी सेवा को उस स्थान के लिए आसानी से प्रदान किया जा सकता है जहां पर लोग परस्पर निकटता के साथ बसे हुए हैं। किन्तु जहां के निवासी दूर-दूर रह रहे हैं उन देहाती क्षेत्रों में सेवा की व्यवस्था करने में धन एवं श्रम अधिक व्यय करना होता है। ऐसी स्थिति में यदि शहरी जन-संख्या को काउन्टी से बाहर कर दिया जाये तो वह साधनों की दृष्टि से कम-जोर हो जायेगी किन्तु उत्तरदायित्व उस पर अधिक हो जायेंगे। इसी कारण नये बारोज की स्थापना या स्थिति बारोज के प्रसार का प्रश्न इतना अधिक महत्वपूर्ण समझा जाता है और उसे निर्णय के लिए संसद के सम्मुख रखा जाता है।

स्थानीय सत्ता की रचना या उसके संविधान से हमारा अर्थ उस तरीके से है जिसके द्वारा इसके प्रशासकीय निकाय का गठन किया जाता है तथा जिस ढंग से इसकी सदस्यता को संगठित किया जाता है। स्थानीय सत्ताओं की रचना परस्पर पर्याप्त भिन्नतायें रखती हैं जिसका उल्लेख किया जाना अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रतीत होता है।

काउन्टी परिषद की रचना—काउन्टी परिषद में एक सभापति एक उपसभापति, एल्डर मेन तथा परषंद होते हैं। काउन्टी पार्षदों को स्थानीय सरकार के निर्वाचकों द्वारा चुना जाता है तथा वे तीन वर्ष तक अपने पद पर कार्य करते हैं। तीन साल समाप्त होने पर वे सभी सेवा निवृत हो जाते हैं। काउन्टी के एल्डरमैनों को काउन्टी के स्थानीय मतदाताओं द्वारा नहीं चुना जाता वरन् इनका चुनाव काउन्टी के पार्षदों द्वारा किया जाता

है। ये छः वर्ष तक अपने पद पर कार्य करते हैं तथा इनमें से आधे हर तीसरे वर्ष अपने पद से हट जाते हैं। एल्डरमेनों का पार्षद होना जरूरी नहीं है किन्तु उसमें ऐसा बनने की योग्यतायें होनी चाहिए। एक परिषद में एल्डरमेनों की संख्या परिषद के कुल पार्षदों की संख्या का एक तिहाई होती है। इस प्रकार ये एक चौथायी भाग होते हैं।

सभापति (Chairman) का चुनाव पार्षदों एवं एल्डरमेनों द्वारा स्थित सदस्यों में से तथा ऐसी योग्यता रखने वाले सदस्यों में से किया जाता है। सभापति एक वर्ष तक अपने पद पर कार्य करता है तथा अपने कार्यकाल में वह शान्ति का न्यायाधीश होता है। सन् १९४९ के पूर्व वह अपना कार्य-काल समाप्त होने के बाद भी एक वर्ष तक शान्ति का न्यायाधीश (Justice of Peace) रहता था किन्तु १९४९ के शान्ति के न्यायाधीश सम्बन्धी कानून ने उसका यह अधिकार समाप्त कर दिया। उपसभापति का चुनाव परिषद द्वारा अपने सदस्यों में से ही किया जाता है। वह एक वर्ष तक अपने पद पर रहता है।

काउन्टीज बारो परिषद की रचना—काउन्टी बारो परिषद में एक मेयर, एक उपमेयर (Deputy Mayor), एल्डरमेन तथा पार्षद होते हैं। काउन्टी बारो के पार्षदों का चुनाव इस क्षेत्र के मतदाताओं द्वारा किया जाता है। ये अपने पद पर तीन वर्ष तक कार्य करते रहते हैं। इनमें से एक तिहाई प्रति वर्ष सेवा निवृत हो जाते हैं। ऐल्डरमेनों का चुनाव पार्षदों द्वारा उसी प्रकार किया जाता है जिस प्रकार काउन्टी परिषद में किया जाता है; अर्थात् उनको ऐसे व्यक्तियों में से चुना जाता है जो कि या तो पार्षद हैं अथवा पार्षद बनने की योग्यता रखते हैं। परिषद में मेयर (Mayor) का वही स्थान होता है जो कि काउन्टी परिषद में सभापति का। उसका चुनाव पार्षदों एवं एल्डरमेनों द्वारा वार्षिक सामान्य सभा में किया जाता है। उसका पार्षद होना आवश्यक तो नहीं है किन्तु उसमें पार्षद बनने की योग्यतायें अवश्य होनी चाहिए। मेयर परिषद की बैठकों की अध्यक्षता करता है किन्तु उसका मुख्य कार्य यह है कि वह अपने समाज का 'प्रथम नागरिक' होता है। इस दृष्टि से वह नागरिक गर्व की भावना रखता है। इसका महत्व उससे कहीं अधिक है जितना कि यह समझा जाता है। मेयर भी अपने कार्यकाल में शान्ति का न्यायधीश होता है।

गैर काउन्टी बारो परिषद की रचना—गैर-काउन्टी बारोज अथवा नगरपालिका बारोज का विकास मध्य युग की देन है जब कि ये काउन्टी व्यवस्था से पृथक एवं उस सरकार की व्यवस्था के नियन्त्रण से स्वतन्त्र शहरी केन्द्र बन गये। उनकी शक्तियां उनके संगठन के चार्टर में अंकित रहती हैं। गैर-काउन्टी बारो की परिषद में एक मेयर, उपमेयर, एल्डर मेन तथा पार्षद होते हैं जिनका निर्वाचन काउन्टी बारो में इन पदाधिकारियों के निर्वाचन से साम्य रखता है।

शहरी एवं देहाती जिला परिषदों की रचना—शहरी एवं देहाती जिला परिषदों की रचना १८९४ के स्थानीय सरकार अधिनियम द्वारा की गई। इन दोनों के बीच मुख्य अन्तर यह है कि शहरी जिले में शहरी क्षेत्र आता

London) । लन्दन शहर के नगर निगम का इतिहास, संविधान एवं शक्तियां इंगलैण्ड एवं वेल्स में अन्य किसी स्थानीय निकाय से पूर्णतः भिन्न है। यह शताब्दियों से लेकर आज तक तीन प्रकार के न्यायालयों के माध्यम से कार्य करता आरहा है। * ये हैं—

सामान्य परिषद का न्यायालय [The Court of Common Council]—इस न्यायालय का सभापति मेयर होता है। उसके अतिरिक्त इसमें २५ अन्य एल्डरमेन तथा १५६ सामान्य परिषद सदस्य होते हैं जो कि वार्षिक रूप से चुने जाते हैं। इनका चुनाव २५ वार्डों द्वारा भिन्न-भिन्न अनुपात में किया जाता है। लगभग १३००० मतदाता इसमें भाग लेते हैं। निर्वाचक का मत देने का अधिकार या तो उसके निवास-स्थान द्वारा तय किया जाता है अथवा उस क्षेत्र में व्यवसाय करने के आधार पर दिया जाता है। यह निगम का मुख्य कार्यपालिका एवं प्रशासकीय निकाय है। इसके कार्यों में लन्दन बारोज द्वारा किये जाने वाले सभी सामान्य कार्य आ जाते हैं। इसकी वित्तीय व्यवस्था का आधार रेट (Rates) होते हैं। ज्यों-ज्यों राजधानी शहर का विकास हुआ है त्यों-त्यों इसके कार्यों में विशेष वृद्धि होती चली गई है। यह एक व्यवस्थापिका सभा भी है तथा यह अपना संविधान स्वयं संशोधित करने का अधिकार रखती है। अपनी संस्थाओं एवं रीति-रिवाजों में भी इसके द्वारा परिवर्तन किया जा सकता है। इसके लिए एक विधेयक सामान्य परिषद में पढ़ा जायेगा तथा संसद की ही तरह से उसके प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय वाचन होंगे।

एल्डरमेन का न्यायालय [The Court of Aldermen]—एल्डरमेन के न्यायालय को इंगलैण्ड में नगरपालिका के द्वितीय सदन (Second Chamber) का एक मात्र जीता-जागता उदाहरण माना जाता है। इसमें २६ एल्डरमेन होते हैं जो कि प्रत्येक वार्ड द्वारा संसदीय रजिस्टर के आधार पर चुने जाते हैं। ये अपने पद पर जीवन भर तक कार्य करते रहते हैं। लार्ड मेयर भी इनके साथ मिल कर कार्य करता है। उसका मुख्य कर्त्तव्य यह है कि वह न्यायालय को आहूत करे और उसकी बैठकों की अध्यक्षता करे। उसकी उपस्थिति को अत्यन्त अनिवार्य माना जाता है। सामान्य परिषद के कार्य बढ़ जाने के कारण इस न्यायालय के कार्य अब कुछ कम हो गये हैं किन्तु अब भी यह स्वतन्त्रताओं, चुनावों, कुछ कम्पनियों एवं न्याय के प्रशासन के सम्बन्ध में कुछ अधिकार रखता है। इसके अतिरिक्त यह अपने पुराने अधिकार क्षेत्र की स्मृति के अवशेष के रूप में भी महत्वपूर्ण है। †

कामन हाल का न्यायालय [The Court of Common Hall]—इस न्यायालय में लार्ड मेयर, शैरिफ, एल्डरमेन तथा ८४ पुरानी कम्पनियों के फ्रीमेन तथा लिवरीमेन होते हैं जो कि मध्यकालीन व्यापारी संघों एवं

---

*The corporation of the city of London,
B.I.S., R. 4864/65, P. 3.

†R. to the corporation of London, Oxford University Press, 1950.

कलाकारों की संस्थाओं के अवशेष हैं। एक नगर कम्पनी को लिवरी कम्पनी [Livery Company] कहा जाता है। ये मौलिक रूप से तो किसी विशेष व्यापार के सदस्यों के निगम थे किन्तु आज जिस व्यापार का उनके साथ नाम जुड़ा हुआ है उससे वे बहुत कम या बिल्कुल ही सम्बन्ध नहीं रखते। लिवरीमेन वह होता है जो कि एक विशेष प्रकार की पोशाक या कम्पनी की वर्दी पहनता हो। कामन हाल का मुख्य कार्य यह है कि लार्ड मेयर के कार्यालय के लिए दो सदस्यों को नामजद करे। अन्तिम चयन तो एल्डरमेन के न्यायलय द्वारा ही किया जाता है। कामन हॉल द्वारा अन्य कुछ चयन भी किये जाते हैं; उदाहरण के लिए नगराधिपों, नगर चेम्बरलेन, ब्रिजमास्टरों [टावर पुल (Tower Bridge), ब्लेक फेयर पुल, लन्दन पुल, साउथ वार्क पुल], नगर आडीटर तथा निगम के अन्य अधिकारी गण।

स्थानीय सत्ताओं की निर्वाचन व्यवस्था
[The Electoral System of Local Authorities]

स्थानीय सत्ताओं का स्वरूप प्राय: निर्वाचित ही है। जे० एच० वारेन के कथनानुसार ब्रिटिश स्थानीय सरकार की इकाइयां एक अपवाद को छोड़कर निर्वाचित ही हैं। देहाती पेरिस में कुछ शक्तियां पेरिस मीटिंग के लिए संरक्षित रूप में रख ली गई हैं। यदि पेरिस परिषद भी स्थापित कर दी जाये तो इसके पास ये शक्तियां रहती हैं। जहाँ कहीं पेरिस परिषद नहीं होती वहां स्थानीय सरकार की शक्तियों का प्रयोग पूर्णत: पेरिस मीटिंग द्वारा ही किया जाता है। जहाँ पेरिस परिषद होती है वहाँ पर कुछ शक्तियों का प्रयोग पेरिस मीटिंग करती है तथा अन्य का प्रशासन पेरिस परिषद को सौंप दिया जाता है। इसको छोड़ कर अन्य जितनी भी स्थानीय सत्तायें हैं, अर्थात् काउन्टी परिषदें, काउन्टी बारो परिषदें, बारो परिषदें, शहरी जिला परिषदें एवं देहाती जिला परिषदें आदि-आदि, ये सभी निर्वाचित निकाय हैं।

पार्षदों के चुनाव के सम्बंध में स्थानीय सत्ताओं के बीच बहुत कम अन्तर पाया जाता है। सत्ता का रूप चाहे कुछ भी हो और क्षेत्र का आकार चाहे कुछ भी हो किन्तु उस पर प्राय: चुनाव से सम्बन्धित एक जैसे ही सिद्धान्त लागू किये जाते हैं। ग्रेट ब्रिटेन की स्थानीय सत्ताओं के चुनाव से सम्बंधित पूर्ण व्यवस्था प्राय: आधुनिक ही है। केवल लंदन नगर इसका अपवाद है जहाँ पर कि परम्परागत नियमों को अपनाया जाता है। अगस्त १९६५ तक स्थानीय सत्ता के निर्वाचन का कार्य १९४९ के जनता के प्रतिनिधित्व से सम्बंधित कानून के प्रावधानों के अनुसार ही किया जाता था। इसके अनुसार प्रत्येक उस व्यक्ति को स्थानीय सरकार के चुनाव में मत देने का अधिकार है जो कि २१ वर्ष या इससे अधिक की आयु वाला है, ब्रिटेन की प्रजा है अथवा आयरिश नागरिक है तथा जिस क्षेत्र का चुनाव हो रहा है उसके लिए वह एक मतदाता के रूप में पंजीकृत हो चुका है।

---

*"The organs of English Local Government are, with one exception, elected councils."

—*J. H. Warren*, The English Local Government System, George Allen and Unwin Ltd. London, P. 85

स्थानीय सरकार के चुनाव में प्रत्येक उस व्यक्ति को मतदाता बना लिया जाता है जो कि एक निश्चित समय तक उस क्षेत्र में रहा हो अथवा क्षेत्र में वह जमीन का स्वामी हो अथवा उसने उसे किराये पर ही ले रखा हो तथा उसका वार्षिक मूल्य १० पौण्ड प्रति वर्ष से कम न हो। एक क्षेत्र में किसी भी व्यक्ति को एक से अधिक बार पंजीकृत नहीं किया जा सकता। किन्तु यदि एक व्यक्ति एक स्थान पर निवास स्थान सम्बंधी योग्यतायें रखता है और दूसरे स्थान पर इसके अतिरिक्त योग्यतायें रखता है तो उसको दोनों ही स्थानों पर पंजीकृत किया जा सकता है। सभी मतदाताओं के नाम उस रजिस्टर पर लाने होते हैं जो कि पंजीकरण अधिकारी द्वारा साल में एक बार तैयार किये जाते हैं। इनकी नियुक्ति अधिनियम के आधीन ही होती है। यह कार्य प्राय: सत्ता के लिपिक ही करते हैं।

स्थानीय सरकार की परिषदों में पार्षद के उम्मीदवार के रूप में वह व्यक्ति खड़ा हो सकता है जो कि ब्रिटिश राष्ट्रीयता प्राप्त हो एवं २१ वर्ष या इससे ऊपर की उम्र का हो तथा या तो वह उस क्षेत्र के मतदाता रजिस्टर में पंजीकृत हो जहाँ कि वह उम्मीदवार होना चाहता है अथवा चुनाव से १२ माह पूर्व से ही वह लगातार उस क्षेत्र में रह रहा हो, पेरिस परिषदों से सम्बद्ध तीन मील की सीमा में रह रहा हो अथवा स्वयं की या किराये की जमीन रखता हो। किसी भी व्यक्ति को उस स्थानीय सत्ता के लिए नहीं चुना जा सकता जिसका कि वह कर्मचारी है। इसके अतिरिक्त अनेक कानूनी प्रतिबंध भी हैं जो कि यह व्यवस्था करते हैं कि अयोग्य व्यक्ति चुनाव के लिए प्रत्याशी ही न बन सकें। उदाहरण के लिए दिवालिया, अवैधानिक या भ्रष्ट चुनाव प्रक्रिया अपनाने का दोषी, पांच वर्ष पूर्व तक तीन माह की सजा पाया हुआ आदि व्यक्ति चुनाव लड़ने का अधिकार नहीं रखते।

शहरी क्षेत्रों में अधिकांश उम्मीदवार किसी भी राष्ट्रीय राजनैतिक दल के प्रतिनिधि के रूप में खड़े होते हैं, कुछ लोग उन संस्थाओं के सदस्यों के रूप में खड़े होते हैं जो कि किसी स्थानीय हित का प्रतिनिधित्व करते हैं। कुछ सदस्य स्वतन्त्र रूप से भी खड़े होते हैं। प्रत्येक उम्मीदवार को दो मतदाताओं द्वारा नामजद किया जाता है; एक उसका प्रस्ताव करता है और दूसरा उसका समर्थन करता है। देहाती जिला परिषदों एवं पेरिस परिषदों के चुनाव को छोड़ कर अन्य परिषदों के चुनाव में क्षेत्र के आठ अन्य मतदाताओं को भी स्वीकृति देनी होती है। यदि उम्मीदवारों की संख्या रिक्त स्थानों की संख्या से ज्यादा है तो मतदान द्वारा चयन किया जाता है।

स्थानीय सरकार के चुनावों में उम्मीदवार को कुछ जमा नहीं कराना पड़ता। वह अपने चुनाव प्रचार में २५ पौण्ड से अधिक खर्च नहीं कर सकता। यदि मतदाताओं की संख्या पांच सौ से अधिक है तो उम्मीदवार को २ डालर अधिक व्यय करने का और अधिकार प्राप्त हो जाता है। चुनाव सम्बन्धी व्यय का पूरा हिसाब चुनाव लिपिक के सम्मुख रखना होता है। परिणाम घोषित होने के ३५ दिन के भीतर-भीतर यह करना होता है।

मतदान गुप्त मत-पत्र द्वारा किया जाता है। मतदान सम्बन्धित रिटर्निंग अधिकारी द्वारा मतदान केन्द्रों पर प्रबन्धित किया जाता है। यह

कार्य एक अध्यक्ष की देखरेख में होता है जो कि इसी कार्य के लिए नियुक्त किया जाता है। काउन्टी परिषद के सदस्यों के चुनाव के लिए रिटर्निङ्ग अधिकारी का कार्य इस पद पर काउन्टी परिषद द्वारा नियुक्त अधिकारी द्वारा किया जाता है। मतदाता व्यक्ति स्वयं ही आकर मतदान करते हैं यद्यपि यह व्यवस्था की गई है कि कर्मचारी मतदाता, विशेषकर सशस्त्र सेनाओं के सदस्य, समुद्रपार क्राउन द्वारा नियुक्त सेवक तथा उनकी पत्नियां, आदि यदि साथ ही रह रही हों तो प्रोक्सी द्वारा मतदान कर सकते हैं। यदि कोई मतदाता अपनी बीमारी के कारण अथवा अपने कार्य की प्रकृति के कारण स्वयं आ सकने में असमर्थ हो तो वह डाक द्वारा भी मतदान कर सकता है। प्रत्येक मतदाता को अपने क्षेत्र के चुनाव में प्रत्येक सीट के लिए एक मत देने का अधिकार होता है। प्रत्येक उम्मीदवार को वह केवल एक ही मत दे सकता है।

स्थानीय सत्ताओं का चुनाव करते समय पूरे क्षेत्र को कई भागों में बांट दिया जाता है। स्थानीय सरकार का जब चुनाव किया जाता है तो प्रायः प्रत्येक बारो को वार्डों में विभाजित कर दिया जाता है। लन्दन बारो को छोड़ कर अन्य सभी बारोज के प्रत्येक वार्ड से तीन पार्षद लिए जाते हैं। ये तीन से अधिक भी हो सकते हैं। शहरी जिले को चुनाव के लिए वार्डों में विभाजित किया जाये अथवा उसको एक इकाई के रूप में ही छोड़ दिया जाये इस बात का निर्णय काउन्टी परिषद द्वारा किया जायेगा जो कि इस सम्बन्ध में अन्तिम सत्ता होती है। देहाती जिलों में प्रत्येक पेरिश या पेरिशों के समूहों के लिए अलग से चुनाव किये जाते हैं। प्रत्येक पेरिश के लिए देहाती जिला पार्षदों की संख्या को काउन्टी परिषदों द्वारा निश्चित किया जा सकता है या बदला जा सकता है। वह पेरिशों को एक साथ भी मिला सकती है अथवा उनको वार्डों में भी बांट सकती है। अधिकांश पेरिश परिषदें पूर्ण रूप में निर्वाचित की जाती हैं किन्तु वार्ड भी बनाये जा सकते हैं और कभी कभी बना भी दिये जाते हैं। काउन्टी परिषद के चुनावों में वार्ड नहीं बनाये जाते। इन चुनावों को एक-सदस्यीय मतदाता सम्भागों के आधार पर किया जाता है तथा ये गृह सचिव द्वारा नियमित किये जाते हैं। विस्तृत लन्दन परिषद (Greater London Council) के चुनाव जब सर्वप्रथम हुए थे तो प्रत्येक लन्दन बारो को चुनाव क्षेत्र बना दिया गया जिससे कि दो, तीन या चार पार्षद चुने जाते थे। जब लन्दन महान् (Greater London) में संसदीय मतदान क्षेत्रों का परिवर्तन किया गया तो ये ही उसके मतदान क्षेत्र बन गये। प्रत्येक क्षेत्र से महान लन्दन परिषद के लिए एक पार्षद लिया जाता था।

मतदान के लिए एक दिन निश्चित कर दिया जाता है। मतदाता, मतदान-केन्द्र पर जाकर अपना मत डालते हैं। जब मतदान बन्द हो जाता है तो मत-पेटियों को वहां ले जाया जाता है जहां पर कि इनको गिनना हो। यह स्थान प्रायः परिषद कार्यालय ही होता है। ज्यों ही मतदान समाप्त होता है उसके बाद जितना जल्दी से जल्दी सम्भव हो सके मतों को गिना जाता है। रिटर्निंग अधिकारी, उम्मीदवार एवं उसके प्रतिनिधि की उप-

स्थिति में मत पेटियों को खोलता है। ये मतगणना प्रतिनिधि, उम्मीदवारों द्वारा नियुक्त किये जाते हैं तथा उनका मुख्य कार्य यह देखना होता है कि जो लोग मतगणना कर रहे हैं वे यह कार्य इमानदारी केसाथ करें। यदि किसी मत पत्र पर मत साफ रूप में तथा बिना गलती किये हुए नहीं डाला गया है तो उसे रिर्टनिंग अधिकारी के निर्णय के लिए रख लिया जाता है। वही इस बात को तय करता है कि मतदाता किस को मत देना चाहता होगा। जब पूरी मतगणना करली जाती है तो रिटर्निंग अधिकारी द्वारा मतदान का परिणाम घोषित कर दिया जाता है।

आम चुनावों एवं स्थानीय चुनावों का यदि तुलनात्मक अध्ययन किया जाये तो ज्ञात होता है कि आम चुनावों में मतदान प्रायः ८०% रहता है जब कि स्थानीय चुनावों में यह संख्या बहुत थोड़ी ही रहती है। उत्तरी क्षेत्रों में भी जो कि अधिक मतदान वाले क्षेत्र माने जाते हैं, मतदान की मात्रा कठिनाई से ही ५०% तक पहुँच पाती है। काउन्टी में मतदान का औसत ३०% रहता है। सामान्य रूप से बारोज तथा शहरी जिलों की जनता मतदान में अधिक रुचि लेती है। यह उदासीनता केवल मतदाताओं तक ही सीमित नहीं रहती वरन् यह निर्वाचन के उम्मीदवारों पर भी प्रभाव डालता है। अनेक सीटें ऐसी बच जाती हैं जिनके लिए चुनाव ही नहीं लड़ा जाता। स्थानीय राजनैतिक दलों की एक मुख्य समस्या यह होती है कि वे लोगों को चुनाव लड़ने को किस प्रकार तैयार करें। स्थानीय जनता में मतदान के प्रति रुचि के अभाव का एक कारण तो यह बताया जाता है कि स्थानीय जनता परिषदों द्वारा किये जाने वाले कार्यों एवं सम्पन्न की जाने वाली सेवाओं से पूरी तरह संतुष्ट रहती है अतः वह मतदान करने की आवश्यकता ही महसूस नहीं करतीकिन्तु यह तर्क अधिक प्रभावपूर्ण प्रतीत नहीं होता। यद्यपि इसमें भी सत्यता का कुछ अंश है किन्तु इतना नहीं जितना कि कभी-कभी सोच लिया जाता है। इस उदासीनता का एक कारण यह हो सकता है कि स्थानीय निकायों का कार्य कुछ ऐसी प्रकृति का होता है जिसमें कि स्थानीय अभिरुचि जागृत ही न हो सके। स्थानीय सरकार का अर्थ कभी-कभी तो सप्ताह में एक बार कूड़ा-करकट के स्थानों को साफ कर देने मात्र से ही लगाया जाता है। ऐसे अवसर बहुत ही कम आते हैं जब कि स्थानीय सरकार को स्थानीय जनता के लिए जीवन का एक नया तरीका देने वाला माना जाये। इस सम्बन्ध में स्थानीय सत्तायें भी कम दोष की पात्र नहीं हैं। केवल कुछ ही सत्तायें जन-सम्पर्क के कार्य में रुचि लेती हैं। यदि कोई नागरिक गलती से या अवसरवश अपनी स्थानीय परिषद की किसी बैठक में शामिल भी हो जाये तो वह उसमें दुबारा जाने का प्रोत्साहन बहुत कम पा सकेगा।

वर्तमान प्रवृति के अनुसार छोटी स्थानीय सत्ता के कार्य बड़ी स्थानीय सत्ता को और बड़ी स्थानीय सत्ता के कार्य स्थानीय सरकार के बाहर की सत्ताओं को सौंप दिये जाते हैं। इस प्रवृति ने स्थानीय जनता पर कुछ अच्छा प्रभाव नहीं डाला। वह यह समझने लगी है कि स्थानीय सरकार की सत्तायें सम्भवतः महत्व ही नहीं रखती वरन् उनके पतन की प्रक्रिया का और अर्थ

ही क्या होता है। स्थानीय सरकार के कार्यों की ओर प्रेस द्वारा भी पर्याप्त ध्यान नहीं दिया जाता। संसद के स्थानीय सदस्य की क्रियायें प्राय: खबरों का विषय होती हैं तथा लोगों को उसकी स्थानीय स्थिति के बारे में गलत बताया जाता है। यही कारण है कि स्थानीय जनता अपनी उन समस्याओं के बारे में भी संसद सदस्य को ही लिखती है जो कि उसके अधिकार क्षेत्र में नहीं आतीं। संसद सदस्य को अपने निर्वाचन क्षेत्र से कई एक पत्र गृह निर्माण के सम्बन्ध में प्राप्त होते हैं। यह उसका कार्य नहीं है किन्तु यह स्थानीय सत्ता का कार्य है तथा स्थानीय पार्षद द्वारा सम्पन्न किया जा सकता है जिसे कि इस प्रकार अवहेलना का पात्र बनाया जाता है। इस समस्या को सुलझाने के लिए एक सुझाव यह प्रस्तुत किया जाता है कि परिषदें अपने प्रचार एवं प्रकाशन के साधनों का विकास करें तथा जनता को स्थानीय एवं केन्द्रीय सरकार के कार्यों का प्रशिक्षण प्रदान किया जाये।

स्थानीय सत्ताओं के पदाधिकारी व्यक्तित्व
[The Official Personalities of Local Authorities]

स्थानीय सत्ताओं का कार्य जिन पदाधिकारियों के द्वारा सम्पन्न किया जाता है उनका व्यक्तित्व भी अपने आप में अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। उनकी योग्यता एवं कौशल पर ही इन सत्ताओं का सफल संचालन निर्भर करता है। ये अधिकारी निर्वाचित सदस्य भी हो सकते हैं तथा उच्च सत्ताओं अथवा स्वयं स्थानीय सत्ताओं द्वारा नियुक्त उच्च कार्यकर्ता भी हो सकते हैं। विभिन्न स्थानीय सत्ताओं में निर्वाचित एवं अनिर्वाचित अनेक प्रकार के सदस्य होते हैं। इनमें मुख्य रूप से उल्लेखनीय पार्षद, एल्डरमेन, मेयर, सभापति तथा अन्य कानूनी अधिकारी हैं।

स्थानीय सरकार की सत्ताओं में मुख्य 'परिषद' को माना जा सकता है जिसके द्वारा प्रशासनिक, कार्यपालिका सम्बन्धी एवं व्यवस्थापन सम्बन्धी अधिकांश कार्य सम्पन्न किये जाते हैं। स्थानीय स्तर पर अपने क्षेत्र में यही सर्वोच्च सत्ता होती है। परिषदों द्वारा विभिन्न समितियां नियुक्त की जाती हैं। ब्रिटिश स्थानीय सरकार में इन स्थानीय परिषदों की समितियों का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है तथा इनके द्वारा परिषद के प्रमुख दायित्वों को सम्पन्न किया जाता है। परिषदों को अपने कार्य करने के लिए संगठन बनाने की पूरी-पूरी स्वतन्त्रता रहती है। इसके लिए वे समितियों के अतिरिक्त अन्य अभिकरणों एवं संस्थाओं की नियुक्ति भी करती हैं। यहां एक बात उल्लेखनीय है वह यह कि ब्रिटिश स्थानीय सरकार की व्यवस्था में अलग से कोई कार्यपालिका निकाय नहीं होता जिसकी अपनी पृथक शक्तियां हों तथा जो कि परिषद में से ही या उसके बाहर से नियुक्त हो कर उसके साथ–साथ कार्य करे। यहां कार्यपालिका सम्बन्धी दायित्व जिस निकाय द्वारा सम्पन्न किये जाते हैं उसके लिए अन्तिम रूप से परिषद ही उत्तरदायी होती है।

स्थानीय सत्ता को अपना कार्य सम्पन्न करने के लिए तथा सम्पत्ति का उचित रूप से प्रबन्ध करने के लिए एक निगम (Corporation) का रूप दे दिया जाता है। इस प्रकार यह एक व्यक्ति का व्यक्तित्व धारण कर

लेती है जिसके जीवन में निरन्तरता रहती है, एकरूपता रहती है तथा जिसके निर्मायक सेवीवर्ग में परिवर्तन करना जरूरी नहीं होता। यह एक व्यक्ति के रूप में सम्पत्ति का स्वामित्व करती है। यह समझौते या ठेके कर सकती है तथा अन्य ऐसे कार्य कर सकती है जो कि कानून द्वारा आवश्यक समझे जायें। निगम के रूप में इसे एक वैधानिक व्यक्तित्व प्राप्त हो जाता है। बारोज की स्थिति ऐतिहासिक दृष्टि से कुछ भिन्न है। शाही चार्टर द्वारा जब बारो की रचना की जाती है तो मेयर, एल्डरमैन, नागरिकों या वर्गसीज (Durgesses) आदि को नामांकित किया जाता है और वे मिल कर निगम की रचना करते हैं। कानून द्वारा यह व्यवस्था की जाती है कि नगर निगमों को जो शक्तियां सौंपी गयी हैं उनका प्रयोग बारो की परिषद द्वारा किया जायेगा, जो कि प्रत्यक्ष रूप में इसे सौंपी गई शक्तियों का भी प्रयोग करेगी। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि स्थानीय सत्ता का रूप चाहे कुछ भी हो इसकी मुख्य शक्तियां परिषद में निहित रहती हैं। यह इन कानूनी अधिकारों, शक्तियों एवं कर्तव्यों का निर्वाह करती है। स्थानीय सत्ताएं निगम होती हैं इसका अर्थ यह है कि निगमों से सम्बन्धित प्रत्येक कानून स्थानीय सत्ताओं पर लागू होगा, जब तक कि इससे भिन्न कोई अन्य व्यवस्था न करदी जाय। इस प्रकार से स्थानीय सत्ताओं पर निगमों की सभी सुपरिचित विशेषताएं लागू होती हैं अर्थात् ये स्थायी होती हैं तथा अनिश्चितकाल तक कार्य करती रहती हैं। एक पुरानी कहावत के अनुसार न तो उनके कोई शरीर होता है जिसे नष्ट किया जा सके और न ही आत्मा होती है जिसे बुरा-भला कहा जा सके। वे अपनी प्रकृति के अनुसार वे कार्य नहीं कर सकती जो कि एक भौतिक शरीर के लिए आवश्यक समझे जाते हैं अर्थात् न वे बन्दी बनायी जा सकती हैं, न उन्हें फांसी चढ़ाई जा सकती है और न ही इस प्रकार के अन्य कार्य। इनका प्रतीक एक सामान्य मोहर होती है जो कि निगम के अत्यधिक औपचारिक अधिनियमों को सत्तायुक्त करने के लिए काम में ली जाती है। स्थानीय सत्ताओं के सम्बन्ध में जो कानून है उसका क्षेत्र इतना व्यापक है कि उसके द्वारा अन्य निगमों से सम्बन्धित कानूनों को अपनाने के लिए बहुत कम स्थान छोड़ा जाता है। स्थानीय सत्ताओं से सम्बन्धित व्यवस्थापन इतना अधिक हो सका है कि प्राय: प्रत्येक बात को कानून द्वारा ही स्पष्ट कर दिया गया है और जब कभी हम इनकी शक्तियों, कर्तव्यों एवं अधिकारों के बारे में जानना चाहें तो हमको इन कानूनों का ही अध्ययन करना होगा।

पारषद [Councillors]—परिषदों की बनावट एवं संगठन, स्थानीय सत्ता के प्रकार के अनुसार भिन्न-भिन्न होता है किन्तु उन सभी में एक सामान्य बात यह होती है कि वे तीन वर्ष के लिए चुने गये पारषदों की निकाय होती हैं। पारषदों की सबसे महत्वपूर्ण योग्यता यह मानी जाती है कि इस पद को प्राप्त करने वाला व्यक्ति क्षेत्र का स्थानीय निवासी हो। एक सामान्य प्रावधान के अनुसार वह पारषद के रूप में उम्मीदवार होने का तभी अधिकारी माना जायेगा जब कि वह उस क्षेत्र का मतदाता हो। एक बारो के किसी भी वार्ड का मतदाता उसी बारो के किसी अन्य वार्ड से

उम्मीदवार बन सकता है। यह भी हो सकता है कि वह एक निर्वाचन सम्भाग में रहता हो और दूसरे निर्वाचन सम्भाग में जाकर चुनाव लड़े किन्तु यह नहीं हो सकता कि वह एक काउन्टी को छोड़ कर दूसरी काउन्टी में चला जाये। इंगलैण्ड के कानून के अनुसार कोई भी व्यक्ति उस स्थानीय सत्ता का सदस्य हो सकता है जिसमें कि वह सम्पत्ति का स्वामित्व करता हो अथवा उस क्षेत्र में वह बारह महीने से रह रहा है। निवास के कारण से अपना नाम स्थानीय मत-दाताओं की सूची में लिखा लेना चाहिये। काउन्टीज, राजधानी बारोज और देहाती पेरिसों में पारषद हर तीसरे वर्ष अपने पद से हट जाते हैं, किन्तु बारोज में ये पारषद हर तीसरे वर्ष एक साथ नहीं हटते वरन् इनमें से एक तिहाई प्रत्येक वर्ष हट जाते हैं और इस प्रकार मतदान तीसरे वर्ष न हो कर प्रतिवर्ष किया जाता है।

शहरी एवं देहाती जिलों में भी व्यवस्था बारोज जैसी ही होती है किन्तु वे इस व्यवस्था को अपने दो तिहाई बहुमत से तथा काउन्टी परिषद की स्वीकृति से बदल सकती हैं। इन दोनों ही व्यवस्थाओं के अपने-अपने लाभ हैं। जब निर्वाचन प्रतिवर्ष किया जाता है तो स्थानीय सत्ता बदलती हुई नयी आवश्यकताओं के अनुरूप अपने आपको ढाल पाती है। इसके अतिरिक्त इसमें प्रतिवर्ष लगातार कुछ अनुभवी पारषदों का एक केन्द्र बन जाता है किन्तु यह व्यवस्था कभी कभी नुकसानदायक भी प्रतीत होती है क्योंकि इसके द्वारा परिषद के कार्यों में देर होने का भय रहता है। काउन्टीज को परिषदों के सम्बन्ध में कानून ने कोई विकल्प नहीं छोड़ा है। वहां यह सम्भव भी नहीं है कि प्रतिवर्ष चुनाव कराये जाएं। बारोज में वार्ड के रूप में चुनाव सम्बन्धी विभाजन किया जाता है। यह व्यवस्था की जाती है कि एक वार्ड में से लिये जाने वाले तीन पारषदों में से प्रतिवर्ष एक को सेवा निवृत्त कर दिया जाय, किन्तु काउन्टी परिषद में ऐसा नहीं किया जा सकता क्योंकि वहां चुनाव क्षेत्र को इतना बड़ा रखा जाता है कि यदि एक क्षेत्र से तीन सदस्य लिये गये तो काउन्टी परिषद की संख्या प्रबन्ध किये जाने योग्य न रहेगी। विभिन्न स्थानीय सत्ताओं के कार्य का वर्ष समाप्त होने की तिथियां भी अलग अलग हैं।

१९४९ से पूर्व एक बारो का संवैधानिक वर्ष १ नवम्बर से प्रारम्भ होता था तथा निर्वाचन १ नवम्बर को किये जाते थे। जिलों का संवैधानिक वर्ष १५ अप्रेल से और काउन्टीज का १६ मार्च से प्रारम्भ होता है किन्तु १९४८ के जन प्रतिनिधित्व अधिनियम ने सभी सत्ताओं के लिए चुनाव तथा वार्षिक बैठकों के हेतु एक ही मौसम निर्धारित कर दिया है। पेरिस परिषद का चुनाव हाथ उठाकर किया जाता था। पेरिस की वार्षिक बैठक में या तो इस तरीके से अथवा मतदान द्वारा निर्वाचन किया जाता था किन्तु १९४८ के जन-प्रतिनिधित्व अधिनियम ने इस व्यवस्था को समाप्त कर दिया और अब सभी स्थानीय सत्ताओं के निर्वाचन गुप्त मत पत्र द्वारा किये जाते हैं।

यद्यपि पारषदों की योग्यताएं एवं अयोग्यताएं कानून तथा व्यवहार द्वारा निर्धारित करदी गई हैं किन्तु फिर भी ये इतना महत्व नहीं रखतीं। मुख्य तथ्य यह है कि उम्मीदवार का मतदाताओं में कैसा सम्मान है,

वे परिषद और इसकी समितियों में क्या कार्य करेंगे तथा उन्हें उनके श्रम के लिए भुगतान या मुआवजा दिया जाय अथवा नहीं, आदि। पार्षदों के बारे में सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि वे प्रतिनिधि होते हैं, इसका अर्थ यह है कि वे डेलीगेट (Deligate) अथवा एजेन्ट (Agent) नहीं होते। मि० जैकसन (Jackson) के कथनानुसार स्थानीय सरकार के पारषद किसी भी निर्वाचित सदस्यों वाले निकाय की भांति प्रतिनिधि प्रजातंत्र के क्षेत्र में आते हैं। जब वह एक परिषद की बैठक में जाता है तो वह मतदाताओं को कोई सूचना या निर्देश दे कर नहीं जाता अथवा उस बहुमत से पूछ कर नहीं जाता जिन्होंने कि उसको सफल बनाया है। यह सच है कि चुनाव लड़ते समय व व्यक्तिगत रूप से अथवा अपने राजनैतिक दल की ओर से अनेक वायदे करता है। यदि निर्वाचन से पूर्व किये गये वायदों को एक सदस्य पूरा करता है तो यह उसकी सज्जनता मानी जायेगी किन्तु ऐसा करने के लिए वह बाध्य नहीं है। सिद्धान्त के अनुसार प्रतिनिधियों को उनके स्वयं के निर्णयों का प्रयोग करने के लिए चुना जाता है तथा वे सभी परिस्थितियों में अपना अधिक से अधिक योगदान करते हैं। यदि परिस्थितियां समान रहें तो प्रतिनिधि को वे ही कार्य करने चाहिए जिनको पूरा करने के लिए उसने चुनाव से पूर्व वायदा किया है। कई बार ऐसा हो जाता है कि युद्ध की परिस्थितियां उत्पन्न हो जाने पर विकास सम्बन्धी सभी योजनाओं को रोकना पड़ता है और सारी शक्तियां, हथियार एवं अन्य युद्ध सामग्रियों के निर्माण में लगानी होती हैं। किन्तु इस सबका अर्थ यह नहीं है कि प्रतिनिधियों का मतदाताओं के प्रति कोई कर्तव्य ही नहीं होता। वे सैद्धान्तिक रूप से सम्पूर्ण समाज के प्रति उत्तरदायी हैं तथा उन्हें अपने किये हुए वायदों पर टिकना होता है। यदि मतदाता उस तरीके को पसन्द न करें जिसके द्वारा कि एक उम्मीदवार द्वारा कार्य किया जा रहा है तो वे अगले चुनाव तक प्रतीक्षा कर सकते हैं और चुनाव आने पर उसके स्थान पर वे किसी अन्य को चुन सकते हैं। मतदाताओं को अपना उम्मीदवार वापस बुलाने का अधिकार नहीं होता।

इस प्रकार प्रत्येक प्रतिनिधि एक निर्वाचित सदस्य होता है और अपने निर्वाचन क्षेत्र के प्रत्येक व्यक्ति का वह प्रतिनिधित्व करता है तथा उनके प्रति उसके कुछ कर्तव्य होते हैं। इसका एक स्वाभाविक परिणाम यह है कि उम्मीदवार को अपने मतदाताओं से समय-समय पर पूछताछ करते रहना चाहिये, उनकी समस्याओं के बारे में जानकारी रखनी चाहिये और आवश्यकता पड़ने पर उन्हें पूरी सहायता देनी चाहिये। वह प्रतिनिधि अपने पूरे क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करता है, इसलिए उसे उन लोगों की आवश्यकताओं का भी ध्यान रखना होता है जिन्होंने कि उसे मत नहीं दिया था।

एक पारषद को वेतन दिया जाय अथवा नहीं, इस प्रश्न का निर्णय उसके कार्यों के आधार पर ही किया जा सकता है। वैसे इङ्गलैण्ड की परम्परा के अनुसार पारषद को उसकी सेवाओं के लिए कोई वेतन नहीं दिया जाना चाहिये किन्तु अब इस सम्बन्ध में कुछ परिवर्तन हो गये हैं। ये परि-

वर्तन कैसे आये, इसका एक लम्बा इतिहास है। शताब्दियों पर्व स्थानीय सरकार की महत्वपूर्ण इकाई पेरिस थी। अपने जन्म के समय यह एक धार्मिक इकाई थी किन्तु कालान्तर में पेरिस नागरिक प्रशासन की एक इकाई बन गई तथा इसने अनेक कानूनी कर्तव्य सम्भाल लिये; उदाहरण के लिए सड़कों की रचना एवं गरीबों को राहत देना आदि कार्य। ये कर्तव्य पेरिस के अधिकारियों द्वारा सम्पन्न किये जाते थे। जो व्यक्ति इन पदों पर कार्य करते थे उनको किसी प्रकार का वेतन नहीं दिया जाता था। इन पदो के लिए जो व्यक्ति निर्वाचित किये जाते थे वे एक वर्ष तक कार्य करते थे। क्रमानुसार इन पदों पर क्षेत्र के सम्पन्न एवं उत्तरदायी निवासियों को रखा जाता था। जहां कहीं कार्य करने की आवश्यकता होती थी वहां सामूहिक श्रम द्वारा काम चलाया जाता था। पेरिस का प्रत्येक निवासी अपनी सेवाएं प्रदान करने के लिए कानूनी रूप से बाध्य था। पेरिस की इस व्यवस्था के ऊपर शांति के न्यायाधीशों की संस्था होती थी जिसमें क्राउन द्वारा नियुक्त योग्य व्यक्ति होते थे। उनके कार्य प्रशासकीय एवं न्यायिक, संयुक्त प्रकृति के होते थे। उन्हें अपनी मुख्य बैठकों में उपस्थित होनें के लिए कुछ धन देने की व्यवस्था थी किन्तु इसे प्रायः कोई लेता नहीं था और वे स्वेच्छापूर्वक कार्य करते थे। इस व्यवस्था में यदि किसी सड़क को बनवाना है तो इस काम के लिए नियुक्त निरीक्षक समय निश्चित कर देगा और स्थानीय निवासी आकर इस कार्य को सम्पन्न करेंगे। काउन्टी के उस भाग का शांति का न्यायाधीश इस बात की जांच रखेगा कि कार्य भली प्रकार सम्पन्न किया जाय; यदि ऐसा नहीं किया जा रहा है तो वह अपने साथी न्यायाधीशों से शिकायत कर सकता है। कार्य को सम्पन्न कराने के लिए उन्हें यह शक्ति प्राप्त थी कि कर्तव्यों की अवहेलना करने वाली स्थानीय जनता पर वे जुर्माना करदें।

कार्य कराने की उक्त व्यवस्था देहाती इलाकों में उस समय तक चलती रही जब तक कि वे समय के परिवर्तन के साथ-साथ नवीन विचारों से प्रभावित नहीं हुए। किन्तु औद्योगीकरण के साथ साथ इङ्गलैण्ड में लगातार शहरों का विकास होने लगा और इसके साथ ही अवैतनिक बाध्यकारी सेवा तथा सामाजिक श्रम की व्यवस्था अनुपयुक्त बन गई। शहरों में जहां पर कि फैक्ट्रियों में काम करने वाले लोग रहते हैं और ऐसी परिस्थितियों वाले अन्य कर्मचारी रहते हैं वहां सामाजिक श्रम सम्भव नहीं होता। इसके अतिरिक्त कार्य का क्षेत्र इतना बढ़ गया है कि उसे कुशल रूप से संपादित करने के लिए सवैतनिक एवं उचित योग्यता प्राप्त अधिकारियों का होना परमावश्यक है। वर्तमान समाज को अपनी सुविधाओं के लिए एवं बिमारियों से बचने के लिए जिन सेवाओं की आवश्यकता है वे सेवाएं तभी प्रदान की जा सकती हैं जब कि नागरिक अभियंताओं एवं मजदूरों को लगातार सेवा में व्यस्त रखा जाय। यदि अवैतनिक कार्यकर्ताओं के स्थान पर सवैतनिक कार्यकर्ता रखे जायेंगे तो यह जरूरी है कि उन पर नियंत्रण रखने के तरीकों को सशक्त बनाया जाय।

वर्तमान समय में यह मांग काफी बढ़ती जा रही है कि पार्षदों को वेतन दिया जाना चाहिये। इसके समर्थन में दो प्रकार के तर्क प्रस्तुत किये जाते हैं प्रथम यह कि जब तक किसी प्रकार का पेमेन्ट (Payment) नहीं किया जायेगा तब तक कोई भी व्यक्ति पार्षद नहीं बनना चाहेगा क्योंकि परिषद का सदस्य बनने के बाद व्यक्ति को आने जाने में काफी खर्चा करना पड़ेगा और उसे बैठकों में उपस्थित होने के लिए अपना समय भी लगाना होगा। एक दूसरा तर्क यह है कि हमें यह आशा नहीं करनी चाहिए कि कोई व्यक्ति बिना किसी मतलब के कोई कार्य करेगा। यह तर्क किया जाता है कि सार्वजनिक कार्य भी एक प्रकार से कार्य ही हैं और यदि इस कार्य को उचित रूप से सम्पन्न कराना है तो इसके लिए उचित दाम दिये जाने चाहिऐ। प्रोफेसर लास्की का मत है कि स्थानीय सरकार की सेवाओं को भी पूरे समय की तथा सवैतनिक (Full Time and Paid) बना दिया जाये। एक सदस्य के सम्मुख जो विषय निर्णय के लिए आते हैं उन पर विचार करने के लिए पर्याप्त बुद्धि एवं समय लगाने की आवश्यकता है। अन्य कार्यों में उलझा हुआ व्यक्ति यह सब नहीं कर पायेगा। यदि स्थानीय सरकार के कार्य को अवैतनिक बना दिया गया तो धनवान वर्ग के लोग इन संस्थाओं में आजायेंगे और उनका कार्य लोगों की आवश्यकताओं से प्रभावित नहीं होगा वरन् वह स्थानीय सरकार के कार्य को अधिकाधिक सस्ता बनाने के लिए संचालित किया जायेगा। लास्की के शब्दों में वे लोग योग्यतापूर्ण नाली व्यवस्था प्रदान कर सकते हैं किन्तु अपर्याप्त शिक्षा देगें, अच्छी सड़कें दे सकते हैं किन्तु पुस्तकालय नहीं देगें।† वे उन मनोवैज्ञानिक तत्वों को महत्व नहीं देंगे जिनसे कि गरीबों का मस्तिष्क प्रभावित होता है।

पार्षद को कुछ दिया जाय अथवा नहीं दिया जाय, इस प्रश्न पर विचार करने से पूर्व उन योग्यताओं को देखना उपयुक्त रहेगा जो कि परिषद के सदस्यों में होनी चाहिए। एक पार्षद से यह आशा नहीं की जाती है कि वह उन विषयों में विशेषज्ञ होगा जिनसे कि परिषद सम्बन्ध रखती है। विशेषज्ञतापूर्ण ज्ञान एवं प्रशासन का अनुभव उन सेवाओं द्वारा प्रदान किया जाता है जो कि वैतनिक स्टाफ में आती हैं। निर्वाचित सदस्य का मुख्य उद्देश्य जनता का प्रतिनिधित्व करना होता है जो जनमत का द्योतक है। उसका दृष्टिकोण एक गैर-विशेषज्ञ का दृष्टिकोण होता है। वह यह देखता है कि किसी कार्य के प्रति साधारण जनता की प्रतिक्रिया क्या है, प्रशासक नहीं बल्कि प्रशासित लोग उन कार्यों के बारे में क्या सोचते हैं? वे सवैतनिक स्टाफ के साथ मिलकर कार्य करते हैं ताकि कार्यों को भली प्रकार से सम्पन्न कर सकें।

एक बार पार्षद के उत्तरदायित्वों को सही रूप से निभाने के लिए किसी विशेष प्रकार की शिक्षा या प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं होती, एक अच्छे प्रतिनिधि के गुण जीवन के किसी भी क्षेत्र में रहकर प्राप्त किये जा सकते

---

†"They will provide excellent drainage but in adequate education, good roads but poor libraries."
—*Harold J Laski*, A Grammar of Politics, P. 416

हैं। जब हम परिषद के सदस्यों को उनके द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाओं के लिए भुगतान करना चाहते हैं उस समय यह भी देखना होगा कि यह भुगतान किस आधार पर और कितना किया जाय। यदि प्रत्येक सदस्य को उसकी सेवाओं के लिए उतना धन दिया जाय जितना कि वह अपने व्यक्तिगत जीवन में प्राप्त करता है तो विभिन्न प्रकार के पार्षदों के आधार पर अनेक विभिन्नताएं हो जायेंगी और उस परिषद के पास में स्थानीय कोष पर्याप्त रहेगा जो कि पूरी तरह से रोजनदारी पाने वाले मजदूरों द्वारा गठित है। इस मान्यता को अपनाने पर एक ही कार्य के लिए दिये जाने वाले धन की मात्रा में अत्यंत परिवर्तन होगा। असल में वेतन की एक मापक दर निश्चित करना होगी किन्तु यह किस आधार पर तय की जाय। वेतन निश्चित करने का एक सामान्य तरीका यह होता है कि एक पद के लिए कम से कम वेतन निर्धारित किया जाय जो कि उस पद पर सही योग्यता वाले व्यक्तियों को आकर्षित कर सके। वेतन को निश्चित करने का यह तरीका भी कार्य नहीं करेगा क्योंकि ऐसा कोई निश्चित बाजार नहीं होता जहाँ कि ऐसी विशेश योग्यता प्राप्त व्यक्ति मिल सके।

एक व्यक्ति जो कि वास्तव में प्रथम श्रेणी का पार्षद है वह किसी अन्य परिषद का सदस्य होने के लिए प्रार्थना नहीं करेगा क्योंकि यह एक ऐसी क्रिया है जो कि किसी व्यापार या व्यवसाय से भिन्न है। यदि परिषद के सदस्य का बैठक के अनुसार या मासिक अथवा वार्षिक रूप से वेतन निश्चित कर दिया जाये तो यह हो सकता है कि कुछ लोग पार्षद बनने के लिए आकर्षित हों, दूसरे लोग इसे साधारण वेतन और अन्य लोग इसे आवश्यकता से भी कम समझें। यदि इस प्रकार वेतन निश्चित कर दिया जाय तो पार्षद के पद पर वे आकर्षित हो पायेंगे जो कि बहुत कम वेतन पाने वाले मजदूर या कर्मचारी लोग होते हैं किन्तु मध्यम वर्ग के अथवा धनवान लोग इनकी तरफ आकर्षित नहीं हो पायेंगे। इस प्रकार पार्षद का पद एक ऐसा पद हो जायेगा जिसे पाने वाले लोग वे होंगे जो कि अपनी जीविका के साधनों की तलाश में हैं। उनमें विशेष योग्यताएं या प्रशिक्षण होगा अथवा नहीं होगा यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता। चुनाव में जीतना उतना ही महत्वपूर्ण बन जायेगा जितना कि व्यवसाय पाना। जब कि चुनाव सिद्धान्तों के आधार पर लड़ा जाना चाहिए, चुनाव उम्मीदवार के व्यक्तिगत व्यवसाय का विषय बन जायेगा। वर्तमान में व्यवहार यह है कि एक पार्षद यात्रा, निवास एवं अन्य खर्च के लिए भत्ते के अलावा आधे दिन के लिए पन्द्रह शिलिंग और पूरे दिन के लिए तीस शिलिंग की माँग कर सकता है। किन्तु इसके लिए उसे यह प्रमाणित करना पड़ेगा कि सचमुच उसे इतने धन की हानि हुई है। यात्रा के सम्बन्ध में नियम है कि जहाँ सरकारी वाहन प्राप्त हो सके वहाँ उसका उपयोग किया जाय और जहाँ यह प्राप्त नहीं हो सके वहाँ स्वयं की कार का प्रयोग करके या भाड़े की गाड़ी का प्रयोग करके यात्रा व्यय लिया जाय।

कस्बे में रहकर की जाने वाली यात्राओं के लिए तथा अपने घर से तीन मील दूर की यात्राओं के लिए वह किसी प्रकार का यात्रा व्यय नहीं ले सकता। यद्यपि पार्षदों के अधिकतर व्यय का निर्वाह करने के लिए ये

यह हो जाता है तो व्यक्तिगत भावनाओं में जो फिरके पड़ जाते हैं वे नहीं हट पाते। यह व्यवस्था सम्भवतः नगरपालिका अधिनियम १६३५ के द्वारा अतीत के चार्टर युक्त नियमों की थाती के रूप में प्रारम्भ की गई जिसमें कि एल्डरमेन आवश्यक भाग थे जो कि सेवीवर्ग की दृष्टि से कुछ एकरूपता एवं नीति की निरन्तरता रखते थे। जहां पर तीन वर्ष बाद चुनाव कराये जाते हैं तथा हर तीसरे वर्ष सभी पार्षद अपने पद से हट जाते हैं वहां पर एल्डरमैनों की संख्या निश्चय ही मूल्यवान प्रतीत होती है। किन्तु इस प्रकार का तर्क बारोज पर लागू नहीं होता जहां कि चुनाव वार्षिक रूप से कराये जाते हैं तथा सभी पार्षद एक साथ नहीं हटते किन्तु, केवल एक-तिहाई पार्षद ही प्रतिवर्ष सेवा निवृत हो पाते हैं।

इस प्रकार कुल मिलाकर देखा जाये तो एल्डरमैन के कार्यालय को प्रशंसा एवं आलोचना दोनों का ही पात्र बनाया जाता है। जो लोग इसकी प्रशंसा करते हैं उनका कहना है कि यह पद अत्यन्व प्राचीन पद है तथा इसकी परम्परायें गहरी हैं। इनके रहने से यह लगता है कि परिषद की नीति एवं सेवी वर्ग में कुछ निरन्तरता रहेगी। यद्यपि यह व्यवहार में प्रायः कभी नहीं होता किन्तु सैद्धान्तिक रूप से तो संभव ही है कि सेवा निवृत होने वाला कोई भी पार्षद चुनाव में पुर्निर्वाचित ही न हो। इसका अर्थ यह होगा कि नई काउन्टी परिषद में ऐसा कोई भी नहीं होगा जिसके अनुभव एवं परामर्श के आधार पर परिषद को संचालित किया जा सके। ऐसी स्थिति में एल्डरमेन पर्याप्त उपयोगी सिद्ध होते हैं क्योंकि उनमें से केवल आधे ही प्रति तीसरे वर्ष सेवा निवृत होते हैं। इस पद के पक्ष में एक तर्क यह भी दिया जाता है कि ऐसे अनेक व्यक्ति होते हैं जिनमें परिषद सदस्य के रूप में कार्य करने की भारी योग्यतायें होती हैं किन्तु जो कई कारणों से चुनावों की पचड़ेबाजियों में नहीं पड़ना चाहते ऐसी स्थिति में योग्य व्यक्तियों को एल्डरमेन के रूप में परिषदों में लिया जा सकता है।

इस पद के विरोध में भी अनेक तर्क दिये जाते हैं। सर्वप्रथम यह कहा जाता है कि इसका रूप अप्रजातांत्रिक है। यह तर्क दिया जाता है कि निर्वाचित प्रतिनिधियों का परिषद पर पूरा नियंत्रण होना चाहिये तथा परिषद के किसी भी सदस्य का चुनाव इस प्रकार अप्रत्यक्ष रूप से नहीं किया जाना चाहिये। यदि ऐसे आलोचकों को सैद्धान्तिक तर्कों से संतुष्ट कर दिया जाये तो वे यह कहते हैं कि इस व्यवस्था का प्रयोग गलत किया जाता है। यदि इस व्यवस्था का प्रयोग सही रूप में किया जाये तो स्थानीय परिषदें योग्य एवं कुशल व्यक्तियों के ज्ञान तथा कार्यों से लाभान्वित हो सकती हैं किन्तु इस व्यवस्था को उचित रूप से कभी कार्यान्वित ही नहीं किया जाता। इसका प्रयोग कभी-कभी उस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए भी कर लिया जाता है जिसे कि मतदाताओं द्वारा अस्वीकृत कर दिया गया था। जो व्यक्ति अपने दल का माना हुआ व्यक्ति अथवा नेता है और चुनावों में वह हार चुका है तथा यदि उसके दल का परिषद में बहुमत हो जाये तो उसका दल उसे एल्डरमैन के रूप में निर्वाचित करके परिषद में प्रवेश दिला सकता है। इस प्रकार मतदाताओं की इच्छा की अवहेलना की जाती है। जहां कहीं भी कड़ा दलीय संघर्ष

होता है वहां बहुमत वाला दल सदैव ही यह प्रयास करेगा कि अपनी शक्ति को और बढ़ाने के लिए एल्डरमेन का चुनाव भी अपने ही पक्ष में कराले। तथ्यपूर्ण अध्ययन के बाद यह स्पष्ट हो जाता है कि अनेक परिषदों द्वारा एल्डरमेन की व्यवस्था का दुरुपयोग किया गया है। सरकार द्वारा भी उनकी हालत को सुधारने की दिशा में अधिक कुछ नहीं किया जा सकता है।

मेयर एवं सभापति [The Mayor and Chairman]—नियमानुसार प्रत्येक परिषद को एक ऐसे व्यक्ति का चुनाव करना होता है जो कि उसकी बैठकों की अध्यक्षता कर सके। इस प्रकार से निर्वाचित व्यक्ति को सभापति या मेयर कहा जाता है। अन्य परिषदों में यह सभापति है किन्तु बारोज में यह मेयर बन जाता है। यह परम्परागत रूप से एक अध्यक्ष से अधिक कार्य सम्पन्न करता है। जेक्सन (Jackson) महोदय के कथनानुसार एक मेयर अथवा सभापति द्वारा मुख्य रूप से दो कार्य किये जाते हैं। वह परिषद की बैठकों की अध्यक्षता करता है तथा वह स्थानीय जनता के उत्सवपूर्ण कार्यों एवं सार्वजनिक कार्यों में महत्वपूर्ण रूप से भाग लेता है। एल्डरमेन की भांति यह जरूरी नहीं है कि सभापति को परिषद के सदस्यों में से ही चुना जाये। उसे बाहर से भी चुना जा सकता है किन्तु उसमें एक पार्षद बनने की योग्यतायें होनी चाहिये। सभापति या मेयर का चुनाव परिषद के सभी सदस्य अर्थात् पार्षद एवं एल्डरमेन मिलकर करते हैं। काउन्टीज में तथा बारोज में जब एल्डरमेन सेवा निवृत्त हो जाते हैं, तो वे चुनाव में भाग नहीं ले पाते क्योंकि नये एल्डरमेन का चुनाव सभापति या मेयर के चुनाव के बाद किया जाता है।

इंगलैण्ड में मेयर युक्त बारोज तथा सभापति युक्त अन्य परिषदों के बीच पर्याप्त अन्तर होता है। नोर्मन काल में राजाओं का यह लक्ष्य रहता था कि शाही शक्ति को पूरे देश में व्याप्त रखा जाये। इसके लिए उन्होंने काउन्टीज में एक शाही कार्यालय की आवश्यकता का अनुभव किया जिसकी क्रियाओं को शाही न्यायाधीशों द्वारा समय-समय पर चैक किया जा सके। पहले मुख्य काउन्टी अधिकारी नगराधिप (Sheriff) था। जब काउन्टी परिषद ने वर्तमान रूप ग्रहण किया तो उसका सभापति काउन्टी का एक प्रमुख व्यक्तित्व नहीं बन पाया क्योंकि यह पद तो पहले से ही नगराधिप को प्राप्त था। बारोज के लिए जो चार्टर प्रस्तुत किया जाता था उसमें उसके प्रशासकीय निकाय के रूप का भी वर्णन कर दिया जाता था। कई वर्ष बीते अब मेयर का चुनाव परिषद द्वारा किया जाता है। इसके चुनाव में परिषद के सभी सदस्य जिनमें कि एल्डरमैन एवं पारषद सम्मिलित होते हैं, भाग लेते हैं। क्राउन को यह अधिकार है कि वह किसी विशेष बारो को यह निर्देशन दे कि वहां मेयर न हो कर लार्ड मेयर होना चाहिये। इन दोनों के बीच केवल सम्मान का और शब्द का अन्तर है वैसे लार्ड मेयर को मेयर की अपेक्षा कुछ अतिरिक्त शक्तियां प्राप्त नहीं होती। केवल एक अन्तर है वह यह कि जब लार्ड मेयर को सम्बोधित किया जाता है तो कहा जाता है 'माई लार्ड मेयर' और मेयर के लिए केवल 'मि०मेयर' कहा जाता है।

मेयर का कार्यालय बारो के आधार पर निश्चित किया जाता है। छोटे बारोज में मेयर अपने खाली समय में परिषद के कार्यों में भी सक्रिय

भाग ले सकता है और अपने सभी सामाजिक कर्त्तव्यों का निर्वाह कर सकता है। दूसरी ओर बड़े बारोज में मेयर का सारा समय व्यतीत हो जाता है। प्रतिदिन इतने अधिक कार्य होते हैं जिनमें उसकी उपस्थिति अनिवार्य है। वह अनेक संस्थाओं को देखता है, बैठकों में बोलता है, विशेष आगन्तुकों का स्वागत करता है और अन्य महत्वपूर्ण कार्य करता है। अपने कार्यकाल में वह स्थानीय राजा से कम नहीं होता। बड़े शहरों में जो उसे अधिकृत निवास स्थान दिया जाता है वह एक शाही महल से सादृश्यता रखता है। वह जब भी कभी सार्वजनिक अवसरों पर उपस्थित होता है तो कार्यालय की अपनी सुनहरी जन्जीर पहनता है और अधिकतर मुख्य अवसरों पर वह गाउन पहन कर निकलता है। उसकी सेवा के लिए शहर का लिपिक होता है तथा उसके साथ एल्डरमैन एवं अन्य नागरिक सम्मान वाले व्यक्ति चलते हैं। जब वह परिषद के कक्ष में प्रवेश करता है तो मेस (Mace) उसके सामने चलती है और उसकी कुर्सी के सामने रखी जाती है। जब मेयर को इतने अधिक महत्वपूर्ण कार्य करने होते हैं तो परिषद के कार्य को विस्तारपूर्वक करने के लिए उसके पास अधिक समय नहीं बच पाता। वह यद्यपि परिषद की सभी बैठकों की अध्यक्षता करता है और परिषद के कार्यों के बारे में उसके अधिकारियों से वार्ता करता रहता है। वह प्रत्येक समिति का एक पदेन सदस्य होता है किन्तु वह इन सभी में उपस्थित नहीं हो पाता और केवल कुछ कार्यों को छांट लेता है जिनमें कि वह अपना अधिक ध्यान दे सके। इस प्रकार बड़े बारो का मेयर अपने कार्यों में बहुत अधिक शक्ति एवं श्रम खर्च करता है। उसका कार्य पूरे समय का कार्य है। एक सामान्य परम्परा के अनुसार उस व्यक्ति को प्रायः पुनः निर्वाचित नहीं किया जाता। इसलिए यह उचित समझा जाता है कि वह अपना सारा कार्य एक ही वर्ष में समाप्त कर दे। कई एक बारोज में ऐसी परम्पराएं बन जाती हैं जो कि मेयर के चुनाव को विनियमित करती हैं। एक सामान्य व्यवहार के अनुसार परिषद के प्रत्येक सदस्य को यह अवसर दिया जाता है कि वह बारी-बारी से मेयर नामजद कर सके चाहे उनका परिषद में मत कितना भी क्यों न हो। राजनैतिक दलों द्वारा नामजदगी करते समय वरिष्टता को पर्याप्त महत्व दिया जाता है। इसके परिणामस्वरूप जो व्यक्ति परिषद का सदस्य बना रहता है उसके मेयर बनने के अवसर बढ़ जाते हैं।

एक बारो अथवा काउन्टी बारो के मेयर का निश्चित योगदान उन नागरिकों द्वारा सरलता से नहीं समझा जा सकता जिनमें कि वह कार्य करता रहता है। इसका कारण यह है कि कानून के अनुसार इसके कार्यालय का जो रूप है वह एक पृथक चीज है और वास्तविक व्यवहार में परम्पराओं द्वारा इसका जो रूप निर्धारित हो गया है वह एक अलग चीज है। मेयर के बारे में लिखते हुए मि० जे० एच० वारेन (J. H. Warren) ने बताया है कि यह कार्यालय लम्बी परम्पराओं, उच्च सम्मान एवं अच्छे प्रभाव के लिए व्यापक क्षेत्र रखता है किन्तु मेयर जो कुछ भी करता है वह अपने कार्यालय के सम्मान के सहारे करता है तथा अपने व्यक्तिगत प्रभाव के सहारे करता है। वह इस सब के लिए कानूनी शक्ति

का सहारा बहुत कम लेता है ।* मेयर द्वारा सभापति के रूप में परिषद की अध्यक्षता की जाती है । वह परिषद की स्थाई आज्ञाओं के अनुसार परिषद की प्रक्रिया एवं वाद-विवाद को निर्देशित करता है। अपने शहर के नागरिक नेता एवं मुख्य नागरिक के रूप में मेयर को मुख्य स्थान प्राप्त होता है । उसका मुख्य कार्य शहर में नागरिक भावना का प्रसार करना है । वह शहर में परिषद का प्रतिनिधित्व करता है और आवश्यकता पड़ने पर परिषद में शहर का प्रतिनिधित्व करता है। वह विशेष आगन्तुकों एवं बाहर वालों के लिए शहर का वैयक्तिकरण करता है । इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए वह शहर के प्रत्येक वर्ग में अपनी पहुंच रखता है । इस कार्य में उसका बहुत समय व्यतीत हो जाता है । ऐसी स्थिति में यह स्वाभाविक है कि अपने कार्यकाल के समय में वह परिषद के कार्यों में सक्रिय भाग न ले सके । यदि वह स्थानीय राजनीति में उलझ जाए अथवा एक पार्षद के रूप में वह शहर का एक सक्रिय कार्यकर्ता हो तो अपने कार्यकाल के दौरान उसे ये सब कर्तव्य छोड़ने होते हैं । उसे कुछ काल के लिए स्थानीय संगठनों से अपना सम्बन्ध तोड़ना होता है ।

केवल यह सोचना गलत होगा कि मेयर का प्रभाव एवं सम्मान केवल उसके बाहरी कर्त्तव्यों से ही महत्व रखता है । इनका मूल्य उस समय भी पर्याप्त होता है जब कि परिषद नीति एवं प्रशासन सम्बन्धी निर्णय लेती है । मेयर का सम्मान एवं प्रभाव का मूल्य तभी रह पाएगा जब कि इसका प्रयोग उचित अवसर पर किया जाए । सामान्य रूप से मेयर का कार्य यह नहीं है कि वह स्थानीय सत्ता के प्रशासन में अधिक उलझे । वह अपने अधिकारियों को निर्देश नहीं दे सकता क्योंकि वे समितियों के माध्यम से परिषद के प्रति उत्तरदायी होते हैं । समितियों के सभापति अधिकारियों से निकट सम्पर्क रखते हैं और आवश्यकता के समय उनसे विचार-विमर्श करते हैं । ऐसी स्थिति में जरूरी है कि मेयर सजग रहे और समिति के सभापति के कार्यों को न दोहराए । कई बार ऐसे अवसर आते हैं जब कि घरेलू वाद-विवाद में मेयर को मध्यस्थता करनी होती है । वह इस कार्य को भली प्रकार निभा सकता है । मेयर का प्रभाव सदैव ही उस समय अधिक रहता है जब कि वह उसका प्रयोग कम से कम करे । यदि वह परिषद के वाद-विवाद से परे बना रहे तो उसका प्रभाव अधिक रहेगा । इसी बात को ध्यान में रख कर कई एक परिषदें अपने स्थायी आदेशों द्वारा यह व्यवस्था कर देती हैं कि मेयर अपने कार्यकाल में किसी समिति का सभापति नहीं रहेगा । टाउन क्लर्क मेयर का मुख्य परामर्शदाता होता है और परिषद का मुख्य अधिकारी । ऐसी स्थिति में यह उपयुक्त समझा जाता है कि मध्यस्थता का कार्य उसी के द्वारा सम्पादित किया जाए ।

---

* 'The office is one of long tradition, high prestige, and wide scope for good influence; but whatever a Mayor does he must do by the personal influence he exercises in it, for he is clothed with little legal authority."

—*J. H. Warren*, Op. Cit., P. 92.

मेयर के द्वारा अधिकारियों के मनोरंजन में, शहर के अनेक स्वेच्छा-पूर्ण संस्थाओं की सहायता में तथा अनेक व्यक्तिगत कार्यों में बहुत अधिक धन खर्च करना होता है। इसीलिए यह प्रावधान किया गया है कि इस धन का भुगतान परिषद द्वारा किया जाएगा। इसके अतिरिक्त उसे कार्यालय की ओर से कार दी जाती है तथा अन्य आवश्यक सुविधाएं प्रदान की जाती है। वैसे कानून मे यह नहीं कहा गया है कि मेयर को दिया जाने वाला धन उसके द्वारा किए जाने वाले व्यय का भत्ता है। इससे यह भी कानूनी समझा जाएगा कि मेयर जो प्राप्त करे वह अपनी सेवाओं के बदले में प्राप्त करे किन्तु सामान्य रूप से यह समझा जाता है कि जो भी धन मेयर को प्रदान किया जाता है वह उसके व्यय के अनुपात में होता है और उसे वेतन नहीं कहा जा सकता। वेतन न होने के कारण मेयर को कोई भी धन स्वतः ही प्राप्त नही होता। जब वह अपने पद से सम्बन्धित कार्यों पर खर्च करता है तो उसके सम्बन्ध में वह प्रमाण-पत्र प्रस्तुत करता है जिसके आधार पर उसे धन दिया जाता है। अनुमान के अनुसार धन की मात्रा अधिक से अधिक रखी जाती है। यह भी हो सकता है कि मेयर अपने सभी भत्तों को खर्च न करे। कुछ वारोज ने यह भी समस्या रखी है कि वहां मेयर द्वारा अपने परम्परागत कार्य उस समय तक पूरे नहीं किए जाते जब तक कि भत्ते की मा न बढ़ा दी जाए। इसका अर्थ यह हुआ कि मेयर पद पर केवल वही व्यक्ति आ सकेगा जो कि अपनी जेब से खर्च कर सके।

कार्यों के अनुसार मेयर को परिषद के सदस्यों में से भी चुना जा सकता है और बाहर से भी। केवल एक ही शर्त है वह यह कि मेयर स्थानीय व्यक्ति होना चाहिए। एक परिषद कभी-कभी बाहर के व्यक्ति को भी मेयर नियुक्त कर लेती है किन्तु यह सामान्य व्यवहार नहीं है क्योंकि ऐसा करने पर परिषद के वरिष्ठ सदस्यों को वारी-वारी से मेयर बनने का अवसर प्राप्त नहीं हो सकेगा। एक छोटे वारो में जहां कि परिषद में कुछ ही सदस्य होते हैं; एक व्यक्ति को दो या तीन वर्ष तक मेयर पद पर रखा जा सकता है। इंगलैण्ड में एक छोटा वारो ऐसा है जिसमें कि एक प्रसिद्ध सदस्य को इसका कई वर्ष तक मेयर बनाए रखा गया, यहां तक कि उस व्यक्ति का नाम ही मेयर पड़ गया।

मेयर द्वारा लिखित रूप में एक उप-मेयर (Deputy Mayor) की नियुक्ति की जा सकती है। वह अपने पद पर उस समय तक कार्य करता है जब तक कि मेयर कार्य करता रहता है। वारोज के अतिरिक्त अन्य सत्ताओं में मेयर की नियुक्ति परिषद द्वारा की जाती है। मेयर एवं उप-मेयर दोनों का पद कानूनी रूप से एक जैसा नहीं है। मेयर के अभाव में उप-मेयर स्वतः ही परिषद का अध्यक्ष नहीं बन जाता ऐसे अवसर पर परिषद अपना अस्थायी सभापति चुनती है जो कि प्रायः एल्डरमेन में से होता है और यह जरूरी नहीं है कि उप-मेयर एल्डरमेन हो। उप-मेयर पद का महत्व यह है कि इसके द्वारा मेयर की सहायता की जाती है और जब मेयर बीमार पड़जाता है तो उप-मेयर परिषद के बाहर के उस दायित्व को सम्भालता है। ऐसी स्थिति में उचित यह रहेगा कि उप-मेयर की नियुक्ति मेयर द्वारा ही की जाए ताकि वह उसमें विश्वास रख सके और वांछित सहायता प्राप्त कर सके। उप-मेयर

का चयन मेयर द्वारा किए जाने के पक्ष में एक अन्य तर्क यह दिया जाता है कि परिषद के चयन में दलीय राजनीति की उलझनें उत्पन्न हो सकती हैं जो कि मेयर एवं उप-मेयर के बीच संघर्ष उत्पन्न करने का कारण बन सकती हैं।

बारोज के अतिरिक्त सभी स्थानीय परिषदें सभापति नियुक्त करती हैं। सभापतियों का चुनाव मेयर की भाँति प्रतिवर्ष परिषद द्वारा किया जाता है। चुना जाने वाला व्यक्ति या तो परिषद का सदस्य हो अथवा सदस्य बनने की योग्यता रखता हो। परिषद के सभापति के पास मेयर की अपेक्षा औपचारिक चिह्न कम होते हैं। वह कार्यालय का एक बिल्ला लगाता है किन्तु उसके पास गाउन, जन्जीर या मेस आदि चीजें नहीं होतीं। उनके कार्यों के सम्बन्ध में कोई विशेष उत्सव भी नहीं मनाया जा सकता। एक सभापति को भी अनेक सामाजिक कर्त्तव्य करने होते हैं किन्तु उनकी संख्या और महत्व मेयर के कर्त्तव्यों की तुलना में बहुत कम होता है। अपने पद के नाम के अनुसार वह परिषद का सभापति होता है। सभापति का पद सम्भालने के बाद भी वह परिषद के कार्यों को करता रहता है। जब कभी महारानी शहर को देखने आती है तो उनका स्वागत उन सभी प्रसाधनों द्वारा किया जाता है जिन्हें कि बारो उपस्थित कर सके। काउन्टी परिषद के सभापति को भी उपस्थित होने के लिए बुलाया जाता है किन्तु परिषद के प्रमुख सत्ता होने के बाद भी मेयर का नाम पहले आता है। इस सबके बारे में मेयर और सभापति के बीच कोई ईर्ष्या नहीं रहती, यह पूर्णतः परम्परागत रूप से होता है और काउन्टीज इन पुरानी व्यवस्था को समाप्त करना नहीं चाहतीं। एक क्षेत्र में जहां कि काउन्टी के समान क्षेत्र का कोई अध्यक्ष नहीं होता वहां इसका कोई कारण नहीं कि परिषद के सभापति को बारो के मेयर से कम महत्व प्राप्त हो। सभापति को भी जो औपचारिक एवं उत्सव सम्बन्धी कार्य करने होते हैं उनके आधार पर उसका सम्मान काफी बढ़ जाता है। एक निर्वाचित लोकप्रिय निकाय का अध्यक्ष होने के कारण सभापति पर्याप्त सम्मान एवं गौरव का प्रतीक बन जाता है।

सभापति का चुनाव प्रति वर्ष किया जाता है किन्तु उसे पुनः निर्वाचित भी किया जा सकता है। एक सामान्य परम्परा के आधार पर उसे एक या दो बार पुनः निर्वाचित किया जाता है ताकि उसे दो-तीन साल का अनुभव प्रदान किया जा सके। इस सम्बन्ध में भी स्पष्ट समझौता नहीं रहता कि राजनैतिक दलों को सभापतित्व का अवसर क्रमानुसार दिया जाएगा। इसका मुख्य कार्य यह है कि उन क्षेत्रों की परिषदों में रूढ़िवादी दृष्टिकोण का बहुमत रहता है। परिषद में दलीय संगठन या तो होता ही नहीं है और होता भी है तो बहुत कमजोर होता है। कई एक सदस्य तो अपने आपको राजनैतिक मानने से भी अस्वीकार करते हैं। ऐसी स्थिति में प्रत्येक नियुक्ति किसी सिद्धान्त से सम्बन्ध रखे बिना की जा सकती है। सभापति का चुनाव प्रायः तब होता है जब कि पहले उप-सभापति का चुनाव कर लिया जाए। सामान्य धारणा यह रहती है कि इसलिए उप-सभापति को ही सभापति बना लिया जाए। यह चुनाव उपयुक्तता एवं वरिष्ठता के

आधार पर किया जता है। काउन्टी परिषद को यह अधिकार है कि वह अपने सभापतियों को धन दे सके किन्तु जैसा कि मेयरों के बारे में होता है यह धन किए गए खर्चे के भुगतान के रूप में होता है। शहरी एवं देहाती जिला परिषदों में कानून के अनुसार सभापति को कोई आय नहीं दी जाती किन्तु उसके द्वारा किए जाने वाले खर्चों का भत्ता मात्र प्रदान किया जाता है। छोटी सत्ताओं को छोड़ कर अन्य स्थानों पर परिषद के सभापति को परिषद कार्यालय में एक कमरा दिया जाता है और वह आफिस की कार का उपयोग कर सकता है।

उच्च अधिकारी [Higher Officers]—ऐतिहासिक विकास के प्रारम्भिक युग के ही कुछ उच्च अधिकारी इंगलैण्ड की नागरिक सरकार के संचालन में सहायता करते हैं। वर्तमान व्यवस्थापन द्वारा स्थानीय सत्ताओं को यह अधिकार दिया गया है कि वे अपनी आवश्यकता के अनुसार ऐसे स्टाफ की नियुक्ति कर सकें। व्यवस्थापन द्वारा इन अधिकारियों की नियुक्ति के सम्बन्ध में निर्देश दिए जाते हैं। पेरिश परिषद को छोड़ कर सभी स्थानीय सत्ताएं एक लिपिक की नियुक्ति करती हैं जिसे कि बारो में टाउन क्लर्क कहा जाता है। इसके साथ ही वे एक खजान्ची तथा एक स्वास्थ्य मेडीकल अधिकारी की भी नियुक्ति करती हैं। पुलिस सत्ता द्वारा एक मुख्य सिपाही और शिक्षा सत्ता द्वारा एक मुख्य शिक्षा अधिकारी नियुक्त किया जाता है। इनके अतिरिक्त कई और भी मुख्य अधिकारी होते हैं जो कि बड़ी स्थानीय सत्ताओं द्वारा नियुक्त किए जाते हैं। कानूनी रूप से इनमें से किसी भी अधिकारी की शक्तियों को स्पष्टतः पारिभाषित नहीं किया गया है। बदलती परिस्थितियों के अनुसार समायोजन को सम्भव बनाने के लिए लोचशीलता रखी जाती है।

क्लर्क या टाउन क्लर्क मुख्य अधिकारी समझा जाता है और सन् १९२८ के स्थानीय सरकार के शाही आयोग ने यह बताया कि ऐसा ही समझा जाना चाहिए। वर्तमान समय में स्थानीय सत्ताओं के संगठनों ने क्लर्क को मुख्य प्रशासकीय एवं कार्यपालिका अधिकारी का पद देना स्वीकार कर लिया। क्लर्क अथवा टाउन क्लर्क आवश्यकता के अनुसार परिषद एवं उसकी समितियों के सचिवालय सम्बन्धी कार्य के लिए उत्तरदायी होता है। वह स्थानीय सत्ता का कनूनी अधिकारी भी है। वह प्रायः सभी प्रशासकीय प्रबन्धों पर दृष्टि रखता है और प्रशासकीय मामलों पर परामर्श देता है। किन्तु वह प्रशासकीय व्यवहार में अन्य विभागीय अध्यक्षों के कार्यपालिका सम्बन्धी दायित्वों में हस्तक्षेप नहीं करता। परिषद के मुख्य परामर्शदाता के रूप में वह उसके नीति सम्बन्धी प्रश्नों पर भी विचार करता है। स्थानीय सत्ता को इस पद पर उपयुक्त व्यक्ति नियुक्त करना चाहिए, उसकी योग्यताएं निर्धारित नहीं की गई हैं। यद्यपि क्लर्क के कर्त्तव्य बहुत व्यापक होते हैं किन्तु उसे एक औद्योगिक या व्यापारिक संगठनों का सामान्य प्रबन्धक नहीं कहा जा सकता।

खजान्ची परिषद का मुख्य वित्तीय अधिकारी एवं लेखाधिकारी होता है; किन्तु कुछ जिलों में यह प्रबन्ध बड़ा ही अस्पष्ट है जहां पर बैंक मैनेजर

को एक खजान्ची नियुक्त कर दिया जाता था और पृथक से एक लेखाधिकारी की नियुक्ति कर दी जाती थी। बैंक के लिए यह गैर-कानूनी था कि वह एक खजान्ची की नियुक्ति करे। किन्तु अनेक बैंक स्थानीय प्रबन्धक को स्थानीय सत्ता का खजान्ची नियुक्त करने के बारे में सहमत हो गए। छोटे जिलों में पहले एक क्लर्क को ही लेखाधिकारी या मुख्य वित्तीय अधिकारी बना दिया जाता था किन्तु यह प्रबन्ध अब समाप्त होता जा रहा है क्योंकि इसके प्रति गहरा असन्तोष है। खजान्ची और लेखा अधिकारी के बीच अन्तर किया जाना जरूरी है। खजान्ची लेखा अधिकारी के आधीन रह कर बारो के कोष की रक्षा से सम्बन्धित कानूनी उत्तरदायित्वों का निर्वाह करता है जब कि लेखा अधिकारी एक सग्रहकर्त्ता, वित्तीय परामर्शदाता एवं लेखापाल के कर्त्तव्यों का निर्वाह करता है। वित्तीय कर्त्तव्यों का वास्तविक उत्तरदायित्व लेखापाल पर आ कर पड़ता है। एक सुविनियमित स्थानीय सत्ता में यह आशा की जा सकती है कि खजान्ची ही स्थानीय सत्ता का मुख्य लेखा अधिकारी होगा। इसी के द्वारा प्राप्तियां एवं भुगतान किए जाएंगे तथा वही वित्तीय मामलों में परामर्श देगा।

सर्वेक्षक का कार्यालय संवैधानिक दृष्टि से विशेष रूप में उल्लेखनीय नहीं है। सर्वेक्षक ही सत्ता का नागरिक अभियन्ता होता है और कभी-कभी उसका भवन निर्माता भी। कुछ शहरों में वह जल अभियन्ता भी होता है। एक मध्यम आकार की सत्ता में इस अधिकारी के कार्य अत्यन्त संयुक्त एवं विस्तृत प्रकृति के होते हैं। बड़े शहरों या काउन्टीज में कार्य बढ़ जाने के कारण यह जरूरी हो गया है कि इस अधिकारी के कार्यों को कु भागों में विभाजित कर दिया जाए।

जन-स्वास्थ्य निरीक्षक का कार्यालय कुछ पृथक उत्तरदायित्व रखता है। व्यवस्थापन द्वारा उसे ये उत्तरदायित्व सौंपे जाते हैं। कानून के अनुसार इस निरीक्षक को सामान्य मेडीकल अधिकारी के आधीन कार्य करना चाहिए। स्वास्थ्य का मेडीकल अधिकारी स्थानीय सत्ता की स्वास्थ्य सेवाओं का अध्यक्ष होता है। यह क्षेत्र की सफाई से सम्बन्धित दशाओं की देख-भाल करता है।

सामान्य रूप से स्थानीय सरकार के अधिकारी उस समय तक अपने पद पर कार्य करते है जब तक कि उन्हें नियुक्त करने वाली परिषद चाहे। परिषद और इन अधिकारियों के बीच जो स्वामी-सेवक का सम्बन्ध विकसित हुआ उसके परिणामस्वरूप ये अधिकारी दलीय राजनीति में उलझने लगे। इसी कारण संसद द्वारा यह व्यवस्था की गई कि किसी भी अधिकारी को हटाने से पूर्व संसद की स्वीकृति ली जाए। इस प्रकार एक काउन्टी के क्लर्क तथा मेडीकल अधिकारी और बारोज तथा जिलों के मेडीकल अधिकारी तथा जन-स्वास्थ्य निरीक्षक एवं पुलिस सिपाहियों को हटाने से पूर्व संसद की स्वीकृति लेना जरूरी होता है। इस सम्बन्ध में पर्याप्त व्यवस्थापन किया गया और इस समय कोई ऐसा चिह्न दिखाई नहीं देता जिसके आधार पर यह कहा जा सके कि अधिकारीगण और अधिक केन्द्रीय नियन्त्रण चाहते हैं। केन्द्रीय नियन्त्रण भी अधिकारियों की रक्षा की दृष्टि से कुछ अधिक नहीं

कर पाता क्योंकि यदि किसी अधिकारी को पद से हटाने की धमकी दी जाए तो केन्द्रीय हस्तक्षेप भी उसे उसके पद पर बनाए रखने में सफल नहीं हो सकता। कभी-कभी मन्त्रियों का नियन्त्रण अनुपयुक्त नियुक्तियों का कारण भी बन जाता है। शिक्षा मन्त्री का मुख्य शिक्षा अधिकारी के चयन पर निषेध करने का अधिकार और गृह सचिव को बाल-अधिकारी के सम्बन्ध में ऐसी शक्तियां प्राप्त हैं। इसके अतिरिक्त गृह-सचिव मुख्य कांस्टेबुलों की नियुक्ति को स्वीकृति प्रदान करता है। जहां-कहीं यह नियुक्ति पदोन्नति के माध्यम से होती है वहाँ यह स्वीकृति जरूरी नहीं समझी जाती।

बारो के अंकेक्षणकर्त्ता [Borough Auditors]—जिस बारो में परिषद अंकेक्षण के लिए न व्यावसायिक तरीका अपनाती है और न सरकारी ही वहां नगरपालिका के लेखों का अंकेक्षण करने के लिए बारो के अंकेक्षण-कर्त्ता नियुक्त किए जाते हैं। ये अवैतनिक अधिकारी होते हैं। ये न तो परिषद के कर्मचारी होते हैं और न ही निगम के निर्मायक अंग ही। इनमें से दो को निर्वाचित अंकेक्षणकर्त्ता कहा जाता है। इनको प्रतिवर्ष मार्च के महीने में स्थानीय सरकार के मतदाताओं द्वारा प्रत्यक्ष रूप से चुना जाता है। इस पद के उम्मीदवार में पारषद की योग्यताएं होनी चाहिएं किन्तु वह न तो परिषद का सदस्य होना चाहिए और न ही उसका अधिकारी। तीसरा अंकेक्षणकर्त्ता मेयर का अंकेक्षणकर्त्ता (Mayors' Auditor) कहलाता है। इसकी नियुक्ति परिषद के सदस्यों में से मेयर के द्वारा की जाती है। यह व्यवस्था नगरपालिका के अतीत की निशानी है और अनेक बारोज में यह समाप्त भी हो चुकी है चाहे लेखों का अंकेक्षण सरकारी हो, व्यावसायिक हो अथवा निर्वाचित इन सभी मे कुछ छोटी सत्ताओं को छोड़ कर यह एक मापक अभ्यास है कि खजान्ची या मुख्य वित्तीय अधिकारी द्वारा योग्य स्टाफ की सहायता से आन्तरिक अंकेक्षण भी किया जाए।

अधिकारियों का योगदान [The role of the Officers]—स्थानीय सरकार के कार्यों पर केन्द्रीय नियन्त्रण पर्याप्त मात्रा में रहता है किन्तु जहां तक स्थानीय सरकार के आन्तरिक संगठन का प्रश्न है वहां यह रुक जाता है। स्थानीय सत्ताओं को अपना कार्य सम्पन्न करने के लिए मार्ग चुनने एवं साधन अपनाने की पूरी स्वतन्त्रता होती है। स्थानीय सत्ता का यंत्र चाहे कितना भी विकसित क्यों न हो वह मुख्य रूप से समितियों की स्थापना एवं अधिकारियों तथा स्टाफ की नियुक्ति पर आधारित रहता है। जब कभी स्थानीय सत्ताओं के संगठन के बारे में कोई व्यवस्थापन किया जाता है तो उसका सम्बन्ध मुख्य रूप से इन दो पहलुओं के साथ रहता है। स्थानीय सत्ता द्वारा किसी विशेष सेवा के लिए या प्रशासन के किसी विशेष पहलू के लिए समितियां नियुक्त की जाती हैं। इन समितियों एवं अधिकारियों के माध्यम से स्थानीय सत्ता अपनी आंतरिक व्यवस्था को स्वयं ही संचालित करती है। स्थानीय सरकार की आंतरिक व्यवस्था अत्यंत लोचशील होती है और उसे बदलती हुई परिस्थितियों के अनुसार बदला जा सकता है। अलग अलग स्थानों पर एवं भिन्न भिन्न परिस्थितियों में भिन्न व्यवस्थाएं करनी होती हैं। अधिकारियों का स्थानीय सत्ता के जीवन में एक महत्वपूर्ण स्थान होता है। हम यह कल्पना कर सकते हैं कि ये समितियों के बिना कार्य कर

सकते हैं किन्तु यह कल्पना नहीं कर सकते कि अधिकारियों के बिना इनका कार्य चल सकता है। स्थानीय सत्ताओं के कार्य की प्रशासकीय कार्यपालिका एवं प्रबन्धात्मक पहलुओं को ऐसे सवैतनिक अधिकारियों एवं सेवकों द्वारा सम्पन्न किया जाना चाहिये जो कि विशेषज्ञतापूर्ण कार्य के लिए पर्याप्त अनुभव व प्रशिक्षण रखते हैं। ऐसी स्थिति में अधिकारियों एवं उनको नियुक्त करने वाली परिषद् के बीच भी विशेष प्रकार के सम्बन्ध बन जाते हैं जो कि उन सम्बन्धों से भिन्न नहीं होते जो हमें प्रशासकीय, औद्योगिक या व्यापारिक क्षेत्रों में मिलता है।

स्थानीय सत्ता द्वारा नीति सम्बन्धी निर्णय लिये जाते हैं तथा वह उसका नियंत्रण करती है और वेतन-भोगी सेवक नीति से सम्बन्धित उन निर्णयों को क्रियान्वित करते हैं। यह कथन वस्तुस्थिति का एक प्रकार से सरलीकरण है। आधुनिक समाज में प्रशासन का कार्य इतना जटिल हो गया है कि उच्च प्रशासनिक अधिकारी अपने आपको पूर्णतः नीति सम्बन्धी निर्णयों से ही सम्बद्ध नहीं रखते क्योंकि ये नीतियां ऐसे लोगों द्वारा निर्धारित की जाती हैं जो कि गैर-विशेषज्ञ एवं गैर-अनुभवी होते हैं तथा जिनकी योग्यता केवल यह होती है कि जनता द्वारा वे निर्वाचित कर लिये जायं। यह उचित भी नहीं समझा जाता कि अधिकारीगण अपने आपको इन कार्यों तक ही सीमित रखें। सन् १९३० में लोक प्रशासन प्रशिक्षण शाला के उद्घाटन के समय अध्यक्षीय भाषण देते हुए लार्ड स्टाम्प (Lord Stamp) ने कहा था कि अधिकारियों को नये समाज की मुख्य प्रेरणा होना चाहिए जो कि प्रत्येक स्तर पर सुझाव दें, प्रोत्साहन दें एवं परामर्श दें। वह समय आज अतीत की कहानी बन चुका है जब कि वांछित कार्य को देखने एवं कहने के लिए गैर-विशेषज्ञ के नियंत्रण को पर्याप्त समझा जाता था और अधिकारियों का कार्य केवल वही कार्य करना था जो करने के लिए उससे कहा जाये। आज की परिस्थितियों में निरंतरता, व्यवस्था, निष्पक्ष व्याख्या, परम्परा और निःस्वार्थ उत्साह बनाये रखने के लिए यह जरूरी है कि कुशल एवं प्रशिक्षित अधिकारियों पर विश्वास किया जाय। प्रो० लास्की ने भी कुछ ऐसा ही मत प्रगट किया है। उनके कथनानुसार जिस किसी ने भी अंग्रेजी नगरपालिका निकाय को कार्य करते हुए देखा है वह यह जानता है कि कुशल एवं अकुशल प्रशासन के बीच का मुख्य अंतर निर्वाचित व्यक्तियों द्वारा अधिकारियों के कुशल प्रयोग पर निर्भर करता है।*

आजकल विश्व के प्रायः सभी देशों की स्थानीय सरकारों में यह माना जाता है कि अधिकारियों को नीति सम्बन्धी मामलों पर परामर्श देना चाहिए। प्रगतिशील देशों में स्थानीय सत्ता से यह आशा की जाती है कि वह इस कार्य को सरल करेगी और उसमें अधिकारी वर्ग निर्वाचित सदस्यों को अपना परा-

---

*"Anyone who has seen English Municipal Body at work will have realised that the whole difference between effecient and the uneffecient administration lies in the creative use of elected persons."
—*Laski*, A Grammar of Politics, P. 425.

मर्श देने का कार्य निभायेंगे। स्थानीय सत्ता के कार्यों में अपना पूरा जीवन व्यतीत करने वाला अधिकारी अपने पद की समस्याओं एवं नीतियों के उचित परिणाम को अच्छी प्रकार से जानता है। इसके अतिरिक्त अधिकारी अपने स्रोतों को भी अच्छी प्रकार से जानता है और वह आसानी से इस बात का का अनुमान लगा लेता है कि नवीन परिस्थितियों का सामना करने के लिए वे पर्याप्त हैं या नहीं हैं। सेवाओं के सम्बन्ध में उसका ज्ञान इतना निकट होता है तथा उसका अनुभव इतना व्यापक होता है कि वह यथासम्भव भविष्यवाणियां कर सकता है। आवश्यकताओं के प्रति उसकी जागरूकता दीर्घकालीन नीतियों को प्रेरित कर सकती है जिनमें कि एक स्थान की अनेक पक्षीय आवश्यकताओं को संतुलन एवं अनुपात में रखा जा सके

इस सब का अर्थ यह नहीं है कि विशेषज्ञ का दृष्टिकोण सदैव ही सही होता है। स्थानीय सरकार की प्रशासकीय व्यवस्था में यह एक गुण पाया जाता है कि यह विशेषज्ञों के परामर्श को विचारने एवं उसकी जांच करने के लिए अनेक अवसर प्रदान करती है। स्थानीय प्रशासन में विशेषज्ञों की राय के महत्व का यह अर्थ कदापि नहीं होता कि इस प्रकार से निर्वाचित सदस्यों का नियंत्रण घट जायेगा। अधिकारियों का नीति के क्षेत्र में पर्याप्त परामर्श, सहयोग एवं पहल रहने पर भी अंतिम नियंत्रण निर्वाचित अधिकारियों द्वारा ही रखा जाता है। यह आशंका इसलिए भी नहीं होनी चाहिए क्योंकि स्थानीय सरकार के अधिकारियों को यह पता रहता है कि यदि उनका परामर्श नीति के सम्बन्ध में अधिक महत्वाकांक्ष पूर्ण हुआ तो वह अस्वीकृत कर दिया जायेगा। उनके व्यवसायिक आचरण के नियमों में यह उल्लेख रहता है कि वे प्रत्येक नीति को जिसके साथ कि वे चाहे व्यक्तिगत रूप से सहमत न हों इस प्रकार स्वामीभक्ति के साथ उपयुक्त करें कि मानों वे नीतियां उनकी स्वयं की हैं। कई एक आलोचक यह कहते पाये जाते हैं कि शक्तिशाली अधिकारी अपनी सेवाओं की कार्यकुशलता के इच्छुक रहते हैं और इन सेवाओं की प्रगति के प्रति महत्वाकांक्षी रहते हैं तथा उनका परामर्श पर्याप्त भारयुक्त होता है। वे प्रजातंत्रात्मक सरकार के लिए एक बाधा हैं। ऐसा इसलिए है क्योंकि ये अधिकारी नीतियों पर पूरा प्रभाव रखते हैं। किन्तु आलोचकों का यह मत अतिशयोक्ति प्रतीत होता है क्योंकि तथ्यों के अनुसार अनेक प्रकार के व्यवस्थापन एव निर्देश परिषद के प्रशासन एवं नीति पर पर्याप्त नियन्त्रण रखते हैं। असल में अधिकारियों के योगदान को स्पष्टत: तभी समझा जा सकता है जब कि हम अधिकारियों एवं समिति की परिषदों के पारस्पारिक सम्बन्धों का अध्ययन करलें। ऐसा करने से सर्व समितियों के सम्बन्ध में कुछ सामान्य जानकारी प्राप्त करना उपयोगी रहेगा।

समितियों का योगदान [The role of the Committees]-ब्रिटिश स्थानीय सरकार के सगठन में समितियों का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। आज स्थानीय सत्ताओं में जो समितियां कार्य कर रही हैं वे एक लम्बे और क्रमिक ऐतिहासिक विकास का परिणाम हैं। उनका जन्म एवं विकास अपने पीछे अनेक कारण रखता है। यह कहा जाता है कि नीति सम्बन्धी कार्य जिसके लिए परिषद के निर्वाचित सदस्य उत्तरदायी होते हैं, परिषद द्वारा

भली प्रकार सम्पन्न नहीं किये जा सकते क्योंकि परिषद का आकार पर्याप्त बड़ा होता है। इसके अतिरिक्त पार्षद लोग अपनी जीविका के लिए धनोपार्जन करने में भी समय व्यतीत करते हैं और इस सबके बाद उनके पास बहुत कम समय बच पाता है जिसे कि वे परिषद के कार्यों में लगा सकें। परिषद की बैठकों को भी समयाभाव में अधिक देर तक नहीं चलाया जा सकता। ऐसी स्थिति में यह सुझाव व्यवहारिक प्रतीत होता है कि परिषद अपने आप को नीति से सम्बन्धित केवल मुख्य कार्यों से ही सम्बन्धित रखे और अन्य कार्यों को किसी छोटे निकाय को सौंपदे। खुले आम जब पूरी परिषद की बैठकें की जाती हैं तो केवल उन विषयों पर विचार किया जाना चाहिए जो कि विस्तृत नीति से सम्बन्ध रखते हैं किन्तु विस्तार के विषयों को समितियों में निर्णय लिये जाने के लिए छोड़ दिया जाना चाहिए। समितियां किसी समस्या पर गम्भीरतापूर्वक विचार-विमर्श कर सकती हैं जो कि जनता के सम्मुख होने वाली परिषद की बैठकों में सम्भव नहीं होता। इसके अतिरिक्त परिषद के किसी विशेष कार्य को एक समिति के लिए सौंप दिया जाता है तो यह आशा बंध जाती है कि उस विशेष शाखा के कार्य में निरंतर एवं केन्द्रित रूचि तथा ध्यान रखा जा सकेगा। इसके अतिरिक्त एक तीसरा विचार यह भी है कि निर्वाचित प्रतिनिधियों को अपने अधिकारियों के साथ नीति एवं प्रशासन के कार्यों में कंधे से कंधा मिलाकर चलना चाहिए। यह केवल तभी सम्भव हो सकता है जबकि समितियों के माध्यम से इसे सम्भव बनाने का प्रायास किया जाय।

समितियों एवं विभागीय अध्यक्षों के बीच घनिष्ट सम्बन्ध रहता है जिसके कारण निर्वाचित प्रतिनिधि अधिकारियों पर पर्यवेक्षण एवं नियंत्रण रखते हैं। इस घनिष्ट सम्पर्क का यही एक मात्र एवं सर्वोच्च लाभ नहीं है। इससे यह भी सम्भव बनता है कि अधिकारी द्वारा प्रस्तावित नीति पर उचित वातावरण में विचार किया जा सके। इस प्रकार प्रशासन का पर्यवेक्षण एक ऐसी प्रक्रिया द्वारा किया जाता है जिसमें कि नीति निर्माताओं एवं जनता के प्रतिनिधियों के घनिष्ठ सहयोग से विकसित होती है। प्रत्येक के द्वारा दूसरे को मत एवं सूचना के पूर्ण एवं खुले आदान प्रदान द्वारा प्रशिक्षित किया जाता है। इनमें से एक दूसरे की आलोचानाएं करते हैं और सुझाव देते हैं। मि० जे० एच० वारेन (J. H. Warran) ने समितियों के योगदान को तीन प्रकार का बताया है—प्रथम, परिषद की ओर से विभागों पर पर्यवेक्षण रखना, दूसरे, अधिकारियों के सहयोग द्वारा परिषद को नीति के सम्बन्ध में परामर्श देना और परिषद के विचार के लिए नीति के विस्तृत पहलुओं को प्रकाश में लाना और तीसरे, कम महत्व के विषयों में परिषद की अपनी शक्तियों को एक सीमा तक काम में लेना। ये सभी कार्य परस्पर एक दूसरे से घनिष्ठ रूप में सम्बन्धित हैं। जब एक समिति के कार्य की एक विशेष शाखा के लिए स्थापना करदी जाती है तो परिषद के निर्णय से उस विषय में उत्पन्न होने वाले सभी मामलों पर पहले समिति द्वारा विचार किया जाता है।

परिषदों की समितियों के सभापति ग्रेट ब्रिटेन की स्थानीय सरकार की महत्वपूर्ण सत्ता कहे जा सकते हैं। समिति के इन सभापतियों का कार्य

समिति के वाद-विवाद को नियंत्रित करना मात्र ही नहीं होता बल्कि यह इस से अधिक महत्वपूर्ण कार्य करती हैं। व्यवहार में जब विभिन्न समितियों एवं अधिकारियों के बीच सम्पर्क स्थापित करना महत्वपूर्ण बन जाता है तो यह सम्पर्क समिति के सभापति के माध्यम से ही स्थापित किया जाता है। जब कभी तुरंत महत्व के विषय उत्पन्न होते हैं तो उन पर विचार करने के लिए शीघ्र ही कार्यवाही करना जरूरी होता है। ऐसी परिस्थितियों में समिति की विशेष बैठक बुलानी पड़ती है किन्तु यह हमेशा ही सम्भव नहीं होता और स्वयं अधिकारी को ही निर्णय का उत्तरदायित्व अपने ऊपर लेना होता है और उसके कार्यों से प्रायः परिषद को बन्धना पड़ता है। ऐसी परिस्थितियों में परम्परा यह है कि अधिकारी, समिति के सभापति से विचार विमर्श करे। अधिकारी प्रायः समिति के सभापति की सिफारिश एवं निर्देशन के आधार पर कार्य करता है। सभापति अपनी बुद्धि के आधार पर यह कहने में समर्थ होता है कि किसी विशेष समस्या पर समिति का क्या दृष्टिकोण रहेगा।

समिति का सभापति अपनी समिति का आंख और कान होता है। जिस प्रकार परिषद विभाग के कार्य के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए समिति की ओर देखती है, उसी प्रकार समिति भी इस कार्य से पूरी तरह परिचित होने के लिए सामान्य सदस्य की अपेक्षा प्रायः सभापति की ओर देखती है। इसके अतिरिक्त यदि समिति के सभापति को कार्य के बारे में पहले से ही कुछ जानकारी हो तो समिति का कार्य अच्छी प्रकार से सम्पन्न किया जा सकेगा। एक परम्परा के अनुसार प्रत्येक विभागीय अध्यक्ष को उन विषयों से समिति के सभापति को परिचित रखना होता है जिनके बारे में उसे प्रतिवेदन प्रस्तुत करना होता है। सभापति के व्यक्तित्व का एक अन्य पहलू परिषद के साथ उसके सम्बन्ध हैं। यह कहा जाता है कि परिषद से सम्बन्धित सभापति द्वारा जो महत्वपूर्ण कर्त्तव्य सम्पन्न किये जाते हैं वे अन्य सभी कार्यों में सबसे अधिक महत्व रखते हैं। समिति के प्रस्तावों एवं सिफारिसों को परिषद के सामने सभापति द्वारा ही रखा जाता है। सभापति समिति के किसी कार्य अथवा प्रतिवेदन पर होने वाली बहस के समय समिति का मुख्य वक्ता होता है। जब समिति का सभापति परिषद में समिति की सिफारिशों या प्रतिवेदनों को प्रस्तुत करते समय बोलता है तो जनता स्थानीय सत्ता के कार्यों से भली भांति परिचित हो जाती है। प्रशासकीय दृष्टि से समिति का सभापति परिषद के निर्वाचित सदस्यों में एक महत्वपूर्ण व्यक्ति होता है। उसके कार्य मुख्य रूप से प्रतिवेदक के कार्य हैं। इस सबके अतिरिक्त ब्रिटिश स्थानीय सरकार में समितियों के सभापति का विकासशील योगदान बढ़ते हुए कार्य भार की स्थिति में भी कार्यकुशलता लाता है। सामान्य रूप से अधिकारीगण और विशेष रूप से क्लर्क परिषद की ओर से यह देखता है कि सभापति अथवा समिति में से कोई अपनी सत्ता का, अधिकारों का या विश्वास का दुरुपयोग तो नहीं कर रहा है। यदि वह ऐसा कर रहा हो तो इस बात की सूचना परिषद को दे दी जाती है।

समितियों एवं अधिकारियों के बीच सम्बन्ध

[The relations between Committees and Officers]

ब्रिटिश स्थानीय सत्ताओं के अधिकारी परिषदों की समितियों के साथ

घनिष्ठ सम्बन्ध रखते हैं। इस सम्बन्ध के देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि स्थानीय निकायों के निर्वाचित सदस्यों एवं नियुक्त अधिकारियों के बीच कैसा सम्बन्ध रहता है। अधिकारियों से यह आशा की जाती है कि वे समितियों के कार्यों में सहयोग प्रदान करेंगे। समितियों के साथ उनके सम्बन्ध परिषद की अपेक्षा अधिक घनिष्ठ होते हैं। इस बात पर जोर दिया जाता है कि अधिकारीगण समितियों के साथ अपने सम्बन्धों पर विशेष ध्यान दें। इन अधिकारियों को उन सभी विषयों पर अपना प्रतिवेदन समिति के सामने प्रस्तुत करना होता है जो कि इनके अधिकार क्षेत्र से बाहर होते हैं। परिषद के उत्तरदायित्व के क्षेत्र में अधिकांश विषय उस प्रतिवेदन से प्रकट होते हैं जो कि सम्बन्धित समिति की प्रत्येक बैठक में सम्बन्धित विभागीय अध्यक्ष द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। अपनी समिति को एक विशेष प्रतिवेदन देकर अधिकारी अपने द्वारा किये गये कार्य की सूचना समिति को देता है। उन मामलों को सामने लाता है जिन पर कि ध्यान देने की या निर्णय लेने की जरूरत होती है। कई विषयों पर वह अपनी सिफारिशें और सुझाव प्रस्तुत करता है। नीति सम्बन्धी विषयों एवं अन्य विषयों के बीच एक विभाजक रेखा होती है जो कि इतनी पतली और अस्पष्ट होती है कि स्पष्ट रूप से कभी कभी उसे देखना बड़ा मुश्किल पड़ जाता है। एक विभागीय अध्यक्ष द्वारा अपने सामयिक प्रतिवेदन में प्राय: अनेक विषय ऐसे रखे जाते हैं जिन पर कि वह समिति का निर्देश चाहता है।

छोटी सत्ताओं में अधिकारीगण कभी-कभी मुख-जबानी अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत कर देते हैं अथवा बैठक में अपने प्रतिवेदन को पढ़ कर सुना देते हैं। बड़े आकार वाली सत्ताओं में एक सामान्य व्यवहार के अनुसार प्रतिवेदन को लिखित रूप में पहले ही वितरित कर दिया जाता है। कार्यों की मात्रा अधिक एवं स्वरूप जटिल होने के कारण यह व्यवस्था अत्यन्त आवश्यक हो जाती है। आज की बदली हुई परिस्थितियों में यह जरूरी बन जाता है कि पारषद परिषद की बैठक में आने से पहले ही आवश्यक सामग्री का अध्ययन करलें। लिखित प्रतिवेदन का महत्व कई दृष्टियों से बढ़ जाता है। इसके द्वारा पारषदों को यह अवसर प्राप्त होता है कि वे अपना अधिक ध्यान वाद-विवाद एवं विचार-विमर्श में लगा सकें। लिखित प्रतिवेदन के होने से उन विषयों पर जल्दी एवं बिना विचार किये निर्णय लेने की सम्भावनाएं कम हो जाती हैं जिनको कि आखिरी क्षण में परिषद के सामने रखा गया है। इसके अतिरिक्त एक अच्छे प्रशासन की यह मुख्य विशेषता मानी जाती है कि उसमें उत्तरदायित्व प्रकट होना चाहिये। जिन महत्वपूर्ण विषयों पर अधिकारियों द्वारा सूचना दी जाय अथवा जिनके अनुसार समिति कार्य करे उनका लिखित रूप में अभिलेख होना चाहिए। इसके अतिरिक्त जब एक अधिकारी अपने प्रस्तावों एवं सम्बन्धित सूचना को कागज पर लिखित रूप दे देता है और उसे बैठक से पहले व्यक्तिगत छान-बीन के लिए रख देता है तथा बाद में उस पर सामूहिक रूप से विचार विमर्श किया जाता है, तो इस पद्धति से उसमें ऐसी आदतें पड़ जाती हैं कि वह प्रस्तावों पर स्पष्ट, मूर्त एवं निश्चित रूप से विचार कर सके। समिति की बैठक से पूर्व लिखित

एजेन्डा के साथ जो अन्य कागजात होंगे उनमें विभिन्न समितियों के प्रतिवेदन होंगे। ये प्रतिवेदन दो रूपों में पाये जा सकते हैं। एक सरल तरीका यह है कि समिति के कार्यों का पूरा वृतान्त (Minutes) ज्यों की त्यों परिषद के सामने रख दिया जाये। यह तरीका सरल इसलिए कहा जा सकता है क्योंकि समितियों के कार्यों का वृतान्त तो वैसे भी अभिलिखित किया जायेगा। उसकी कुछ कापियां और बनाली जायें ताकि उनको समिति के बाहर भी भेजा जा सके। इस व्यवस्था का अपना लाभ है वह यह कि समितियों के कार्यों का वृतान्त काफी विस्तृत हो सकता है तथा जो सदस्य उसकी बैठकों में उपस्थित नहीं थे उनको इसे समझने में समय लगेगा। ऐसी स्थिति में उपयुक्त यह समझा जाता है कि उन सभी सदस्यों को लिखित रूप में सारी बातें स्पष्ट कर दी जायें ताकि वे यह आसानी से जान जायें कि समिति क्या कार्य कर रही है। व्यवस्था को और अधिक सरल बनाने के लिए यह भी किया जा सकता है कि प्रत्येक समिति से उसके प्रतिवेदन का संक्षिप्त रूप मांगा जाये तथा उसको ही वितरित किया जाये। इस प्रकार का प्रतिवेदन तैयार करते समय विषयों के बीच अन्तर स्थापित किया जाता है। समिति द्वारा किये गये कार्य, परिषद को प्रतिवेदित कार्य एवं क्रियान्वित होने से पूर्व परिषद के प्रस्ताव की आवश्यकता रखने वाले कार्यों के बीच अन्तर किया जाता है। ये प्रतिवेदन कार्यवाही के वृतान्त की तुलना में अत्यन्त छोटे होते हैं क्योंकि इनमें उन [illegible]

विभागों के लिए जो निर्देश दिये जायें उनके शब्दों को सावधानी के साथ रखा जाना चाहिए। तीसरे, कानूनी सीमाओं एवं प्रशासकीय वांछनीयता को ध्यान में रख कर उसका रूप ऐसा बनाया जाना चाहिए कि सामान्य जनता के सामने जब उसको प्रेस द्वारा प्रतिवेदित किया जाये तो वह इन्हें समझ सके। इन तीनों ही बातों का पूरा-पूरा ध्यान रखना सरल नहीं है।

स्थानीय परिषदों की प्रक्रिया समिति की अपेक्षा अधिक औपचारिक होती है। इस प्रक्रिया के कुछ विषयों को कानून द्वारा विनियमित किया जाता है तथा अन्य को स्थानीय परिषद द्वारा ही बनाये गये स्थायी आदेशों द्वारा। कानून के अनुसार प्रत्येक वर्ष परिषद की कम से कम चार बैठकें होनी चाहिए। सभापति या मेयर को यह शक्ति सौंपी गई है कि वह आवश्यकता समझने पर इसकी अतिरिक्त बैठकें भी बुला सकता है। परिषद के सदस्यों की एक निश्चित संख्या की प्रार्थना पर भी इसकी अतिरिक्त बैठकें बुलाई जा सकती है। वास्तविक व्यवहार में ऐसी कोई भी स्थानीय सत्ता नहीं होती जो कि वर्ष भर में केवल चार बैठकें कर के ही अपने कार्य का प्रबन्ध कर सके। अनेक काउन्टी परिषदें वार्षिक चार बैठकों के अतिरिक्त बजट के लिए बैठक बुलाती है तथा और भी बैठकें करती हैं। अनेक बारो परिषदें कभी भी बैठकें बुलाना आवश्यक मानती हैं। वे प्रायः मासिक बैठक बुलाती हैं।

स्थानीय सत्ताओं को अपनी बैठकों में सामान्य जनता को बुलाने की जरूरत नहीं होती किन्तु वे प्रायः ऐसा करती हैं। यह व्यवस्था की गई है कि 'प्रेस' परिषद की बैठकों में, उसकी समितियों की बैठकों में तथा उन निकायों की बैठकों में जिनको कि शक्ति हस्तांतरित की गई है, उपस्थित हो सकती है। यद्यपि परिषद एक प्रस्ताव पास करके अपनी बैठकों से प्रेस को यह कह कर बाहर रख सकती है कि ऐसा करना जनहित में है, किन्तु यह सम्भव नहीं है कि वह अपनी सभी बैठकों में से प्रेस को अलग रखने का प्रस्ताव पास करदे। यद्यपि वह सामान्य जनता को बाहर रखने का नियम बना सकती है। सम्भवतः यह देखा जाता है कि परिषदें यह चाहती हैं कि प्रेस एवं जनता दोनों ही उनकी बैठकों में भाग लें। जब कभी परिषद यह चाहती है कि व्यक्तिगत रूप से बैठक करे तो वह समिति रूप में अपनी बैठक कर सकती है। ऐसे कई अवसर आते हैं जब कि पूरी परिषद ही समिति के रूप में बैठ जाती है। उदाहरण के लिए, जब [illegible] से सम्बन्धित कोई मामला इतना बड़ा हो कि उसे पूर्ण एवं मुक्त परिषद की [illegible] के लिए अधिकारी रूप से निर्वाचित करने से पूर्व उस पर विस्तार के साथ गुप्त बैठक में विचार किया जाना जरूरी हो। [illegible] परिषदों का जहां तक सम्बन्ध है उनके सम्बन्ध में प्रावधान है कि [illegible] द्वारा नियुक्त एक निरीक्षक उनकी परिषदों की बैठकों में उपस्थित होगा। वह प्रक्रिया में भाग ले सकता है किन्तु उसे मतदान का अधिकार नहीं होता। इस शक्ति का बहुत कम प्रयोग किया गया है।

परिषद की बैठकों की अध्यक्षता [illegible] से उसके [illegible] द्वारा की जाती है। [illegible] प्रक्रिया रखा जाता है। परिषद के सभी [illegible]

करने वालों के बहुमत से लिए जाते हैं किन्तु कानून द्वारा किसी विषय के बारे में विशेष प्रावधान कर दिया जाये तो बात दूसरी है। अध्यक्षता करने वाला व्यक्ति दूसरा वोट [Casting Vote] भी रखता है। मिनिट्स रखना जरूरी होता है। उन पर उसी बैठक में या अगली बैठक में हस्ताक्षर किये जाने चाहिए। मिनिट्स को कार्यवाही का वास्तविक प्रमाण माना जा सकता है। बिना किसी अन्य गवाही के ही इनको प्रमाण माना जा सकता है।

इसके अतिरिक्त अनेक ऐसे प्रावधान हैं जो कि स्थानीय सत्ताओं के कार्य को प्रभावित करते हैं। उनको कुछ समितियां रखनी होती हैं किन्तु सामान्य व्यवहार के आधार पर स्थानीय सत्तायें स्वयं ही यह तय करती हैं कि वे किस प्रकार कार्य करेंगी। इसके लिए वे स्थायी आदेश जारी करती हैं। यदि सामान्य कानून द्वारा कोई शक्ति नहीं दी गई है तो भी स्थानीय सत्ता उस विषय में स्थायी आदेश जारी करने का अधिकार रखती है; क्योंकि जब इसे कुछ कार्य करने या शक्तियों का प्रयोग करने के लिए उत्तरदायी ठहरा दिया जाता है तो यह स्वयं ही इस बात का निर्णय करती है कि वह कार्य किस प्रकार सम्पन्न किया जायेगा। कानून द्वारा कुछ विषय निश्चित कर दिये गये हैं, इन पर स्थायी आदेश जारी करना अनिवार्य समझा जाता है। स्थायी आदेशों का सम्बन्ध परिषद के कार्य संचालन से होता है किन्तु फिर भी यह परिषद की बैठकों की प्रक्रिया से अधिक विषयों पर विचार करते हैं। ये समितियों की बनावट उनके पारस्परिक सम्बन्ध तथा परिषद एवं समितियों के सम्बन्ध तथा सत्तापूर्ण स्टाफ से सम्बन्धित अनेक विषयों पर भी विचार करते हैं।

सहमत होना पड़ता है। जो व्यक्ति किसी समिति की कार्यवाही के लिए प्रारूप तैयार करता है उसे इस कार्य की कठिनाई का पूरा ज्ञान रहता है। संसद को प्रारूप बनाने की समस्या का सामना एक ऐसी सभा में करना होता है जिसकी सदस्या छः सौ से भी अधिक होती है। यही कारण है कि आचरण संहिता के स्पष्ट नियम बनाने होते हैं तथा उनका पालन करने की ओर पर्याप्त ध्यान दिया जाता है। संसद के विशेष कार्य के लिए ये नियम संतोष जनक एवं सही माने जासकते हैं। स्थानीय सत्ताओं की आवश्यकतायें संसद से निश्चय ही भिन्न होती हैं। वे अपने कार्य का संचालन उन सरल आचरण के नियमों से भली प्रकार कर सकती हैं जिनको कि उन्हीं के द्वारा विकसित किया गया है। स्थायी आदेशों को छपे रूप में वितरित किया जाता है, इससे परिषद के सदस्यों एवं अन्य सम्बन्धित लोगों को पर्याप्त सुविधा रहती है। यह सुझाव दिया जाता है कि इन आदेशों को एक डायरी के रूप में प्रकाशित करना चाहिए जिसमें कि समितियों की सूची हो, उनका कार्य-क्षेत्र हो, सदस्यता हो तथा परिषद एवं समितियों की बैठकों की तारीखें हों। इस प्रकार सभी आवश्यक सूचना लोगों को हाथ में ही मिल सकेगी।

स्थायी आदेशों की व्यवस्था चाहे कितनी ही स्पष्ट क्यों न हो उसे अपरिवर्तनीय नहीं माना जाना चाहिए। प्रत्येक वर्ष स्थानीय सरकार की किसी न किसी सेवा के क्षेत्र में परिवर्तन होते ही रहते हैं और इन परिवर्तनों का प्रशासकीय यंत्र पर प्रभाव पड़ना भी अनिवार्य है। समिति के कार्य का संगठन एवं विभागीय बनावट भी इससे पर्याप्त प्रभावित होती है। प्रशासकीय संगठन की समय-समय पुनरीक्षा करते रहना उपयोगी होता है ताकि उसे बदली हुई परिस्थितियों के अनुकूल बनाया जा सके। स्थायी आदेशों के माध्यम से ऐसा किया जाता है। इन्हें वार्षिक रूप से बदल दिया जाता है। कार्यकुशल स्थानीय सत्तायें इसी व्यवहार को अपनाती हैं।

परिषद की कार्यवाही में सभापति का मुख्य स्थान होता है। इस दृष्टि से मेयर एवं सभापति की स्थिति में किसी प्रकार का अन्तर नहीं होता ये दोनों ही कुछ कुछ एक जैसे कार्य ही सम्पन्न करते हैं। परिषद का सभापतित्व मेयर, सभापति, उपसभापति आदि द्वारा किया जाता है। सभापति का कार्य कुछ एक दृष्टियों से तो समिति के सभापति से मिलता है। जब वह बैठकों का कार्य-क्रम तैयार करता है तो ठीक उसी प्रकार व्यवहार करता है किन्तु परिषद के सामने जो विषय विचारार्थ आते हैं उनके विषय में वह समिति के सभापति से भिन्न व्यवहार करता है। उसका कार्य बैठक की केवल अध्यक्षता करना मात्र होता है वह किसी विशेष नीति को अपना कर नहीं चलता। सभापति का यह कर्त्तव्य है कि वह बैठक में सभापतित्व करने से पूर्व ही बैठक के कार्य-क्रम एवं उसके साथ लगे कागजों को अच्छी प्रकार से पढ़ ले परिषद के क्लर्क से बात चीत करने के बाद वह उन पर निशान लगा लेगा तथा आवश्यकता के अनुसार समय पर कार्यवाही करने की सिफारिश करेगा। विशेष रूप से वह विषयों में इस आधार पर भेद कर लेता है कि किनको परिषद में विचारार्थ औपचारिक रूप से प्रस्तुत किया जावे और किनको प्रस्तुत नहीं किया जावे। जब एक या दो समितियों के प्रतिवेदन

प्रस्तुत किये जाने के बाद कुछ विषय विचारार्थ सामने आते हैं तो परिषद द्वारा एक विशेष तरीका अपनाया जाता है। उदाहरण के लिए एक साधारण से केस को लिया जा सकता है जहाँ कि व्यय समिति यह सिफारिश करती है कि अतिरिक्त स्टाफ की नियुक्ति की जाये, वित्त समिति अनुमानों के बारे में सिफारिश करती हुई अतिरिक्त वेतन की सलाह देती है जबकि स्टाफ समिति की सिफारिश स्टाफ की संख्या एवं ग्रेड्स से सम्बन्धित होगी। ऐसी परिस्थित में प्रथम सिफारिश को देखकर कोई निर्णय नहीं लिया जाना चाहिए जब तक अन्य सिफारिशों को भी अच्छी प्रकार से न देख लिया जाये क्योंकि यह हो सकता है कि प्रथम प्रतिवेदन पर ही जो निर्णय लिया जाये उससे बाद वाली भी समस्यायें हल हो जाये। अतः यह प्रथा डाली गई है कि परिषद् किसी निर्णय पर आयें इससे पूर्व वह सभी समितियों द्वारा व्यक्त विचारों का अध्ययन करती है। अधिकांश परिषदों में यह व्यवहार अपनाया जाता है कि वहाँ यदि प्रक्रिया के मामले में कोई विवादपूर्ण प्रश्न उठ खड़ा हो तो सभापति ऐसा प्रबन्ध करता है कि क्लर्क उन कठिनाइयों को परिषद में स्पष्ट कर दे तथा यह बता दे कि उनको किस प्रकार दूर किया जा सकता है प्रायः अन्य अधिकारियों से इस सम्बन्ध में विचार-विमर्श नहीं किया जाता। फिर भी सभापति को यह अधिकार है कि यदि वह किसी विशेष समस्या पर विशेष अधिकारी से परामर्श लेना चाहे तो वह ऐसा कर सकता है।

समिति का सभापति समिति के विशेष कार्य में रुचि लेता है तथा उसके बारे में स्वयं दृष्टिकोण भी रखता है। उसे इस अर्थ में पक्षपात पूर्ण कहा जा सकता है कि वह समिति को एक सुझाव की अपेक्षा दूसरे को स्वीकार करने की सिफारिश कर सकता है। किन्तु वह एक दृष्टि से पक्षपात रहित भी होता है। क्योंकि वह समिति के प्रत्येक सदस्य को समस्या के बारे में उसके विचार प्रस्तुत करने का अवसर देता है चाहे वह स्वयं उनसे सहमत हो अथवा न हो। इस प्रकार समिति के सामने सभी प्रकार के दृष्टिकोण रख दिये जाते हैं। इतना करने के बाद समिति का सभापति कोई भी पक्ष ग्रहण करके उसके अनुसार दृष्टिकोण अपना सकता है। इसके विपरीत परिषद के सभापति को कोई पक्ष नहीं लेना चाहिए। उसका मुख्य उत्तर दायित्व तो परिषद के कार्य का उचित रूप से संचालन करना है। वह यह देखता है कि परिषद की प्रक्रिया में सभी सम्बन्धित स्थायी आदेशों एवं वाद-विवाद के सामान्य नियमों का पालन किया जाये। इसके लिए वह विवादपूर्ण प्रश्नों को इतने सरल रूप में प्रस्तुत करता है जितने में कर सके। यदि वह किसी विषय पर बोलना चाहे तो निश्चय ही बोल सकता है किन्तु वह ऐसे अवसरों को यथा सम्भव दूर ही रखता है। ऐसा वह विवाद से बचने के लिए करता है। जब तक एक परिषद का वाद-विवाद पर्याप्त गर्मा–गर्म रूप धारण करलेता है तो सभापति ऐसी स्थिति में उस विवाद को नहीं सुलझा पाएगा जब कि वह स्वयं भी एक पक्ष की ओर हो। सभापति का मुख्य कार्य निष्पक्षतापूर्वक अध्यक्षता करना होने के कारण यह उचित समझा जाता है कि उसकी नियुक्ति करते समय राजनैतिक दल को महत्व नहीं दिया जाए। सभापति के पद पर कार्य करने वाला व्यक्ति सार्वजनिक कार्य का पर्याप्त अनुभव

५

स्थानीय सरकार के सेवीवर्ग का प्रबन्ध

[PERSONNEL MANAGEMENT OF LOCAL GOVERNMENT]

स्थानीय सरकार के विभिन्न उत्तरदायित्वों का संचालन करने वाले दो पहियों में से जनता का प्रतिनिधि एक पहिया होता है। यह यद्यपि गाड़ी का महत्वपूर्ण अंग है किन्तु फिर भी पर्याप्त नहीं है और केवल इसी के सहारे गाड़ी का चलना या गति ग्रहण करना असम्भव है। स्थानीय सरकार की गाड़ी का दूसरा पहिया नियुक्त अधिकारी होते हैं जो कि यद्यपि निर्वाचित प्रतिनिधियों के आधीन रह कर उनके निर्देशन में कार्य करते हैं किन्तु वास्तविक व्यवहार में उनका योगदान अधिक महत्वपूर्ण होता है। ये अधिकारी किस प्रकार नियुक्त किए जाते हैं? किस प्रकार इन्हें प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है? इनके वेतन तथा सेवा की अन्य शर्तें क्या हैं और आवश्यकता के समय इनके विरुद्ध क्या अनुशासनात्मक कार्यवाही की जाती है? आदि प्रश्न विशेष महत्व के होते हैं जिन पर विचार किए बिना स्थानीय सरकार का अध्ययन पूर्णता से बहुत दूर रहता है। इस सम्बन्ध में मि० जैक्सन का यह कहना पूर्णतः सत्य है कि स्थानीय सरकार की सफलता बहुत कुछ उन विभिन्न गुणों के अच्छे समायोजन का परिणाम है जो कि निर्वाचित व्यक्तियों एवं वैतनिक अधिकारियों द्वारा प्रदान किया जाता है।† इस दृष्टि से यह अत्यन्त महत्वपूर्ण समझा जाता है कि स्थानीय सत्ता का स्टाफ अत्यन्त योग्य हो तथा उसकी भर्ती, प्रशिक्षण एवं सेवा की शर्तें औचित्य पूर्ण हों। कानून के अनुसार ग्रेट ब्रिटेन में स्थानीय सत्तायें भर्ती कर्ता के पूरे अधिकार रखती हैं। वे कभी किसी को हटा सकती हैं। उनको इस सम्बन्ध में सर्वोच्च सत्ता प्राप्त है। स्थानीय सरकार के अधिकारियों

---

†"... ... ...The success of Local Government has been attributed very largely to a good combination of the different qualities that are contributed by elected people and paid officials."

—*R M. Jackson*, Op. Cit., P. 102.

पर प्रतिरोध एवं नियन्त्रण की जो व्यवस्था लागू की जाती है उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि यह कर्मचारी बहुत कुछ अपने नियुक्तिकर्ता की दया पर निर्भर रहते हैं।

स्थानीय सरकार की सेवा में उनके पद ऐसे हैं जो कि पिछली कई शताब्दियों से चले आ रहे हैं। कई एक पुराने बारोज का यह रिकार्ड है कि उनमें मध्य युग से चला आ रहा काउन्टी क्लर्क का पद अब भी ज्यों का त्यों बना आ रहा है। वैसे कई व्यावहारिक दृष्टियों से देखा जाए तो स्थानीय सरकार की सेवाएं उस समय उत्पन्न हुयीं जबकि आधुनिक स्थानीय सरकार प्रारम्भ हुई अर्थात् करीब एक शताब्दी पूर्व। उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ तक स्थानीय सरकार की सेवाओं का प्रशासन सामान्य रूप से वैतनिक अधिकारियों द्वारा नहीं किया जाता था। स्थानीय सरकार के कार्यों में सबसे महत्वपूर्ण पद शान्ति के न्यायाधीश का होता था जो कि एक अवैतनिक पदाधिकारी था। इसी प्रकार से विभिन्न पेरिशों के अधिकारी भी बिना वेतन पाए ही सेवाएं प्रदान करते थे। ज्यों ज्यों सेवाओं का विस्तार हुआ तथा उनका क्षेत्र एवं संख्या बढ़ी त्यों-त्यों वैतनिक अधिकारियों की आवश्यकताएं महसूस होने लगीं। उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य तक अवैतनिक अधिकारियों के स्थान पर पूरे समय कार्य करने वाले वैतनिक अधिकारियों की नियुक्ति की जाने लगी। जब काउन्टी परिषदें और जिला परिषदें अस्तित्व में आईं तो स्थानीय सत्ताओं द्वारा कई एक अधिकारी नियुक्त किए गए। ये व्यक्ति अन्य सत्ताओं के कर्मचारियों के साथ [illegible] सम्बन्ध रखते थे। सन् १९०४ तक इनका कोई व्यावसायिक संघ [illegible] का [illegible] था।

उपयोगी रहेगा। कर्मचारियों की प्रथम श्रेणी में अधिकारी स्टाफ आता है अर्थात् विभिन्न विभागों के अध्यक्ष तथा उनके आधीन कार्य करने वाले अन्य लोग जैसे समिति की बैठकों एवं परिषद की बैठकों के लिए कागज तैयार करना, लेखे रखना, धन प्राप्त करना और भुगतान करना तथा परिषद और समितियों के निर्णय को क्रियान्वित करना आदि कार्यों से सम्बन्धित लोग होते हैं। दूसरे समूह में विभिन्न श्रेणियों वाले अनेक कर्मचारी आते हैं, जैसे अध्यापक, नगरपालिका उद्यमों के प्रबन्धक एवं कार्यपालिका पदों पर कार्य करने वाले अन्य लोग। तीसरे समूह में वे कर्मचारी आते हैं जो कि विभिन्न सेवाओं में शारीरिक श्रम करते हैं, जैसे सड़क बनाना जल वितरण तथा परिषद द्वारा किए जाने वाले ऐसे ही अन्य कार्य। द्वितीय एवं तृतीय समूहों में आने वाले कर्मचारियों की योग्यता, नियुक्ति एवं कार्यों की सामान्य शर्तों की दृष्टि से स्थिति वैसी ही होती है जैसी कि व्यक्तिगत रोजगार में होती है। स्थानीय सत्ताओं के अधिकारियों से हमारा तात्पर्य प्रथम समूह में आने वाले अधिकारियो से है। इन अधिकारियों में भी उच्च एवं मध्यम श्रेणी के लोग ध्यान के अधिक केन्द्र हैं क्योंकि अन्य कार्य तो यहां भी ऐसा ही होता है जैसा कि अन्य विभागों में।

स्थानीय सत्ता अपनी आवश्यकता के अनुसार कुछ अधिकारियों की नियुक्ति करती है एक क्लर्क या सचिव एवं वे विशेष विभागीय अध्यक्ष जो कि उस विशेष स्थानीय सत्ता की प्रकृति एवं कार्यों से मेल खाते हों। ये अधिकारी अन्य ऐसे अधिकारियों की नियुक्ति करते हैं जो कि उनके कार्यों के संचालन के लिए आवश्यक सिद्ध हों। नियुक्ति की शक्तियां परिषद में निहित होती है वही कर्मचारियों का वेतन निश्चित करने के लिए भी उत्तरदायी है तथा उसी के द्वारा सेवा की शर्तें निश्चित की जा सकती हैं। स्थानीय सरकार के अधिकारी अपने पद पर परिषद के प्रसाद पर्यन्त ही रहते हैं। यदि उनको पद विमुक्त करना हो तो एक निश्चित समय पूर्व नोटिस दे दिया जाता है। ये कानूनी प्रावधान हैं। वास्तविक व्यवहार में कोई भी परिषद अपने कर्मचारियों को मनमाना वेतन नहीं दे सकती और न ही वह चाहे जैसी शर्तें निश्चित कर सकती है। वैधानिक व्यवस्था के अतिरिक्त स्थानीय सरकार के संगठन के सम्बन्ध में अनेक परम्परायें स्थापित हो गई हैं। यही बात उसके कार्यालय के बारे में भी सही है वैसे कानून के अनुसार तो उसका कार्यकाल निश्चित नहीं होता किन्तु वास्तविक व्यवहार में प्रत्येक अधिकारी को कार्य सम्बन्धी पर्याप्त सुरक्षा प्राप्त रहती है।

स्थानीय परिषद को अधिकारियों की नियुक्ति वेतन, एवं पदविमुक्ति आदि के बारे में जो अधिकार प्राप्त हैं उनके कुछ अपवाद भी
अधिकारियों के सम्बन्ध में कानून द्वारा यह कहा गया है कि उन
केन्द्रीय सरकार को पर्याप्त नियंत्रण रखने का अधिक[illegible] अतः
कारियों की नियुक्ति, वेतन एवं पदविमुक्ति आदि के
की स्वीकृति आवश्यक समझी जाती है। इंग्लैण्ड
क्लर्कों की नियुक्ति पर केन्द्रीय सरकार की स्वी
अतिरिक्त स्वास्थ्य के अधिकांश मैडीकल अधिका

[illegible] को पदविमुक्त करने के सम्बन्ध में भी उनकी स्वीकृति आवश्यक समझी जाती है। इस प्रकार के प्रावधानों के पीछे ऐतिहासिक कारण है। केन्द्रीय सरकार निश्चय ही इस बात में रुचि लेती है कि स्थानीय सरकार में उच्च पदों पर किसकी नियुक्ति की जा रही है। यही कारण है कि इस सम्बन्ध में किये गये व्यवस्थापन ने केन्द्रीय सरकार के हस्तक्षेप की मात्रा को बढ़ा दिया है।

जहाँ कहीं भी यह व्यवस्था की गई है कि अधिकारियों की नियुक्ति, वेतन या पद विमुक्ति आदि पर केन्द्रीय सरकार की स्वीकृति प्राप्त की जाये वहाँ इन प्रावधानों का उद्देश्य स्थानीय सरकार के इन अधिकारियों के कार्यों को प्रभावित करना नहीं होता है वरन् उनको उनकी परिषद के विरुद्ध सुरक्षा प्रदान करना होता है। इतना होने पर भी अधिकारी को स्थानीय सत्ताओं के सभी आदेश एवं निर्देश मानने होते हैं वह किसी भी अर्थ में केन्द्र सरकार का सेवक नहीं बन जाता। सैद्धान्तिक रूप में यह सब सच होते हुए भी व्यावहारिक रूप में ऐसा नहीं हो पाता क्योंकि केन्द्रीय सरकार के हाथों में स्थानीय सरकार के सेवकों के भाग्य की बागडोर रहती है उसकी ओर निर्देशन के लिए निहारना इन अधिकारियों के लिए स्वाभाविक है। अनुभव के आधार पर यह माना जाता है कि एक अधिकारी को अपनी पूरी स्वामिभक्ति उसी सत्ता के प्रति रखनी चाहिए जिसकी कि वह सेवा कर रहा है। यदि वह केन्द्र सरकार को खुश रखकर अपना काम करने की धुन में रहेगा तो निश्चय ही स्थानीय सरकार के प्रति वह अपने दायित्वों को पूरा कर पायेगा। जेक्सन (R. M. Jackson) महोदय का यह कथन पर्याप्त महत्व नहीं रखता है कि स्थानीय सत्ताओं को इस सम्बन्ध में केन्द्रीय सरकार की किसी भी शक्ति को अवांछनीय मानना चाहिए जिसे कि केवल अपवाद रूप परिस्थितियों में ही न्यायोचित [illegible] सकता है।* स्थानीय सत्ता की परिषद को यह अधिकार होता है कि वह स्थापना से सम्बन्धित किसी भी विषय पर विचार विमर्श कर सके। किन्तु यह विचार विमर्श परिषद की साधारण बैठक में नहीं किया जाना चाहिए जहाँ पर सामान्य जनता एवं प्रेस उपस्थित रहती है। अधिकारी को वहाँ पर अपना पक्ष स्पष्ट करने का अवसर भी प्राप्त नहीं हो पाता अतः उसकी दृष्टि से यह व्यवस्था अन्यायपूर्ण मानी जायेगी। जहाँ तक सम्भव हो सके स्थापना से सम्बन्धित मामलों को समिति में ही सुलझाया जाना चाहिए तथा परिषद में इनके ऊपर वाद-विवाद नहीं किया जाना चाहिए। यदि स्वयं परिषद इन मामलों पर विचार करना चाहे तो उसको समिति के रूप में की जाने वाली अपनी गुप्त बैठक में ही ऐसा करना चाहिए। इस व्यवस्था को प्राप्त करने के लिए कई एक स्थानीय सत्तायें यह स्थायी आदेश स्वीकार कर लेती हैं कि [illegible]यदि परिषद की बैठक में नियुक्ति, पदोन्नति, पदविमुक्ति, वेतन या

---

*"Hence, local authorities should always regard any powers of the central government in this respect as being undesirable and to be justified only in exceptional circumstances."

—*R. M. Jackson*, Op. Cit., P. 104.

उपयोगी रहेगा। कर्मचारियों की प्रथम श्रेणी में अधिकारी स्टाफ आता है अर्थात् विभिन्न विभागों के अध्यक्ष तथा उनके आधीन कार्य करने वाले अन्य लोग जैसे समिति की बैठकों एवं परिषद की बैठकों के लिए कागज तैयार करना, लेखे रखना, धन प्राप्त करना और भुगतान करना तथा परिषद और समितियों के निर्णय को क्रियान्वित करना आदि कार्यों से सम्बन्धित लोग होते हैं। दूसरे समूह में विभिन्न श्रेणियों वाले अनेक कर्मचारी आते हैं, जैसे अध्यापक, नगरपालिका उद्यमों के प्रबन्धक एवं कार्यपालिका पदों पर कार्य करने वाले अन्य लोग। तीसरे समूह में वे कर्मचारी आते हैं जो कि विभिन्न सेवाओं में शारीरिक श्रम करते हैं, जैसे सड़क बनाना जल वितरण तथा परिषद द्वारा किए जाने वाले ऐसे ही अन्य कार्य। द्वितीय एवं तृतीय समूहों में आने वाले कर्मचारियों की योग्यता, नियुक्ति एवं कार्यों की सामान्य शर्तों की दृष्टि से स्थिति वैसी ही होती है जैसी कि व्यक्तिगत रोजगार में होती है। स्थानीय सत्ताओं के अधिकारियों से हमारा तात्पर्य प्रथम समूह में आने वाले अधिकारियो से है। इन अधिकारियों में भी उच्च एवं मध्यम श्रेणी के लोग ध्यान के अधिक केन्द्र हैं क्योंकि अन्य कार्य तो यहां भी ऐसा ही होता है जैसा कि अन्य विभागों में।

स्थानीय सत्ता अपनी आवश्यकता के अनुसार कुछ अधिकारियों की नियुक्ति करती है एक क्लर्क या सचिव एवं वे विशेष विभागीय अध्यक्ष जो कि उस विशेष स्थानीय सत्ता की प्रकृति एवं कार्यों से मेल खाते हों। ये अधिकारी अन्य ऐसे अधिकारियों की नियुक्ति करते हैं जो कि उनके कार्यों के संचालन के लिए आवश्यक सिद्ध हों। नियुक्ति की शक्तियां परिषद में निहित होती है वही कर्मचारियों का वेतन निश्चित करने के लिए भी उत्तरदायी है तथा उसी के द्वारा सेवा की शर्तें निश्चित की जा सकती हैं। स्थानीय सरकार के अधिकारी अपने पद पर परिषद के प्रसाद पर्यन्त ही रहते हैं। यदि उनको पद विमुक्त करना हो तो एक निश्चित समय पूर्व नोटिस दे दिया जाता है। ये कानूनी प्रावधान हैं। वास्तविक व्यवहार में कोई भी परिषद अपने कर्मचारियों को मनमाना वेतन नहीं दे सकती और न ही वह चाहे जैसी शर्तें निश्चित कर सकती है। वैधानिक व्यवस्था के अतिरिक्त स्थानीय सरकार के संगठन के सम्बन्ध में अनेक परम्परायें स्थापित हो गई हैं। यही बात उसके कार्यालय के बारे में भी सही है वैसे कानून के अनुसार तो उसका कार्यकाल निश्चित नहीं होता किन्तु वास्तविक व्यवहार में प्रत्येक अधिकारी को कार्य सम्बन्धी पर्याप्त सुरक्षा प्राप्त रहती है।

स्थानीय परिषद को अधिकारियों की नियुक्ति वेतन, एवं पदविमुक्ति आदि के बारे में जो अधिकार प्राप्त हैं उनके कुछ अपवाद भी हैं। कुछ अधिकारियों के सम्बन्ध में कानून द्वारा यह कहा गया है कि उनके बारे में केन्द्रीय सरकार को पर्याप्त नियंत्रण रखने का अधिकार है। अतः इन अधिकारियों की नियुक्ति, वेतन एवं पदविमुक्ति आदि के बारे में केन्द्रीय सरकार की स्वीकृति आवश्यक समझी जाती है। इंगलैण्ड में काउन्टी परिषदों के क्लर्कों की नियुक्ति पर केन्द्रीय सरकार की स्वीकृति ली जाती है। इसके अतिरिक्त स्वास्थ्य के अधिकांश मैडीकल अधिकारियों एवं जनस्वास्थ्य निरी-

क्षकों को पदविमुक्त करने के सम्बन्ध में भी उसकी स्वीकृति आवश्यक समझी जाती है। इस प्रकार के प्रावधानों के पीछे ऐतिहासिक कारण है। केन्द्रीय सरकार निश्चय ही इस बात में रूचि लेती है कि स्थानीय सरकार में उच्च पदों पर किसकी नियुक्ति की जा रही है। यही कारण है कि इस सम्बन्ध में किये गये व्यवस्थापन ने केन्द्रीय सरकार के हस्तक्षेप की मात्रा को बढा दिया है।

जहाँ कहीं भी यह व्यवस्था की गई है कि अधिकारियों की नियुक्ति, वेतन या पद विमुक्ति आदि पर केन्द्रीय सरकार की स्वीकृति प्राप्त की जाये वहाँ इन प्रावधानों का उद्देश्य स्थानीय सरकार के इन अधिकारियों के कार्यों को प्रभावित करना नहीं होता है वरन् उनको उनकी परिषद के विरुद्ध सुरक्षा प्रदान करना होता है। इतना होने पर भी अधिकारी को स्थानीय सत्ताओं के सभी आदेश एवं निर्देश मानने होते हैं वह किसी भी अर्थ में केन्द्र सरकार का सेवक नहीं बन जाता। सैद्धान्तिक रूप में यह सब सच होते हुए भी व्यावहारिक रूप में ऐसा नहीं हो पाता क्योंकि केन्द्रीय सरकार के हाथों में स्थानीय सरकार के सेवकों के भाग्य की बागडोर रहती है उसकी ओर निर्देशन के लिए निहारना इन अधिकारियों के लिए स्वाभाविक है। अनुभव के आधार पर यह माना जाता है कि एक अधिकारी को अपनी पूरी स्वामिभक्ति उसी संस्था के प्रति रखनी चाहिए जिसकी कि वह सेवा कर रहा है। यदि वह केन्द्र सरकार को खुश रखकर अपना लाभ करने की धुन में रहेगा तो निश्चय ही स्थानीय सरकार के प्रति वह अपने दायित्वों को पूरा कर पायेगा। जेक्सन (R M. Jackson) महाशय का यह कथन पर्याप्त महत्व नहीं रखता है कि स्थानीय सत्ताओं को इस सम्बन्ध में केन्द्रीय सरकार की किसी भी शक्ति को अवांछित मानना चाहिए जिसे कि केवल अपवाद रूप परिस्थितियों में ही न्यायोचित कहा जा सकता है।* स्थानीय सत्ता की परिषद को यह अधिकार होता है कि वह स्टाफ से सम्बन्धित किसी भी विषय पर विचार विमर्श कर सके। किन्तु यह विचार विमर्श परिषद की साधारण बैठक में नहीं किया जाना चाहिए जहाँ पर सामान्य जनता एवं प्रेस उपस्थित रहती है। अधिकारी को अपना पक्ष स्पष्ट करने का अवसर ही प्राप्त नहीं हो पाता अतः उसकी दृष्टि से यह व्यवस्था अन्यायपूर्ण मानी जायेगी। जहाँ तक सम्भव हो सके स्टाफ से सम्बन्धित मामलों को समिति में ही सुलझाया जाना चाहिए तथा परिषद में उसके ऊपर वाद-विवाद नहीं किया जाना चाहिए। यदि स्वयं परिषद इन मामलों पर विचार करना चाहे तो उसको समिति के रूप में की जाने वाली अपनी गुप्त बैठक में ही ऐसा करना चाहिए। इस व्यवस्था को प्राप्त करने के लिए कई एक स्थानीय सत्तायें यह स्थायी आदेश स्वीकार कर लेती हैं कि "यदि परिषद की बैठक में नियुक्ति, पदोन्नति, पदविमुक्ति, वेतन या

---

*"Hence, local authorities should always regard any powers of the central government in this respect as being undesirable and to be justified only in exceptional circumstances."

—*R. M. Jackson*, Op. Cit., P. 104.

सेवा की शर्तों से सम्बन्धित अथवा परिषद द्वारा नियुक्त व्यक्तियों के व्यवहार से सम्बन्धित कोई प्रश्न उठे तो इन पर परिषद द्वारा समिति का रूप धारण करके विचार किया जाना चाहिए यदि परिषद अन्य कोई प्रावधान करदे तो बात दूसरी है।

अधिकारियों की नियुक्ति एवं प्रशिक्षण
[Recruitment and Training of Officers]

सार्वजनिक सेवा के कर्मचारियों की भर्ती एवं प्रशिक्षण के लिए द प्रकार के तरीके अपनाये जा सकते हैं अर्थात् केन्द्रीय सरकार द्वारा की गई नियुक्ति और स्थानीय सरकार द्वारा की गई नियुक्ति। ग्रेट ब्रिटेन की नागरिक सेवरा को पर्याप्त अकार्यकुशल माना जाता है तथा समय-समय पर इसमें सुधा करने के सुझाव दिये जाते रहे हैं। प्रारम्भ में भर्ती के लिए कोई परीक्षा लेने की व्यवस्था नहीं थी। बिना किसी जांच के ही बाहरी प्रभाव के आधार पर सेवा में प्रवेश प्रदान देकर दिया जाता था। नियुक्तियां मंत्री द्वारा की जाती थीं। जब कभी किसी अधिकारी की मृत्यु या सेवा निवृत्ति के कारण पद रिक्त होता था, उस पर मंत्री के मित्रों एवं सबन्धियों को नियुक्त कर दिया जाता था। इन पदों का वेतन बहुत अच्छा होता था। पद के कर्त्तव्यों को अधीनस्थ अधिकारी के कन्धों पर डालकर पदाधिकारी बड़े आराम का जीवन व्यतीत कर सकता था। सरकारी कार्यालयों में कार्य करने वाले लोग प्राय: अस्वस्थ एवं कमजोर होते थे। उनको और कहीं भी स्थान प्राप्त नहीं होता था तथा वे व्यक्तिगत संस्थाओं में भी कार्य नहीं कर सकते थे अत: वे सरकारी सेवा में प्रविष्ट हो जाते थे ताकि आराम से अपना कार्य करते रहें। जब इस व्यवस्था में सुधार किया गया तो यह सिद्धान्त स्वीकार किया गया कि भर्तियां खुली प्रतियोगिता के आधार पर की जायें। इस व्यवस्था को लागू करने के लिए नागरिक सेवा आयोग की स्थापना की गई जो कि एक निष्पक्ष निकाय होता है।

भर्ती की पुरानी व्यवस्था में 'योग्यता' बेकार जाती थी क्योंकि जिस व्यक्ति को क्लर्क नियुक्त किया जाता था उसको नीचे से ही प्रारम्भ करना होता था। अत: जिस व्यक्ति में अधिक उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य के लिए योग्यता, बुद्धि एवं प्रशिक्षण था उसे अपने प्रारम्भिक वर्ष कागजों की कापियां करने तथा अन्य ऐसे ही सरल कार्य करने में ही बिताना होता था। इस व्यवस्था को हटाने के लिए प्रतियोगितापूर्ण परीक्षाओं के साथ ही सेवा के विभिन्न वर्ग भी बना दिये गये जिनके लिए आवश्यक प्रशिक्षण योग्यताएं अलग-अलग निर्धारित कर दी गईं।

स्थानीय सेवा का वर्गीकरण (Classification) तीन वर्गों में किया गया। सबसे निम्न वर्ग में लिपिक अधिकारी थे जिनमें टंकणकर्त्ता आदि भी शामिल थे। इन अधिकारियों के कर्त्तव्यों का प्रसार पर्याप्त होता था वे किसी भी विषय को सुपरिभाषित विनियमों, निर्देशों एवं सामान्य व्यवहार के आधार पर लेखों को, दावों को, तथा रिटर्नों को देखते थे, छानबीन करते थे, चैक करते थे। निर्देशों के अनुसार ही रिटर्न के लिए विषय को तैयार करते थे तथा निर्धारित रूप में लेखों एवं सांख्यिकी को तैयार करते थे।

ऐसी आवश्यक सामग्री तैयार करते थे जिसके आधार पर कि निर्णय लिये जा सकें तथा लिपिक सहायकों के कार्य को पर्यवेक्षित किया जा सके। अधिकारियों का दूसरा वर्ग कार्यपालिका वर्ग (Executive Class) था। यह वर्ग लिपिक वर्ग एवं प्रशासकीय वर्ग के बीच का था। इसका मुख्य कार्य स्थापित नियमों की सीमा में रह कर दिन प्रतिदिन के कार्यों को सम्पन्न करना था। इनके द्वारा वितरण, वित्त, लेखा कार्य एवं अन्य विशेषतापूर्ण कार्य भी किये जाते थे जिनमें किसी व्यावसायिक योग्यता की आवश्यकता नहीं होती थी। तीसरा वर्ग, जो कि सर्वोच्च वर्ग था, प्रशासनिक वर्ग (Administrative Class) था। वे मुख्य रूप से नीति से सम्बन्धित रहते हैं। वे विभागों के कार्यों का निर्देशन करते हैं, मंत्रियों को संसदीय एवं विभागीय मामलों पर परामर्श देते हैं साथ ही प्रशासनिक क्रियाओं में आवश्यक समन्वय की स्थापना करते हैं।

संशोधित व्यवस्था में यह सिद्धान्त अपनाया गया कि लोक सेवा को इन तीनों ही वर्गों के लिए प्राप्त व्यक्तियों में से योग्यतम की नियुक्ति करनी चाहिये। इस सिद्धान्त को व्यवहारिक रूप में परिणित करने के लिए यह जरूरी होता है कि प्रत्याशी की परीक्षा ली जाये और परीक्षा भी उन विषयों में ली जाये जिनका सम्बन्ध उसके विशेष कार्यों से रहता है। सार्वजनिक सेवाओं में प्रविष्ट होने के लिए यह आवश्यक होना चाहिये कि प्रत्याशी को प्रशासन, कानून, अर्थशास्त्र, तथा विभागीय कार्य से सम्बन्धित सामाजिक विज्ञान की अन्य शाखाओं का ज्ञान होना चाहिये। किन्तु इस सिद्धान्त को व्यवहार में कम अपनाया गया तथा प्रत्याशी से ली जाने वाली परीक्षा का सम्बन्ध उस विषय से बहुत कम होता था जिसके अनुसार कि उसे अपने भावी पद के दायित्वों को सम्पन्न करना है।

लिपिक वर्ग की सेवाओं में प्रवेश पाने वाले लड़के-लड़कियों की उम्र सोलह और अठारह के बीच में होती है। इसकी परीक्षा के विषय रखे जाते हैं, अंग्रेजी, अंकगणित या तीन अन्य विषय जिनका चयन प्रत्याशी द्वारा गणित, विज्ञान, भाषा, इतिहास, एवं भूगोल में से किया जाता है। प्रत्याशी प्राय: वे होते हैं जिन्होंने साधारण स्तर पर शिक्षा का सामान्य प्रमाणपत्र लिया है। कार्यपालिका वर्ग की परीक्षाओं के विषय कुछ अधिक व्यापक होते हैं। प्रशासकीय वर्ग के सेवाओं के प्रत्याशी प्रायः सभी स्नातक होते हैं तथा वे उन विषयों में से कोई भी विषय ले सकते हैं जो कि उन्होंने विश्वविद्यालय में डिग्री स्तर पर पढ़े हैं।

परीक्षकों द्वारा प्रत्याशी को योग्यता के अनुसार क्रम से रखा जाता है तथा फिर रिक्त स्थानों के अनुसार उम्मीदवारों को ऊपर से ही लिया जाता है। इस व्यवस्था में यह हो सकता है कि जिस व्यक्ति को सेवा के लिए छांटा गया है उसको उन विषयों के बारे में थोड़ी भी जानकारी न हो जो कि उसके पद से सम्बन्ध रखते हैं। इसके पीछे मूल विचार यही कार्य करता है कि परीक्षा के द्वारा प्रत्याशी की सामान्य सूझ एवं बुद्धि के स्तर को मापा जाता है न कि उसके विषय ज्ञान को। विषय का ज्ञान तो केवल एक माध्यम मात्र है। जब एक व्यक्ति एक कार्य में योग्य सिद्ध हो जाता है तो

आशा की जाती है कि अन्य कार्य को भी वह योग्यता पूर्वक ही सम्पन्न करेगा। सभी वर्गों की सेवाओं में प्रवेश पाने के लिए लिखित परीक्षा के अतिरिक्त मौखिक परीक्षा भी की जाती है ताकि प्रत्याशी के व्यक्तित्व का पूरी तरह से अध्ययन किया जा सके।

ग्रेट ब्रिटेन में प्रत्याशी को उसके कार्य का प्रशिक्षण तब प्रदान किया जाता है जब कि वह नियुक्त कर लिया जाता है। नियुक्ति के बाद प्रशिक्षण देने की प्रथा सभी देशों में समान रूप से नहीं अपनायी जाती। उदाहरण के लिए जर्मनी में एक व्यक्ति को प्रशासनिक पद के लिए उस समय उपयुक्त समझा जाता है जब कि वह विश्वविद्यालय का अध्ययन करने के अतिरिक्त प्रशासन में भी विशेष प्रशिक्षण प्राप्त करले। सेवा-पूर्व प्रशिक्षण को कुछ सेवाओं में उपयुक्त समझा जाता है किन्तु अन्य सेवाओं में इसे अव्यावहारिक माना जाता है। मुख्य रूप से बौद्धिक कार्यों में इस प्रकार का प्रशिक्षण अधिक प्रभावशाली सिद्ध नहीं होता। अभियन्ताओं के लिए इस प्रकार का प्रशिक्षण उपयोगी हो सकता है किन्तु नागरिक सेवा में इस व्यवस्था को अपनाने में कठिनाई होगी। जेक्सन के कथनानुसार इस व्यवस्था को नागरिक सेवा में नही अपनाया जा सकता क्योंकि यहां नियुक्तिकर्ता अनेक प्रकार के नहीं होते। नागरिक सेवक को या तो कार्य पर ही सीखना चाहिये अथवा सीखना ही नहीं चाहिये।*

वर्तमान युग में प्रशासकीय वर्ग की नियुक्ति से सम्बंधित परीक्षा प्रणाली में कुछ अन्तर आ गया है। विश्व-युद्ध के परिणामस्वरूप भर्ती की प्रणाली पर भारी प्रभाव पड़ा। युद्ध के बाद यह सम्भव नहीं था कि सेना में कार्य कर रहे व्यक्तियों से यह कहा जाए कि वे विश्वविद्यालयों से हाल ही में डिग्री प्राप्त प्रत्याशियों के साथ प्रतियोगिता करें। इसके परिणामस्वरूप साक्षात्कार का समय बढ़ा तथा लिखित परीक्षा के प्रसार एवं प्रभाव को कम किया गया। इन परिवर्तनों के बावजूद भी मूल सिद्धान्त में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं किया गया कि प्रत्याशी को उसकी सामान्य योग्यता के आधार पर नियुक्त किया जाए न कि उसकी किसी तकनीकी योग्यता के आधार पर। प्रशासकीय वर्ग की सेवाओं में सामान्य योग्यता के आधार पर लोगों की नियुक्ति करने के पीछे यह मान्यता थी कि प्रशासन एक अपने ही प्रकार की व्यावसायिक कुशलता है तथा इसको सीखने का एकमात्र साधन इसको करना है।† वर्तमान प्रशासन में व्यावसायिक कुशलता एवं तकनीकी

---

*"A similar system could not be devised for the civil service because there is no variety of employer; he must learn on the job or not learn at all."

—*R. M. Jackson*, Op. cit., P. 103

†"The idea of an administrative class selected for its general ability is that administration is a professional skill in its own right, and that the only way in which it can be learnt is by doing it."

—Ibid.

योग्यता का महत्व पहले की अपेक्षा बहुत बढ़ गया है किन्तु फिर भी विशेषज्ञ अधिकारियों को प्रशासन के उच्च शिखर पर नहीं बैठाया जा सकता, उनका प्रभाव अवश्य उल्लेखनीय रहता है। सिद्धान्त रूप में ये लोग परामर्श देने एवं सहायता करने का कार्य करते हैं। यह व्यवस्था उपयोगी है अथवा नहीं ? संतोषजनक है अथवा नही ? ये अलग प्रश्न हैं जिनके बारे में विचारक एकमत नहीं है। नागरिक सेवकों में तकनीकी योग्यताएं नागरिक सेवक बनने के बाद भी आ सकती हैं और उनको ही उपयोगी माना जायेगा। सभी वर्गों के सेवकों को सेवाकालीन प्रशिक्षण दिया जाना ही अधिक उपयोगी माना जाता है। औपचारिक रूप से कुछ निर्देश भी दिए जा सकते हैं किन्तु प्रशिक्षण का अधिकांश भाग किसी उच्च अधिकारी के तात्कालिक पर्यवेक्षण में व्यतीत होता है।

उक्त व्यवस्था ब्रिटिश नागरिक सेवा के राष्ट्रीय स्तर पर अपनाई जाती है। यदि हम स्थानीय स्तर की ओर दृष्टिपात करें तो पायेंगे कि स्थिति पूर्ण रूप से उल्टी है। स्थानीय स्तर पर प्रायः सभी उच्च पदों पर व्यावसायिक योग्यता सम्पन्न व्यक्ति रहते हैं तथा यहाँ नागरिक सेवा की भांति प्रशासकीय वर्ग नहीं होता। यहां यह प्रश्न उठ सकता है कि स्थानीय सेवा की तकनीकी प्रकृति का कारण क्या है कि भिन्न व्यवस्था । अपनाया गया। इसके स्पष्टीकरण स्वरूप यही कहा जा सकता है कि स्थानीय सरकार की सेवाएं कुछ विशेष कार्य को सम्पन्न करने के लिए अस्तित्व में आई जो कि मुख्य रूप से इन्जीनीयरिंग प्रकृति का था। स्थानीय परिषदों को ऐसे लोगों की आवश्यकता थी जो कि जल-वितरण एवं सफाई का कार्य सम्भाल सकें, भवनों एवं सड़कों की रचना कर सकें, पुल बनवा सकें। यह सारा कार्य कोई भी गैर-विशेषज्ञ अधिकारी सफलता के साथ नहीं कर सकता था अतः इन सेवाओं के लिए डाक्टरों, अभियन्ताओं, मैडीकल व्यवहार-कर्ताओं आदि को लिया गया। एक वकील को रखा गया ताकि वह परिषद को कानूनी सीमाओं के अन्तर्गत ही रख सके। ऐसी स्थिति में जो व्यवस्था अपनाई गई उसके अनुसार परिषद का मुख्य अधिकारी अर्थात क्लर्क या टाउन क्लर्क एक कानूनवेत्ता (Lawyer) होता था एवं दूसरे विभागों के अध्यक्ष भी अपने-अपने विभाग के व्यावसायिक विशेषज्ञ होते थे। एक अन्य बात जो यहां उल्लेखनीय है वह यह है कि पहले स्थानीय सरकार द्वारा किसी अधिकारी को पूरे समय के लिए नियुक्त नहीं किया जाता था वरन् केवल आंशिक समय के लिए ही नियुक्त किया जाता था। ऐसी स्थिति में यह स्वाभाविक था कि ऐसे ही व्यक्ति को काम दिया जाता जो कि व्यक्तिगत रूप से एक विशेष व्यवसाय में अभ्यास कर रहा है।

स्थानीय सरकार की सेवाएं देखने में तो ऐसी लगती हैं कि मानों वे एक ही सेवा होंगी किन्तु यह वास्तविकता नहीं है। प्रत्येक स्थानीय सत्ता अपनी आवश्यकता के अनुरूप मात्रा में नियुक्तियां करती है। इस प्रकार स्थानीय सरकार की सेवाएं उतनी ही हो जाती हैं जितनी कि विभिन्न स्थानीय सत्ताएं होती हैं। वैसे वर्तमान समय में स्थानीय सरकार के अधिकारी सुसंगठित निकाय बन गए हैं। राष्ट्रीय संयुक्त समझौतों

के परिणामस्वरूप अब ये इतनी एकरूपता प्राप्त कर चुके हैं कि इनको सामान्य व्यवस्था कहा जा सकता है।

स्थानीय सरकार के अधिकांश अधिकारियों की नियुक्ति प्रत्यक्ष रूप उसी समय करली जाती है जब कि प्रत्याशी स्कूल छोड़ कर आता है। अवसर पर उनको जो पद प्रदान किया जाता है यह अधीनस्थ स्तर का होता है तथा उनको अवसर प्रदान किया जाता है कि वह अपने पद पर रह कर ही कार्य का प्रशिक्षण पा सकें। उसके बाद इन अधिकारियों की पदोन्नति की जाती है। इनको उस समय तक उच्च पद पर नहीं रखा जा सकता जब तक कि वह अपने व्यवसाय में कुशल एवं विशेषज्ञ न बन जायें। इस प्रक्रिया द्वारा एक व्यक्ति जिस सर्वोच्च पद तक पहुँच सकता है वह समिति के क्लर्क का पद होता है। इस पदाधिकारी का कार्य समिति के कार्यों की देखभाल करना है। समिति से सम्बन्धित सभी आवश्यक कार्य इसी के द्वारा सम्पन्न किये जाते हैं। उदाहरण के लिए कार्य-क्रम तैयार करना, बैठक की प्रक्रिया का अभिलेख रखना, बैठक में पास किये गये प्रस्ताव पर उचित कार्यवाही की गई है अथवा नहीं की गई है यह देखना आदि। यह कार्य पर्याप्त महत्वपूर्ण होता है किन्तु फिर भी कई एक लेखक इस कार्य को सर्वोच्च श्रेणी का मानना नहीं चाहते। उनके कथनानुसार यह कार्य मध्यम श्रेणी का माना जा सकता है। अतः यदि इस पद पर कोई व्यक्ति बिना व्यवसायिक योग्यता प्राप्त किये ही जाये तो कोई आश्चर्य नहीं मानना चाहिए। जो पद वास्तव में उच्च स्तर होते हैं उन तक पहुंचने के लिए व्यवसायिक योग्यताओं का प्राप्त करना अत्यन्त अनिवार्य माना जाता है।

मैडिकल इन्जीनियरिंग, भवन-निर्माण, सड़क-रचना एवं ऐसे ही अन्य कार्यों में व्यवसायिक योग्यता प्राप्त करने के लिए पर्याप्त समय खर्च करना होता है। ऐसा नहीं हो सकता कि एक व्यक्ति अपनी जीविका भी कमाता रहे और इस प्रकार की योग्यता भी अर्जित करता रहे। जब स्थानीय सरकार द्वारा विशेषज्ञता प्राप्त व्यक्तियों की नियुक्ति की जाती है तो उसकी सहायता के लिए एक व्यक्ति दिया जाता है तथा अध्ययन कार्य के लिए उनको छुट्टियाँ प्रदान की जाती हैं। कुछ ऐसी भी सम्भावनायें हैं कि सेवा में आने के बाद भी व्यक्ति अपनी व्यवसायिक योग्यता का अर्जन एवं विकास कर सके। इसके लिये संध्या-कालीन प्रशिक्षणालयों का होना जरूरी है। यह सुविधा होने के बाद भी अनेक लोग इसका लाभ नहीं उठा पाते क्योंकि ऐसा करने के लिए उनमें शक्ति, उत्साह एवं लगन का अभाव रहता है।

विशेषज्ञता प्राप्त करने का मार्ग चाहे कुछ भी अपनाया जाये किन्तु यह एक तथ्य है कि उच्च पद पर आने से पूर्व व्यक्ति का विशेषज्ञ होना जरूरी है। इन उच्च पदों का विश्वविद्यालयों के उन स्नातकों को कोई स्थान नहीं प्राप्त हो सकता जो कि नागरिक सेवा के प्रशासकीय वर्गों में सेवा प्राप्त करने की योग्यता रखते हैं। इनका एक अपवाद शिक्षा विभाग है। स्थानीय शिक्षा विभाग के उच्च पदों पर जो नियुक्तियां की जाती हैं उनके लिए किसी व्यवसायिक योग्यता की आवश्यकता नहीं समझी जाती किन्तु सामान्यतः यह आशा की जाती है कि वे स्कूलों में अध्यापन का कुछ अनुभव रखते हों।

कुछ वड़ी स्थानीय सत्तायें पिछले कुछ वर्षों से विश्वविद्यालय के स्नातकों को अपने स्टाफ के सामान्य कार्यों पर नियुक्त कर रही हैं। भविष्य में इनकी पदोन्नति किस दिशा में की जायेगी इस सम्बन्ध में कोई स्पष्ट नीति नहीं अपनायी गई है। इस नीति से वाद में चल कर पर्याप्त कठिनाई उत्पन्न हो सकती है इसका कारण यह है कि गैर-विशेषज्ञ स्टाफ कभी यह नहीं चाहता कि किसी ऐसे व्यक्ति को प्रवेश प्राप्त हो जाये जिसको कि उच्च पद दिया जा सके और वे स्वयं उच्च पद प्राप्त नहीं कर सकें। ऐसी स्थिति में जो भी रास्ता अपनाया जायेगा उसके परिणामस्वरूप आवश्यक रूप से संघर्ष उत्पन्न होगा और विभिन्न पदाधिकारियों में सहयोग के स्थान पर आपसी वैमनस्य पैदा हो जायेगा।

नागरिक सेवा एवं स्थानीय सेवा की प्रकृति का अध्ययन करने के वाद यदि हम इनका तुलनात्मक रूप में मूल्यांकन करने का प्रसार करें तो पायेंगे कि ऐसा करना अधिक न्यायसंगत नहीं रहेगा। इसका कारण यह है कि दोनों स्तरों पर सेवाओं के दायित्वों की प्रकृति में पर्याप्त भिन्नता रहती है। ऐसा नहीं हो सकता कि एक की व्यवस्था को दूसरी में अपना लिया जाये। हो सकता है कि नागरिक सेवा राष्ट्रीय स्तर पर अधिक सफलतापूर्वक कार्य कर रही हो किन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि उसे स्थायी सत्ताओं में भी लागू कर दिया जाये। यदि ऐसा किया गया तो लाभ के स्थान पर हानियां अधिक होने की सम्भावना है। नागरिक सेवा के उच्च अधिकारियों को नीति से सम्वन्धित विषयों पर मन्त्रियों को परामर्श देना होता है। वे राष्ट्रीय विकास योजनाओं को कार्यान्वित करने से भी सम्वन्ध रखते हैं। ऐसी स्थिति में इन पदाधिकारियों में विशेषज्ञता के साथ-साथ सामान्यज्ञान का होना भी अत्यन्त अनिवार्य समझा जाता है। दूसरी ओर स्थानीय सेवा के उच्च पदाधिकारीगण नीति सम्वन्धी विषयों में किसी को परामर्श नहीं देते अपितु वह स्वयं नीतियों को क्रियान्वित करने से सम्वन्ध रखते हैं। स्थानीय सत्ताओं का मुख्य सम्वन्ध सेवाओं के संचालन से रहता है। इसका प्रशासकीय निकाय सम्भवत: परिषद है जो कि अपनी समितियों के माध्यम से कार्य करती हैं। विभाग के अध्यक्ष को मुख्य अधिकारी माना जा सकता है। इन सेवाओं की प्रकृति भिन्न होने के कारण यहां राष्ट्रीय नागरिक सेवा की व्यवस्था को नहीं अपनाया जा सकता क्योंकि इस प्रकार नियुक्त किया गया पदाधिकारी तकनीकी प्रकृति के कार्यों को सम्पन्न कर सकने में असमर्थ रहेगा। वह कार्यों को या तो वहुत तकनीकी रूप में सम्पन्न करना चाहेगा अथवा वह सामान्य नीति के विषयों से अपने को सम्वन्धित रखने का प्रयास करेगा जो कि समितियों एवं परिषद के विचार के विषय हैं।

कई एक लेखकों का यह मत है कि नागरिक सेवा एवं स्थानीय सेवा के उच्च अधिकारियों के वीच जो अन्तर दिखाया जाता है वह वास्तव में इतना नहीं है। स्थानीय सेवा के उच्च अधिकारी विशेषज्ञ होते हुए भी कार्य करते-करते पर्याप्त सामान्य ज्ञान सम्पन्न वन जाते हैं। इसी प्रकार केन्द्रीय सरकार के सेवक भी पूरी तरह से गैर-विशेषज्ञ नहीं कहे जा सकते। हो सकता है कि वे अपनी नियुक्ति के समय ऐसे रहे हों किन्तु वाद में कार्य करते-

के परिणामस्वरूप अब ये इतनी एकरूपता प्राप्त कर चुके हैं कि इनको सामान्य व्यवस्था कहा जा सकता है।

स्थानीय सरकार के अधिकांश अधिकारियों की नियुक्ति प्रत्यक्ष रूप उसी समय करली जाती है जब कि प्रत्याशी स्कूल छोड़ कर आता है। अवसर पर उनको जो पद प्रदान किया जाता है यह अधीनस्थ स्तर का होता है तथा उनको अवसर प्रदान किया जाता है कि वह अपने पद पर रह कर ही कार्य का प्रशिक्षण पा सकें। उसके बाद इन अधिकारियों की पदोन्नति की जाती है। इनको उस समय तक उच्च पद पर नहीं रखा जा सकता जब तक कि वह अपने व्यवसाय में कुशल एवं विशेषज्ञ न बन जायें। इस प्रक्रिया द्वारा एक व्यक्ति जिस सर्वोच्च पद तक पहुँच सकता है वह समिति के क्लर्क का पद होता है। इस पदाधिकारी का कार्य समिति के कार्यों की देख-भाल करना है। समिति से सम्बन्धित सभी आवश्यक कार्य इसी के द्वारा सम्पन्न किये जाते हैं। उदाहरण के लिए कार्य-क्रम तैयार करना, बैठक की प्रक्रिया का अभिलेख रखना, बैठक में पास किये गये प्रस्ताव पर उचित कार्यवाही की गई है अथवा नहीं की गई है यह देखना आदि। यह कार्य पर्याप्त महत्वपूर्ण होता है किन्तु फिर भी कई एक लेखक इस कार्य को सर्वोच्च श्रेणी का मानना नहीं चाहते। उनके कथनानुसार यह कार्य मध्यम श्रेणी का माना जा सकता है। अतः यदि इस पद पर कोई व्यक्ति बिना व्यवसायिक योग्यता प्राप्त किये ही जाये तो कोई आश्चर्य नहीं मानना चाहिए। जो पद वास्तव में उच्च स्तर होते हैं उन तक पहुंचने के लिए व्यवसायिक योग्यताओं का प्राप्त करना अत्यन्त अनिवार्य माना जाता है।

मैडिकल इन्जीनियरिंग, भवन-निर्माण, सड़क-रचना एवं ऐसे ही अन्य *कार्यों में व्यवसायिक योग्यता प्राप्त करने के लिए पर्याप्त समय खर्च करना* होता है। ऐसा नहीं हो सकता कि एक व्यक्ति अपनी जीविका भी कमाता रहे और इस प्रकार की योग्यता भी अर्जित करता रहे। जब स्थानीय सरकार द्वारा विशेषज्ञता प्राप्त व्यक्तियों की नियुक्ति की जाती है तो उसकी सहायता के लिए एक व्यक्ति दिया जाता है तथा अध्ययन कार्य के लिए उनको छुट्टियाँ प्रदान की जाती हैं। कुछ ऐसी भी सम्भावनायें हैं कि सेवा में आने के बाद भी व्यक्ति अपनी व्यवसायिक योग्यता का अर्जन एवं विकास कर सके। इसके लिये संध्या-कालीन प्रशिक्षणालयों का होना जरूरी है। यह सुविधा होते के बाद भी अनेक लोग इसका लाभ नहीं उठा पाते क्योंकि ऐसा करने के लिए उनमें शक्ति, उत्साह एवं लगन का अभाव रहता है।

विशेषज्ञता प्राप्त करने का मार्ग चाहे कुछ भी अपनाया जाये किन्तु यह एक तथ्य है कि उच्च पद पर आने से पूर्व व्यक्ति का विशेषज्ञ होना जरूरी है। इन उच्च पदों का विश्वविद्यालयों के उन स्नातकों को कोई स्थान नहीं प्राप्त हो सकता जो कि नागरिक सेवा के प्रशासकीय वर्गों में सेवा प्राप्त करने की योग्यता रखते हैं। इनका एक अपवाद शिक्षा विभाग है। स्थानीय शिक्षा विभाग के उच्च पदों पर जो नियुक्तियां की जाती हैं उनके लिए किसी व्यवसायिक योग्यता की आवश्यकता नहीं समझी जाती किन्तु सामान्यतः यह आशा की जाती है कि वे स्कूलों में अध्यापन का कुछ अनुभव रखते हों।

कुछ बड़ी स्थानीय सत्तायें पिछले कुछ वर्षों से विश्वविद्यालय के स्नातकों को अपने स्टाफ के सामान्य कार्यों पर नियुक्त कर रही हैं। भविष्य में इनकी पदोन्नति किस दिशा में की जायेगी इस सम्बन्ध में कोई स्पष्ट नीति नहीं अपनायी गई है। इस नीति से बाद में चल कर पर्याप्त कठिनाई उत्पन्न हो सकती है इसका कारण यह है कि गैर-विशेषज्ञ स्टाफ कभी यह नहीं चाहता कि किसी ऐसे व्यक्ति को प्रवेश प्राप्त हो जाये जिसको कि उच्च पद दिया जा सके और वे स्वयं उच्च पद प्राप्त नहीं कर सकें। ऐसी स्थिति में जो भी रास्ता अपनाया जायेगा उसके परिणामस्वरूप आवश्यक रूप से संघर्ष उत्पन्न होगा और विभिन्न पदाधिकारियों में सहयोग के स्थान पर आपसी वैमनस्य पैदा हो जायेगा।

नागरिक सेवा एवं स्थानीय सेवा की प्रकृति का अध्ययन करने के बाद यदि हम इनका तुलनात्मक रूप में मूल्यांकन करने का प्रसार करें तो पायेंगे कि ऐसा करना अधिक न्यायसंगत नहीं रहेगा। इसका कारण यह है कि दोनों स्तरों पर सेवाओं के दायित्वों की प्रकृति में पर्याप्त भिन्नता रहती है। ऐसा नहीं हो सकता कि एक की व्यवस्था को दूसरी में अपना लिया जाये। हो सकता है कि नागरिक सेवा राष्ट्रीय स्तर पर अधिक सफलतापूर्वक कार्य कर रही हो किन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि उसे स्थायी सत्ताओं में भी लागू कर दिया जाये। यदि ऐसा किया गया तो लाभ के स्थान पर हानियां अधिक होने की सम्भावना है। नागरिक सेवा के उच्च अधिकारियों को नीति से सम्बन्धित विषयों पर मन्त्रियों को परामर्श देना होता है। वे राष्ट्रीय विकास योजनाओं को कार्यान्वित करने से भी सम्बन्ध रखते हैं। ऐसी स्थिति में इन पदाधिकारियों में विशेषज्ञता के साथ-साथ सामान्यज्ञान का होना भी अत्यन्त अनिवार्य समझा जाता है। दूसरी ओर स्थानीय सेवा के उच्च पदाधिकारीगण नीति सम्बन्धी विषयों में किसी को परामर्श नहीं देते अपितु वह स्वयं नीतियों को क्रियान्वित करने से सम्बन्ध रखते हैं। स्थानीय सत्ताओं का मुख्य सम्बन्ध सेवाओं के संचालन से रहता है। इसका प्रशासकीय निकाय सम्भवत: परिषद है जो कि अपनी समितियों के माध्यम से कार्य करती हैं। विभाग के अध्यक्ष को मुख्य अधिकारी माना जा सकता है। इन सेवाओं की प्रकृति भिन्न होने के कारण यहां राष्ट्रीय नागरिक सेवा की व्यवस्था को नहीं अपनाया जा सकता क्योंकि इस प्रकार नियुक्त किया गया पदाधिकारी तकनीकी प्रकृति के कार्यों को सम्पन्न कर सकने में असमर्थ रहेगा। वह कार्यों को या तो बहुत तकनीकी रूप में सम्पन्न करना चाहेगा अथवा वह सामान्य नीति के विषयों से अपने को सम्बन्धित रखने का प्रयास करेगा जो कि समितियों एवं परिषद के विचार के विषय हैं।

कई एक लेखकों का यह मत है कि नागरिक सेवा एवं स्थानीय सेवा के उच्च अधिकारियों के बीच जो अन्तर दिखाया जाता है वह वास्तव में इतना नहीं है। स्थानीय सेवा के उच्च अधिकारी विशेषज्ञ होते हुए भी कार्य करते-करते पर्याप्त सामान्य ज्ञान सम्पन्न बन जाते हैं। इसी प्रकार केन्द्रीय सरकार के सेवक भी पूरी तरह से गैर-विशेषज्ञ नहीं कहे जा सकते। हो सकता है कि वे अपनी नियुक्ति के समय ऐसे रहे हों किन्तु बाद में कार्य करते-

करते उनमें पर्याप्त व्यवसायिक योग्यता आजाती है। वे उस ढंग से पूरे विशेषज्ञ बन जाते हैं जिस के अनुसार सार्वजनिक कार्यों को सम्पन्न किया जाना चाहिए। एक दृष्टि से केन्द्रीय सरकार को स्थानीय सत्ताओं की तुलना में उन्नत कहा जा सकता है और वह यह है कि निम्न पदों पर जो नियुक्तियां की जाती हैं उनके बारे में वे उत्कृष्ट व्यवस्था अपनाती हैं। स्थानीय सत्तायें अपने अधिकांश कर्मचारियों को माध्यमिक शिक्षा प्राप्त प्रत्याशियों में से छांटती है। परिणामस्वरूप इनके कर्मचारियों का शैक्षणिक स्तर नीचा रहता है। इसके अतिरिक्त स्थानीय सत्ताओं में भर्ती की व्यवस्था का रूप भी एक जैसा नहीं है। ऐसे पद अधिक न होने के कारण स्थानीय सेवा आयोग रखने की आवश्यकता भी नहीं समझी जाती। यदि स्थानीय सत्ताओं को इस दृष्टि से मिला दिया जाये तो अवश्य ही सेवा आयोग की व्यवस्था की जा सकेगी।

स्थानीय सत्ताओं को अपने अधिकारी नियुक्त करने की दृष्टि से पर्याप्त स्वायत्तता प्राप्त रहती है। जिन अधिनियमों द्वारा स्थानीय निकायों की रचना की जाती है उनके द्वारा यह भी व्यवस्था कर दी जाती है कि वे आवश्यकता के अनुसार स्वयं ही अधिकारियों की नियुक्ति कर सकें। कुछ नियुक्तियां केन्द्र सरकार द्वारा भी की जाती हैं अथवा करने में पर्याप्त सहयोग दिया जाता है। कुछ अपवादों को छोड़ कर इन अधिकारियों की योग्यता, चयन का तरीका एवं वेतन आदि बातें कानून द्वारा निर्धारित नहीं की जाती तथा स्थानीय सत्ताओं की स्वेच्छा पर ही छोड़ दिया जाता है। स्थानीय सत्ता ही इन सेवाओं का प्रशासन करती है। नियुक्ति की नीति के सम्बन्ध में स्थानीय सत्ताओं को पूर्णतः स्वायत छोड़ दिया जाता है यह एक मूल सिद्धान्त है। वर्तमान प्रावधनों के अनुसार आडीटर को तथा कानून के न्यायालयों को यह अधिकार दिया गया है कि वे वेतन के आधार पर स्थानीय सरकार के अधिकारियों के औचित्य पर प्रश्न कर सकते हैं किन्तु वे भी उनकी योग्यताओं के आधार पर अधिकारियों की नियुक्ति को गलत नहीं ठहरा सकते।

अपवादस्वरूप अधिकारी
[The Exceptional Officers]

कुछ अधिकारियों के पद उक्त सिद्धान्त के अपवाद होते हैं अर्थात् उनको स्थानीय सरकार की स्वेच्छा पर नहीं छोड़ा जाता वरन् उनको केन्द्रीय निर्देशन एवं नियंत्रण का विषय बनाया जाता है। ये अपवाद रूप सेवायें प्रायः वे होती हैं जो कि अत्यधिक महत्व रखती हैं तथा समस्त समाज का प्रतिनिधित्व करने वाली केन्द्रीय सरकार उनको स्थानीय सत्ताओं की स्वेच्छा पर नहीं छोड़ सकती। इन सेवाओं का नामोल्लेख एवं इनसे सम्बन्धित व्यवस्थापन ही यह स्पष्ट कर देगा कि इनके बारे में विशेष प्रावधान क्यों रखे गये हैं। साथ ही यह भी स्पष्ट हो जायेगा कि अन्य सेवाओं को क्यों नहीं नियमित किया गया है। इन अधिकारियों में मुख्य रूप से उल्लेखनीय हैं—स्वास्थ्य के मेडीकल अधिकारी, सफाई निरीक्षक, स्वास्थ्य-दर्शक, माप-तोल निरीक्षक, निर्धन अधिनियम अधिकारी, अध्यापक एवं मुख्य सिपाही

आदि। पुलिस की योग्यता एवं वेतन के बारे में भी कुछ विनियमन किये गये हैं।

मेडीकल अधिकारी [Medical Officers]—जब १८७५ में जन-स्वास्थ्य सम्बंधी अधिनियम पास किया गया तो प्रत्येक शहरी एवं जिला सफाई सत्ता को एक योग्य एवं उचित स्वास्थ्य का मेडीकल अधिकारी भी नियुक्त करना होता था। इस पद पर किसी भी ऐसे व्यक्ति को नियुक्त नहीं किया जा सकता था जो कि कानूनी रूप से वह एक मैडीकल अभ्यास कर्त्ता न हो। सन् १९२९ तक यह व्यवस्था अपनायी गई कि यदि स्थानीय सत्ता द्वारा मैडिकल अधिकारी के वेतन के लिए अनुदान स्वीकर किया जा रहा है तो स्वास्थ्य मंत्री को इस अधिकारी की योग्यता, नियुक्ति, कर्त्तव्य, वेतन एवं कार्यकाल आदि के बारे में संतुष्ट करना जरूरी होता था। जहाँ अनुदान नहीं लिया जाता था वहाँ भी मंत्री को यह अधिकार था कि वह आदेश जारी करके इन अधिकारियों की योग्यता एवं कर्त्तव्य निर्धारित कर सके। सन् १९२९ से मैडीकल अधिकारियों के खातिर दिया जाने वाला विशेष अनुदान बन्द कर दिया गया किन्तु मंत्री के पास नियंत्रण की शक्तियां अब भी बनी रहीं। १८८८ के अधिनियम ने काउन्टी परिषदों को यह शक्ति दी थी कि वे स्वास्थ्य के मैडीकल अधिकारियों की नियुक्ति कर सकें। मंत्री को इस सम्बन्ध में केवल यह देखने का अधिकार दिया गया कि किसी ऐसे व्यक्ति को यह पद न दे दिया जाये जो कि क़ानूनी रूप से मैडिकल अभ्यास नहीं करता है। गृहनिर्माण एवं शहर नियोजन से सम्बन्धित १९०९ के अधिनियम द्वारा इस अधिकारी की नियुक्ति करना काउन्टीज के लिए बाध्यकारी बना दिया गया। अधिनियम द्वारा मंत्री को यह अधिकार दिया गया कि वह एक सामान्य आदेश द्वारा इस अधिकारी के कर्त्तव्य निर्धारित कर सके। यह भी प्रावधान रखा गया कि यह अधिकारी उस समय तक नहीं हटाया जा सकता जब तक कि स्वास्थ्य मंत्री की स्वीकृति प्राप्त न कर ली जाये। अधिकारी को असीमित समय तक के लिए नियुक्त किया जाना था। सन् १९२१ के अधिनियम ने यह स्पष्ट व्यवस्था की कि सभी मैडिकल अधिकारियों को व्यक्तिगत कार्य करने से रोक दिया जायेगा। उनकी नियुक्ति असीमित समय के लिए की जायेगी तथा बिना मंत्री की स्वीकृति के उसको हटया नहीं जा सकेगा।

सफाई निरीक्षक (Sanitary Inspector) को स्थानीय स्वास्थ्य सत्ताओं पर सर्व प्रथम १८४८ में थोपा गया था तथा १८७५ के अधिनियम द्वारा इसको बाध्यकारी बना दिया गया। सन् १८९१ से इन अधिकारियों की योग्यताओं को केन्द्रीय सरकार द्वारा विनियमित किया जाने लगा। १९२९ तक यह व्यवस्था थी कि जो स्थानीय सत्तायें सहायता अनुदान प्राप्त नहीं करती थीं वे बिना योग्यता देखे ही इस पद पर नियुक्तियां कर सकती थी। केन्द्रीय सरकार के विभिन्न कानूनों ने उसके हाथ में स्वास्थ्य मैडीकल अधिकारी, सफाई अधिकारी स्वास्थ्य दर्शक तथा माप और तौल के निरीक्षक आदि की योग्यताओं एवं नियुक्ति से सम्बन्धित अन्य बातों के बारे में प्रावधान बना दिये।

निर्धन कानून अधिकारी [Poor law officers]—स्थानीय सरकार की संस्थाओं द्वारा निर्धन कानून के पालन को पर्याप्त महत्व प्रदान किया गया किन्तु यह कार्य उस समय तक उचित रूप में सम्पन्न नहीं किया जा सकता था जब तक कि कुछ उत्तरदायी अधिकारी इस कार्य को न सम्भाल लें। इसका प्रशासन जब अकुशल ओवरसीयरों को सौंप रखा था तो इसका कार्य संतोषजनक न हो सका। १८३४ के अधिनियम में संरक्षकों (Guardians) को यह अधिकार दिया कि वे इसके लिए अधिकारी नियुक्त कर सकें किन्तु इन अधिकारियों की योग्यतायें, कर्त्तव्य, नियुक्ति का तरीका, वेतन, इनकी संख्या आदि बातें केन्द्रीय सत्ता द्वारा ही तय किये जाने थे। केन्द्रीय सरकार को इन अधिकारियों को पद से हटाने का भी अधिकार दिया गया। यदि संरक्षक अपने इस अधिकार का प्रयोग करने से मना कर दे तो केन्द्रीय सरकार स्वयं इन अधिकारियों की नियुक्ति कर सकती थी।

अध्यापक [Teachers]—यदि स्कूलों द्वारा अनुदान को स्वीकार किया जा रहा है तो प्राथमिक एवं माध्यमिक स्कूल अध्यापकों की योग्यतायें शिक्षा मण्डल द्वारा निर्धारित कर दी जाती थीं। मापदण्ड का निर्धारण करने की सर्व-सर्वा शक्तियां मण्डल को प्राप्त थीं। स्थानीय शिक्षा सत्ता शिक्षामंत्री की पूर्व स्वीकृति के बिना मुख्य शिक्षा अधिकारी की नियुक्ति नहीं कर सकती थी।

अग्नि रक्षक [Firemen]—अग्निरक्षकों की नियुक्ति के अधिकार पर भी पर्याप्त केन्द्रीय नियंत्रण था। सन् १९४७ के अग्नि सेवा अधिनियम के अनुसार गृह सचिव को यह शक्ति प्रदान की गई थी कि अग्नि-रक्षा के मुख्य अधिकारी की नियुक्ति के तरीकों को विनियमित कर सके। वह नियुक्ति की योग्यतायें, पदोन्नति की व्यवस्था, तथा उसे प्रशासित करने का तरीका आदि भी निर्धारित कर सकता था। यह सब कार्य वह केन्द्रीय अग्निरक्षक सत्ता के साथ परामर्श के बाद ही करता था।

पुलिस [Police]—सन् १९१९ के अधिनियम द्वारा तथा उसके आधीन बनाये गये नियमों के अनुसार पुलिस की नियुक्ति, पदोन्नति, अनुशासन, प्रशिक्षण, आदि के बारे में गृह कार्यालय को नियंत्रण की पर्याप्त शक्तियां सौंपी गई। सन् १८३९ के बाद से ही यह व्यवस्था है कि जब काउन्टीज द्वारा मुख्य कॉन्सटेबुल को नियुक्त किया जाता है तो उस पर गृह कार्यालय की स्वीकृति प्राप्त की जाती है। इस शक्ति का प्रयोग गृह कार्यालय द्वारा काउन्टी बारोज के प्रसंग में अधिक किया जाता है। उनके सम्बन्ध में वह सहायता अनुदान को रोकने की भी शक्ति रखता है।

इन प्रमुख सेवाओं के सम्बंध में केन्द्रीय सरकार के इतने अधिक नियंत्रण एव नियमन की व्यवस्था के पीछे कई एक कारण उत्तरदायी रहे हैं। इसका एक कारण तो यह था कि इनमें से कुछ अधिकारियों के कर्त्तव्य ऐसे थे जिनके द्वारा वे किसी को कुछ लाभ पहुँचाने की शक्ति रखते थे उदाहरणार्थ मैडिकल अधिकारी, निर्धन अधिनियम अधिकारी, कान्सटेबुल आदि। इन अधिकारियों एवं पारषदों अथवा उनके मित्रों या सम्बंधियों के बीच हितों का टकराव होने की सम्भावना थी। इस खतरे को रोकने के लिए यह उप-

योगी समझा गया कि अन्तिम अधिकार केन्द्र सरकार अपने हाथ में ले ले ताकि ये अधिकारी भी गलत रूप से किसी को फायदा न पहुँचायें अथवा पहुँचाने से वंचित न रखें और दूसरी ओर कोई व्यक्ति भी इनको ऐसा फायदा पहुँचाने के लिए बाध्य न करे। दूसरे, शिक्षा, स्वास्थ्य एवं पुलिस आदि सेवाओं के बारे में यह माना गया कि इनका महत्व पर्याप्त है तथा इनमें अकार्यकुशलता रहने के गम्भीर परिणाम हो सकते हैं अतः इनमें कम से कम योग्यता से सम्बंधित एकरूपता अवश्य अपनायी जाये। स्थानीय सरकार द्वारा सेवाओं के सम्बंध में मुख्य रूप से वेतन का ध्यान रखा जाता है तथा यह हिसाब लगाया जाता है कि वेतन को बढ़ाना पर रेट को कितना बढ़ाना होगा। वे सेवा की आवश्यकताओं एवं योग्यताओं की पर्याप्तता पर ध्यान नहीं देतीं। केन्द्रीय नियम का एक तीसरा कारण यह है कि धीरे-धीरे केन्द्रीय सरकार ने स्थानीय सरकार के व्यय में योगदान करने का भार सम्भाल लिया है। इसके साथ ही यह भी उनका कर्त्तव्य बन जाता है कि इस धन को अकार्य-कुशल लक्ष्यों पर खर्च न होने दें। जहाँ कहीं भी आंशिकरूप से या पूर्णरूप से सेवाओं का कार्यकाल एव योग्यता आदि को केन्द्रीय सत्ता द्वारा विनियमित किया जाता है वहां पर यह आशा की जा सकती है कि प्रशासन में एकरूपता की मौलिक आवश्यकता को पूरा किया जा सकेगा।

स्थानीय सरकार की विभिन्न सेवाओं को हर्मन फाइनर (Herman Finer) ने तीन मुख्य भागों में विभाजित किया है ये हैं- व्यावसायिक एवं तकनीकी वर्ग, प्रशासकीय वर्ग एवं शारीरिक कार्य करने वाला वर्ग। इनमें से अन्तिम वर्ग के सेवकों की नियुक्ति, पदोन्नति, वेतन आदि से सम्बन्धित विषयों को व्यापारिक संघों (Trade Unions) द्वारा विनियमित किया जाता है जब कि प्रथम दो वर्गों की सेवाओं के बारे में स्थानीय सत्ताओं को पर्याप्त शक्तियां सौंपी जाती हैं। जहां तक व्यावसायिक एवं तकनीकी वर्ग का प्रश्न है उसके सम्बन्ध में स्थानीय सरकारों का व्यवहार कई प्रकार से दोष पूर्ण है। जहां तक छोटी सत्ताओं का सम्बन्ध है उनमें खजान्ची या लेखा अधिकारी के रूप में कार्य करने के लिए अलग से कोई अधिकारी नहीं नियुक्त किया जाता वरन् क्लर्क अथवा स्थानीय बैंक को ही यह कार्य सौंप दिया जाता है। इस व्यवस्था के फलस्वरूप इन सत्ताओं में स्थायी प्रकृति का आन्तरिक आडिट नहीं हो पाता। जितने भी तकनीकी अधिकारी हैं उनकी सूची को देखने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि उन पदों पर नियुक्त किये जाने वाले व्यक्तियों की योग्यता का विशेष ध्यान रखा जाना चाहिए। यदि ऐसा न किया गया तो इसके कई गम्भीर परिणाम निकल सकते हैं। उदाहरण के लिए सड़कें टूट जायेंगी, भवन गिर जायेंगे, गैस का कार्य समाप्त हो जायेगा, विद्युत यंत्र कार्य नहीं करेंगे, गलियां गन्दगी से भर जायेंगी, जलघरों में नहीं भेजा जा सकेगा, लेखे गलत रखे जायेंगे, अधिकारी एवं पार्षद भी अवैधानिक तरीकों को अपना सकते हैं ट्रामें या तो चलाई ही नहीं जायेंगी और यदि चलाई भी गईं तो समय पर नहीं चलेंगी।

इस प्रकार प्रत्येक क्षेत्र में अकार्य-कुशलता के घातक परिणाम देखने को प्राप्त होंगे। ऐसी स्थिति में इन सेवाओं को सम्पन्न करने वाले अधि-

एवं प्रशासकीय अधिकारी काउन्टी का क्लर्क होता है। सन् १८८८ के अधिनियम के द्वारा शान्ति के न्यायाधीश के क्लर्क के पद को इसे सौंप दिया गया। जिस समय यह व्यवस्था की गई उस समय काउन्टी परिषद को बहुत थोड़े कार्य करने पड़ते थे। काउन्टी परिषद के कार्यों को तथा न्यायाधीशों के न्यायिक कार्यों को मिला दिया गया ताकि इन दोनों कार्यों के बीच समन्वय स्थापित किया जा सके और एक पूरे समय के क्लर्क की नियुक्ति की जा सके। यह तर्क दिया गया कि यदि इन दोनों कार्यालयों को अलग-अलग कर दिया गया तो शान्ति के क्लर्क को वर्ष में केवल कुछ दिन ही कार्य करना होगा। इसके अतिरिक्त इस सम्बन्ध में भी काफी जोर डाला गया कि काउन्टी परिषद के क्लर्क को कानूनी व्यवसाय का सदस्य होना चाहिए। इस विचार का विरोध किया गया कि ऐसे प्रशासकों को इस पद पर नियुक्त न किया जाए जो बिना कानूनी प्रशिक्षण प्राप्त किए विश्वविद्यालय से केवल सामान्य शिक्षा एवं विभिन्न अनुभव प्राप्त करके स्थानीय सरकार में आ जाते हैं। इस विचार के समर्थकों ने यह बताया कि क्लर्क की नियुक्ति कानून-वेत्ताओं या वकीलों में से ही करनी चाहिए। क्लर्क की शक्ति केवल परामर्श देने की ही नहीं है वरन् वह तर्क कर सकता है तथा समझा भी सकता है। एक प्रकार से क्लर्क की स्थिति सामान्य एकता एवं समायोजन स्थापित करने की है।

इन मतों के होते हुए भी वास्तविक व्यवहार को देखने से पता चलता है कि जो व्यक्ति इस पद पर नियुक्त किए गए वे केवल वकील ही नहीं थे बल्कि उनमें से अधिकांश ऐसे थे जिन्होंने काउन्टी क्लर्क के कार्यालय में अथवा टाउन क्लर्क के कार्यालय में सहायक के रूप में कार्य किया था। जो बातें काउन्टी क्लर्क के व्यवसाय एवं योग्यताओं के बारे में सच हैं उनमें से अधिकांश कस्बे एवं जिलों के क्लर्कों के बारे में भी सच हैं। ब्रिटिश संविधान की भांति टाउन क्लर्क के कर्त्तव्य भी कानून द्वारा निर्धारित न हो कर अभ्यास एवं परम्पराओं द्वारा निर्धारित हुए हैं। टाउन क्लर्क की स्थिति प्रबन्धकर्ता एवं समन्वयकर्ता की स्थिति है जो कि विभिन्न समितियों के बीच तथा परिषद के विभिन्न कार्यों के बीच एकरूपता स्थापित करता है।

स्थानीय अधिकारी की नियुक्ति करते समय इस बात पर बहुत जोर दिया जाता है कि स्थानीय पदों पर अधिक से अधिक स्थानीय लोगों को स्थान दिया जा सके। यह प्रकृति निम्नतर वर्ग की सेवाओं के सम्बन्ध में पर्याप्त सन्तोषजनक कही जा सकती है किन्तु मध्यवर्गी एवं उच्चवर्गी सेवाओं के सम्बन्ध में यह इतनी उपयोगी नहीं है। इन वर्गों की सेवाओं में जब कभी कोई रिक्त स्थान हो तो यह उचित समझा जाता है कि प्रार्थना-पत्र व्यापक रूप से आमन्त्रित किये जायें। जब तक अन्य स्थानीय सत्ताओं के प्रार्थियों पर पूरा विचार नहीं किया जाएगा उस समय तक स्थानीय पदों पर योग्यतम को लाना कठिन होगा। यदि एक व्यक्ति एक ही सत्ता में बना रहे तो उसकी पदोन्नति के अवसर कम हो जाते हैं क्योंकि ऐसा भी हो सकता है कि उसके तुरन्त बाद ही कोई वरिष्ठ अधिकारी हो जो कि उसके भावी विकास पर रोक लगा दे। ऐसी स्थिति में यह जरूरी है कि वह कहीं भी जा कर उच्च

पद को प्राप्त कर सके। इंगलैण्ड में इसी व्यवस्था को अपनाया जाता है वहां उच्च पद आसीन व्यक्ति अपने वर्तमान पद पर आने से पूर्व कई एक सत्ताओं में घूम चुका होता है। जब कभी एक स्थानीय सत्ता के अधिकारी किसी रिक्त पद के लिए एक प्रत्याशी के बारे में विचार कर रहे हों तो वे अपना निर्णय कभी इस आधार पर न लें कि वे उम्मीदवार को व्यक्तिगत रूप से जानते हैं। इस सम्बन्ध में मि० जैक्सन का यह कहना अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रतीत होता है कि स्थानीय सरकार स्थानीय है। इस तथ्य का यह अर्थ नहीं होता कि इसे संकीर्ण होना चाहिए तथा बाहर वालों के लिए एक दीवार खींच देनी चाहिए।*

जैक्सन महोदय तो यहां तक सुझाव देते हैं कि जब कभी एक स्थानीय सत्ता में कोई रिक्त स्थान हो और उस स्थान के लिए स्थानीय सत्ता में ही उपयुक्त व्यक्ति हो तो भी उस पद को विज्ञापित करना चाहिए। प्रत्येक प्रार्थना-पत्र में प्रत्याशी की शिक्षा, योग्यता पूर्व और वर्तमान कार्य, अनुभव तथा पद से सम्बन्धित अन्य आवश्यक प्रश्न होने चाहिएं। जब तक ऐसा नहीं किया जाएगा तब तक विभिन्न प्रार्थनापत्रों का तुलनात्मक अध्ययन करना मुश्किल पड़ जाएगा और योग्यता के आधार पर कोई सूची नहीं बनाई जा सकेगी। इस व्यवस्था का अगला कदम यह है कि जब प्रार्थना-पत्रों पर विचार कर लिया जाए तो उनमें से कुछ प्रत्याशियों को साक्षात्कार के लिए आमन्त्रित कर लिया जाए। साक्षात्कार के लिए आमन्त्रित किए जाने वाले प्रत्याशियों की सूची बनाने का कार्य तथा साक्षात्कार करने का कार्य किसके द्वारा किया जाएगा वह इस बात पर निर्भर करता है कि नियुक्ति मध्यवर्ग के अधिकारियों की की जा रही है अथवा उच्चवर्ग के अधिकारियों की। जब कभी एक नए क्लर्क की अथवा अन्य उच्च अधिकारी की नियुक्ति की जाए तो चयन में परिषद को सक्रिय रूप से भाग लेना चाहिए। परिषद को चाहिए कि वह एक विशेष समिति नियुक्त करे और यह समिति आए हुए प्रार्थना-पत्रों पर विचार-विमर्श करने के बाद कुछ प्रार्थियों की एक सूची बनाए जिनको कि साक्षात्कार के लिए बुलाया जाना है चयन किए गए व्यक्ति परिषद के सम्मुख उपस्थित होंगे और आवश्यक विचार-विमर्श के बाद परिषद यह निर्णय करेगी कि किस व्यक्ति को नियुक्त किया जाए। इस कार्य के लिए पूर्ण समिति को उपयुक्त नहीं समझा जाता अतः यह सिफारिश की जाती है कि प्रार्थियों का साक्षात्कार समिति द्वारा किया जाए और परिषद उस समिति द्वारा सुझाए गए नाम को स्वीकार कर ले। जहां कहीं नियुक्तियां परिषद के विभिन्न विभागों के लिए की जा रही हैं उनके सम्बन्ध में नियुक्त एवं जांच के उत्तरदायित्व विभिन्न समितियों को सौंप देने चाहिएं अथवा सभी विभागों के लिए एक स्टाफ-समिति होनी चाहिए।

---

*"The fact that the Local Government is Local does not mean that it should be parochial and have barrier against outsiders."

—*R. M. Jackson*, Op. Cit., P. 113.

सामान्यत: जिस व्यवहार को अपनाया जाता है वह यह है कि विभिन्न विभागों के लिए उत्तरदायी समितियां नियुक्ति करती हैं। वरिष्ठ पदों के सम्बन्ध में प्रक्रिया यह है कि एक उपसमिति द्वारा साक्षात्कार के लिए उम्मीदवारों को छांटा जाए और पूरी समिति द्वारा प्रत्याशियों का साक्षात्कार किया जाए। निम्न पदों की नियुक्तियों का कार्य समिति को उपसमिति के हाथ में छोड़ देना होगा। निम्नतर नियुक्तियों से सम्बन्धित सभी विषयों में अन्तिम शक्तियां सभापति को सौंप दी जाती है जो कि उस विभाग के अध्यक्ष पद पर स्थित अधिकारी में विश्वास कर सकता है। ये सब बातें इस बात पर निर्भर करती हैं कि पदों को पूरी रुचि के साथ विज्ञापित किया गया है या नहीं। जिस पद पर नियुक्ति करने की आवश्यकताएं अधिक होती हैं उसके सम्बन्ध में विशेष व्यवस्थाएं अपनाना जरूरी हो जाता है।

जिस व्यवस्था में प्रत्येक समिति को अपना स्टाफ छांटने का अधिकार दे दिया जाता है वहां लगातार इस बात की देखभाल करनी पड़ती है कि विभिन्न विभागों में स्टाफ के बीच एकरूपता बनी रहे जहां तक सम्भव हो सके वहां तक ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए कि प्रत्येक विभाग में एक साकार्य करने के लिए एक ही स्तर के अधिकारी रखे जाएं और उनको एक जैसा वेतन दिया जाए। जब तक इस व्यवस्था के लिए देख भाल की व्यवस्था नहीं की जाएगी तब तक यह आशंका रहेगी कि एक विभाग में यह अच्छी प्रकार से कार्य करे और दूसरे विभाग में यह सन्तोषजनक सिद्ध न हों। इसके परिणामस्वरूप आन्तरिक ईर्ष्या उत्पन्न होगी और स्टाफ की दशाएं खराब हो जायेगी। स्टाफ समिति के रूप में कार्य करने वाली एक विशेष समिति इन सभी बातों का ध्यान रख सकती है। यदि कोई समिति यह चाहती है कि उसका स्टाफ बढ़ाया जाए तो उसे परिषद से कहना होगा तथा यह प्रस्ताव वित्त समिति के पास भी जाएगा ताकि वह भी परिषद को अपना प्रतिवेदन दे सके। जिस व्यवस्था में समितिगं स्वयं का स्टाफ नियुक्त करती हैं उसमें यह भी प्रावधान रहता है कि ऐसे प्रस्ताव को स्टाफ समिति के पास भेजा जाए। स्टाफ समिति इस बात पर विचार करेगी कि क्या कार्य इतना है कि एक अधिकारी की नियुक्ति कर दी जाए और यदि की जाए तो उसके लिए स्तर एवं वेतन क्या होना चाहिए। यदि समिति एवं स्टाफ समिति के बीच मतभेद पैदा हो जाए तो विषय को परिषद के सम्मुख भेजा जाता है।

स्टाफ समिति स्थानीय सेवाओं की पदोन्नति के सम्बन्ध में भी कार्य करती है। समिति के सदस्यों की प्राय: यह प्रवृति होती है कि जब किसी अधिकारी द्वारा उनकी विशेष रूप से सेवा की जाती है तो वे यह चाहते हैं कि वे उसके लिए कुछ करें अर्थात् उसकी पदोन्नति करदें। इस प्रकार की पदोन्नतियों के मार्ग में सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि इनका अन्य विभागों पर भी प्रभाव पड़ता है। अनेक अधिकारी ऐसे होते हैं जिनका कार्य सदस्यों द्वारा बहुत कम देखा जाता है। ये अधिकारी यह अनुभव करते हैं कि उनके कार्यों पर विचार ही नहीं किया जाएगा क्योंकि उनको मुख्य स्थिति प्राप्त

नहीं है। एक प्रावधान के अनुसार पदोन्नति से सम्बन्धित सभी मामले स्टाफ समिति के पास जाते हैं।

व्यवहार में प्रायः यह देखा जाता है कि नियुक्ति की अपेक्षा पदोन्नति में कठिनाईयां अधिक होती हैं। नियुक्ति करते समय कोई पद रिक्त होता है जिसे कि किसी के द्वारा भरा जाता है यदि वांछित स्तर का कोई उम्मीदवार मिल जाए तो इस सम्बन्ध में कोई कठिनाई नहीं होती। यद्यपि पदोन्नति के समय ये सारे कार्य नहीं करने होते किन्तु फिर भी पदोन्नति से सम्बन्धित प्रश्नों द्वारा स्टाफ के पारस्परिक सम्बन्धों को पर्याप्त प्रभावित किया जाता है। यदि पदोन्नति उस समय न की जाए जिस समय कि जरूरी है तो इससे स्टाफ के सम्बन्धों में पर्याप्त अड़चनें आती हैं। पदोन्नति का प्रश्न केवल यही प्रश्न नहीं है कि उचित व्यक्ति को ऊपर उठा दिया जाए किन्तु साथ ही यह भी है कि उसको समय पर उठाया जाए। यदि पदोन्नति समय से बहुत पूर्व दे दी गई तो इसके परिणामस्वरूप पारस्परिक ईर्ष्या और बुरी भावनाएं उत्पन्न हो जाएंगी, तथा यदि पदोन्नति में देर की गई तो हो सकता है कि अच्छा व्यक्ति अपने विशेष कार्य में ही रमजाए और वह मस्तिष्क की लोचशीलता को खो दे जो कि उच्च पद के कर्त्तव्यों का निर्वाह करने के लिए जरूरी होती है। इस सम्बन्ध में कोई एक तरीका नहीं अपनाया जा सकता। पदोन्नति की दृष्टि से यह व्यवस्था अत्यन्त उपयोगी समझी जाती है कि विभिन्न कर्मचारियों का वार्षिक रूप से मूल्यांकन किया जाए तथा उनसे सम्बन्धित सभी अभिलेख रखे जाएं। जब किसी पदाधिकारी की पदोन्नति करनी हो तो उसके कार्य सम्पन्नता के अभिलेखन को देखना उपयोगी रहेगा इसके परिणामस्वरूप विभागाध्यक्ष के ऊपर एक भारी उत्तरदायित्व आ जाता है। एक सफल उच्च अधिकारी की यह एक आवश्यक विशेषता मानी जाती है कि वह अपने अधीनस्थों के साथ सफल माना जा सके। ऐसा तभी हो सकता है जब कि अधीनस्थ लोग अपने उच्च अधिकारी के प्रति विश्वास और आदर की भावना रखें तथा एक टीम के रूप में उन सभी को एक साथ कार्य करने के लिए प्रेरित कर सकें।

पदोन्नति के सम्बन्ध में जो व्यवस्था अपनाई जाती है उसके अनुसार अधिकांश नियुक्तियां स्टाफ समिति द्वारा की जाती हैं। कई एक लेखकों के कथनानुसार यह कोई अच्छा व्यवहार नहीं है क्योंकि जो समितियां विभिन्न सेवाओं को संचालित करने के लिए उत्तरदायी हैं उन्हें वे अधिकारी छांटने का अधिकार होना चाहिए जिनके द्वारा ये सेवाएं संचालित की जाएंगी यदि ऐसा नहीं किया गया तो ये अधिकारी अपने कार्यों में पूरी तरह से रुचि नहीं लेगा। एक स्टाफ समिति उन सभी आवश्यक विशेषताओं से परिचित नहीं हो सकती जो कि विभिन्न कार्यों के लिए उपयोगी समझे जाते हैं। इसके अतिरिक्त उस व्यवस्था को अधिक सन्तोषजनक माना जाता है जिसमें कि वह व्यक्ति अधिकारियों के चयन का कार्य करे जिसे कि उनके साथ कार्य कार्य करना है एक दूसरा विचार यह भी है कि जब स्थानीय सत्ता की सेवाओं की नियुक्ति एवं पदोन्नति की शक्तियां एक स्टाफ समिति में केन्द्रीकृत कर दी जाती है तो इससे भ्रष्टाचार एवं भाई-भतीजेवाद का जोर हो

जाता है। यदि यह शक्ति विभिन्न समितियों को सौंप दी जाए तो इतना खतरा न रहे। स्टाफ समिति का असली कार्य नियुक्तियां करना नहीं है किन्तु परिषद की विभिन्न क्रियाओं के दौरान यह देखना है कि तत्कालीन वेतन एवं अच्छे भविष्य की दृष्टि से एक जैसी प्रकृति के कार्यों को समान रूप से पुरस्कृत किया जाए।

स्टाफ से सम्बन्धित अनेक सामान्य प्रश्न होते हैं जो कि समिति को कार्यरत रख सकें। ये प्रश्न हैं—कार्य के घन्टे, कार्य की दशाएं, परिषद की ओर से दिए जाने वाले यात्रा भत्ते, छुट्टियां तथा विभिन्न पदों पर नियुक्त किये जाने वाले व्यक्तियों से सम्बन्धित अन्य विषय आदि। यह जरूरी नहीं है कि स्टाफ समिति की अलग से ही नियुक्ति की जाए। यह भी हो सकता है कि इसके कार्यों को वित्तीय समिति के साथ मिला दिया जाए अथवा वित्तीय समिति की उपसमिति को कार्य सौंप दिए जाए।

राष्ट्रीय संयुक्त परिषद, जिसे कि सन् १९४५ में पुनर्गठित किया गया था, ने सेवाओं की शर्तों के सम्बन्ध में एक राष्ट्रीय योजना को स्वीकार किया। इस योजना को स्थानीय सरकार के क्षेत्र में चार्टर कहा जाता है। इस चार्टर में यह व्यवस्था की गई थी कि जो युवक स्थानीय सेवाओं में प्रवेश पाएं उनके लिए प्रशिक्षण का पर्याप्त प्रबन्ध किया जाना चाहिए। नए लोगों को परिपक्व उम्र पर प्रवेश प्रदान किया जाए और प्रवेश के बाद भी प्रशिक्षण देने की व्यवस्था की जाए। यह आशा की गई थी कि इस प्रावधान के द्वारा कार्य-कुशलता में विकास होगा एवं उच्च पदों के अधिकारियों को प्रशिक्षण प्राप्त होगा साथ ही कार्य करने वाले अधिकारियों को कई अवसर प्राप्त होंगे। सन् १९४५ से ही स्थानीय सरकार की सेवाओं में सारी कठिनाईयां भर्ती तथा प्रशिक्षण के प्रसंग में उत्पन्न हो जाती है कि अन्य लोक-सेवाओं में स्थित हैं। कई बड़ी सत्ताएं तो भर्ती के लिए प्रतियोगी परीक्षाएं करती हैं किन्तु छोटी सत्ताएं कम शिक्षा सम्बन्धी योग्यताओं वाले प्रत्याशियों को निम्न पदों पर नियुक्त कर लेती हैं निम्न पदों पर कार्य करने वाले ये कर्मचारी प्रायः स्थानीय निवासी ही होते हैं। कोई भी निम्न पद पर कार्य करने वाला यदि अन्य विभाग में जाएगा तो वह अपने उसी पद पर जा सकता है। यदि वह पदोन्नति चाहता है तो उसे इसके लिए योग्य बनना होगा। स्थानीय सरकार के किसी कार्य में विशेषीकरण करना होगा। उच्च पदों के लिए तो उचित अनुभव एवं योग्यताएं प्रायः अनिवार्य होती हैं इस चार्टर में कहा गया था कि कार्य का विस्तृत अनुभव एक मूल्यवान प्रशिक्षण होता है।

चार्टर द्वारा यह व्यवस्था की गई थी कि २१ वर्ष की उम्र तक के कर्मचारियों को एक विभाग से दूसरे विभाग में स्थानान्तरित किया जा सके। दूसरे कुछ चुने हुए वरिष्ठ अधिकारियों को अन्य विभागों में भेजा जाए ताकि वे विस्तृत अनुभव प्राप्त कर सकें। तीसरे, जब कभी एक विभाग में स्थान रिक्त हो तो दूसरे विभागों के स्टाफ को भी सूचित कर दिया जाना चाहिए कि वे भी यदि चाहें तो इस पद के लिए प्रार्थना-पत्र भेज सकें। चार्टर द्वारा जो योजना रखी गई उसमें एक ओर तो योग्यता के आधार पर व्यक्तियों को स्थानीय सेवाओं में प्रवेश देने की बात कही गई थी

और दूसरी ओर यह व्यवस्था करने के लिए भी कहा गया था कि अधिकारी-गण सेवाओं में प्रवेश पाने के बाद भी अपने अध्ययन को जारी रख सकें। इसलिए कुछ कदम उठाने की सिफारिश की गई। उदाहरण के लिए सामान्य शिक्षा में विकास हेतु आंशिक-कालीन कक्षाओं में उपस्थिति के लिए प्रोत्साहन देना, अधिकारियों को उचित व्यावसायिक या तकनीकी योग्यताएं प्राप्त करने के लिए वित्तीय सहायता तथा अन्य सुविधा देना, उचित अधि-कारियों को लोक प्रशासन में डिग्री या डिप्लोमा लेने के लिए पर्याप्त सुवि-धाएं प्रदान करना, अधिकारियों को स्थानीय सरकार की समस्याएं व्य-वस्थित रूप से समझने के लिए प्रोत्साहित करना, स्थानीय सत्ताओं द्वारा कोर्स, भाषण, पुस्तकालय एवं शोध कार्यों की सुविधाएं प्रदान करना, प्रवे-शोत्तार प्रशिक्षण की सभी योजनाओं को स्थानीय सत्ता के स्थानीय संयुक्त समिति प्रतिनिधि द्वारा पर्यवेक्षित किया जाना चाहिए। वह स्टाफ के प्रति-निधियों के साथ मिल कर ऐसा करे। इन सभी उपायों को अपनाने के बाद यह आशा की जा सकती है कि सेवाकालीन प्रशिक्षण की पर्याप्त व्यवस्था हो जाएगी।

वेतन शृंखला एवं सेवा की अन्य शर्तें
[Pay Scales and Other Conditions of Service]

स्थानीय स्तर पर विभिन्न अधिकारियों के वेतन को निर्धारण करने के लिए सेवाओं को कई वर्गों में बांट दिया गया है। चार्टर के अनुसार इन सेवाओं के मुख्य रूप से पांच वर्ग बताए गए हैं। प्रथम वर्ग सामान्य सम्भाग (General Division) था। इसमें वे अधिकारी सम्मिलित थे जो कि स्पष्ट निर्देशों एवं पर्यवेक्षण के आधीन प्रचलित कार्यों से सम्बन्धित कर्त्तव्यों में संलग्न रहते हैं। इस वर्ग में उन नवीन प्रवेश-कर्त्ताओं को सम्मिलित किया जाता था जिन्होंने अंग्रेजी, गणित, विज्ञान तथा अन्य विषयों में साधारण स्तर पर शिक्षा परीक्षाओं का सामान्य प्रमाण-पत्र प्राप्त किया है। इस वर्ग में उन नव-प्रवेश-कर्त्ताओं को भी लिया जाता था जो कि राष्ट्रीय प्रवेश परीक्षा पास कर चुके हैं। दूसरे, पहले एक उच्च सामान्य सम्भाग (Higher General Division) भी था जिसमें कई एक सेवाएं वे थीं जिनको कि अब प्रथम श्रेणी में ही मिला दिया गया है। अत: अब यह श्रेणी समाप्त कर दी गई है। प्रवेश परीक्षाओं को भी बन्द कर दिया गया है। तीसरा वर्ग लिपि सम्भाग (Clerical Division) होता है। इस सम्भाग में वे अधिकारी आते हैं जो कि उत्तरदायित्वपूर्ण लिपिक कर्त्तव्यों का निर्वाह कर रहे हैं। इन अधि-कारियों की योग्यता सामान्य सम्भाग वालों की तुलना में अधिक होती है।

इसमें वे अधिकारी भी आते हैं जो कि विभाग में कार्य के सम्भागों का पर्यवेक्षण करते हैं। चौथी श्रेणी प्रशासकीय, व्यवसायिक एवं तकनीकी सम्भाग (A. P. T. Division) की है। इन अधिकारियों द्वारा सम्पन्न किए जाने वाले कर्त्तव्यों का सम्बन्ध नीति के निर्माण और परिषद की आज्ञाओं के सामान्य प्रशासन से होता है। ये अधिकारी विभागों को नियन्त्रित कर सकते हैं या कानूनी लेखा या अन्य विभागों में विशेषीकृत कार्य सम्पन्न करते हैं। इस सम्भाग में वे वैधानिक, वैज्ञानिक या अन्य योग्यताओं

वाले अधिकारी भी आते हैं जो कि नागरिक अभियन्ताओं, सर्वेक्षणकर्त्ताओं एवं भवन-निर्माताओं के रूप में कार्य करते हैं। पांचवां वर्ग अन्य सम्भाग (Miscellaneous Division) कहा जाता है। इस सम्भाग में कार्य करने वाले अधिकारी उन कर्त्तव्यों का निर्वाह करते हैं जिनकी प्रकृति पूर्ण रूप से लिपिक वर्गी नहीं होती किन्तु उनकी विशेषीकृत प्रकृति होती है। इन अधिकारियों को प्रायः निम्न पदों पर नियुक्त नहीं किया जाता। उदाहरण के लिए कल्याण अधिकारी [Welfare Officer] इस श्रेणी में आते हैं। इन विभिन्न वर्गों की सेवाओं की वेतन श्रृंखलाएं अलग-अलग निर्धारित की जाती हैं।

वेतन श्रंखलाओं का प्रयोग इतना सरल नहीं होता जितना कि यह समझा जाता है। विभिन्न परिस्थितियों के लिए विभिन्न प्रकार की वेतन श्रंखलाएं होती हैं। मुख्य अन्तर उन पदों के अन्दर किया जाएगा जिनमें कि कार्य की छोटी परिभाषा की जा सकती है तथा ऐसे पद जिनमें कार्य को परिभाषित नहीं किया जा सकता। कुछ पद ऐसे होते हैं जिनका कि नाम लेते ही उस पद से सम्बन्धित कर्त्तव्यों का ज्ञान हो जाता है तथा वास्तविक प्रकृति ज्ञात हो जाती है। यदि हम यह कहें कि एक व्यक्ति टाउन क्लर्क है या स्वास्थ्य का मेडीकल अधिकारी है या शिक्षा संचालक है तो हम फौरन यह समझ जायेंगे कि उस अधिकारी के पद की क्या स्थिति है तथा उससे क्या कार्य करने की आशा की जा सकती है। इसके विपरीत ऑफिस स्टाफ का एक सामान्य निकाय भी होता है जिसके लिए कि कोई एक ऐसा नाम प्रयुक्त नहीं किया जा सकता जो हमें यह बता सके कि वे पदसोपान में किस स्तर पर आते हैं। यदि हम यह कहें कि एक व्यक्ति परिषद का अधिकारी है तो यह हो सकता है कि वह व्यक्ति कोई निम्न अधिकारी हो अथवा वह महान श्रेणी का भी हो सकता है या सम्भव है कि वह उच्च-श्रेणी का हो। इस प्रकार स्थानीय सरकार के अधिकारियों की दो श्रेणियां बन जाती हैं। जिस श्रेणी के अधिकारियों के कर्त्तव्यों को परिभाजित किया जा सकता है, उनके लिए वेतन श्रंखला निर्धारित करना भी सम्भव है। किन्तु वेतन श्रंखला का दूसरा प्रकार जो कि परिभाषित कार्यों से सम्बन्धित नहीं होता, उसमें कई एक वेतन स्तर आते हैं। इनमें प्रत्येक एक विशेष संख्या पर शुरू होता है तथा वार्षिक वृद्धि द्वारा अधिक से अधिक संख्या तक बढ़ता जाता है। वेतन श्रंखला को निश्चित करने की व्यवस्था के पीछे मूल बात यही है कि तुलनात्मक रूप से समान कार्य करने वाले अधिकारियों को एक ही स्तर में रखा जाय।

अधिकारियों का आचरण [Conduct of the Officers]—चार्टर द्वारा अधिकारियों के आचरण के लिए कुछ नियम भी आधारित किये गये हैं। इस सम्बन्ध में एक बात तो यह कही गई कि अधिकारियों को यह स्पष्ट रूप से घोषणा कर देनी चाहिए कि क्या वे किसी सदस्य से सम्बन्धित हैं। यदि वे स्थानीय सत्ता के किसी सदस्य से अथवा उसके किसी उच्च अधिकारी से सम्बन्धित हो तो उनको इस बात की सूचना लिखित रूप में देनी चाहिये। यदि कोई उम्मीदवार जान बूझ करके इस प्रकार की सूचना

देने में असफल रहता है अथवा गलत सूचना देता है तो इसके लिए उसको पद से हटाया भी जा सकता है। दूसरे, एक उम्मीदवार यदि स्थानीय सत्ता की सेवा में प्रवेश पाना चाहता है तो उसे इसके लिए किसी सदस्य से जा कर नहीं कहना चाहिए अर्थात् अपनी नियुक्ति कराने के लिए वह किसी भी सदस्य के पास सिफारिश लेकर नहीं जा सकता। तीसरे यदि नियुक्तिकर्त्ता अधिकारी द्वारा किए गये किसी ठेके में स्वयं अधिकारी का आर्थिक हित संलग्न हो तो उसे इस बात की सूचना दे देनी चाहिए। चौथे, उसे समिति के किसी परिपत्र में निहित सूचना को अथवा समिति की प्रक्रिया को किसी बाहर वाले व्यक्ति के सामने नहीं खोलना चाहिए। पांचवें, चार्टर के अनुसार वर्णित आचरण संहिता में एक बात यह भी कही गई थी कि अधिकारी को अपने नियुक्तिकर्त्ता अधिकारी के प्रति पूरी स्वामीभक्ति दिखानी चाहिए। यद्यपि सत्ता का सम्बन्ध अधिकारी के व्यक्तिगत कार्यों से उस समय तक नहीं रहता जब तक कि वे उसकी सेवा से सम्बन्धित उत्तर-दायित्वों के साथ संघर्षपूर्ण न हों। केवल यही पर्याप्त नहीं है कि अधिकारी का आचरण उच्च स्तर का हो किन्तु प्रत्येक को यह स्पष्ट रूप से ज्ञात भी होना चाहिए कि यह ऐसा है। इस सम्बन्ध में मि० स्टोन्स (Stones) का यह कथन पूर्णतः सच है कि स्थानीय सरकारी अधिकारी को न केवल तथ्य रूप में ईमानदार होना चाहिये किन्तु उसे बेईमानी के सन्देह से भी परे रहना चाहिए।* स्थानीय सरकारी अधिकारी को अपने आपको ऐसी स्थिति में नहीं डालना चाहिए जिसमें कि उसके व्यक्तिगत हित एवं सार्व-जनिक उत्तरदायित्वों के बीच संघर्ष उत्पन्न हो जाय। सामान्य जनता स्थानीय सरकार के अधिकारी से ईमानदारी का एक उच्चस्तर चाहती है जो कि केवल कठोर नहीं है वरन् किसी भी बेईमानपूर्ण व्यवहार से पृथक है।

जहां तक अधिकारी के व्यक्तिगत जीवन का प्रश्न है उसे वे सब स्वतन्त्रताएं एवं सुविधाएं प्राप्त होती हैं जो कि सामान्य नागरिक को प्रदान की जाती हैं। अन्य अनेक लोगों की तरह से वह भी पूरे समय के कार्य के लिए नियुक्त किया जाता है। इसका अर्थ यह है कि उसे अन्य किसी ऐसे कार्य का उत्तरदायित्व नहीं लेना चाहिए जिससे कि उसके पद सम्बन्धी दायित्वों पर उल्टा असर पड़े। अधिकारियों के आचरण के बारे में उस समय कठिनाई उत्पन्न हो जाती है जब कि परिस्थितियों को परि-भाषित करना कठिन बन जाता है। सामान्य रूप में यह समझा जाता है कि सरकारी सेवकों को न्यायाधीशों की भांति तथा सरकारी कार्यालयों के अन्य अधिकारियों की भांति इस प्रकार का व्यवहार करना चाहिए कि जीवन के ढंग के बारे में कोई विरोधी विचार प्रकट न किये जा सकें।

---

*"The Local Government Officer must be not only honest in fact, but he must be beyond the suspicion of dishonesty."

—Quoted by *P. Stones*, Op. Cit., P. 89. (from Charter)

चार्टर के अनुसार स्थानीय सरकार के अधिकारियों के आचरण के बारे में स्पष्ट रूप से निर्देश किया गया है।* उसके अनुसार एक स्थानीय सरकारी अधिकारी का प्रथम कर्त्तव्य उसे नियुक्त करने वाली सत्ता के प्रति अविभाजित स्वामी भक्ति रखना है। उसकी व्यक्तिगत क्रियाओं में सत्ता का सामान्य रूप से उस समय तक कोई सम्बन्ध नहीं रहता जब तक कि उसके आचरण में उस सेवा के विरुद्ध कोई बात न हो जिसमें कि वह अधिकारी है।

इस प्रकार के आचरण के लिए लोक सेवाओं में उच्चस्तर की आवश्यकता है। ानूनी न्यायालयों के लिए जो कहावत निर्धारित की गई है वह स्थानीय सरकार के अधिकारियों पर भी उतनी ही लागू होती है। यह कहावत तथा मौलिक महत्व की बात है कि न्याय को केवल किया ही नही जाए बल्कि वह करता हुआ देखा भी जाना चाहिए। थोड़ा बहुत संदेह होने की स्थिति में भी अधिकारी की ईमानदारी के बारे में सन्देह किया जा सकता है। चार्टर में यह भी कहा गया था कि सरकारी अधिकारी को उन सभी के प्रति नम्रतापूर्ण होना चाहिए जिनके साथ वह सम्पर्क में आता है।

इन सिद्धान्तों को स्टाफ के सदस्यों पर लादना नहीं चाहिए। इनको स्टाफ की ओर से पूरी तरह से माना गया है और सयुक्त संगठन द्वारा संरचित किया गया है। स्थानीय सरकार के अधिकारियों ने एक संगठित निकाय बनाने की प्रक्रिया में सेवाओं में सुधार लाने की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किया है। आचरण के स्तर को उचित बनाए रखने के लिए स्वयं अधिकारियों से अधिक कोई भी उत्सुक नहीं हो सकता।

स्थानीय अधिकारियों के संघ

[The Associations of Local Government Officers]

स्थानीय सरकार के अधिकारियों को संघ बनाने का अधिकार सौंपा गया है। यही कारण है कि वर्तमान काल में यह आशा नहीं की जाती कि स्वयं नियुक्तिकर्त्ता ही अपने स्टाफ की नियुक्ति के लिए समस्त नियमों एवं शर्तों को बनाएगा। व्यापारिक संघों की धारणा आज इतनी विकसित हो चुकी है कि अधिकांश वेतन तथा अन्य शर्तों को दोनों पक्षों के बीच समझौते द्वारा तय किया जाता है। नवीन विकासों के अनुसार ऐसे समझौते पूर्ण निकाय बन चुके हैं जो कि नियुक्तिकर्ता एवं कर्मचारी-वर्ग दोनों के प्रतिनिधियों द्वारा बने होते हैं। यदि यह निकाय तय करदें तो नियुक्तिकर्त्ता को वही वेतन तथा शर्तें प्रदान करनी होती हैं। दूसरी ओर कर्मचारियों को भी उसे मानना होता है। यदि समझौता नहीं हो सका तो झगड़ा जारी रहेगा और यह झगड़ा कई रूप धारण कर सकता है: जैसे हड़ताल, तालाबन्दी, पंच फैसला तथा घेराव जो कि आज तक भारतीय औद्योगिक जगत का सरदर्द बना हुआ है। ग्रेट ब्रिटेन में स्थानीय सत्ताओं ने इसी सामान्य रूप

---

*Para 37 of the scheme of conditions of service of the English National Joint Council for Local Authorities' Services.

को अपनाया है किन्तु वहां संघर्ष की स्थिति में हड़ताल नहीं होती बल्कि मामला पंच फैसले को सौंप दिया जाता है। प्रत्येक प्रकार की स्थानीय सत्ता का राष्ट्रीय संगठन है। ये संगठन स्थानीय सत्ताओं के कार्यों एवं संविधान के विभिन्न पहलुओं से सम्बन्ध रखते हैं। उनका मुख्य सम्बन्ध सरकार एवं संसद की नीति के विकासों को देखने से रहता है।

स्थानीय सरकार की सत्ताओं को संघ क्यों नहीं बनाने चाहिए इस सम्बन्ध में प्राय: कोई कारण दिखाई नहीं देता। यदि वे व्यापारिक संघों के सदस्य हो सकते हैं तो इस प्रकार के संघ भी बना सकते हैं। उनके कार्यों की प्रकृति व्यापारिक कार्यों एवं वाणिज्य से भिन्न होती है अतः उनको व्यापारिक संघों [Trade Unions] से नहीं मिलाया जा सकता। वर्तमान में स्थिति यह है कि स्थानीय सरकार के लगभग ९०% अधिकारी राष्ट्रीय एवं स्थानीय सरकार के अधिकारियों के संघ के सदस्य होते हैं। नालगो (Nalgo) एक प्रकार से व्यापारिक संस्था ही है किन्तु इसकी कुछ अपनी विशेषतायें हैं। इनके कारण यह अन्य व्यापारिक संस्था से कुछ भिन्न बन जाती है। प्रथम तो यह सेवा के सभी स्तर के अधिकारियों के लिए होती है। नागरिक सेवा में हम यह पाते हैं कि वहां प्रत्येक स्तर के अधिकारी की अलग से संस्था होती है किन्तु नालगो में निम्न-स्तर से लेकर ऊपर के स्तर तक के प्राय: सभी अधिकारी होते हैं। दूसरे, नालगो व्यापारिक संघ, कांग्रेस से अथवा मजदूर दल आदि किसी से भी संलग्न नहीं होती। एक निकाय के रूप में यह किसी भी राजनैतिक दल से अपने आप को नहीं बांधती। तीसरे, नालगो स्थानीय सत्ताओं के साथ पूरे सहयोग के साथ कार्य करती है। यही कारण है कि यह परम्परागत व्यावसायिक संघों की अपेक्षा स्थानीय सरकार की सेवाओं के रूप में विकास करने में पर्याप्त सफल सिद्ध हुई है। नालगो की अन्य विशेषता यह है कि इसकी सदस्यता अन्य संगठनों से भी संगठन रखती है। कुछ एक सेवायें ऐसी भी हैं जिनको कि पहले स्थानीय सत्ताओं द्वारा सम्पन्न किया जाता था अतः उनके अधिकारी नालगो के सदस्य थे किन्तु बाद में इन सेवाओं को अन्य सत्ताओं के लिए हस्तांतरित कर दिया गया। इस परिवर्तन के बाद भी इनके अधिकारी नालगो के पूर्ववत् सदस्य ही बने रहे।

स्थानीय सरकार के अधिकारियों के इन संघों का विकास भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। अपने इतिहास के प्रारम्भ में स्थानीय सत्ताओं ने इसमें पर्याप्त लाभ का अनुभव किया कि एक ही स्तर की सत्ताओं के बीच संघ बना दिये जायें। इस प्रकार के संघों में नगर निगम संघ, काउन्टी परिषद संघ, शहरी जिला परिषद संघ, देहाती जिला परिषद संघ आदि का नाम लिया जा सकता है। ये सभी संघ सत्ताओं के स्तर की ही भिन्नता रखते हैं किन्तु वैसे इनके लक्ष्य सभी सामान्य हैं। ये इन लक्ष्यों को ऐसे तरीकों से प्राप्त करने का प्रयास करती हैं जो कि दिखने में भिन्न प्रतीत नहीं होते। ये अपने सदस्यों के लिए प्राय: एक जैसी ही सेवायें प्रदान करती हैं।

नगरनिगम संघ [The Association of Municipal Corporation]—नगर निगम संघ स्थानीय सत्ताओं द्वारा बनाया गया प्रथम संघ

माना जाता है । इनकी स्थापना नगर निगमों के एक समूह द्वारा अपने हितों की रक्षा के लिए तथा राष्ट्रीय स्तर पर अपना एक वक्ता रखने की दृष्टि से १८७३ में की गई थी । इस संघ के द्वारा सदस्यता प्रारम्भ से ही ऐच्छिक रखी गई । अब इसको प्राय: सभी काउन्टी बारोज, गैर-काउन्टी बारोज तथा राजधानी बारोज का प्रतिनिधित्व किया जाता है। इस संघ का लक्ष्य, जैसा कि इसके संविधान में वर्णित किया गया है, नगर निगमों के हितों, अधिकारियों एवं विशेषाधिकारियों की व्यक्तिगत व्यवस्थापन या सरकारी व्यवस्थापन के विरुद्ध रक्षा करना है ।

संघ द्वारा प्रतिदिन जो कार्य सम्पन्न किये जाते हैं वे मुख्य रूप से दो प्रकार के होते हैं । प्रथम, संघ द्वारा यह प्रयास किया जाता है कि बारोज की आवाज को संसद में तथा सरकारी विभागों में सुना जाये, विशेषकर उस व्यवस्थापन के प्रश्न पर जो कि इसके सदस्यों को प्रभावित करता हो । दूसरे, अपने सदस्यों को कानूनी, संवैधानिक, प्रशासकीय एवं वित्तीय समस्यायें उत्पन्न होने पर परामर्श देना तथा सहायता करना ।

संघ द्वारा परिषदों की सहायता इस प्रकार की जाती है कि निगम के एक सदस्य का अनुभव दूसरे सदस्यों के लिए भी उपयोगी बना दिया जाता है । ये संस्थायें एक ओर तो निगम के सदस्यों का अनुभव संसद के सामने रखती हैं और दूसरी ओर संसद द्वारा पारित व्यवस्थापन को निगम के सदस्यों के सामने स्पष्ट करती हैं ।

संघ का संगठन भी उल्लेखनीय है । संघ को सौ सदस्यों की परिषद द्वारा प्रशासित किया जाता है । ये सभी सदस्य मतदान के माध्यम से चुने जाते हैं । प्रत्येक निर्वाचित निगम को इस परिषद में अपने तीन प्रतिनिधि भेजने का अधिकार है किन्तु जो मतदान किया जाता है वह एक शहर, एक मत के हिसाब से ही होता है । यह परिषद सामान्यत: वर्ष में पांच बार मिलती है । यह संघ के कार्यों का प्रबन्ध करती है, इसकी नीतियों के सम्बन्ध में निर्णय लेती है तथा मतदान द्वारा इसकी समितियों को निर्वाचित करती है ।

संघ के विस्तृत कार्यों को संपन्न करने के लिए चौदह स्थायी समितियां होती हैं । ये हैं—बाल शिक्षा, अग्नि सेवा, सामान्य लक्ष्य, स्वास्थ्य, सड़क और यातायात, गृहनिर्माण, कानून, पुस्तकालय, अजायबघर एवं कला संस्थान बाजार एवं बधिकघर, पुलिस, रेटिंग, शहर, नियोजन, कल्याण । संघ के कार्यों में उप-समितियों द्वारा भी महत्वपूर्ण रूप से भाग लिया जाता है । स्थायी उप-समितियां होती हैं जैसे अनुदान, जल, नागरिक रक्षा आदि से सम्बन्धित । जब कभी एक विशेष विषय की जांच करनी हो तो उसके लिए विशेष समिति भी नियुक्त की जाती है उदाहरणार्थ वाहनों को रखने के स्थान के सम्बन्ध में । इसके अतिरिक्त स्थानीय सरकार को प्रभावित करने वाले प्रत्येक संसदीय विधेयक का अध्ययन करने के लिए एक विशेष उपसमिति नियुक्त की जाती है ।

जिस प्रकार परिषद के लिए व्यक्तियों का नहीं अपितु बारोज का चुनाव किया जाता है उसी प्रकार से समितियों में भी व्यक्ति का नहीं वरन्

बारोज का ही चुनाव किया जाता है। प्रत्येक बारो परिषद यह निर्णय करती है कि उसका प्रतिनिधित्व किस सदस्य के द्वारा किया जायेगा। इस व्यवहार के दो अपवाद बताये जाते हैं। ये हैं—सामान्य उद्देश्य की समिति और कानून समिति। सामान्य उद्देश्य की समिति का कार्य समन्वय स्थापित करना होता है अतः इसमें निर्वाचित सदस्यों के अतिरिक्त स्थायी समितियों के सभी सभापति भी रहते हैं। कानून समिति के सदस्य सभी टाउन क्लर्क होते हैं जिनको व्यक्तिगत सामर्थ्य के आधार पर चुना जाता है। विशेषीकृत ज्ञान वाले अधिकारियों को सभी प्रकार की समितियां एवं उपसमितियों में सेवा करने के लिए नियुक्त किया जाता है। इस प्रकार संघ के कार्य में अनुभव एवं ज्ञान का अधिक से अधिक योगदान रहता है। परिषद के कार्यों में जो व्यय होता है उसका भार बारोज द्वारा उठाया जाता है। अपनी जनसंख्या के आधार पर प्रत्येक सदस्य द्वारा वार्षिक योगदान दिया जाता है। इस प्रकार से यदि कोई छोटा बारो है तो वह पांच पौण्ड प्रति वर्ष तक दे सकता है जबकि चार लाख की जनसंख्या वाले बड़े बारोज द्वारा एक हजार पौण्ड प्रति वर्ष दिये जाते हैं।

काउन्टी परिषदों का संघ [County Councils Association]—जब सन् १८८८ के अधिनियम द्वारा काउन्टी परिषदों की स्थापना की गई थी उसके साथ ही काउन्टी परिषद संघ भी बना दिया गया। इस संघ में इंगलैण्ड तथा वेल्स की सभी काउन्टी परिषदें सम्मिलित हैं। इस संघ का मुख्य उद्देश्य सरकारी या व्यक्तिगत व्यवस्थापन द्वारा प्रभावित होने वाले हितों, अधिकारों, एवं विशेष अधिकारों की रक्षा करना है तथा काउन्टी परिषदों के लिए महत्वपूर्ण सूचना प्रदान करना है। साथ ही वह कार्य करना है जिसमें काउन्टी परिषद रुचि लेती हो।

शहरी जिला परिषद संघ [Urban District Councils Association]—इस संघ की स्थापना सन् १८९४ में की गई थी। इसने अपने से दस वर्ष पूर्व निर्मित स्थानीय मण्डलों के संघ का स्थान ग्रहण किया। इसमें इंगलैण्ड तथा वेल्स की वे जिला परिषदें होती हैं जो कि इसका सदस्य बनना चाहें। इसका मुख्य उद्देश्य सरकारी विभागों के नियमों या आदेशों से अथवा व्यक्तिगत या सरकारी व्यवस्थापन से प्रभावित होने वाले शहरी जिला परिषदों के हितों अधिकारों एवं विशेष अधिकारों की रक्षा करना है। यह उन क्षेत्रों में कार्य करती है जिनमें कि शहरी जिला परिषदें सामान्य रूप से रुचि लेती हैं। यह संघ उन कार्यों को प्रोत्साहन देता है जिनका कि परामर्श लिया जाना चाहिए। इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए संघ द्वारा वे तरीके अपनाए जाते हैं जो कि नगर निगमों द्वारा अपनाये जाते हैं। यहां यह बात उल्लेखनीय है कि संघ संसद में अपने प्रभाव को बढ़ाने का प्रयास करता है। इसके लिए इसने नियम बनाया है कि अठारह उपाध्यक्षों को संसद के किसी सदन का सदस्य बनाया जाए जो कि स्थानीय सरकार में रुचि लेते हैं। संघ की क्रियाओं में होने वाला व्यय प्रत्येक शहरी जिला परिषद द्वारा दिया जाता है। किस सदस्य द्वारा कितना योगदान दिया जाएगा यह संघ

की वार्षिक बैठक में तय कर लिया जाता है। इसके रेट भी जनसंख्या के आकार पर निर्भर करते हैं।

देहाती जिला परिषद संघ [Rural District Councils Association]--देहाती जिला परिषदों की स्थापना स्थानीय सरकार अधिनियम द्वारा सन् १८९४ में की गई तथा यह संघ सन् १८९५ में बनाया गया। इस संघ का आधार स्वेच्छा है और वे ही इसके सदस्य बन सकते हैं जो कि बनना चाहें। संघ का उद्देश्य प्रस्तावित या निर्मित व्यवस्थापन से प्रभावित होने वाले देहाती जिला परिषदों के अधिकारों एवं हितों की रक्षा करना है।

स्थानीय सरकार के सेवकों के वेतन, आचरण, संस्था बनाने के अधिकार आदि बातों से स्थानीय सत्ताएं पर्याप्त प्रभावित होती हैं। जब कभी कार्य के घन्टे, कार्य की शर्तें, भत्ता, छुट्टियां, आदि बातों के सम्बन्ध में कोई विरोध उत्पन्न होता है तो संयुक्त समझौता यन्त्र द्वारा उसे सुलझाने का प्रयास किया जाता है।

अधिकारियों की राजनैतिक क्रियाएं [The Political Activities of Officers]—जनहित एवं लोक सेवाओं के उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए सरकारी अधिकारियों की क्रियाओं पर कुछ ऐसे प्रतिबन्ध लगाए जाते हैं जो कि सामान्य नागरिकों की क्रियाओं पर नहीं होते। इन प्रतिबन्धों में महत्वपूर्ण प्रतिबन्ध यह है कि उसे सार्वजनिक कार्यों में भाग नहीं लेना चाहिए। सार्वजनिक कार्यों से अर्थ यहां राजनैतिक दलों से है। सामान्य धारणा के अनुसार यह समझा जाता है कि एक प्रजातन्त्रात्मक समाज के प्रत्येक नागरिक को देश की विभिन्न समस्याओं के बारे में सक्रिय रूप से योगदान करना चाहिए तथा उसे चाहिए कि सार्वजनिक जीवन में अधिक से अधिक योगदान कर सके। इस दृष्टि से सोचने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि सरकारी अधिकारियों को चाहे वे केन्द्रीय सरकार के अधिकारी हों अथवा स्थानीय सरकार के, एक नागरिक के रूप में मत देने का तथा सार्वजनिक कार्यों में भाग लेने का अधिकार होना चाहिए। उसे ऐसा करने का अधिकार उस समय तक है जब तक उसके दायित्वों पर कोई विरोधी प्रभाव नहीं पड़ता। ग्रेट ब्रिटेन में अपनाई गई परम्पराओं के अनुसार सरकारी अधिकारियों की क्रियाओं पर राजनैतिक दृष्टि से प्रतिबन्ध लगाए गए हैं पर जर्मनी में ऐसा नहीं होता। वहां सामान्यतः यह पाया जाता है कि स्थानीय सरकार के उच्च अधिकारी अपने राजनैतिक दलों में सक्रिय रूप से भाग लेते हैं। जर्मनी में जब कोई सरकारी पद रिक्त होता है तो उस पर किसी उम्मीदवार को तब तक लिए जाने की उम्मीद नहीं होती जब तक कि उसके दल का परिषद में बहुमत न हो। इस व्यवस्था के अपने कुछ लाभ हैं किन्तु यह कहा जाता है कि लाभों की अपेक्षा इसकी हानियां अधिक हैं।

प्रोफेसर आर० एम० जैक्सन के कथनानुसार सरकारी अधिकारियों की राजनैतिक क्रियाओं पर प्रतिबन्ध लगाने के तीन स्पष्ट लाभ हैं। प्रथम यह है कि अधिकारियों को नीति से सम्बन्धित मामलों में परामर्श देना होता है। केन्द्रीय सरकार के अधिकारी मन्त्रियों को तथा स्थानीय सरकार के उच्च अधिकारी परिषद की समितियों को परामर्श देते हैं। ऐसी स्थिति

में यह महत्वपूर्ण समझा जाता है कि उनके द्वारा दिया गया परामर्श निष्पक्ष होना चाहिए और वह किसी राजनैतिक दल के कार्यक्रम में रंगा हुआ नहीं होना चाहिए। मन्त्रीगण तो आते और जाते रहते हैं किन्तु अधिकारी प्राय: अपने पद पर ही बने रहते हैं। ऐसी स्थिति में व्यवस्था यह होनी चाहिए कि नए आने वाले मन्त्रीगण सरकारी अधिकारियों में इस बात का विश्वास रख सकें कि वे उनकी नीतियों को क्रियान्वित करते रहेंगे। यह तभी हो सकता जबकि अधिकारियों को राजनैतिक दलबन्दी से अलग रखा जाए। एक दूसरा महत्वपूर्ण लाभ यह है कि अधिकारियों को राजनैतिक दलों से दूर रखने पर वे जनता का विश्वास प्राप्त करने योग्य बन जाते हैं। प्रजातन्त्र में यह अत्यन्त आवश्यक होता है कि जनता सरकारी अधिकारियों की निष्पक्षता मे विश्वास करे। मन्त्रियों को तथा परिषद की समितियों को परामर्श देने का कार्य उच्च अधिकारियों द्वारा किया जाता है, उनसे जनता का सम्पर्क कम रहता है किन्तु नीचे के पदों पर स्थित अधिकारियों के साथ जनता घनिष्ट रूप से सम्बन्धित रहती है। कल्याणकारी राज्य के सन्दर्भ में सामाजिक सेवाओं का विस्तार हो जाने के कारण अधिकारियों एवं जनता का सम्पर्क और अधिक व्यापक एवं महत्वपूर्ण बन गया है। यदि सरकारी अधिकारियों को राजनैतिक दलों में भाग लेने की इजाजत दे दी जाए तो वे वांछित रूप में समाज सेवाएं प्रदान करने में असमर्थ रहेंगे। जनता भी यह स्पष्ट रूप से जान जाएगी कि उनके हितों को निष्पक्ष रूप से नहीं देखा जाएगा।

इस प्रकार के प्रतिबन्ध का एक तीसरा लाभ यह है कि यदि अधिकारियों को राजनैतिक दलबन्दी में खुला छोड़ दिया गया तो सरकारी सेवा में लूट प्रणाली (Spoils System) का बोलबाला हो जाएगा। इसका अर्थ यह हुआ कि जो पार्टी बहुमत में होगी वह अपने दल के लोगों में से ही सारी नियुक्तियां कर लेगी तथा सभी अधिकारी अथवा कम सेही कम उच्च अधिकारी नए राजनैतिक दल के शक्ति में आते ही हटा दिए जाएंगे। इस प्रकार की व्यवस्था जब नीचे तक फैल जाती है तो कई एक बुराइयों की जननीअबन जाती है। इस व्यवस्था का व्यवहार जर्मनी में और संयुक्त राज्यअमेरीका के कुछ भागों में देखा जा सकता है। इस व्यवस्था के कारण जर्मनी में उत्पन्न विशेष स्थिति का वर्णन करते हुए आर. एम. जैक्सन महोदय ने बताया है कि यदि जर्मनी स्थानीय सत्ता में किसी गृह अधिकारी (Housing officer) का पद रिक्त हो तो प्राय: ऐसे व्यक्ति कोही नियुक्त किया जाता है जोकि नियुक्तिकर्ता के अपने दल का हो। जब जैक्सन महोदय ने इस तथ्य के सम्बन्ध में पूछताछ की तो उनको बताया गया कि ऐसा करने से ही दल के समर्थकों को मकान मिल सकते हैं।

इसका अर्थ यह हुआ कि परिषद के सदस्य एक प्रकार से अपने राजनैतिक ऋण का भुगतान करते हैं। इस सम्बंध में स्पष्टीकरण करते हुए यह बताया गया कि यदि किसी अन्य राजनैतिक दल के व्यक्ति को गृह-अधिकारी बना दिया जाए तो बनाने वाले को स्वयं को मकान मिलना मुश्किल बन जाए। यह तो बिल्कुल असम्भव है कि राजनैतिक दृष्टि से किसी निष्पक्ष

व्यक्ति को इस पद पर बैठाया जाए क्योंकि ऐसा व्यक्ति मिलता ही नहीं है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि जब एक बार राजनैतिक दलों से सम्बन्धित अधिकारियों की व्यवस्था को अपना लिया जाता है तो अधिकारी विश्व में प्रत्येक व्यक्ति अपने आप को राजनैतिक दल से बांध लेता है और उसका भविष्य आवश्यक रूप से चुनाव में उसके दल की सफलता पर निर्भर करने लगता है। इस व्यवस्था को तोड़ना असम्भव बन जाता है क्योंकि उस समय प्रत्येक दल यह कह कर विरोध करता है कि यदि वह परिवर्तन करेगा तो उसके विरोधी द्वारा इस व्यवस्था का लाभ उठाया जाएगा।

लूट-प्रणाली का एक स्वाभाविक परिणाम यह भी है कि जब अधिकारीगण राजनैतिक दलों में सक्रिय रूप से भाग लेते हैं तो वे मन्त्री से यह भी आशा करने लगते हैं कि उनको पदोन्नति अथवा अन्य किसी लाभ द्वारा पुरस्कृत किया जाए। मन्त्री को चुनाव में सफल बनाने के लिए कई एक व्यक्तियों द्वारा महत्वपूर्ण योगदान किया जाता है और मन्त्री बनने के बाद उस व्यक्ति का यह प्रमुख कर्त्तव्य हो जाता है कि वह अपने साथियों एवं सहयोगियो के उपकार का बदला दे। दलीय समर्थकों को पुरस्कृत करने के कई एक तरीके हो सकते हैं। जब राजनैतिक आधार पर नियुक्तियां एवं पदोन्नतियां की जाती हैं तो उनसे संगठन के अधिकारियों के बीच मतभेद और ईर्ष्या की भावना उत्पन्न होती है।

उक्त सभी कारणों से यह उचित समझा जाता है कि अधिकारियों की राजनैतिक क्रियाओं पर कुछ प्रतिबन्ध लगाए जाएं। इस सम्बन्ध में एक महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि अधिकारियों के किस स्तर पर कितना प्रतिबन्ध लगाया जाए। जहां तक उच्चतम अधिकारियों का प्रश्न है, उनके ऊपर पूरा नियन्त्रण रखा जाना चाहिए अर्थात् वे अपने आपको किसी दल से सम्बद्ध न करें। वे किसी राजनैतिक दल के सदस्य हो सकते हैं तथा मतदान भी कर सकते हैं किन्तु दलीय राजनीति में वे कोई सार्वजनिक भाग नहीं ले सकते। इसके विरुद्ध कर्मचारियों का एक निम्नतम वर्ग है जो कि शारीरिक श्रम करता है। इस वर्ग के लोग यदि राजनैतिक दलों में भाग लें तो इसमें कोई हानि होने की सम्भावना नहीं रहती। एक व्यक्ति जो कि कार्यालय के कागजों को इस कमरे से उस कमरे तक ले जाता है वह यदि राजनैतिक संगठन में भाग लेगा तो उस संगठन को अधिक हानि नहीं होगी। इन दोनों वर्गों के बीच का जो वर्ग है उसकी क्रियाओं के सम्बन्ध में बीच का रास्ता अपनाना होगा अर्थात् मध्य वर्ग के लोगों को प्रार्थना करने पर राजनैतिक दलों में भाग लेने की अनुमति दी जा सकती है। नागरिक सेवा में एवं स्थानीय सेवा के उत्तरदायी स्तरों पर कार्य करने वाले अधिकारियों को दलीय राजनीति में सक्रिय रूप में भाग लेने से रोकने के लिए यह जरूरी है कि इन पदों पर नियुक्तियां करते समय उम्मीदवार के राजनैतिक दल के बारे में कुछ न पूछा जाए। केन्द्रीय सरकार यह जानकारी रखती है कि उसके अधिकारी साम्यवादीय हैं अथवा नहीं हैं क्योंकि सरकार के कुछ कार्य ऐसे हैं जिन पर सुरक्षा की दृष्टि से साम्यवादियों को नहीं रखा जाता। स्थानीय सत्ताओं को इस प्रकार का प्रतिबन्ध लगाने की कोई आवश्यकता नहीं होती। इस सिद्धान्त

का पालन कई बार बड़ा कठिन बन जाता है क्योंकि पारषद प्रायः सिद्धान्तों को बनाए रखने के महत्व पर अधिक ध्यान नहीं देते। वैसे सामान्यतः यह देखा जाता है कि ग्रेट ब्रिटेन में अधिकारियों का दृष्टिकोण दलीय राजनीति के प्रभाव से पक्षपातपूर्ण नहीं बनता।

कार्यकाल की सुरक्षा
(Security Of Tenure)

सेवा को उस समय सन्तोषजनक कहा जा सकता है जब कि उसकी स्थिति एवं दशाएं अधिकारी तथा नियुक्तिकर्त्ता दोनों के लिए सन्तोषजनक हों। सेवा के प्रति कर्मचारियों के सन्तोष का एक मुख्य आधार कार्यकाल की सुरक्षा होता है। ब्रिटिश स्थानीय सरकार की व्यवस्था के अनुसार परिषद द्वारा किसी भी अधिकारी को सूचना देकर पद-विमुक्त किया जा सकता है। यह व्यवस्था देखने में पर्याप्त असन्तोषजनक लगती है क्योंकि इसमें अधिकारियों को पूरी तरह से पारषदों की दया पर छोड़ दिया जाता है। कुछ अपवादों को छोड़कर स्थानीय सत्ताएं किसी भी अधिकारी की नियुक्ति को अपनी स्वेच्छा से रद्द कर सकती हैं। अपवादों में मेडीकल अधिकारी, सफाई निरीक्षक, सर्वेक्षणकर्त्ता आदि अधिकारी आते हैं जिनके वेतन के लिए केन्द्रीय सरकार द्वारा योगदान किया जाता है। ब्राउन बनाम डैगेन्हम (Brown V/s Dagengham) के मामले में यह स्पष्ट किया गया कि स्थानीय सत्ताएं कानूनी रूप से पूरी सूचना देने के लिए बाध्य नहीं हैं। वे जब भी कभी चाहें अपनी खुशी से किसी भी अधिकारी को हटा सकती हैं। यह व्यवस्था इसलिए की गई है ताकि स्थानीय सत्ताएं अयोग्य, उदासीन एवं अनुपयुक्त सेवक से पीछा छुड़ा सकें। जहां एक अधिकारी तकनीकी दृष्टि से योग्य होते हुए भी यदि संगठन के अन्य सदस्यों को नामन्जूर होता है तो परिषद उसे हटाने का अधिकार रखती है। यदि ऐसा नहीं किया गया तो संगठन में मनमुटाव पैदा होने का डर रहता है। दूसरी ओर स्थानीय सरकार के अनेक अधिकारी ऐसे भी हो सकते हैं जिनके कर्त्तव्य उनके व्यक्तिगत एवं निहित स्वार्थों के बीच संघर्ष उत्पन्न कर दें। जिला छोटा होने के कारण सरकारी सेवकों और उनके मालिकों अर्थात् स्थानीय पारषदों के मध्य स्थित सम्बन्ध अत्यन्त घनिष्ट एवं प्रत्यक्ष होता है।

कानूनी व्यवस्था के इस रूप के होते हुए भी स्थानीय सरकार के अधिकारियों का कार्यकाल पर्याप्त सुरक्षित रहता है। कार्यकाल की सुरक्षा के लिए कुछ लोग यह सुझाव देते हैं कि अधिकारियों को अपनी सत्ता के साथ पांच या दस साल का एक लम्बा करार कर लेना चाहिए किन्तु इसमें यह सन्देह किया जाता है कि इस प्रकार का समझौता चलता रहेगा। इस समझौते को दोनों पक्षों में से कोई भी तोड़ने के लिए मजबूर हो सकता है। यदि स्थानीय सरकार अपने कर्मचारियों को आगे बढ़ने के लिए सचमुच परिस्थितियां प्रदान करना चाहती हैं तो विभिन्न सत्ताओं के बीच पर्याप्त आदान प्रदान होना चाहिए। इसका अर्थ यह हुआ कि जब भी कहीं रिक्त स्थान हो तो उसकी सूचना अन्य सत्ताओं को भी दी जाए और यदि उनमें कार्य करने वाला कोई अधिकारी अधिक योग्य साबित

हो तो उसे अवश्य नियुक्त किया जाए। यदि कर्मचारी से कोई दीर्घकालीन समझौता कर लिया जाए तो वह इसका समय पूरा होने से पूर्व अपनी पदोन्नति नहीं कर सकता और जिस अवसर को वह प्राप्त करना चाहता था, वह भविष्य में काफी दिनों बाद प्राप्त होगा। ऐसी स्थिति में उस व्यवस्था को उपयुक्त समझा जाता है जिसमें कि पूर्व सूचना देने के बाद कर्मचारी पद छोड़ सके अथवा नियुक्तिकर्त्ता उसे पद से हटा सके। निश्चित समय के लिए समझौता करके कार्यकाल को सुरक्षित बनाने का प्रयास अधिक उपयुक्त नहीं समझा जाता। कार्यकाल को सुरक्षित बनाने का एक अन्य तरीका यह है कि एक अधिकारी को पदविमुक्त करने से पूर्व केन्द्रीय सरकार की स्वीकृति लेना जरूरी बना दिया जाए। कुछ मामलों में जिनको कि अपवादस्वरूप ऊपर उल्लेखित किया गया है, उस व्यवस्था को अपनाया जाता है।

यह कहा जाता है कि जब तक एक विशेष परिस्थिति उत्पन्न न हो, उस समय तक इस प्रकार का प्रावधान बनाया जाना पूर्णतः अनुपयुक्त समझा जाना चाहिए। कई बार ऐसा हो जाता है कि स्थानीय सत्ताओं एवं केन्द्रीय सरकार के बीच कुछ मन-मुटाव एवं संघर्ष उत्पन्न हो जाता है। ऐसी स्थिति में कोई अधिकारी केन्द्रीय सरकार से अपने कार्यकाल की सुरक्षा के सम्बन्ध में कम आशा कर सकता है। इंगलैण्ड का अनुभव तो यह है कि वहां बिना दीर्घकालीन समझौता किए और बिना केन्द्रीय सरकार के नियन्त्रण की व्यवस्था किए ही स्थानीय सरकार के अधिकारी अपनी नियुक्तियों में कार्यकाल की अधिक सुरक्षा का उपभोग कर सकते है। अधिकारियों की स्थिति असल में दो बातों पर निर्भर करती है, उनकी व्यावसायिक योग्यता एवं कुशलता तथा उनका संगठन। यह कहा जात है कि स्थानीय सरकार की सेवा में उच्च पदों पर व्यावसायिक कुशलता का होना जरूरी है तथा पदाधिकारी ऐसी स्थिति में सफल हो पाते हैं जब कि वे अपने कार्य में पूर्णतः योग्य हों। केवल योग्यता प्राप्त करना ही पर्याप्त नहीं होता किन्तु यह भी जरूरी है कि परिषद के सदस्य, कार्यों को यह अनुभव करें कि आवश्यकता के समय सम्पन्न करने में अधिकारियों द्वारा उनकी सहायता की जा सकती है। वह अधिकारी उस समय तक सफल नहीं माना जा सकता जब तक कि सदस्य यह अनुभव न करे कि वह एक अच्छा आदमी है और वे उसे चाहते हैं। ऐसा होने पर ही सम्बन्धित अधिकारी का कार्यकाल सुरक्षित रह सकता है।

स्थानीय सेवाओं के कार्यकाल की सुरक्षा का एक दूसरा साधन उनके संगठन हैं। अनेक ऐसे व्यावसायिक संघ होते हैं जिनमें कि स्टाफ़ के वरिष्ट अधिकारी सदस्य रहते हैं। यदि स्थानीय सत्ता कोई अनुचित कार्य करे तो इन संघों द्वारा उस अनुचित कार्य का विरोध किया जाएगा। एक अवसर पर इंगलैण्ड की स्थानीय सत्ता ने एक पद से सम्बन्धित विज्ञापन ऐसा निकाला जिसमें रखी गई शर्तें उस पद से सम्बन्धित संघ को मन्जूर नहीं थी। फलतः संघ ने यह निर्णय लिया कि कोई सदस्य इस पद के लिए उस समय तक प्रार्थना न करे जब तक कि तीन परिवर्तनों के साथ पद को पुर्नविज्ञापित नहीं

किया जाए। जिन स्थानीय अधिकारियों के पास व्यावसायिक योग्यताएं नहीं होतीं, वे अपने प्रभावशाली एवं शक्तिशाली संगठन द्वारा अपने हितों की रक्षा करते हैं। जब कभी एक स्थानीय सत्ता अपने अधिकारियों को स्वीकृत सिद्धान्तों के अनुसार नहीं देखती, उस समय तक वह सत्ता उचित व्यक्ति को भर्ती करने में कठिनाई का अनुभव करेगी। जब नियुक्तिकर्त्ता यह जानता है कि उसके द्वारा हटाया गया व्यक्ति अपने व्यावसायिक संघ का परामर्श एवं सहायता प्राप्त करेगा तो वह स्वेच्छापूर्ण रूप से कार्य नहीं कर सकता क्योंकि इससे उसका संघर्ष न केवल उस व्यक्ति के प्रति छिडेगा बल्कि एक संगठन के प्रति छिड़ जाएगा। ह्विटले परिषदों की स्थापना से स्थानीय सत्ताओं को अन्तिम शब्द कहने की शक्ति नहीं रही है। अधिकारियों को यह शक्ति है कि वे संयुक्त निकाय के सम्मुख अपील कर सकें। यह अधिकारियों की सुरक्षा का एक श्रेष्ठ तरीका है।

अधिकारियों के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही
[Disciplinary Action against Officers]

प्रत्येक संगठन तभी कार्यकुशल रूप से अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने की दिशा में आगे बढ़ सकता है जब कि संगठन का अध्यक्ष अपने स्टाफ की पूरी देख-माल करता रहे कि वे उचित रूप से कार्यकुशलता के साथ कार्य कर रहे हैं अथवा नहीं। परिषद के सदस्यों को यह अधिकार नहीं दिया जाता कि वे प्रशासन के दिन-प्रतिदिन के मामलों में हस्तक्षेप करें। उनका कार्य तो केवल यह देखना है कि विभाग कुशलतापूर्वक संचालित होता रहे। पारषदों को वरिष्ट अधिकारियों का स्थान नहीं लेना चाहिये। अनुशासनात्मक कार्यवाही से सम्बन्धित विषय को परिषद के सदस्यों के सामने उसी समय लाना चाहिए जब कि मामला अत्यन्त गम्भीर हो और विभागाध्यक्ष उस पर विचार करना न चाहे अथवा वह मामला स्वयं मुख्य अधिकारी से ही सम्बन्ध रखता हो।

स्टाफ को नियन्त्रित करने की शक्ति तथा अधिकारियों को पदविमुक्त करने की शक्ति परिषद में रहती है। साधारण कर्मचारियों एवं कम महत्व के पदों के सम्बन्ध में अनुशासन रखने की अपनी शक्तियों को परिषद एक समिति को सौंप सकती है। वह समिति आवश्यक कदम उठाती है और परिषद के सामने अपने द्वारा किए गए कार्यों का प्रतिवेदन प्रस्तुत करती है। अन्य विषयों पर परिषद स्वयं कार्यवाही करती है। यहां प्रश्न यह उठता है कि आवश्यक जांच का कार्य एवं सिफारिश देने का कार्य किसे सम्पन्न करना चाहिये। यह सेवा से सम्बन्धित समिति द्वारा भी किया जा सकता है और स्टाफ समिति द्वारा भी। ये समितियां किस सीमा तक इस मामले से सम्बन्धित रहेंगी, यह बात दोषित गलत व्यवहार की प्रकृति पर निर्भर करती है।

गत व्यवहार का सम्बन्ध एक विशेष सेवा के संचालन से है तो संबन्धित समिति को उस मामले की जांच करनी चाहिये और उस मामले के तथ्यों का अध्ययन करना चाहिये। यदि समिति के मतानुसार अधिकारी को सेवा में बनाये रखना अनुचित रहेगा तो वह यह सिफारिश कर सकती

है कि उसे उन कर्त्तव्यों से हटा देना चाहिए। स्टाफ समिति का कार्य यह देखना होता है कि पूरे स्टाफ के साथ एक जैसा व्यवहार किया जाए तथा बराबर की योग्यता के लिए बराबर पुरस्कार दिया जाये। इससे अधिकारियों को यह विश्वास होगा कि विभिन्न सेवाओं में अनुशासनात्मक कार्यवाही समान रूप से की जाती है।

इसलिए यह कहा जाता है कि संयुक्त समिति को भी मामले पर विचार करना चाहिये और परिषद को अपनी सिफारिशें भेजनी चाहिये। स्टाफ समिति और दूसरी सम्बन्धित समितियों में परस्पर संघर्ष होना आवश्यक नहीं है। इसका कारण यह है कि विशेष सेवा से सम्बन्धित समिति उस सेवा की आवश्यकताओं पर जोर देती है और स्टाफ समिति पूरे स्टाफ की दृष्टि से परिषद के हितों पर विचार करती है। जब स्टाफ के मामलों को ह्विटले परिषदों की नीति के आधार पर विचार का विषय बनाया जाता है तो अनुशासनात्मक कार्यों पर भी इसका प्रभाव पड़ता है। जहां संयुक्त समझौतों की व्यवस्था उच्च रूप से विकसित हो जाती है वहां किसी झगड़े को प्रायः संयुक्त निकाय के सम्मुख प्रस्तुत किया जाता है। इस सम्बन्ध में सामान्य व्यवहार यह है कि उस विशेष स्थानीय सत्ता के नियमों का पालन किया जाता है। उदाहरण के लिए स्टाफ समिति मामले की सुनवाई करती है एवं सम्बन्धित अधिकारी को उसकी इच्छानुसार तथ्य सामने लाने का अवसर दिया जाता है तथा इसके अतिरिक्त अपील के रूप में संयुक्त संगठन के सामने भी मामले को उठाया जा सकता है। जहां कहीं संयुक्त व्यवस्था कार्य नहीं करती वहां स्थानीय सत्ता इस प्रकार व्यवहार करती है कि अधिकारी को उसके विरुद्ध लगाये गये आरोपों से सूचित कर दिया जाए और उन्हें अपना पक्ष प्रस्तुत करने का पूरा अवसर दिया जाय।

सेवा-निवृत्ति एवं पेंशन
[Retirement and Pensions]

सभी प्रकार की सरकारी सेवाओं के सेवा–निवृत्ति एवं पेंशन के सम्बन्ध में उपयुक्त प्रावधान किया जाता है। इङ्गलैण्ड की स्थानीय सरकार ने इस सम्बन्ध में जो प्रावधान रखे हैं उनकी प्रकृति कुछ जटिलतापूर्ण है। यह इसलिए है कि व्यवस्था का विकास धीरे-धीरे हुआ है और विषय की प्रकृति भी ऐसी ही है। कुछ स्थानीय सत्ताओं को पेंशन योजनाओं की शक्ति संसद के स्थानीय अधिनियमों द्वारा प्राप्त हो गई और उसके बाद सन् १९२२ में सामान्य शक्ति सौंप दी गई। इस अधिनियम की प्रकृति कुछ-कुछ स्वेच्छाजनक थी अर्थात् स्थानीय सत्ता स्वयं इस बात पर निर्णय करती थी कि वह इस अधिनियम को क्रियान्वित करे या न करे। सन् १९३७ के अधिनियम द्वारा स्थानीय सत्ताओं को आवश्यक रूप से पेंशन कार्यक्रम मानने के लिए व्यवस्था की गई। इस विकास के परिणामस्वरूप कुछ स्थानीय सत्ताएं तो पेन्शन कार्यक्रमों को बहुत वर्षों से लागू कर रही हैं जब कि अन्य स्थानीय सत्ताओं ने उसको सन् १९३७ के व्यवस्थापन द्वारा लागू किया जो कि सन् १९३९ में क्रियान्वित किया गया। स्थानीय सरकार की सेवाओं की पेंशन की व्यवस्था योगदान पूर्ण है। अधिकारियों से उनके वेतन का छः

प्रतिशत भाग लिया जाता है। यह धन उनके वेतन में से प्रति माह काट लिया जाता है और सेवा निवृत्ति होने पर अधिकारियों के वेतन से काटे हुए धन के बराबर धन मिला कर स्थानीय सत्ता द्वारा उन्हें प्रदान किया जाता है। एक स्थानीय सत्ता पेन्शन कोष में प्राप्त धन को न्यास सुरक्षाओं में व्यय कर सकती है अथवा उस पर अनेक सुरक्षाएं लगा सकती है। यह इस धन के द्वारा किसी प्रोजेक्ट को भी धन प्रदान कर सकती है।

जब योगदान (Contribution) के आधार पर पेन्शन व्यवस्था को लागू किया जाता है तो अनेक प्रकार की समस्याएं सामने आती हैं क्योंकि सेवा के वृद्ध लोग केवल कुछ समय तक ही योगदान करेंगे जब कि नव-प्रविष्टों को जीवन भर तक योगदान करना होगा। इन अन्तरों को ध्यान में रख कर अलग-अलग प्रावधान बनाया जाना जरूरी है। इस योजना का सही मूल्यांकन करने के लिए यह उपयोगी रहेगा कि योजना प्रारम्भ होने से पहले ही कार्य कर रहे व्यक्तियों की अवहेलना की जाये तथा केवल उन लोगों को ध्यान में रखा जाय जो कि सारे जीवन भर योगदान करेंगे। ऐसे लोगों को सेवा निवृत होने पर पेन्शन देने के लिए १६३७ के अधिनियम द्वारा प्रावधान किया गया। यह सेवा निवृत्ति कई रूप में हो सकती है, जैसे सेवा के दस साल पूरे करने पर यदि कर्मचारी का स्वास्थ्य स्थायी रूप से खराब हो जाय, या चालीस वर्ष की सेवा हो जाये एवं साठ वर्ष या इससे अधिक की उम्र हो जाये, या दस साल की सेवा पूरी करने के बाद ६५ साल की उम्र पूरी हो जाये।

पेन्शन के रूप में कितना धन दिया जायेगा यह भी एक प्रश्न है। पेन्शन के धन की मात्रा दो तत्वों के आधार पर तय की जाती है अर्थात् सेवा की अवधि तथा औसतन वेतन अर्थात् पिछले पांच वर्ष से अधिकारी को प्राप्त होने वाला वेतन। पेन्शन का धन सेवा समाप्त होने तक के औसतन वेतन का १/६० भाग होता है तथा इसके साथ ही औसतन का १/३ भी दिया जाता है। इस प्रकार स्कूल से निकल कर सेवा में प्रवेश पाने वाला विद्यार्थी चालीस वर्ष की सेवा समाप्त करने तक साठ वर्ष का हो जाता है। इस प्रकार वह अपने पिछले पांच वर्षों के औसतन वेतन के अधिक से अधिक २/३ भाग पेन्शन पर सेवा-निवृत हो जायेगा। यदि उसने ३० वर्ष की उम्र में सेवा में प्रवेश पाया है तो ६५ वर्ष की उम्र पर पहुंचते-पहुंचते उसकी ३५ वर्ष की सेवा हो जायेगी तथा उसे पेन्शन के रूप में औसत का ३५/६० मिलेगा।

युद्ध के बाद यह आवश्यक समझा जाने लगा कि पेन्शन से सम्बंधित सभी लोक सेवाओं में स्थित प्रावधानों को बदला जाये। यह अनुभव किया गया कि जिस व्यक्ति ने सेवा समाप्त करली है उसकी पेन्शन के सम्बंध में रखे गये प्रावधान तो सन्तोषजनक हैं किन्तु जो अधिकारी सेवा काल में ही गुजर चुका है उसके आश्रितों को सहायता देने के सम्बन्ध में संतोषजनक प्रावधान नहीं है। सन् १६५४ में एक नई योजना को प्रारम्भ किया गया। १६३७ या उससे पूर्व के व्यवस्थापन द्वारा जो पेन्शन सम्बन्धी अधिकार, अधिकारियों को प्रदान किये गये थे। वे चाहते तो उनको ही जारी रख सकते

है कि उसे उन कर्त्तव्यों से हटा देना चाहिए। स्टाफ समिति का कार्य यह देखना होता है कि पूरे स्टाफ के साथ एक जैसा व्यवहार किया जाए तथा बराबर की योग्यता के लिए बराबर पुरस्कार दिया जाये। इससे अधिकारियों को यह विश्वास होगा कि विभिन्न सेवाओं में अनुशासनात्मक कार्यवाही समान रूप से की जाती है।

इसलिए यह कहा जाता है कि संयुक्त समिति को भी मामले पर विचार करना चाहिये और परिषद को अपनी सिफारिशें भेजनी चाहिये। स्टाफ समिति और दूसरी सम्बन्धित समितियों में परस्पर संघर्ष होना आवश्यक नहीं है। इसका कारण यह है कि विशेष सेवा से सम्बन्धित समिति उस सेवा की आवश्यकताओं पर जोर देती है और स्टाफ समिति पूरे स्टाफ की दृष्टि से परिषद के हितों पर विचार करती है। जब स्टाफ के मामलों को ह्विटले परिषदों की नीति के आधार पर विचार का विषय बनाया जाता है तो अनुशासनात्मक कार्यों पर भी इसका प्रभाव पड़ता है। जहां संयुक्त समझौतों की व्यवस्था उच्च रूप से विकसित हो जाती है वहां किसी झगड़े को प्रायः संयुक्त निकाय के सम्मुख प्रस्तुत किया जाता है। इस सम्बन्ध में सामान्य व्यवहार यह है कि उस विशेष स्थानीय सत्ता के नियमों का पालन किया जाता है। उदाहरण के लिए स्टाफ समिति मामले की सुनवाई करती है एवं सम्बन्धित अधिकारी को उसकी इच्छानुसार तथ्य सामने लाने का अवसर दिया जाता है तथा इसके अतिरिक्त अपील के रूप में संयुक्त संगठन के सामने भी मामले को उठाया जा सकता है। जहां कहीं संयुक्त व्यवस्था कार्य नहीं करती वहां स्थानीय सत्ता इस प्रकार व्यवहार करती है कि अधिकारी को उसके विरुद्ध लगाये गये आरोपों से सूचित कर दिया जाए और उन्हें अपना पक्ष प्रस्तुत करने का पूरा अवसर दिया जाय।

सेवा-निवृत्ति एवं पेंशन
[Retirement and Pensions]

सभी प्रकार की सरकारी सेवाओं के सेवा-निवृत्ति एवं पेंशन के सम्बन्ध में उपयुक्त प्रावधान किया जाता है। इङ्गलैण्ड की स्थानीय सरकार ने इस सम्बन्ध में जो प्रावधान रखे हैं उनकी प्रकृति कुछ जटिलतापूर्ण है। यह इसलिए है कि, व्यवस्था का विकास धीरे-धीरे हुआ है और विषय की प्रकृति भी ऐसी ही है। कुछ स्थानीय सत्ताओं को पेंशन योजनाओं की शक्ति संसद के स्थानीय अधिनियमों द्वारा प्राप्त हो गई और उसके बाद सन् १९२२ में सामान्य शक्ति सौंप दी गई। इस अधिनियम की प्रकृति कुछ-कुछ स्वेच्छाजनक थी अर्थात् स्थानीय सत्ता स्वयं इस बात पर निर्णय करती थी कि वह इस अधिनियम को क्रियान्वित करे या न करे। सन् १९३७ के अधिनियम द्वारा स्थानीय सत्ताओं को आवश्यक रूप से पेंशन कार्यक्रम मानने के लिए व्यवस्था की गई। इस विकास के परिणामस्वरूप कुछ स्थानीय सत्ताएं तो पेन्शन कार्यक्रमों को बहुत वर्षों से लागू कर रही हैं जब कि अन्य स्थानीय सत्ताओं ने उसको सन् १९३७ के व्यवस्थापन द्वारा लागू किया जो कि सन् १९३९ में क्रियान्वित किया गया। स्थानीय सरकार की सेवाओं की पेंशन की व्यवस्था योगदान पूर्ण है। अधिकारियों से उनके वेतन का छः

जब विद्युत एवं गैस का राष्ट्रीयकरण किया गया तथा अस्पतालों को स्वास्थ्य मन्त्रालय के लिए सौंपा गया तो अनेक अधिकारी इसी प्रकार एक सत्ता से अन्य में स्थानान्तरित हुए। उनके लिए प्रावधान अलग से बनाये गये। जिस प्रकार एक अधिकारी एक सत्ता से अन्य सत्ता में जा सकता है उसी प्रकार वह स्थानीय सरकार से अन्य किसी सार्वजनिक सेवा में जाने का भी अधिकार रखता है। इन सब व्यवस्थाओं के परिणामस्वरूप पेन्शन से सम्बन्धित प्रावधान अत्यन्त जटिल बन जाते हैं तथा इनके बीच पर्याप्त भ्रम पैदा हो जाता है।

थे अथवा नये कार्यक्रम के आधीन आ सकते थे। १९५४ के अधिनियम द्वारा नवीन प्रवेश-कर्त्ताओं को भी आवश्यक रूप से अपने में समाहित कर लिया। नये कार्य-क्रम के अनुसार भी पेन्शन का आधार सेवा की अवधि तथा औसत वेतन को ही रखा गया किन्तु अब इसको अन्तिम तीन वर्षों के आधार पर कूता जाता था। नवीन व्यवस्था में पेन्शन की मद को कुछ कम कर दिया गया और इस प्रकार से बचाये गये धन का प्रयोग दो प्रकार से किया गया। प्रथम तो सेवानिवृत होने वाले अधिकारी को सेवा निवृत भुगतान के रूप में दिया जाने लगा और दूसरे, विधवाओं को पेन्शन देने के काम में लिया गया। यदि किसी कर्मचारी की पत्नी ही नहीं है अर्थात् उसकी विधवा को पेन्शन देने का प्रश्न ही नहीं उठता तो ऐसे कर्मचारी को सेवा-निवृत्ति भुगतान की रकम अधिक प्रदान की जाती है। जो धन एक अधिकारी को दिया जाना है उसे प्रदान करने के लिए यह व्यवस्था की जाती है कि यदि वह न भी जाये तो यह अनुदान उसके व्यक्तिगत प्रतिनिधि को सौंप दिया जाता है। इन सब प्रावधानों का मूल लक्ष्य व्यक्ति को यह निश्चित रूप से विश्वास दिला देना होता है कि यदि वह सेवा-काल में ही गुजर गया तो उसकी कुछ पेन्शन उसकी विधवा को दे दी जायेगी और यदि वह कार्य करता रहा तो सेवा-निवृत्ति के बाद स्वयं ही पेन्शन पायेगा। यदि वह पेन्शन काल में ही अपनी पत्नी को छोड़ कर मर जाये तो उसको (विधवा) पेन्शन सौंप दी जायेगी। नये कार्य-क्रम में भी यह प्रावधान है कि यदि एक व्यक्ति अपने कर्त्तव्य का निर्वाह करते समय दुर्घटना-ग्रस्त हो जाये अथवा घायल हो जाये तो उसको वार्षिक भत्ता दिया जायेगा। एक अधिकारी यदि अपनी सेवा-निवृत्ति के बाद भी पद पर कार्य करना चाहे और सत्ता उससे सहमत हो जाये तो उसको अधिक पेन्शन प्रदान की जायेगी। यद्यपि सत्तर वर्ष से अधिक की आयु में अथवा पैंतालीस साल की सेवा के बाद जो पेन्शन दी जायेगी वह मात्रा में सामान्य से अधिक नहीं होगी।

जब स्थानीय सरकार के अधिकारियों को एक सत्ता से दूसरी सत्ता में बदलने के लिए कह दिया जाता है तो उनकी पेन्शन के अधिकारों के सम्बन्ध में भी उचित व्यवस्था की जाती है। यह व्यवस्था इस प्रकार की जाती है कि जब एक अधिकारी किसी सत्ता को छोड़ कर दूसरी सत्ता में कर्मचारी बनता है तो पहली सत्ता को पेन्शन के रूप में उसका जो धन जमा है वह उसकी नवीन सत्ता को स्थानान्तरित कर दिया जाता है। यदि अधिकारी तीसरी सत्ता में चला जाये तो पेन्शन कोष का पुनः स्थानान्तरण कर दिया जाता है। अब उसके साथ कुछ धन और भी मिला दिया जाता है। इस प्रकार का स्थानान्तरण होने पर जिस सत्ता को धन देना होता है वह किसी प्रकार से टोटे में नहीं रहती क्योंकि वह धन पूरी तरह से अधिकारी के लाभ के लिए ही होता है तथा उसको अन्य किसी कार्य में प्रयुक्त नहीं किया जा सकता। जब एक सत्ता किसी अधिकारी के धन को दूसरी सत्ता के लिए हस्तांतरित करती है तो वह उस व्यक्ति से सम्बन्धित समस्त भावी उत्तरदायित्वों को भी सौंप देती है। इसके परिणामस्वरूप जब वह अधिकारी सेवा-निवृत होता है तो उसकी पेन्शन उसी सत्ता द्वारा प्रदान की जाती है जो कि पेन्शन के समय उसकी सेवायें प्राप्त कर रही है।

जब विद्युत एवं गैस का राष्ट्रीयकरण किया गया तथा अस्पतालों को स्वास्थ्य मन्त्रालय के लिए सौंपा गया तो अनेक अधिकारी इसी प्रकार एक सत्ता से अन्य में स्थानान्तरित हुए। उनके लिए प्रावधान अलग से बनाये गये। जिस प्रकार एक अधिकारी एक सत्ता से अन्य सत्ता में जा सकता है उसी प्रकार वह स्थानीय सरकार से अन्य किसी सार्वजनिक सेवा में जाने का भी अधिकार रखता है। इन सब व्यवस्थाओं के परिणामस्वरूप पेन्शन से सम्बन्धित प्रावधान अत्यन्त जटिल बन जाते हैं तथा इनके बीच पर्याप्त भ्रम पैदा हो जाता है।

स्थानीय सरकार एवं केन्द्रीय सरकार: पर्यवेक्षण एवं नियन्त्रण

[LOCAL GOVERNMENT AND CENTRAL GOVERNMENT: SUPERVISION AND CONTROL]

स्थानीय सरकार की सत्ताएं अपने आप में कोई पृथक अस्तित्व नहीं रखती, वे केन्द्रीय सरकार का ही एक आवश्यक एवं अभिन्न भाग होती हैं। उनके द्वारा जो कार्य किए जाते हैं एवं जो निर्णय लिए जाते हैं उन पर केन्द्रीय सरकार के नियमों एवं अधिनियमों का पर्याप्त प्रभाव रहता है। यदि किसी अवसर पर केन्द्रीय सरकार एवं स्थानीय सत्ता की इच्छाओं के बीच विरोध पैदा हो जाए तो यह स्वाभाविक है कि केन्द्रीय इच्छा को प्राथमिकता दी जाएगी। केन्द्रीय सरकार के साथ स्थानीय सरकार का बन्धन कई साधनों द्वारा व्यवहृत किया जाता है। उदाहरण के लिए संसद को वे अधिनियम पास करने का अधिकार होता है जिन्हें कि वह स्थानीय सत्ताओं द्वारा प्रशक्षित कराना चाहे। दूसरे न्यायालयों द्वारा संसद द्वारा पारित अधिनियमों के लक्ष्यों की व्याख्या की जाती है। तीसरे, संसद द्वारा जिन मन्त्रियों को कुशल प्रशासन के लिए उत्तरदायी ठहराया जाता है वे स्थानीय सत्ताओं पर पर्यवेक्षण रखते हैं। जिन विभागों का सम्बन्ध स्थानीय सत्ताओं के साथ मुख्य रूप से रहता है उनमें प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं—गृहनिर्माण एवं स्थानीय सरकार मन्त्रालय, वेल्स के लिए राज्य सचिव का कार्यालय, शिक्षा एवं विज्ञान विभाग, स्वास्थ्य मन्त्रालय, यातायात मन्त्रालय, व्यापार मण्डल एवं श्रम मन्त्रालय। इन सभी केन्द्रीय मन्त्रालयों एवं कार्यालयों का नियन्त्रण विभिन्न सेवाओं पर अलग-अलग मात्राओं में होता है। इस नियन्त्रण एवं पर्यवेक्षण की प्रकृति सम्बन्धित अधिनियमों द्वारा निर्धारित की जाती है।

कुछ अधिनियमों द्वारा स्थानीय सत्ताओं को प्रशासन में पूर्ण स्वतंत्रता दे दी जाती है जब कि कुछ अधिनियमों के अनुसार स्थानीय सत्ताओं को कार्य करने से पहले किसी विशेष सरकारी विभाग की स्वीकृति अथवा निर्देशन

प्राप्त करना होता है। कुछ अधिनियम सेवा से सम्बन्धित पहलुओं के लिए विभाग को विशेषरूप से उत्तरदायी बना देते हैं। सरकारी विभागों द्वारा अपने कर्त्तव्यों एवं उत्तरदायित्वों का निर्वाह करने में किस तरीके को प्रयुक्त किया जाएगा, यह वांछनीय पर्यवेक्षण की मात्रा पर निर्भर करता है। जहां कहीं हल्का नियन्त्रण पर्याप्त समझा जाता है वहां विभाग द्वारा स्थानीय सत्ताओं के नए उत्तरदायित्वों के सम्बन्ध में केवल निर्देश प्रसारित कर दिए जाते हैं और स्थानीय सत्ताओं द्वारा जो सूचना तथा सांख्यिकी प्रदान की जाती है उसे विभाग द्वारा परीक्षित किया जाता है। जहां कहीं अधिक कठोर नियन्त्रण जरूरी होता है वहां उसे वित्तीय साधनों द्वारा प्रयुक्त किया जाता है। उदाहरण के लिए सरकारी अनुदान को देने या रोकने की विभाग की शक्ति, ऋण लेने से सम्बन्धित प्रभाव को स्वीकृत या अस्वीकृत करने की शक्ति एवं निरीक्षण आदि साधनों द्वारा। इसके अतिरिक्त स्थानीय सत्ताओं के कुछ कार्यक्रम एवं प्रस्ताव इससे सम्बन्धित विभाग द्वारा परीक्षित किए जाते हैं जो कि उन्हें प्रभावशील होने से पहले ही स्वीकृत या अस्वीकृत करने की शक्ति रखते हैं। स्थानीय सत्ताओं से तथा उनके कार्यों से घनिष्ट रूप से सम्बन्धित विभागों में गृहनिर्माण एवं स्थानीय सरकार मंत्रालय तथा वेल्स कार्यालय का यह मुख्य उत्तरदायित्व माना जाता है कि वे स्थानीय सरकार से सम्बन्धित श्वेत पत्र एवं व्यक्तिगत विधेयक संसद में प्रस्तुत करते हैं। 'लन्दन में तो स्वयं महान लन्दन परिषद को ही विधेयकों को प्रोत्साहित करने विस्तृत अधिकार हैं वह लन्दन बारोज एवं लन्दन शहर को प्रभावित करने वाले विधेयकों के सम्बन्ध में भी ये सब अधिकार रखती है।

स्थानीय सरकार से सम्बन्धित व्यवस्थापन करते समय तथा ऐसे ही अन्य विषयों के बारे में यह परम्परा है कि स्थानीय सत्ताओं के साथ पर्याप्त विचार-विमर्श कर लिया जाये। इन संघों को निर्मायक स्थानीय सत्ताओं की परिषदों या कार्यपालिका परिषदों द्वारा प्रबन्धित किया जाता है। इनकी समितियां भी होती है जिनमें कि समस्त सत्ताओं के प्रतिनिधि होते हैं। इनके द्वारा उनकी शक्तियां, कर्त्तव्यों एवं कार्यों का भी पता लग जाता है।*

नियन्त्रण की आवश्यकता [The necessity of Control]—कई बार यह संदेह प्रकट किया जाता है कि केन्द्रीय नियंत्रण रहने पर स्थानीय स्वायत्तता किस प्रकार रह सकेगी। स्थानीय सत्ताओं की स्थापना का मुख्य लाभ यह बताया जाता है कि इनसे स्थानीय जनता को पहल करने का अवसर प्राप्त होता है। वह आगे आकर कई [illegible] कार्यों में [illegible]
[illegible]

अत्यन्त आवश्यक है कि आम जनता को प्रशासन के क्षेत्र में सक्रिय किया जाये तथा उन्हें स्वयं की समस्यायें स्वयं ही सुलझाने को प्रेरित किया जाये। केन्द्रीय नियंत्रण को इन लक्ष्यों की पृष्ठभूमि में उचित नहीं समझा जाता। यह दृष्टिकोण एवं केन्द्रीय सत्ताओं द्वारा स्थानीय सत्ताओं के संगठन तथा कार्यों पर रखे जाने वाले नियन्त्रण का विरोध कुछ विचारकों के मतानुसार उपयुक्त नहीं है। इन विचारकों का कहना है कि केन्द्र का नियंत्रण स्वाभाविक है, आवश्यक है तथा उपयोगी है। देश के प्रशासन के लिए मूलतः केन्द्रीय सरकार ही उत्तरदायी होती है यदि वह स्थानीय सत्ताओं को पूर्ण स्वायत्तता सौंप दे तो प्रशासनिक अव्यवस्था फैल जायेगी। समन्वय के अभाव में वह कार्यकुशलता समाप्त हो जायेगी जिसे प्राप्त करने के लिए केन्द्र सरकार स्थानीय सत्ताओं का संगठन करती है।

केन्द्रीय नियन्त्रण की अनिवार्यता के पीछे अनेक कारण हैं। इसका सर्वप्रथम कारण यह है कि स्थानीय सरकार द्वारा जो सेवायें प्रदान की जाती हैं वे पर्याप्त महगी होती हैं तथा इतना व्यय करने की शक्ति स्थानीय सत्ताओं में नहीं होती। जब तक उनको बाहर से कोई सहायता प्रदान न की जाये, उस समय तक वे अपने कार्यों का संचालन नहीं कर सकती। यह सहायता केन्द्रीय सरकार द्वारा अनुदानों के रूप में प्रदान की जाती है। इसके साथ सरकार यह भी आशा करती है कि स्थानीय सत्तायें अपने दायित्वों का पालन संतोषजनक रूप से करेंगी। वह कुछ मापदण्ड निर्धारित करके यह देखना चाहेगी कि उन मापदण्डों के अनुसार ही कार्य किया जा रहा है अथवा नहीं। दूसरे, स्थानीय सरकार का अनुभव सीमित होता है तथा वे सूचनायें अपर्याप्त होती हैं जिनके आधार पर यह अपने कार्य को संचालित कर सके। ऐसी स्थिति में यदि उनको स्वयं के साधनों पर ही छोड़ दिया गया तो उनके कार्य गैर-विशेषज्ञ लोगों द्वारा संचालित किये जायेंगे। केन्द्रीय नियन्त्रण के माध्यम से वे अधिक योग्य बन जाती हैं क्योंकि वे देश भर की स्थानीय सत्ताओं के अनुभवों का मूल्यांकन करके अपनी समस्याओं के सम्बन्ध में निर्णय ले पाती हैं। तीसरा कारण यह है कि केन्द्रीय सरकार स्वयं के हित को ध्यान में रखते हुए स्थानीय सत्ताओं को अप्रतिबन्धित स्वेच्छा का अधिकार नहीं दे सकती। वैसे संसद द्वारा अनेक बातों में उनको पर्याप्त स्वेच्छा प्रदान की जाती है।

कई एक स्थानीय सेवायें ऐसी हैं जिनके कुशल संचालन पर ही देश का कल्याण निर्भर करता है, उदाहरण के लिए जन-स्वास्थ्य एवं शिक्षा आदि। ये सेवायें देश भर में एक समान स्तर की मांग करती है। असमान स्तर रहने पर कई प्रकार की समस्यायें उत्पन्न हो जाती हैं। इन सभी कारणों को मध्य नजर रखते हुए यह कहना पर्याप्त उपयुक्त प्रतीत होता है कि प्रशासन में कुशलता, एकरूपता, समन्वय, उपयोगिता आदि गुणों को लाने के लिए यह जरूरी है कि स्थानीय सत्ताओं पर वांछनीय नियन्त्रण रखा जाये। सर मैक्नेल्टी (Sir A. S. MacNalty) के कथनानुसार स्थानीय सेवाओं के उचित निर्देशन, एकीकरण तथा समन्वय के लिए केन्द्रीय सत्ता के नियन्त्रण के किसी यन्त्र का होना परम आवश्यक है। ऐसा न होने पर विभिन्न

जिलों में इन सेवाओं का स्तर एवं प्रसार असमान रहेगा तथा यह कुल जनसंख्या के लिए अन्यायपूर्ण रहेगा।[1] वैसे स्थानीय सत्ताओं पर नियन्त्रण की समस्या अपने आप में अत्यन्त जटिल है। स्थानीय सत्ताओं की शक्ति का स्रोत संसद है किन्तु सरकारी विभागों द्वारा उस पर समय-समय जो नियन्त्रण लागू किया जाता है, वह एक जैसा नहीं होता वरन् समय-समय पर बदलता रहता है। स्थानीय सत्ता को कितनी स्वतन्त्रता प्रदान की जाये, उसे कितना अधिकार प्रदान किया जाये तथा केन्द्रीय नियन्त्रण की मात्रा कितनी रखी जाये आदि प्रश्न इस प्रकार के हैं जिनके सम्बन्ध में निश्चय अनेक पहलुओं से प्रभावित होता है।

केन्द्रीय सत्ता द्वारा स्थानीय मामलों में नियन्त्रण एवं समन्वय स्थापित करने के पीछे एक अन्य कारण और भी रहता है। स्थानीय सत्तायें अनेक होती हैं। ये सत्तायें मानवीय होती हैं और इसी कारण इनमें उन सभी कठिनाइयों के उत्पन्न होने की पूरी-पूरी सम्भावना रहती है जो कि व्यक्तियों के साथ रहने पर उठ सकती हैं। स्थानीय सत्तायें एक दूसरे के अत्यन्त निकट होती हैं और इसलिए एक के कार्यों एवं नीतियों का प्रभाव आवश्यक रूप से दूसरी पर भी पड़ता ही है। एक पड़ौसी सत्ता के कार्यों से पीड़ित होने का डर उसकी प्रगति से होने वाले लाभों की तुलना में अधिक प्रभाव डालता है। यही मानवीय स्वभाव की कमजोरियों का प्रतीक है। यह भी हो सकता है कि एक स्थानीय सत्ता द्वारा अपनाई गई गलत नीतियों का प्रभाव दूसरे देश पर ही पड़े। ऐसी स्थिति में केन्द्र सरकार का नियन्त्रण अनिवार्य हो जाता है। इस नियन्त्रण के प्रसार एवं क्रियान्विति में अनेक राजनैतिक दार्शनिकों, विचारकों एवं लेखकों की रचनाओं ने प्रभाव डाला। इस दृष्टि से एडविन चाडविक (Edwin Chadwick), जेरेमी बैन्थम जे. एस. मिल आदि द्वारा प्रकट किये गये विचारों का भी उल्लेखनीय प्रभाव रहा। स्थानीय सरकार के विकास के दौरान शिक्षा, निर्धन राहत, पुलिस, सड़कें एवं जन-स्वास्थ्य आदि के क्षेत्र में जो अनेक प्रतिवेदन एवं संसदीय बहसें सामने आईं, वे भी पर्याप्त प्रभावशील रहीं।

स्थानीय सत्ताओं के कार्यों पर केन्द्रीय नियन्त्रण की मात्रा हर युग में एक जैसी नहीं रही वरन् वह परिस्थितियों के अनुसार समय-समय पर बदलती रही है। केन्द्रीय हस्तक्षेप नागरिकों के व्यक्तिगत जीवन में मुख्य रूप से अराजकता को रोकने के लिए होता रहा है। इस हस्तक्षेप के पीछे अनेक बुद्धिपूर्ण तर्क प्रस्तुत किये जा सकते हैं। प्रथम तर्क यह है कि स्थानीय

---

1 'In Local Government it is clear that some system of control by the central authority is required for proper direction, unification, and co-ordination of the services of Local authorities. Otherwise the standards and extent of these services would be dissimilar in many districts and this would be manifestly unfair to the population as a whole."

सत्ताओं का ज्ञान अधूरा होता है क्योंकि इनका कार्य-क्षेत्र अपेक्षाकृत कम व्यापक होता है। ऐसा निम्न कारणों से होता है—

प्रथमत: उनका सम्बन्ध देश के एक छोटे भू-भाग से रहता है। इसके अतिरिक्त पारषदों को तीन वर्ष के लिए चुना जाता है तथा केवल कुछ ही पारषद ऐसे होते हैं जो कि नगरपालिका के कार्यों में निरन्तर रूप से रुचि लेते हैं। दूसरी ओर केन्द्रीय स्तर पर कार्य करने वाले व्यावसायिक अधिकारी अपने पद पर प्राय: स्थायी रूप से कार्य करते हैं। यहां यह तथ्य उल्लेखनीय है कि एक स्थानीय सत्ता का आकार ज्यों-ज्यों बढ़ता जाता है उसके परामर्शदाता एवं प्रशासकों की नियुक्ति अधिक स्थायी बनती चली जाती है और इस प्रकार उनके सम्बन्ध में केन्द्रीय नियन्त्रण भी कम होता चला जाता है।

दूसरे, केन्द्रीय नियन्त्रण इसलिए भी अनिवार्य हो जाता है ताकि स्वास्थ्य, शान्ति, सुरक्षा, शिक्षा, यातायात आदि से सम्बन्धित सेवाओं में एक उच्च-स्तर बनाये रखा जा सके तथा इन सेवाओं में कुप्रशासन से होने वाले दुष्परिणामों को हटाया जा सके।

तीसरे, स्थानीय समाज में शक्ति-सम्पन्न स्वार्थ अपने हितों के विरुद्ध भी कार्य कर सकते हैं, उदाहरण के लिए स्थानीय कसाई लोग इसमें रुचि लेंगे कि सफाई के निरीक्षण कार्य में भ्रष्टाचार रहे। इसी प्रकार गलती करने वालों द्वारा पुलिस को रिश्वत दी जाती है। समाज को इसके स्वयं के हमले से बचाना बड़ा मुश्किल है। यह कार्य स्थानीय सत्ता नहीं कर सकती बल्कि किसी बाहरी शक्ति को हस्तक्षेप करना होगा।

चौथे, कई बार प्रजातन्त्रात्मक तरीकों से चलाई जाने वाली स्थानीय सरकार के प्रति गहरा अविश्वास प्रकट किया जाता है क्योंकि इससे कार्यों में अकुशलता आती है तथा वे कम उपयोगी रह जाते हैं। केन्द्रीय सत्ता इस प्रकार कार्य करती है कि वह स्थानीय सत्ताओं को संकट से बचा लेती है। ऐसे अवसरों पर जब कि किसी गलत कार्य के प्रति आवश्यक कदम न उठाया गया हो तो केन्द्रीय सरकार उसमें हस्तक्षेप करके स्वयं उस कार्य को कर सकती है।

पांचवें, व्यक्ति स्वयं पर कर लगाने से कतराते हैं। यदि केन्द्रीय सत्ता यह चाहती है कि अमुक सामाजिक नीति सफल हो जाए तथा क्रियान्वित की जाए तो वह स्थानीय सत्ताओं को अपना योगदान करने के लिए बाध्य कर सकती है। वैसे देखा जाए तो प्रत्येक स्थानीय कार्य का प्रारम्भ स्वेच्छाजनक रूप से हुआ था किन्तु बाद में उसको बाध्यकारी बना दिया गया।

छठे, प्राय: सभी स्थानीय सत्ताएं इस योग्य नहीं होतीं कि वे अपनी आवश्यकता के अनुसार कम से कम सेवाएं सम्पन्न कर सकें।

स्थानीय सरकार के क्षेत्रों का निर्माण करते समय उनके वित्तीय स्रोतों का जरा भी ध्यान नहीं रखा गया है। ऐसी स्थिति में राष्ट्र की मुक्त-बधाओं को ध्यान में रख कर केन्द्र सरकार स्थानीय व्यय पर नियन्त्रण

रखती है। केन्द्रीय नियन्त्रण की दो सीमाएं हैं। प्रथम का सम्बन्ध स्थानीय स्वतन्त्रता से है जिसके अनुसार प्रत्येक स्थानीय जनता के अधिकारों एवं स्वतन्त्रता का सम्मान किया जाता है। दूसरे, व्यावहारिक दृष्टि से प्रशासन में एकरूपता स्थापित नहीं की जा सकती। स्थानीय स्तर पर अनेक क्षेत्र हैं तथा उनकी ओर से केन्द्रीय नियन्त्रण के प्रति किया जाने वाला विरोध भी अत्यन्त व्यापक है। स्थानीय एवं केन्द्रीय सरकारों के बीच सम्बन्धों की यह समस्या बहुत पुरानी है।

सन् १८७१ के शाही सफाई आयोग ने इन सम्बन्धों की समस्या के सम्बन्ध में अपनी सिफारिश प्रस्तुत की है। आयोग के मतानुसार स्थानीय सरकार के सिद्धान्त को राष्ट्रीय स्तर पर एक अत्यन्त महत्वपूर्ण सिद्धान्त माना गया है। केन्द्रीय निर्देशन के अधीन स्थानीय प्रशासन ब्रिटिश सरकार की एक मुख्य विशेषता है। सिद्धान्त यह है कि जितना कार्य हो सके वह स्थानीय सत्ताओं द्वारा किया जाना चाहिए और सार्वजनिक व्यय का नियन्त्रण मुख्य रूप से उसी के द्वारा होना चाहिए जो उसके लिए योगदान करता है। दूसरी ओर जिसका सम्बन्ध पूरे राष्ट्र से है उन समस्याओं पर राष्ट्रीय सरकार द्वारा विचार किया जाना चाहिये किन्तु जो समस्याएं केवल एक स्थानीय जिले से ही सम्बन्ध रखती हैं उनको पूरी तरह से जिले की स्वेच्छा पर छोड़ दिया जाए। स्थानीय प्रशासन की अपनी कुछ कमियां हैं जिनके रहते हुए वह अपने कार्यों को सन्तोषजनक रूप से उचित समय पर सम्पन्न नहीं कर पाता। स्वेच्छाचारी सरकार द्वारा प्रायः सफल योजना एवं एकतापूर्ण व्यवहार प्रकट किया जाता है। ऐसी स्थिति में सरकारी यन्त्र का अधिक पूर्ण होना स्वाभाविक है। यद्यपि उनके कार्य प्रायः कम प्रभावशाली होते हैं। ग्रेट ब्रिटेन में स्थानीय प्रशासन की जो व्यवस्था की गई, उस पर संयुक्त राज्य अमरीका तथा फ्रान्स की सरकार का पर्याप्त प्रभाव पड़ा। ये दोनों देश इंगलैण्ड की स्थानीय सरकार को व्यवस्थित करने के लिए उत्तरदायी हैं।

स्थानीय सत्ता का आकार जितना बड़ा होता है उसे अपने कार्यों में स्वतन्त्रता भी उतनी ही अधिक प्राप्त रहती है। सन् १८३४ के निर्धन कानून अधिनियम में यह बताया गया था कि केन्द्रीय नियन्त्रण इसलिए परम-आवश्यक है क्योंकि स्थानीय सत्ताएं छोटे आकार की हैं। छोटे आकार की सत्ताएं सुयोग्य अधिकारियों की नियुक्ति करने में असमर्थ रहती हैं, इसका शासन अकार्यकुशल रहता है, इनका ज्ञान का क्षेत्र अपर्याप्त होता है तथा साथ ही इनमें जन-उत्साह की भावना नहीं रहती। यह एक तथ्य है कि केन्द्रीय सरकार छोटी इकाइयों पर कड़ा नियन्त्रण रखती है। ये सेवाएं ज्यों ही बड़ी सत्ताओं को सौंपी गईं, विशेष रूप से काउन्टीज और काउन्टी बारोज को, तो केन्द्रीय नियन्त्रण कम हो गया और केन्द्रीय सरकार का कार्य भार हल्का हुआ और वह स्थानीय सत्ताओं को केवल नेतृत्व प्रदान करने का कार्य करने लगी।

प्रायः यह अनावश्यक समझा जाने लगा कि इन पर्याप्त धन सम्पन्न एवं कुशल कार्यकर्त्ताओं वाले निकायों के कार्यों में अनावश्यक रूप से हस्तक्षेप

किया जाए। पुलिस, शिक्षा, जन सहयोग आदि कार्यों के प्रशासन में केन्द्रीय सरकार स्थानीय सत्ताओं के साथ, सहयोग करके चलती थी। जहां कहीं केन्द्रीय सरकार के नियन्त्रण की सीमाओं को पारिभाषित नहीं किया जाता है वहां वे असीमित बन जाती हैं। केन्द्रीय सरकार की रुचि कभी इस बात में नहीं रहती कि वह संसद के द्वारा कानून पास कराके स्थानीय सत्ता को नष्ट करा दे अथवा उसके सारे अधिकार स्वयं अपने हाथ में ले ले। इसके विपरीत उसकी रुचि इस बात में रहती है कि उसके सहयोग के लिए ऐसी स्थानीय सत्ता हो, जिनमें बोलने वाले लोग हों, जिसके पास पर्याप्त अधिकार हो और जो उपयुक्त ऐतिहासिक एवं संवैधानिक स्थिति रखती हो। समय-समय पर केन्द्रीय सरकार उनका सहयोग चाहती है और उनसे आज्ञा-पालन की आशा करती है।

प्रारम्भ में केन्द्रीय नियन्त्रण की प्रकृति प्रतिरोधात्मक थी। वर्तमान समय में भी प्रायः इसी नीति को अपनाया जाता है। इसके अनुसार हम पहले सभी सम्भावित गलतियों का अनुमान लगा लेते हैं और उसके बाद एक स्थायी एवं योग्य कर्मचारियों वाले विभाग को यह देखने का कार्य सौंप देते हैं कि ये गलतियां न हों। जिस समाज में राज्य के कार्यों का क्षेत्र सीमित होता है वहां नियन्त्रण के पुराने तरीकों को अपनाया जा सकता है किन्तु वर्तमान औद्योगिक सभ्यता से पूर्ण शहरी दल को में यह नियन्त्रण प्रायः अव्यावहारिक बन गया है। प्रशासकीय नियन्त्रण एवं न्यायिक नियन्त्रण जो कि प्रारम्भ में प्रयुक्त किये जाते थे, आज भी काम में लिए जाते हैं। प्रशासकीय नियन्त्रण का तरीका प्रतिरोधात्मक होता है। नियन्त्रण की यह शक्ति किसी न किसी अधिनियम से प्राप्त की जाती है। केन्द्रीय विभाग इन अधिनियमों के अतिरिक्त अन्य कोई शक्ति नहीं रखते। इतने पर भी ऐतिहासिक विकास की स्थिति में केन्द्रीय विभागों ने नियन्त्रण के कुछ ऐसे अधिकार भी प्राप्त कर लिए हैं जिनका अधिनियमों से बहुत कम सम्बन्ध रहता है।

नियन्त्रण मुख्य रूप से एक सम्मान का प्रश्न है। व्यक्तिगत जीवन की भांति सार्वजनिक जीवन में भी संस्थाएं किसी बाहरी सत्ता का दबाव या नियन्त्रण प्रायः उसके सम्मान के कारण ही स्वीकार करती हैं। यदि केन्द्रीय सरकार का स्थानीय सत्ताओं की दृष्टि से कोई आदर न हो तो कानूनी प्रावधान भी नियन्त्रण की दृष्टि से उपयोगी नहीं हो सकते। स्थानीय सत्ताओं के सम्बन्ध में केन्द्रीय सत्ताओं का सम्मान मुख्य रूप से दो बातों पर निर्भर करता है। प्रथम यह कि वे नियन्त्रण एवं पर्यवेक्षण के अधिकार का प्रयोग कितने समय से कर रही हैं और दूसरे, उनके द्वारा अब तक प्रयुक्त शक्तियों का परिणाम क्या रहा है। जब एक स्थानीय पारषद एवं अधिकारी अपने कार्यालय में प्रवेश करता है तो सबसे पहले उसे यह तथ्य ज्ञात होता है कि लन्दन में स्थित विभाग उन पर नियन्त्रण की भारी शक्ति रखते हैं और दशाब्दियों से तथा यहां तक कि शताब्दियों से वे नियन्त्रण के लिए अपनी सत्ता, कुशलता, साधन एवं संगठन का प्रयोग कर रहे हैं। नियन्त्रण के तरीकों का प्रभाव उस समय और भी बढ़ जाता है जब स्थानीय सत्ता को यह ज्ञात हो कि नियन्त्रणकर्त्ता विभाग के पास लाभ या कष्ट प्रदान करने के साधन उपलब्ध हैं।

नियन्त्रण के रूप
[The Forms of Control]

केन्द्रीय सरकार द्वारा स्थानीय सत्ताओं पर जो नियन्त्रण रखा जाता है उनके मुख्यतः तीन रूप हैं। इनका वर्णन करते हुए जे० एच० वारेन (J.H. Warren) लिखते हैं कि एक सम्प्रभु प्रजातन्त्र राज्य को स्थानीय निकायों की स्वायत्तता के लिए कुछ सीमाएं निर्धारित करनी चाहिए। इङ्गलैण्ड में भी हम पाते हैं कि वहां राज्य शक्ति के तीनों अंग अर्थात् व्यवस्थापिका, न्यायपालिका एवं कार्यपालिका स्थानीय सत्ताओं की क्रियाओं पर कुछ नियन्त्रण रखते हैं।*

(१) संसदीय नियन्त्रण [Parliamentary Control]—केन्द्रीय नियन्त्रण का सर्वाधिक मौलिक रूप वह है जो कि संसद द्वारा लागू किया जाता है। संसद कानून बनाने वाली एक मूल संस्था है और इस रूप में वह स्थानीय सत्ताओं के क्षेत्र को विनियमित करने के व्यापक अधिकार रखती है। स्थानीय सत्ताएं अपनी प्रकृति के अनुसार व्यवस्थापिका निकाय नहीं होती। वे मूलतः कार्यपालिका निकाय होती हैं जो कि उन शक्तियों का प्रयोग करती हैं और उन कर्तव्यों को सम्पन्न करती हैं जो कि केन्द्रीय संसद द्वारा उनको सौंपे जाएं। नियमानुसार स्थानीय सत्ताएं उन शक्तियों से अधिक किसी शक्ति का उपभोग नहीं कर सकतीं जो संसद द्वारा उनको सौंपी गई हैं। कई बार इस तथ्य का जनता द्वारा विरोध किया जाता है। यह कहा जाता है कि स्थानीय निकाय जनता द्वारा निर्वाचित होते हैं। वे एक प्रकार से स्थानीय संसद कहे जा सकते हैं किन्तु उनको कोई अधिकार न देना एक अनुपयुक्त नीति है। स्थानीय सत्ता, स्थानीय संसद बनने से बहुत दूर रह जाती है। असल में इंगलैण्ड और वेल्स की स्थानीय सत्ताओं की यह एक मुख्य विशेषता मानी जाती है कि उनको अपनी क्रियाओं की प्रकृति एवं क्षेत्र निर्धारित करने का कोई अधिकार नहीं होता, वे कानून नहीं बना सकती, उन्हें पूरी तरह से अधीनस्थ निकाय मानना उपयुक्त रहेगा। कभी-कभी स्थानीय सत्ता को यह निर्णय करने की स्वतन्त्रता रहती है कि वह एक विशेष कार्य को सम्पन्न करे अथवा न करे। साथ ही वह उस कार्य को सम्पन्न करने के तरीके के बारे में भी निर्णय लेती है किन्तु स्वतन्त्रता की ये शक्तियां स्थानीय सत्ताओं की अन्तर्निहित शक्तियां नहीं होती वरन् वे उनको सौंपी जाती है। इन स्वतन्त्रताओं का उपभोग उन सीमाओं में रह कर ही किया जा सकता है जो कि संसद द्वारा निर्धारित की जाए। ऐसी स्थिति में कई बार भ्रम पैदा हो जाता है।

---

*"A sovereign democratic state must always, however, set some limits to the autonomy of local bodies; and even in England we find all three organs of state power—Legislature, judiciary, and executive—exercising some control over the activities of the local authorities."

—J.H. Warren, Op. Cit., [illegible]

किया जाए। पुलिस, शिक्षा, जन सहयोग आदि कार्यों के प्रशासन में केन्द्रीय सरकार स्थानीय सत्ताओं के साथ, सहयोग करके चलती थी। जहां कहीं केन्द्रीय सरकार के नियन्त्रण की सीमाओं को पारिभाषित नहीं किया जाता है वहां वे असीमित बन जाती हैं। केन्द्रीय सरकार की रुचि कभी इस बात में नही रहती कि वह संसद के द्वारा कानून पास कराके स्थानीय सत्ता को नष्ट करा दे अथवा उसके सारे अधिकार स्वयं अपने हाथ में ले ले। इसके विपरीत उसकी रुचि इस बात में रहती है कि उसके सहयोग के लिए ऐसी स्थानीय सत्ता हो, जिनमें बोलने वाले लोग हों, जिसके पास पर्याप्त अधिकार हो और जो उपयुक्त ऐतिहासिक एवं संवैधानिक स्थिति रखती हो। समय–समय पर केन्द्रीय सरकार उनका सहयोग चाहती है और उनसे आज्ञा-पालन की आशा करती है।

प्रारम्भ में केन्द्रीय नियन्त्रण की प्रकृति प्रतिरोधात्मक थी। वर्तमान समय में भी प्रायः इसी नीति को अपनाया जाता है। इसके अनुसार हम पहले सभी सम्भावित गलतियों का अनुमान लगा लेते हैं और उसके बाद एक स्थायी एवं योग्य कर्मचारियों वाले विभाग को यह देखने का कार्य सौंप देते हैं कि ये गलतियां न हों। जिस समाज में राज्य के कार्यों का क्षेत्र सीमित होता है वहां नियन्त्रण के पुराने तरीकों को अपनाया जा सकता है किन्तु वर्तमान औद्योगिक सभ्यता से पूर्ण शहरी इलाकों में यह नियन्त्रण प्रायः अव्यावहारिक बन गया है। प्रशासकीय नियन्त्रण एवं न्यायिक नियन्त्रण जो कि प्रारम्भ में प्रयुक्त किये जाते थे, आज भी काम में लिए जाते हैं। प्रशासकीय नियन्त्रण का तरीका प्रतिरोधात्मक होता है। नियन्त्रण की यह शक्ति किसी न किसी अधिनियम से प्राप्त की जाती है। केन्द्रीय विभाग इन अधिनियमों के अतिरिक्त अन्य कोई शक्ति नहीं रखते। इतने पर भी ऐतिहासिक विकास की स्थिति में केन्द्रीय विभागों ने नियन्त्रण के कुछ ऐसे अधिकार भी प्राप्त कर लिए हैं जिनका अधिनियमों से बहुत कम सम्बन्ध रहता है।

नियन्त्रण मुख्य रूप से एक सम्मान का प्रश्न है। व्यक्तिगत जीवन की भांति सार्वजनिक जीवन में भी संस्थाएं किसी बाहरी सत्ता का दबाव या नियन्त्रण प्रायः उसके सम्मान के कारण ही स्वीकार करती हैं। यदि केन्द्रीय सरकार का स्थानीय सत्ताओं की दृष्टि से कोई आदर न हो तो कानूनी प्रावधान भी नियन्त्रण की दृष्टि से उपयोगी नहीं हो सकते। स्थानीय सत्ताओं के सम्बन्ध में केन्द्रीय सत्ताओं का सम्मान मुख्य रूप से दो बातों पर निर्भर करता है। प्रथम यह कि वे नियन्त्रण एवं पर्यवेक्षण के अधिकार का प्रयोग कितने समय से कर रही हैं और दूसरे, उनके द्वारा अब तक प्रयुक्त शक्तियों का परिणाम क्या रहा है। जब एक स्थानीय पार्षद एवं अधिकारी अपने कार्यालय में प्रवेश करता है तो सबसे पहले उसे यह तथ्य ज्ञात होता है कि लन्दन में स्थित विभाग उन पर नियन्त्रण की भारी शक्ति रखते हैं और दशाब्दियों से तथा यहां तक कि शताब्दियों से वे नियन्त्रण के लिए अपनी सत्ता, कुशलता, साधन एवं संगठन का प्रयोग कर रहे हैं। नियन्त्रण के तरीकों का प्रभाव उस समय और भी बढ़ जाता है जब स्थानीय सत्ता को यह ज्ञात हो कि नियन्त्रणकर्त्ता विभाग के पास लाभ या कष्ट प्रदान करने के साधन उपलब्ध हैं।

सामान्य जनता ऐसे कार्य को न करने के लिए स्थानीय परिषद को उत्तरदायी ठहराती है, जिसे करने की शक्ति असल में उसे प्रदान नहीं की गई होती है। न्यायवेत्ताओं द्वारा जब स्थानीय सत्ताओं को विधि की रचना (Creatures of Statutes) कहा जाता है तो उसके पीछे यही भावना रहती है कि वे ऐसा कोई कार्य नहीं कर सकती जिसे करने की शक्ति संसदीय कानून द्वारा उन्हें नहीं सौंपी गई हैं। स्थानीय सत्ताएं अपने कर्तव्यों को सम्पन्न करते हुए तथा शक्तियों का उपभोग करते हुए नागरिकों के अधिकारों में हस्तक्षेप कर सकती हैं। इसी सम्भावना से प्रभावित होकर राज्य सरकार स्थानीय विषयों में अपना हस्तक्षेप प्रारम्भ करती है। संसद द्वारा स्थानीय सत्ताओं को कई प्रकार से शक्ति प्रदान की जा सकती है। संसद सार्वजनिक सामान्य अधिनियमों (Public General Acts के द्वारा शक्तियां सौंप सकती है। ये अधिनियम वे होते हैं जिनको सम्पूर्ण समाज को प्रभावित करने वाली सरकारी नीति के प्रयास के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। इस अधिनियम के द्वारा सभी स्थानीय सत्ताओं को शक्ति एवं कर्तव्य सौंपे जा सकते हैं अथवा एक ही प्रकार की सभी स्थानीय सत्ताओं को ये सौंपे जा सकते हैं। ये शक्तियां स्वेच्छाजनक एवं बाध्यकारी, दोनों ही प्रकार की हो सकती हैं अर्थात् वे ऐसी भी हो सकती हैं जिनको कि स्थानीय सत्ता चाहे तो करे और ऐसी भी हो सकती हैं कि वे स्थानीय सत्ता को करनी ही चाहिए।

दूसरे प्रकार का अधिनियम स्वीकार्य अधिनियम (Adoptive Act) होता है जिसको स्थानीय सत्ता एक प्रस्ताव द्वारा स्वीकार कर सकती है। इस प्रकार यह अधिनियम स्थानीय सत्ता को स्वेच्छापूर्ण शक्तियां प्रदान करता है जिसके अनुसार यदि वह इन अधिकारों को काम में लाना चाहे तो एक प्रस्ताव पास कर ले और यदि नहीं चाहे तो न करे। इन अधिनियमों को स्वेच्छाचारी व्यवस्था के उदाहरण माना जा सकता है तथा इनमें यह भावना छिपी रहती है कि संसद स्थानीय सत्ता की स्वीकृति से उसके सम्बंध में व्यवस्थापन करे। इससे प्रगतिशील स्थानीय सत्ताओं को एक ऐसा अवसर प्राप्त हुआ जिसके द्वारा वे समाज की भलाई के लिए अन्य सेवाएं प्रदान कर सकें। इस प्रकार की शक्तियों का जब एक स्थानीय सत्ता प्रयोग करना चाहती थी तो उस रूप में ही प्रयुक्त करना होता था जिसमें कि अन्य सत्ताएं कर रही हैं। सन् १९३६ में कामन्स सभा की एक समिति ने यह सिफारिश की कि इस प्रकार के अधिनियमों की व्यवस्था को बन्द कर दिया जाए उस समय से आज तक ऐसा कोई अधिनियम पास नहीं किया गया है किन्तु इस समय से पूर्व ऐसे अधिनियमों द्वारा जो शक्तियां प्रयुक्त की जा रही थीं वे बाद में भी बनी रहीं।

स्थानीय सत्ताओं को शक्ति प्रदान करने वाले तीसरे प्रकार के अधिनियम व्यक्तिगत स्थानीय अधिनियम (Private Local Acts) होते हैं। यद्यपि स्थानीय सत्ताओं की मुख्य शक्तियां एवं कार्य, सरकारी अधिनियमों में समाहित रहते हैं किन्तु फिर भी अनेक सत्ताएं व्यक्तिगत व्यवस्थापन को प्रोत्साहन देकर भी अधिक शक्तियां प्राप्त करने में सफल हो गई हैं। जब

जब भी स्थानीय सत्ता उन शक्तियों की आवश्यकता महसूस करती है जो कि सामान्य व्यवस्थापन में प्राप्त नहीं हैं तो यह संसद में एक ऐसे विधेयक को प्रोत्साहित करती है जो कि यद्यपि अपनी प्रचलित प्रक्रिया द्वारा ही पास किया जाता है किन्तु उसके ऊपर संसद के किसी भी भवन में पर्याप्त बहस नहीं की जा सकती। इसके स्थान पर यह विधेयक कामन्स सभा की एक समिति द्वारा विचारा जाता है। स्थानीय सत्ता के कानूनी परामर्शदाता एवं विधेयक के विरोधी लोग गवाहियां देते हैं। समिति की पूरी प्रक्रिया पूरी तरह से एक कानूनी न्यायालय जैसी होती है। व्यक्तिगत विधेयक को सम्पूर्ण समाज के हितों से सम्बन्ध रखने वाली सामान्य नीति के एक प्रयास के रूप में प्रस्तुत नहीं किया जा सकता वरन् उसे एक विशेष स्थानीय सरकारी क्षेत्र के हितों की दृष्टि से प्रस्तुत किया जाता है। अधिनियम स्थानीय उद्देश्यों की पूर्ति करता है। ये अधिनियम प्रायः नवीन सामान्य व्यवस्थापन के पूर्वगामी होते हैं।

संसद में स्थानीय सत्ता द्वारा विधेयक प्रस्तुत करने के नियम सन् १९३३ के स्थानीय सरकार अधिनियम में दिए गए थे। ये काउन्टी, बारोज एवं जिला परिषद पर लागू होते थे किन्तु पेरिश परिषदों पर या लन्दन की प्रशासकीय काउन्टी पर लागू नहीं होते थे। कोई भी व्यक्तिगत विधेयक प्रोत्साहित करने से पूर्व स्थानीय सत्ता की परिषद अपने बहुमत द्वारा एक उचित प्रस्ताव पास करती है। इस प्रस्ताव पर गृह-निर्माण एवं स्थानीय सरकार के मन्त्री की स्वीकृति परमावश्यक है। प्रत्येक मतदाता को यह अधिकार है कि वह विधेयक के विरुद्ध मन्त्री के सम्मुख अपने विचार प्रस्तुत कर सके। जब एक ऐसा विधेयक कामन्स सभा में रख दिया जाए तो काउन्टी या देहाती जिला परिषद बहुमत से प्रस्ताव पास करके अपने निर्णय पर बनी रहती है। इसके बाद विधेयक पर विचार किया जाता है। जहां तक बारोज तथा शहरी जिलों का सम्बन्ध है उनमे इस प्रकार के विधेयक को प्रोत्साहन देने के लिए स्थानीय सरकार के सभी मतदाताओं की एक आम सभा बुलाई जाती है। इस प्रकार की बैठक में परिषद के मेयर या सभापति द्वारा अध्यक्षता की जाती है। यदि बैठक में ऐसा करना उचित समझा जाए तो विधेयक के प्रत्येक भाग पर विचार किया जाएगा और जिसे उचित समझा जाए उसे पास कर दिया जाएगा। इस बैठक के निर्णय अन्तिम समझे जाते हैं किन्तु बाद पास किए [illegible] अन्दर-अन्दर १/२० मतदाता या एक सौ मतदाताओं द्वारा मतदान की मांग की जा सकती है।

कार्य सम्पन्न करने की शक्तियां दे सकता है। इस प्रक्रिया का प्रारम्भ सन् १९४८ के जन स्वास्थ्य अधिनियम के साथ हुआ और इसके माध्यम से व्यक्तिगत स्थानीय सत्ताओं को कम खर्च के द्वारा अधिक शक्तियां प्रदान की जा सकती हैं। जिस क्षेत्र में मन्त्री प्राविधिक आदेश द्वारा शक्तियां प्रदान कर सकता है, उसमें शक्तियां प्राप्त करने के लिए इच्छुक स्थानीय परिषद मन्त्री से ऐसा करने की प्रार्थना करती है। मन्त्री अपना आदेश जारी करने से पूर्व यह देखता है कि ऐसा करने से किसी को कोई ऐतराज तो नहीं है। इन ऐतराजों की जांच के लिए सार्वजनिक रूप से पूछताछ की जाती है तथा उठाए जाने वाले विरोधों की सुनवाई की जाती है। जब एक आदेश जारी कर दिया जाता है तो उसे प्रभावशाली बनाने से पूर्व संसद की स्वीकृति लेना जरूरी होता है।

स्थानीय सरकार की दृष्टि से उपर्युक्त तरीका अब अधिक महत्वपूर्ण नहीं रहा है क्योंकि संसदीय समिति के विचारार्थ अब व्यक्तिगत विधेयकों को उठाया जा सकता है। यह कम खर्चीला तरीका होता है क्योंकि इसमें स्थानीय सत्ता को संसदीय वकील नियुक्त नहीं करने पड़ते तथा अपने अधिकारी इसे लंदन नहीं भेजने पड़ते। उनको अधिक दिनों तक ठहराना भी जरूरी नहीं रह जाता। जब एक बार प्राविधिक आदेश जारी कर दिया जाता है तो संसद द्वारा उसको स्वीकार कराने में कोई कठिनाई नहीं होती। आदेश के पीछे मंत्रालय का पूरा समर्थन रहता है। यह ऐसी ही संसदीय समिति को विचारार्थ भेजा जाता है जो कि व्यक्तिगत विधेयक पर विचार करती हैं। केवल महत्वपूर्ण सैद्धान्तिक प्रश्नों पर ही संसद प्राविधिक आदेशों को मानने में अड़चन डाल सकती है वरना वह उनको आम रूप से स्वीकार कर लेती है।

अधीनस्थ व्यवस्थापन अथवा हस्तांतरित व्यवस्थापन के कारण मंत्रियों को संसद द्वारा स्थानीय सरकार से सम्बन्धित शक्तियां अधिक सौंप दी जाती हैं। मंत्री उस विशेष स्थानीय सत्ता के अनुसार आवश्यकता के माफिक आदेश जारी करेगा। इस प्रकार के कानूनी आदेशों (Statutory Orders) को कानून की उन प्रक्रियाओं में हो कर नहीं गुजरना पड़ता जो कि पर्याप्त जटिल एवं लम्बी होती हैं। हस्तांतरित व्यवस्थापन के फलस्वरूप एक ओर तो स्थानीय सत्ताओं की शक्तियों में पर्याप्त वृद्धि हुई है और दूसरी ओर इसके द्वारा स्थानीय सेवाओं के संचालन के लिये नया तरीका भी प्रस्तावित किया गया है। यह तरीका प्रशासकीय की अपेक्षा व्यवस्थापिका की प्रकृति का है। पहले स्थानीय सेवाओं के सम्बन्ध में की जाने वाली व्यवस्था को संसद द्वारा उसके अधिनियमों में दिया जाता था किन्तु अब यह कानूनी आदेशों, नियमों, विनियमों आदि में दी जाती है। यह व्यवस्था अपेक्षाकृत अधिक स्पष्ट एवं व्यापक है। स्थानीय सरकार की दृष्टि से यदि मापदण्डों पर विचार किया जाये तो हम पायेंगे कि विस्तृत व्यवस्थापन का तरीका एक प्रकार से प्रशासकीय ही बन जाता है। इस प्रकार कुछ विचारकों का यह कहना गलत नहीं है कि व्यवस्थापिका का नियन्त्रण मूल रूप से प्रशासकीय नियंत्रण ही है जो

कि केन्द्र सरकार को स्थानीय सरकारों पर अधिक नियंत्रण रखने के अवसर प्रदान करता है।

न्यायिक नियंत्रण [Judicial Control]—ग्रेट ब्रिटेन में फ्रांस के विपरीत कानून का शासन (Rule of law) स्थित है जिसके अनुसार वहां स्थानीय सत्ता एवं उनके सभी अधिकारी प्रायः उसी न्यायालय एवं न्यायिक व्यवस्था के अधीन होते हैं जिसके कि सामान्य नागरिक होते हैं। कानून की दृष्टि से उनको कोई विशेष स्तर प्रदान नहीं किया गया है। एक सामान्य नागरिक अपनी स्थानीय परिषद पर मुकदमा चला सकता है और यदि वह सफल हो जाये तो परिषद से अपना सारा हर्जाना वसूल करने का अधिकार रखता है। स्थानीय सत्ताओं को कानून द्वारा बनाया जाता है तथा उनका ऐसा कोई भी अधिकार या कर्तव्य नहीं होता जो कि उनको कानून द्वारा नहीं दिया गया है। प्रारम्भ काल से लेकर आज तक स्थानीय सत्तायें मूल रूप से कानून द्वारा ही निर्धारित की गई है। स्थानीय सत्ता को एक निगम का रूप दिया गया है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि इसका व्यक्तित्व अपना स्वतन्त्र होता है। यह व्यक्ति की भांति ही कानून की दृष्टि से एक जैसे अधिकार एवं दायित्व रखती है।

स्थानीय सत्ता द्वारा प्रदान की गई सेवाओं से यदि किसी को असंतोष या शिकायत है तो इसके लिए न्यायालय का द्वार सदैव ही खुला रहता है। उदाहरण के लिए हम एक ऐसे भवन को ले सकते हैं जिसकी रचना स्थानीय सत्ता द्वारा करवाई गई है। यह भवन मान लो कि अत्यन्त कमजोर है तथा ऐसा होने के कारण वह किसी नागरिक या नागरिकों को नुकसान पहुँचा देता है तो वह प्रभावित व्यक्ति स्थानीय सत्ता के विरुद्ध न्यायिक कार्यवाही करने के लिए स्वतन्त्र है। इसी प्रकार यदि स्थानीय सत्ता द्वारा बनाई गई दोष-पूर्ण सड़क से किसी वाहन को कोई क्षति पहुँचती है तो उसका स्वामी भी इसी प्रकार का अधिकार रखता है। नगरपालिका द्वारा चलाई जाने वाली बसों के चालक यदि अपनी गति को अधिक रखें तो उनके विरुद्ध चालान किया जा सकता है। इसके लिए परिषद को उस चालक के व्यवहार के लिए उत्तरदायी बनना होगा। यह सब तथ्यपूर्ण स्थिति एक प्रकार से इस बात को प्रकट करती है कि स्थानीय सत्ताएं कानून के आधीन रहती हैं किन्तु इसका यह अर्थ नहीं होता कि उन पर न्यायिक नियन्त्रण रहता है। वह सब [illegible] के अनुसार व्यवहार करना था किन्तु न्यायिक नियन्त्रण का [illegible] अनुसार व्यवहार करने से भी बढ़कर कठिन है।

कर सकती। यह एक प्रकार से निषेधात्मक पहलू है। कानून के अनुसार प्रशासन के पीछे जो विचार निहित है वह विधेयात्मक (Positive) एवं निषेधात्मक दोनों ही है। कानून द्वारा कुछ कार्यों को सम्पन्न करने की मांग भी की जा सकती है तथा यह भी व्यवस्था की जा सकती है कि एक स्तर को बनाए रखा जाए। ग्रेट ब्रिटेन में स्थानीय सत्ताओं की क्रियाओं को न्यायालयों द्वारा जिस प्रकार पुनरीक्षित किया जाता है, वह तरीका अनेक कानूनी सिद्धान्तों पर अधारित है। इन सिद्धान्तों, नियमों एव व्यवहारों को कभी भी नियमबद्ध नहीं किया गया हैं। इसमें से कुछ तरीके तो पूरी तरह से बुद्धिपूर्ण है किन्तु अधिकांश ऐसे भी हैं जिनकी सीमाओं को अच्छी प्रकार से पारिभाषित नहीं किया जाता। नियन्त्रण की अनेक प्रक्रियाएं हैं जो कि भिन्न-भिन्न परिस्थितियों में उपयुक्त समझी जाती हैं ये प्रक्रियायें वैसे तो इतनी तकनीकी एवं उलझी हुई प्रकृति की है कि इनको केवल वकीलों का ही विषय कहा जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी किन्तु फिर भी कुछ प्रक्रियाओं का यहां उल्लेख किया जा सकता है।

प्रथम प्रक्रिया उस परम्परावादी विचारधारा पर आधारित है जिसके अनुसार यह सोचा जाता था कि समाज इस बात पर निर्भर है कि उसका प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्त्तव्यों का पालन करे। यदि सभी नागरिक शान्ति को भंग होने से रोकें, अपराधियों को पकड़ने में तथा गलती करने वालों को रोकने में सहायता करें तो इसका कोई अर्थ नहीं कि कानून और व्यवस्था की स्थापना न हो सके। कानून के अनुसार इन कर्त्तव्यों का निर्वाह करने में किसी प्रकार की असफलता को एक अपराध माना गया था जिसके लिए अपराधी व्यक्ति के विरुद्ध कानूनी कार्यवाही की जा सकती थी। इस प्रकार एक व्यक्ति को, जिसने डाकू को पकड़ने में सहायता नहीं की, उसी प्रकार अपराधी माना जाता था जिस प्रकार डाकू को। यद्यपि उसको दिया गया दण्ड केवल कुछ जुर्माना ही हो सकता था जब कि डाकू को फांसी तक की सजा। आज से लगभग दो शताब्दी पूर्व इंगलैंड के लोग इस व्यवस्था को पूर्णतः स्वाभाविक मानते थे। उनका कहना था कि प्रत्येक व्यक्ति को उसके कर्त्तव्य का पालन करना चाहिए और यदि वह नहीं कर पाता है तो एक प्रकार से अपराधी है और उसके विरुद्ध न्यायिक कार्यवाही किया जाना पूर्णतः तर्कसंगत है। इस प्रकार का व्यवस्था द्वारा ही एक व्यक्ति को उसके दायित्वों के प्रति जागरूक बनाया जा सकता है। यदि पूरा समाज ही अपने दायित्वों को पूरा न कर पाये तो उसको भी अभियुक्त बनाया जा सकता है। यदि पेरिस के निवासी एक सड़क की मरम्मत न कर पायें तो उनके विरुद्ध अभियोग लगा दिया जाना चाहिए।

इस प्रकार के अभियोग की व्यवस्था में एक बड़ी कठिनाई यह उपस्थित हो जाती है कि गलती की परिभाषा किस प्रकार की जाये तथा कैसे निश्चित व्यक्तियों को गलती करने के लिए दोषी ठहराया जाय। वर्तमान परिस्थितियों में यह असामयिक बन चुका है। आज हम यह नहीं कह सकते कि सामाजिक श्रम के आधार पर सड़कों की रचना कर ली जाये

किन्तु फिर भी इस व्यवस्था को पूरी तरह से महत्वहीन नहीं कहा जा सकता। सन् १८५६ में अनेक लोगों को यह जान कर आश्चर्य हुआ कि पेरिस के निवासियों पर सड़क की मरम्मत न करने का अभियोग लगा दिया गया। प्रश्न यह था कि रास्ता व्यक्तिगत या अथवा सरकारी व्यय पर इसकी मरम्मत की जानी थी। पुराने समय के कानून ने स्थानीय सत्ताओं पर जो अनेक दायित्व लाद रखे थे आज वे प्रायः सभी समाप्त प्राय: हो गये हैं अथवा महत्वहीन बन गये हैं। स्थानीय सत्तायें आज यदि अपने दायित्वों को पूरा न करें तो उनके विरुद्ध अन्य कार्यवाही की जा सकती है जो अभियोग की अपेक्षा अधिक सुविधाजनक है।

दूसरे, स्थानीय सरकार के उप-कानूनों [By-laws] का उल्लंघन करने पर नागरिकों के विरुद्ध कार्यवाही की जाती है। जब कभी ऐसे अवसर उपस्थित होते है तो न्यायालय को स्थानीय सत्ता के उप-कानूनों पर विचार करने एवं उनकी व्याख्या करने का भी अवसर प्राप्त हो जाता है। न्यायिक कार्यवाही मजिस्ट्रेट के न्यायालय में प्रारम्भ होती है तथा सत्तापूर्ण निर्णय के लिए कानून को उच्च न्यायालय के पास भेजा जाता है। केन्ट [Kent] की काउन्टी परिषद ने यह उप-कानून बना रखा है कि यदि कांस्टेबुल मना कर दे तो किसी भी व्यक्ति को निवास-गृहों से १५ गज के भीतर की सड़क पर या किसी सार्वजनिक स्थान में संगीत या आवाजपूर्ण साधन पर जोर की आवाज करना या गाना नहीं चाहिए। यदि उस घर में रहने वाला व्यक्तिगत रूप से या अपने सेवक द्वारा मना करे तो भी ऐसा नहीं करना चाहिए। एक व्यक्ति को इस कानून का उलंघन करने पर पकड़ लिया गया क्योंकि वह उप-कानून द्वारा मना किये गये तरीके के विपरीत गा रहा था। इसके विरुद्ध यह कहा गया कि स्वयं उप-कानून ही अनुचित [Ultra-Vires] है क्योंकि यह अबुद्धिपूर्ण है अतः अनुचित है। इसके परिणामस्वरूप उच्च न्यायालय से पूछा गया कि इस प्रकार के मामलों में उप-कानून के सम्बन्ध में क्या सिद्धान्त अपनाये जाने चाहिएं।

न्यायालय ने बताया कि जहां तक हो सके स्थानीय सत्ता के उप-कानूनों का समर्थन किया जाना चाहिए। उनको केवल तभी अबुद्धिपूर्ण माना जा सकता है जब कि उनके पालन में पक्षपात किया जा रहा हो या असमानता बरती जा रही हो; यदि वे स्पष्टतः अन्यायपूर्ण हों तथा नागरिकों के जीवन में अनुचित रूप से हस्तक्षेप करते हों। दूसरे शब्दों में एक कानून को केवल इसलिए अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि न्यायाधीश इसे सामान्य रूप से अबुद्धिपूर्ण मानते है किन्तु ऐसा केवल तभी किया जा सकता है जब कानून सिद्धान्त रूप में ही खराब हो। कई बार कानून की व्याख्या करने का प्रश्न भी उपस्थित हो जाता है। ऐसी परिस्थितियां आती हैं जब न्यायालय को स्थानीय निकाय द्वारा बनाये गये उप-कानूनों की व्याख्या करनी होती है। उदाहरण के लिए ग्लेमोर्गन [Glamorgan] काउन्टी-परिषद के एक स्थानीय अधिनियम में यह प्रावधान है कि काउन्टी की किसी गली में कोई भी व्यक्ति व्यापार या वाणिज्य या उसके किसी भाग के प्रचार के लिए

कर सकती। यह एक प्रकार से निषेधात्मक पहलू है। कानून के अनुसार प्रशासन के पीछे जो विचार निहित है वह विधेयात्मक (Positive) एवं निषेधात्मक दोनों ही है। कानून द्वारा कुछ कार्यों को सम्पन्न करने की मांग भी की जा सकती है तथा यह भी व्यवस्था की जा सकती है कि एक स्तर को बनाए रखा जाए। ग्रेट ब्रिटेन में स्थानीय सत्ताओं की क्रियाओं को न्यायालयों द्वारा जिस प्रकार पुनरीक्षित किया जाता है, वह तरीका अनेक कानूनी सिद्धान्तों पर अधारित है। इन सिद्धान्तों, नियमों एव व्यवहारों को कभी भी नियमबद्ध नहीं किया गया हैं। इसमें से कुछ तरीके तो पूरी तरह से बुद्धिपूर्ण है किन्तु अधिकांश ऐसे भी हैं जिनकी सीमाओं को अच्छी प्रकार से पारिभाषित नहीं किया जाता। नियन्त्रण की अनेक प्रक्रियाएं हैं जो कि भिन्न-भिन्न परिस्थितियों में उपयुक्त समझी जाती हैं ये प्रक्रियायें वैसे तो इतनी तकनीकी एवं उलझी हुई प्रकृति की है कि इनको केवल वकीलों का ही विषय कहा जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी किन्तु फिर भी कुछ प्रक्रियाओं का यहां उल्लेख किया जा सकता है।

प्रथम प्रक्रिया उस परम्परावादी विचारधारा पर आधारित है जिसके अनुसार यह सोचा जाता था कि समाज इस बात पर निर्भर है कि उसका प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्त्तव्यों का पालन करे। यदि सभी नागरिक शान्ति को भंग होने से रोकें, अपराधियों को पकड़ने में तथा गलती करने वालों को रोकने में सहायता करें तो इसका कोई अर्थ नहीं कि कानून और व्यवस्था की स्थापना न हो सके। कानून के अनुसार इन कर्त्तव्यों का निर्वाह करने में किसी प्रकार की असफलता को एक अपराध माना गया था जिसके लिए अपराधी व्यक्ति के विरुद्ध कानूनी कार्यवाही की जा सकती थी। इस प्रकार एक व्यक्ति को, जिसने डाकू को पकड़ने में सहायता नहीं की, उसी प्रकार अपराधी माना जाता था जिस प्रकार डाकू को। यद्यपि उसको दिया गया दण्ड केवल कुछ जुर्माना ही हो सकता था जब कि डाकू को फांसी तक की सजा। आज से लगभग दो शताब्दी पूर्व इंगलैड के लोग इस व्यवस्था को पूर्णतः स्वाभाविक मानते थे। उनका कहना था कि प्रत्येक व्यक्ति को उसके कर्त्तव्य का पालन करना चाहिए और यदि वह नहीं कर पाता है तो एक प्रकार से अपराधी है और उसके विरुद्ध न्यायिक कार्यवाही किया जाना पूर्णतः तर्कसंगत है। इस प्रकार का व्यवस्था द्वारा ही एक व्यक्ति को उसके दायित्वों के प्रति जागरूक बनाया जा सकता है। यदि पूरा समाज ही अपने दायित्वों को पूरा न कर पाये तो उसको भी अभियुक्त बनाया जा सकता है। यदि पेरिस के निवासी एक सड़क की मरम्मत न कर पायें तो उनके विरुद्ध अभियोग लगा दिया जाना चाहिए।

इस प्रकार के अभियोग की व्यवस्था में एक बड़ी कठिनाई यह उपस्थित हो जाती है कि गलती की परिभाषा किस प्रकार की जाये तथा कैसे निश्चित व्यक्तियों को गलती करने के लिए दोषी ठहराया जाय। वर्तमान परिस्थितियों में यह असामयिक बन चुका है। आज हम यह नहीं कह सकते कि सामाजिक श्रम के आधार पर सड़कों की रचना कर ली जाये

किन्तु फिर भी इस व्यवस्था को पूरी तरह से महत्वहीन नहीं कहा जा सकता। सन् १९५६ में अनेक लोगों को यह जान कर आश्चर्य हुआ कि पेरिस के निवासियों पर सड़क की मरम्मत न करने का अभियोग लगा दिया गया। प्रश्न यह था कि रास्ता व्यक्तिगत था अथवा सरकारी व्यय पर इसकी मरम्मत की जाती थी। पुराने समय के कानून ने स्थानीय सत्ताओं पर जो अनेक दायित्व लाद रखे थे आज वे प्रायः सभी समाप्त प्रायः हो गये हैं अथवा महत्वहीन बन गये हैं। स्थानीय सत्तायें आज यदि अपने दायित्वों को पूरा न करें तो उनके विरुद्ध अन्य कार्यवाही की जा सकती है जो अभियोग की अपेक्षा अधिक सुविधाजनक है।

दूसरे, स्थानीय सरकार के उप-कानूनों [By-laws] का उल्लंघन करने पर नागरिकों के विरुद्ध कार्यवाही की जाती है। जब कभी ऐसे अवसर उपस्थित होते हैं तो न्यायालय को स्थानीय सत्ता के उप-कानूनों पर विचार करने एवं उनकी व्याख्या करने का भी अवसर प्राप्त हो जाता है। न्यायिक कार्यवाही मजिस्ट्रेट के न्यायालय में प्रारम्भ होती है तथा सत्तापूर्ण निर्णय के लिए कानून को उच्च न्यायालय के पास भेजा जाता है। केन्ट [Kent] की काउन्टी परिषद ने यह उप-कानून बना रखा है कि यदि 'कांस्टेबुल मना कर दे तो किसी भी व्यक्ति को निवास-गृहों से १५ गज के भीतर की सड़क पर या किसी सार्वजनिक स्थान में संगीत या आवाजपूर्ण साधन पर जोर की आवाज करना या गाना नहीं चाहिए। यदि उस घर में रहने वाला व्यक्तिगत रूप से या अपने सेवक द्वारा मना करे तो भी ऐसा नहीं करना चाहिए। एक व्यक्ति को इस कानून का उलंघन करने पर पकड़ लिया गया क्योंकि वह उप-कानून द्वारा मना किये गये तरीके के विपरीत गा रहा था। इसके विरुद्ध यह कहा गया कि स्वयं उप-कानून ही अनुचित [Ultra–Vires] है क्योंकि यह अबुद्धिपूर्ण है अतः अनुचित है। इसके परिणामस्वरूप उच्च न्यायालय से पूछा गया कि इस प्रकार के मामलों में उप-कानून के सम्बन्ध में क्या सिद्धान्त अपनाये जाने चाहिएं।

न्यायालय ने बताया कि जहाँ तक हो सके स्थानीय सत्ता के उप-कानूनों का समर्थन किया जाना चाहिए। उनको केवल तभी अबुद्धिपूर्ण माना जा सकता है जब कि उनके पालन में पक्षपात किया जा रहा हो या असमानता बरती जा रही हो; यदि वे स्पष्टतः अन्यायपूर्ण हों तथा नागरिकों के जीवन में अनुचित रूप से हस्तक्षेप करते हों। दूसरे शब्दों में एक कानून को केवल इसलिए अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि न्यायाधीश उसे सामान्य रूप से अबुद्धिपूर्ण मानते हैं किन्तु ऐसा केवल तभी किया जा सकता है जब कानून सिद्धान्त रूप में ही खराब हो। कई बार कानून की व्याख्या करने का प्रश्न भी उपस्थित हो जाता है। ऐसी परिस्थितियां आती हैं जब न्यायालय को स्थानीय निकाय द्वारा बनाये गये उप-कानूनों की व्याख्या करनी होती है। उदाहरण के लिए ग्लेमोर्गन [Glamorgan] काउन्टी-परिषद के एक स्थानीय अधिनियम में यह प्रावधान है कि काउन्टी की किसी गली में कोई भी व्यक्ति व्यापार या वाणिज्य या उसके किसी भाग के प्रचार के लिए

लाउडस्पीकर का प्रयोग नहीं करेगा। लाउडस्पीकर से अर्थ एम्पलीफायर या ऐसे ही प्रसाधन से है।

गाड़ी पर एक आइसक्रीम बेचने वाली कम्पनी ने यह प्रचार किया कि उपस्थिति की सूचना घन्टी बजा कर दी जायेगी। जब ऐसी एक गाड़ी आई तथा उसने घन्टियों की आवाज़ की तो कम्पनी को कानून का उलंघन करते के जुर्म में पकड़ लिया गया। मजिस्ट्रेट के न्यायालय में कार्यवाही करने के बाद मामले को उच्च न्यायालय में ले जाया गया। इसमें मुख्य बात यह थी कि लाउडस्पीकर से क्या अर्थ लगाया जाये। न्यायालय ने बताया कि एक बड़े क्षेत्र में आवाज करने वाले यन्त्र को इस व्याख्या में लिया जा सकता है अतः उसने कार्यवाही को रोक दिया।

तीसरे, न्यायिक रूप से स्थानीय सत्ता के कार्यों पर जो नियन्त्रण रहता है उसका एक अन्य रूप यह है कि जिस व्यक्ति को स्थानीय सत्ता के कार्य गलत रूप में करने से या न करने से जो हानि हुई है वह इसके विरुद्ध न्याया-लय में कार्यवाही कर सकता है। अभियुक्त सत्ता यह दावा कर सकती है कि वह किसी व्यक्ति के नुकसान के लिए उत्तरदायी नहीं है क्योंकि वह कानून की सीमा में रहकर ही कार्य करती है। यदि कानूनी शक्तियों का प्रयोग करने पर किसी व्यक्ति को कोई नुकसान या कठिनाई होती है तो उसके लिए वह जिम्मेदार क्यों ठहराई जायेगी। ऐसे प्रश्नों के विषय में एक मामले पर विचार करते हुए लार्ड सभा ने यह बताया कि इस प्रकार का तर्क अनुपयुक्त है। एक सरकारी विकास के सेवक भी अपने कर्तव्यों का पालन करने के लिए ठीक उसी प्रकार उत्तरदायी हैं जिस प्रकार कि एक व्यक्तिगत व्यापारिक कम्पनी होती है।

चौथे, स्थानीय सत्ता के किसी कार्य या प्रस्तावित कार्यों की वैधानिकता को जांचने के लिए उच्च न्यायालय से घोषणा करने के लिए कहा जा सकता है। यद्यपि ये दो अलग-अलग साधन हैं किन्तु दोनों का प्रयोग एक साथ भी किया जा सकता है अतः दोनों पर एक साथ विचार किया जाना उपयुक्त रहेगा। आदेश प्रायः उस समय जारी किए जाते हैं जबकि यह देखा जाये कि स्थानीय सत्ता सम्पत्ति के अधिकारों में हस्तक्षेप कर रही है। जब इस प्रकार के अधिकारों में हस्तक्षेप किया जाता है तो की गई हानि के भुगतान को प्रायः अपर्याप्त समझा जाता है। आदेश जारी करके न्यायालय, दोषी को ऐसा करने से रोक सकती है जो कि उसे नहीं करना चाहिए अथवा उसे कुछ विधायी कदम उठाने के लिए कह सकती है। यदि स्थानीय सत्ता ने किसी व्यक्ति के अधिकारों का उलंघन करते हुए एक भवन का निर्माण किया है तो न्यायालय अपने आदेश द्वारा उसे नष्ट करने के लिए कह सकता है। न्यायालय द्वारा दिए जाने वाले निर्देश सुस्थापित सिद्धान्तों पर आधारित रहते हैं। [illegible]नी विषय पर आदेश जारी किया जायेगा या नहीं, यह बात अब अत्यन्त स्पष्ट हो चुकी है। यह आदेश स्वेच्छा पर आधारित होता है। जब यह देखा जाये कि हानि का भुगतान ही पर्याप्त रहेगा तो यह आदेश जारी नहीं किये जाते। यदि व्यक्तिगत अधिकारों में हस्तक्षेप करने के कारण किसी स्थानीय स[illegible] के विरुद्ध कार्यवाही की जाये तो न्यायालय इस बात पर विचार करेगा कि आदेश

जारी किया जाये अथवा नहीं। इस प्रकार के आदेश स्थानीय सत्ता को अनुचित कार्य (Utra-Vires) करने से रोकने के लिए या किसी सार्वजनिक अधिकार की रक्षा के लिए जारी किया जा सकता है। इस सम्बन्ध में नियम यह है कि कोई व्यक्ति केवल तभी कार्यवाही कर सकता है जबकि उसके व्यक्तिगत अधिकारों के साथ-साथ किसी सार्वजनिक अधिकार का भी उलंघन हुआ हो। उदाहरण के लिए यदि स्थानीय सत्ता के किसी कार्य द्वारा रास्ते में चलने के सार्वजनिक अधिकार का विरोध किया जाता है तथा इसके साथ ही इस कार्य से किसी व्यक्ति की सम्पत्ति का अधिकार भी प्रभावित होता है तो ऐसी स्थिति में अटोर्नी जनरल कार्यवाही कर सकता है।

न्यायालय द्वारा घोषणा करने की कार्यवाही इससे कुछ भिन्न होती है। न्यायालय को साधारणतः यह घोषित करने के लिए आमन्त्रित किया जाता है कि स्थानीय परिषद द्वारा किया गया अथवा किया जाने वाला कोई कार्य कानूनी है अथवा नहीं। न्यायालय का यह कार्य आदेश जारी करने की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण है। जब किसी सरकारी सत्ता के सम्बन्ध में यह कह दिया जाता है कि उसका कोई कार्य अवैधानिक है तो आवश्यक रूप से उस सत्ता को अपने कार्यों का रुख बदलना होगा क्योंकि यह आशा की जाती है कि उनको कानून का पालन करना चाहिए। ऐसी स्थिति होने पर कोई भी व्यक्तिगत नागरिक सरकारी सत्ता के विरुद्ध अटार्नी जनरल से कार्यवाही करने के लिए नहीं कह सकता। घोषणा प्रसारित करने का सबसे बड़ा लाभ यह है कि न्यायालय द्वारा ये एक बड़े क्षेत्र पर की जा सकती हैं। उच्च न्यायालय में आज्ञा प्रसारित करने एवं घोषणा जारी करने के लिए प्रार्थना की जा सकती है।

सन् १९३८ के बाद स्थिति पर्याप्त बदल चुकी है और अब न्यायालय अपने आदेश द्वारा वह कार्य कर सकता है जो कि पहले वह केवल लेख जारी करके ही कर सकता था। यह कहा जाता है कि हेवियस कार्पस की प्रक्रिया को स्थानीय सत्ताओं के विरुद्ध भी किया जा सकता है, यद्यपि उनके पास कोई जेल नहीं होती। उनके पास संरक्षण के लिए बालक होते हैं तथा संस्थाओं वाले अनेक वृद्ध व्यक्ति होते हैं। स्थानीय सरकार की दृष्टि से तीन प्रकार के लेख अधिक महत्वपूर्ण हैं। इनमें प्रथम लेख परमादेश (Mendamns) है। इसका अर्थ होता है 'हम आज्ञा देते हैं।' प्रारम्भ में इसका प्रयोग एक अधीनस्थ न्यायालय को किसी मामले पर विचार करने के लिए बाध्य करने के तरीके के रूप में किया जाता था। स्थानीय स्तर पर न्यायिक एवं प्रशासकीय कार्यों के बीच कोई अन्तर न होने के कारण इस लेख का प्रयोग सरकारी सत्ता को उसके किसी कर्तव्य को सम्पन्न कराने के लिए किया जा सकता है। इस लेख का अधिकार क्षेत्र इतना व्यापक नहीं है जितना कि लगता है। यदि किसी कर्तव्य के पालन में सम्बन्धित सत्ता को स्वेच्छा का अधिकार प्राप्त है तो उसके बारे में उस समय तक यह लेख जारी नहीं किया जायेगा जब तक स्वेच्छा की बुराई इस अधिकार के प्रयोग का ही उलंघन न कर दे। यदि किसी क्षेत्र में कर्तव्य न हो कर केवल शक्ति है तो वहां परमादेश का लेख जारी नहीं किया जा सकता। जब इस लेख को जारी करने के लिए प्रार्थना की जाती है तो यह जरूरी है कि प्रभावित कर्तव्य सार्वजनिक हित में हो और प्रार्थी के व्यक्तिगत हित में भी। इन सभी सीमाओं के होने के कारण परमादेश का प्रयोग स्थानीय सत्ताओं की क्रियाओं को नियन्त्रित करने के लिए बहुत कम किया गया।

एक अन्य लेख जिसके द्वारा स्थानीय संस्थाओं के प्रशासकीय कार्यों की पुनरीक्षा की जा सकती है वह प्रतिरोध या उत्प्रेषण (Prohibition or Certiorari) लेख है। प्रतिरोध का लेख एक अधीनस्थ न्यायालय को ऐसा कार्य करने से रोकने के लिए किया जाता था जो कि उसके अधिकार क्षेत्र से बाहर है। उत्प्रेषण लेख (Certiorari Writ) इसके लिए जारी किया जाता है ताकि अधीनस्थ न्यायालय की कार्यवाही को राजा की बैंच में मंगाया जा सके तथा उसकी छानबीन की जा सके। छानबीन करते समय यह देखा जाता था कि क्या अधीनस्थ न्यायालय अपने अधिकार क्षेत्र में रहकर कार्य कर रहा था और क्या वह उन सिद्धान्तों के अनुसार कार्य कर रहा था जो कि एक न्यायिक प्रक्रिया में अपनाये जाने चाहिए। इन दोनों प्रकार के लेखों में समय का अन्तर है। प्रतिरोध लेख को उस समय जारी किया जाता है जब कि अधीनस्थ न्यायालय ने अपनी कार्यवाही प्रारम्भ नहीं की है अथवा उसमें कार्यवाही चल रही है किन्तु उत्प्रेषण लेख उस समय जारी किया जाता है जब कि अधीनस्थ न्यायालय निर्णय ले चुका होता है। स्थानीय स्तर पर न्याय के न्यायाधीशों के न्यायिक एवं प्रशासकीय कार्यों में कोई अन्तर नहीं किया गया था इसलिए वहां भी इन लेखों को जारी करने की परम्परा अपनाई गई। सिद्धान्त के अनुसार इन उपचारों को प्रायः वहीं अपनाया जाता है जहां कि क्रिया को न्यायिक या अर्धन्यायिक कहा जा सके। जब एक स्थानीय सत्ता रेट (Rate) की एक निश्चित मात्रा तय कर देती है

न्यायिक नियन्त्रण का प्रभाव
[The Effect of Judicial Control]

स्थानीय सत्ताओं के विभिन्न कार्यों की न्यायिक नियन्त्रण की जो व्यवस्था की जाती है उसका एक व्यापक प्रभाव होता है। कानूनी प्रक्रिया के जिन विभिन्न रूपों की व्यवस्था की गई है उनके परिणामस्वरूप किसी कार्य की प्रस्तावित कार्य की वैधानिकता को न्यायालय में जांचा जा सकता है। कानूनी प्रक्रिया के विशेष रूप का चयन एक तकनीकी प्रश्न होता है जिस पर निर्णय लेने के लिए विशेषज्ञों के कानूनी परामर्श की सदैव आवश्यकता रहती है। एक विशेष प्रश्न के सम्बन्ध में निश्चित रूप से यह नहीं कहा जा सकता कि परमादेश या आदेश या घोषणा करने के उपचारों में से किस को अपनाया जाए। मुख्य बात यह है कि किसी न किसी प्रकार से वैधानिकता के प्रश्न को उठाया जा सकता है, किन्तु यह जानना अत्यन्त कठिन है कि वैधानिकता के नाम पर न्यायालय कितना निन्त्रण रख सकते हैं। न्यायिक नियन्त्रण की प्रक्रिया में शब्दों की व्याख्या का प्रश्न अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। इसके सम्बन्ध में अलग-अलग प्रकार के मत व्यक्त किए जाते हैं। उन मतों में से सही कौनसा है, इसका निर्णय करना एक महत्वपूर्ण समस्या होती है। यह समस्या अपरिहार्य है। नियमों को अभिव्यक्त करने के लिए शब्द काम में लाए जाते हैं और शब्दों को चाहे कितनी ही सावधानी से अपनाया जाए किन्तु वे उन परिस्थितियों पर लागू नहीं हो पाते जिनकी कल्पना कानून बनाते समय नहीं की जाती थी।

शब्दों के अतिरिक्त जब हम स्थानीय सत्ता द्वारा प्रयुक्त शक्तियों पर विचार करते हैं तो हम यह पाते हैं कि न्यायालय द्वारा व्यवस्थापन की परिभाषा उस रूप में की जाती है जिस रूप में कि वह असल में नहीं है। इसके पक्ष में एक वैधानिक तर्क यह दिया जाता है कि कानून का एक सामान्य नियम यह है कि जब एक सरकारी सत्ता अपनी किसी शक्ति का प्रयोग करे तो उसे अच्छे विश्वास से, बुद्धिपूर्ण तरीके से तथा उद्देश्य के लिए ऐसा करना चाहिए जिसके लिए कि वह शक्ति प्राप्त हुई है। व्यवस्थापन को कानून के सामान्य रूप में समायोजित होना चाहिए। किन्तु यह समायोजन क्या है और किस शक्ति का प्रयोग अच्छे विश्वास, बुद्धिपूर्ण तरीके तथा प्रदत्त सीमाओं के अन्तर्गत हो रहा है अथवा नहीं, इस बात का पता कैसे लगाया जाए—यह एक मुख्य समस्या है जो कि स्थानीय सत्ताओं के क्षेत्र में न्यायालयों की शक्ति को बढ़ा लेती है। मि० आर० एम० जैक्सन (R. M. Jackson) ने लिखा है कि उपयुक्तता के इन सिद्धान्तों के माध्यम से न्यायालय स्थानीय सत्ताओं की क्रियाओं पर बहुत अधिक नियन्त्रण रख सकते हैं किन्तु न्यायालयों ने असल में पर्याप्त उदारता दिखाई है। *

कर सकते हैं कि न्यायाधीश अपनी विशेषताओं को बदल लेंगे। इस सम्बन्ध में केवल यही किया जा सकता है कि स्थानीय सरकार से सम्बन्धित कानून को अधिक से अधिक सामयिक बनाया जाए। साथ ही सामान्य व्यवस्थापन द्वारा स्थानीय कानूनों की शक्तियों को भी बढ़ाया जाए। न्यायालयों को स्थानीय सरकार के क्षेत्र में नियन्त्रणकारी शक्तियां प्रदान करना जरूरी होता है क्योंकि हो सकता है कि जनता कानून को समझ न सके और यदि वह समझ भी ले तो उसका पालन न करे। अतः ऐसी स्थिति में न्यायालयों को कानून की व्याख्या करने एवं उसका उलंघन करने वालों को सजा देने का अधिकार दिया जाता है।

प्रशासकीय नियंत्रण [Administrative Control]—वर्तमान काल में स्थानीय सेवायें राष्ट्रीय महत्व का विषय बन गई हैं तथा स्थानीय सत्ताओं द्वारा उन सेवाओं पर जो व्यय किया जाता है उसका अधिकांश भाग संसद प्रदान करती है। ऐसी स्थिति में स्थानीय क्रियाओं पर केन्द्र का नियन्त्रण स्वाभाविक एवं अपरिहार्य रहेगा। यह नियंत्रण इतना व्यापक बनाया जा सकता है कि वह स्थानीय स्वार्थ एवं पहल को ही समाप्त कर दे किन्तु यह प्रजातंत्रीय स्थानीय सरकार के हित में समझा जाता है कि नियंत्रण कम से कम रखा जाये। प्रजातंत्रात्मक मूल्यों की रक्षा के लिए प्रशासन की कुशलता एवं सरकार की एकरूपता को भी बलिदान किया जा सकता है। केन्द्रीय नियंत्रण का प्रसार एक ही समय में नहीं हो गया वरन् यह धीरे-धीरे क्रमिक गति से हुआ है। उन्नीसवीं शताब्दी [illegible] शान्ति के न्यायाधीश स्थानीय सरकार के मुख्य व्यक्तित्व होते थे, वे अनेक कार्यों को अपने रूप में करने के लिए स्वतंत्र थे। जब १८३४ में निर्धन अधिनियम में संशोधन किया गया तो कुछ मात्रा में केन्द्रीय नियंत्रण को लागू किया गया, किन्तु १८३५ के नगर निगम अधिनियम ने केन्द्रीय नियंत्रण की ओर थोड़ा ही ध्यान दिया था। १८४८ के जन स्वास्थ्य अधिनियम द्वारा केन्द्रीय नियंत्रण के प्रसार का कुछ प्रयास किया गया किन्तु जनमत केन्द्रीय नियंत्रण के पक्ष में नहीं था। समय के साथ-साथ ज्यों-ज्यों केन्द्रीय सरकार द्वारा स्थानीय स[illegible] को दिये जाने वाले अनुदान की मात्रा बढ़ती गई, त्यों-त्यों उसके निय[illegible]ण का भी प्रसार होता चला गया। अनुदान व्यवस्था आज भी स्थानीय सत्ताओं की क्रियाओं को नियंत्रित करने का महत्वपूर्ण साधन है।

प्रशासकीय नियंत्रण के प्रायः अनेक रूप होते हैं, किन्तु इनमें से प्रत्येक रूप कानूनी सत्ता पर आधारित रहता है। जब कभी केन्द्रीय नियंत्रण के प्रसार का अध्ययन किया जाय तो यह देखना उपयोगी रहेगा कि कानून द्वारा कौन-कौन सी शक्तियां सौंपी गई हैं। ये शक्तियां केन्द्र सरकार या व्हाइट हॉल (White Hall) को दी जाती हैं किन्तु कानून एवं व्यावहारिक दृष्टि से ये शक्तियां किसी विशेष मंत्री को सौंपी जाती हैं। किन्तु इसका अर्थ यह कदापि नहीं होता कि स्थानीय सरकार से सम्बन्धित समस्त शक्तियां उसी को सौंप दी जाती हैं। शिक्षा से सम्बन्धित शक्तियां शिक्षा मंत्री को दी जाती हैं और इसी [illegible] स्वास्थ्य से सम्बन्धित सेवायें स्वास्थ्य मंत्री को सौंपी जाती हैं।

स्थानीय सरकार से सम्बन्धित अधिकांश लोग यह अनुभव करते हैं कि न्यायिक नियन्त्रण को स्थानीय सत्ताओं के विरुद्ध अधिक भार प्रदान किया गया है। यह मत तथ्यों को देखने पर कुछ सही भी प्रतीत होता है। इसका कारण यह है कि यदि हम उन तथ्यों का अध्ययन करें जिनमें कि स्थानीय सत्ता की शक्तियों पर न्यायिक नियन्त्रण रखा गया था तो हम पाएंगे कि न्यायालय स्थानीय सत्ता के विरुद्ध उसके पक्ष में निर्णय लेने की अपेक्षा अधिक रुचि लेते हैं। कुछ लेखकों के कथनानुसार जब न्यायालय सार्वजनिक सत्ताओं के सम्बन्ध में विचार करते हैं तो वे न्यायिक पक्षपात से काम करते हैं। इस सम्बन्ध में एक अन्य कठिनाई यह भी है कि वकील कानून की एक ऐसी परम्परा में विकसित होते हैं जो कि मुख्य रूप से अतीतकालीन है। अधिकांश आधुनिक कानून समस्तिवादी हैं और वे समाज के ऐसे संगठन से सम्बन्धित हैं जो कि अनियमित अवस्था की अपेक्षा अधिक संतोषजनक अवस्थाएं प्राप्त कर सके। इस दृष्टि से जनता की सम्पत्ति के सम्बन्ध में अधिक विनियमन होता है। कुल मिला कर यह व्यवस्था आय, शिक्षा, गृह-निर्माण तथा जीवन के अन्य विभिन्न पहलुओं में जो परिवर्तन लाती है, वह मुख्य रूप से समाजवादी है किन्तु कानून परम्परागत रूप से पूर्णतः व्यक्तिवादी होता है। अतीत काल में कानूनवेत्ताओं की मुख्य लड़ाइयां राजा और उसकी सरकार के विरुद्ध की गई थीं। वकीलों ने सरकार सत्ता के प्रति अविश्वास को परम्पराओं में प्राप्त किया है। असल में कानून वेत्ताओं के दिलों में एक वर्ग भावना पैदा हो जाती है।

वस्तु स्थिति को देख कर कई एक लोग यह निर्णय देते हैं कि इस विरोधाभास है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि न्यायिक नियन्त्रण प्रायः स्थानीय सत्ता को वह कार्य करने से रोक देता है जो कि स्थानीय दृष्टि से वांछनीय है तथा उसे करना अत्यन्त अनिवार्य है। न्यायालयों की प्रवृति यह रही है कि स्थानीय सत्ताओं के कार्यों पर सीमा लगाई जाए। वे उसके कार्यों का प्रसार नहीं देख सकते। कई बार बड़ा अटपटा लगता है कि न्यायालय वेकार की बातों पर बहस करने में अपना समय नष्ट करते हैं। उदाहरण के लिए एक वार न्यायालय ने यह विचार किया कि वर्मिंघम नगर को क्या उसी रूप में बसों का प्रयोग करना चाहिए जैसे कि वह कर रहा है। पर्याप्त विचार करने के वाद न्यायालय इस निर्णय पर आया कि उसे कानून द्वारा ऐसा करने की शक्ति नहीं है। न्यायालय के इस व्यवहार ने एक ऐसी स्थिति उत्पन्न करदी जिसमें कि वर्मिंघम तथा अन्य स्थानों को स्वतन्त्र एवं विशेषतः सस्ते यातायात की व्यवस्था की स्वीकृति देने के लिए नया कानून पास किया जाए। यह कठिनाई तथा परेशानी होते हुए भी न्यायालय का नियन्त्रण भी आवश्यक वन जाता है क्योंकि निगम को अपना धन केवल उन्हीं कार्यों में खर्च करना होता है जो कि कानून द्वारा स्वीकृत हैं। वह समाज के किसी भी विशेष वर्ग का उस समय तक पक्षपात नहीं कर सकता जब तक कि उसे ऐसा करने की स्पष्ट रूप से कानूनी शक्ति प्राप्त न हो। असल में न्यायिक नियन्त्रण का व्यवहार स्थानीय सरकार की व्यवस्था में अपनी गहरी जड़ें रखता है, उससे वचा नहीं जा सकता और न ही हम बुद्धिपूर्वक यह आशा

कर सकते हैं कि न्यायाधीश अपनी विशेषताओं को बदल लेंगे। इस सम्बन्ध में केवल यही किया जा सकता है कि स्थानीय सरकार से सम्बन्वित कानून को अधिक से अधिक सामयिक बनाया जाए। साथ ही सामान्य व्यवस्थापन द्वारा स्थानीय कानूनों की शक्तियों को भी बढ़ाया जाए। न्यायालयों को स्थानीय सरकार के क्षेत्र में नियन्त्रणकारी शक्तियां प्रदान करना जरूरी होता है क्योंकि हो सकता है कि जनता कानून को समझ न सके और यदि वह समझ भी ले तो उसका पालन न करे। अतः ऐसी स्थिति में न्यायालयों को कानून की व्याख्या करने एवं उसका उलंघन करने वालों को सजा देने का अधिकार दिया जाता है।

प्रशासकीय नियंत्रण [Administrative Control]—वर्तमान काल में स्थानीय सेवायें राष्ट्रीय महत्व का विषय बन गई हैं तथा स्थानीय सत्ताओं द्वारा उन सेवाओं पर जो व्यय किया जाता है उसका अधिकांश भाग संसद प्रदान करती है। ऐसी स्थिति में स्थानीय क्रियाओं पर केन्द्र का नियन्त्रण स्वाभाविक एवं अपरिहार्य रहेगा। यह नियंत्रण इतना व्यापक बनाया जा सकता है कि वह स्थानीय स्वार्थ एवं पहल को ही समाप्त कर दे किन्तु यह प्रजातंत्रीय स्थानीय सरकार के हित में समझा जाता है कि नियंत्रण कम से कम रखा जाये। प्रजातंत्रात्मक मूल्यों की रक्षा के लिए प्रशासन की कुशलता एवं सरकार की एकरूपता को भी बलिदान किया जा सकता है। केन्द्रीय नियंत्रण का प्रसार एक ही समय में नहीं हो गया वरन् यह धीरे-धीरे क्रमिक गति से हुआ है। उन्नीसवीं शताब्दी के शान्ति के न्यायाधीश स्थानीय सरकार के मुख्य व्यक्तित्व होते थे, वे अनेक कार्यों को अपने रूप में करने के लिए स्वतंत्र थे। जब १८३४ में निर्धन अधिनियम में संशोधन किया गया तो कुछ मात्रा में केन्द्रीय नियंत्रण को लागू किया गया, किन्तु १८३५ के नगर निगम अधिनियम ने केन्द्रीय नियंत्रण की ओर थोड़ा ही ध्यान दिया था। १८४८ के जन स्वास्थ्य अधिनियम द्वारा केन्द्रीय नियंत्रण के प्रसार का कुछ प्रयास किया गया किन्तु जनमत केन्द्रीय नियंत्रण के पक्ष में नहीं था। समय के साथ-साथ ज्यों-ज्यों केन्द्रीय सरकार द्वारा स्थानीय सत्ताओं को दिये जाने वाले अनुदान की मात्रा बढ़ती गई, त्यों-त्यों उसके नियंत्रण का भी प्रसार होता चला गया। अनुदान व्यवस्था आज भी स्थानीय सत्ताओं की क्रियाओं को नियंत्रित करने का महत्वपूर्ण साधन है।

प्रशासकीय नियंत्रण के प्रायः अनेक रूप होते हैं, किन्तु इनमें से प्रत्येक रूप कानूनी सत्ता पर आधारित रहता है। जब कभी केन्द्रीय नियंत्रण के प्रसार का अध्ययन किया जाय तो यह देखना उपयोगी रहेगा कि कानून द्वारा कौन-कौन सी शक्तियां सौंपी गई हैं। ये शक्तियां केन्द्र सरकार या ह्वाइट हॉल (White Hall) को दी जाती हैं किन्तु कानून एवं व्यावहारिक दृष्टि से ये शक्तियां किसी विशेष मंत्री को सौंपी जाती हैं। किन्तु इसका अर्थ यह कदापि नहीं होता कि स्थानीय सरकार से सम्बन्धित समस्त शक्तियां उसी को सौंप दी जाती हैं। शिक्षा से सम्बन्धित शक्तियां शिक्षा मंत्री को दी जाती हैं और इसी प्रकार स्वास्थ्य से सम्बन्धित सेवायें स्वास्थ्य मंत्री को सौंपी जाती हैं।

प्रशासकीय नियंत्रण के रूप:—सरकारी विभागों द्वारा स्थानीय सत्ताओं पर जो नियन्त्रण रखा जाता है, उसके कई रूप हो सकते हैं जिनका संक्षिप्त अध्ययन केन्द्रीय नियंत्रण के अध्ययन को सार्थक बनाने की दृष्टि से उपयोगी रहेगा।

(१)प्रशाकीय नियंत्रण का प्रथम रूप सामान्य नियंत्रण (General Supervision) है। केन्द्रीय विभागों को कानून द्वारा उनके अधिकार क्षेत्र में आने वाली सेवाओं की कार्यकुशलता के लिए उत्तरदायी ठहराया जाता है। संसद द्वारा कुछ मन्त्रियों को स्थानीय सत्ताओं पर सामान्य एवं प्रत्यक्ष पर्यवेक्षण रखने का उत्तरदायित्व सौंपा जाता है। उदाहरण के लिए स्वास्थ्य मंत्रालय को इंगलैण्ड तथा वेल्स की जनता के स्वास्थ्य को सुधारने के लिए स्थापित किया गया है, गृह विभाग को पुलिस प्रशासन के लिए संगठित किया गया है। इसी प्रकार १९४४ के शिक्षा अधिनियम ने शिक्षा मंत्रालय को यह दायित्व सौंपा है कि वह इंगलैण्ड तथा वेल्स के लोगों की शिक्षा को प्रोत्साहन दे तथा इस लक्ष्य में संलग्न संस्थाओं का प्रगतिशील विकास करे। वह प्रत्येक क्षेत्र में भिन्न रूप एवं व्यापक शिक्षा सेवायें प्रदान करने के लिए राष्ट्रीय नीति को उन स्थानीय सत्ताओं द्वारा क्रियान्वित कराये जो कि उसके नियन्त्रण एवं निर्देशन में हैं। इस प्रकार शिक्षा मंत्री को स्थानीय कार्यों में हस्तक्षेप करने का स्पष्ट अधिकार सौंपा गया है। जहां कानून द्वारा किसी मन्त्री को स्पष्ट रूप से स्थानीय कार्यों में हस्तक्षेप करने की शक्तियां नहीं सौंपी गई हैं वहां भी प्राय: यह प्रवृत्ति देखी जाती है कि मन्त्री गण अपने अधिकार क्षेत्र में आने वाले कार्यों में हस्तक्षेप करते हैं। वे उनको सौंपी गई सेवाओं के लिए सामान्य रूप से उत्तरदायी होते हैं और इसलिए पदप्रदर्शक, दार्शनिक, मित्र एवं प्रोत्साहन कर्त्ता के रूप में शक्तियों के स्थानीय स्तर पर क्रियान्विति के लिए उत्तरदायी सत्ताओं को सहयोग प्रदान करते हैं। इस रूप में उनकी प्रकृति को उनके द्वारा वार्षिक रूप से दिये जाने वाले प्रतिवेदनों एवं अवसरगत विशेष प्रतिवेदनों में देखा जा सकता है।

मन्त्रालय द्वारा राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों की सिफारिशें स्थानीय सत्ताओं को भेजी जाती हैं ताकि उनको समय के अनुकूल बनाये रखा जा सके। यह भी व्यवस्था की गई है कि विभाग स्थानीय सत्ताओं को उनके कार्यों की सूचना एवं प्रतिवेदन प्रस्तुत करने को कह सके। केन्द्रीय विभाग समय-समय परामर्शपूर्ण एवं स्पष्टीकरणपूर्ण पत्र या आदेश भी स्थानीय सत्ता को भेजते रहते हैं। जब सभी स्थानीय सत्ताओं से उनकी प्रगति एवं कार्य से सम्बन्धित सांख्यिकी प्राप्त हो जाती है तो उसका तुलनात्मक रूप में अध्ययन किया जाता है और कुछ सुझावपूर्ण निर्णय लिए जाते हैं। आवश्यकता के समय स्थानीय सत्ता को केन्द्रीय सरकार द्वारा परामर्श एवं निर्देशन प्रदान किया जाता है। स्थानीय समस्याओं के सम्बन्ध में जांच समितियां अथवा परामर्शदाता निकाय गठित किये जाते हैं। कई एक स्थानीय सत्ताओं के व्यय का विश्लेषण किया जाता है तथा उसे प्रकाशित किया जाता है। केन्द्रीय विभाग द्वारा इस बात की भी पूरी निगरानी की जाती है कि उसने जो परामर्श दिया है अथवा नवीन व्यवस्थापन

किया गया है उसका स्थानीय सत्ता पर क्या और कितना प्रभाव पड़ा ? अपने निरीक्षण के आधार पर ही वह नवीन नीतियां तय करता है। स्थानीय सत्ता को इस व्यवस्था के परिणामस्वरूप कभी-कभी दबना पड़ता है तथा अपनी स्वेच्छा के अधिकारों को सीमित करना होता है किन्तु असल में यह कई बार उनके लिए अत्यन्त उपयोगी भी सिद्ध होता है। स्थानीय सत्ता समय पर तुरन्त उच्च श्रेणी की सूचना प्राप्त कर पाती है जिसे वैसे प्राप्त करने के लिए पर्याप्त धन खर्च करना होता है। प्रोफेसर फाईनर लिखते हैं कि इस सबके परिणामस्वरूप स्थानीय प्रशासन में सुधार हुआ है, केन्द्रीय सत्ताओं का ज्ञान बाढ है, स्थानीय सत्ताओं का तथा उनको केन्द्रीय विभागों की ओर ऐसे सहायक के रूप में देखने को प्रेरित किया है जो कि स्थानीय सरकार में सुधार से सम्बन्धित है।*

जब कभी स्थानीय सत्ता अपनी शक्तियों का प्रसार करने के लिए विधेयक रखना चाहती है तो ऐसा करने से पूर्व मन्त्री की स्वीकृति लेना अनिवार्य होता है। जब तक गृह एवं स्थानीय सरकार मन्त्री की स्वीकृति न ली जाये उस समय तक इस प्रकार के विधेयक को आगे नहीं बढ़ाया जा सकता। विधेयक पर विचार कर लेने के बाद भी मन्त्री उस पर सामान्य पर्यवेक्षण रख सकता है। वह चाहे तो संसद में उस विधेयक के प्रस्तावों की उपयोगिता पर भाषण दे।

(२) केन्द्रीय विभागों को स्थानीय सत्ताओं से सम्बन्धित वित्तीय नियन्त्रण के व्यापक अधिकार प्राप्त हैं। केन्द्रीय सरकार को यह अधिकार है कि वह सामान्य अनुदानों के भुगतान को कम कर दे या बन्द करदे। इस शक्ति के कारण केन्द्रीय सत्ता स्थानीय सरकार पर अत्यन्त दबाव का प्रयोग कर सकती है। तथ्यपूर्ण अध्ययन के आधार पर यह ज्ञात होता है कि स्थानीय सरकार की सेवाओं का लगभग आधा भाग सहायता अनुदान द्वारा दिया जाता है। जब केन्द्रीय सरकार को यह शक्ति प्रदान कर दी गई है कि वह अपनी इच्छानुसार कभी भी इस सहायता अनुदान को रोक दे या कम करदे तो स्पष्ट है कि वह स्थानीय मामलों में महत्वपूर्ण रूप से हस्तक्षेप कर सकती है। इस सम्बन्ध में कोई कदम उठाने से पूर्व केन्द्रीय सरकार पहले यह निर्णय लेती है कि क्या स्थानीय सत्ता सेवा के कम से कम स्तर को बनाए रखने में असफल रही है अथवा उसको दी जाने वाली सहायता की मात्रा बहुत अधिक या अबुद्धिपूर्ण है। यह नियन्त्रण का सर्वाधिक महत्वपूर्ण उपाय है। इसका अस्तित्व ही पर्याप्त प्रभावशील रहता है तथा इसका प्रयोग करने की आवश्यकता ही उत्पन्न नहीं होती। आर० एम० जैक्सन महोदय लिखते हैं कि इस शक्ति को सुरक्षित के रूप में प्रयुक्त करना

---

*"All this improves local administration, adds to the knowledge of the central authorities, evokes the gratitude of the local authorities, and leads them to look to the Central Department as benevolently concerned with the improvement of Local Government."

—*Herman Finer*, Op. cit., P. 308.

चाहिए और इसका प्रयोग करते समय संसद की राय जानना जरूरी होता है।*

(३) केन्द्रीय सरकार द्वारा स्थानीय सत्ताओं पर एक अन्य नियन्त्रण उनकी कर्ज लेने की शक्ति पर रखा जाता है। स्थानीय सत्ताओं को यह अधिकार है कि वे नए कार्यों जैसे स्कूलों एवं गृह-निर्माण पर, जिसका कि एक लम्बा जीवन होता है और जिससे प्राप्त होने वाला फायदा भविष्य में मिलने वाला है, होने वाले खर्चे की व्यवस्था कर्ज लेकर कर सकती हैं। प्रायः ऐसा होता है कि जब कभी स्थानीय सत्ता कर्ज लेना चाहे तो उसे ऐसा करने के लिए गृह-निर्माण एवं स्थानीय सरकार मन्त्री की स्वीकृति लेनी होती है। इस प्रकार मन्त्री को परिषद की प्रमुख नीति पर पर्यवेक्षण रखने का विस्तृत अधिकार रहता है। यह पर्यवेक्षण छोटी सत्ताओं के सम्बन्ध में अधिक जरूरी होता है क्योंकि वे अधिक योग्य स्टाफ की नियुक्ति नहीं कर सकतीं। जब कभी किसी कार्यक्रम की वित्तीय व्यवस्था के लिए आवश्यक कर्ज पर मन्त्री की स्वीकृति प्राप्त की जाती है तो इस अवसर पर मन्त्रालय के योग्य विशेषज्ञ उस प्रोजेक्ट की देखभाल करते हैं। यह तर्क दिया जाता है कि बड़ी स्थानीय सत्ताओं को बिना मन्त्रालय की स्वीकृति के ही कर्ज लेने की अनुमति प्रदान की जानी चाहिए। वर्तमान प्रवृति के अनुसार स्थानीय सत्ताएं पूंजीगत व्यय के अपने छोटे विषयों का प्रबन्ध साधारण आय द्वारा कर लेते हैं और इसलिए उनको कर्ज लेने की जरूरत नहीं होती तथा साथ ही मन्त्री का हस्तक्षेप भी हट जाता है।

स्थानीय सत्ताओं पर उनकी कर्जा लेने की शक्ति की दृष्टि से केन्द्रीय द्वारा दो प्रकार से नियन्त्रण रखा जाता है। प्रथम, ये सत्ताएं केवल कुछ [illegible] नियमों के अनुसार ही कर्ज ले सकती हैं जिसमें कि उसके उद्देश्य को परिभाषित किया जाता है तथा भुगतान का अधिक से अधिक समय भी बता दिया जाता है और दूसरे, केन्द्रीय विभागों द्वारा कार्यक्रम एवं कर्ज के अवसर को स्वीकृति दी जाती है तथा उसके भुगतान के समय में भी वह स्वेच्छापूर्ण शक्तियों का प्रयोग करता है। कर्ज के सम्बन्ध में स्वीकृति देने की सत्ता मुख्य रूप से स्वास्थ्य मन्त्रालय में निहित होती है, यद्यपि अन्य विभागों द्वारा भी इस पर सामान्य अधीक्षण रखा जाता है। यहां दो बातें मुख्य रूप से उल्लेखनीय हैं। प्रथम यह कि कर्ज की अनुमति देने की शक्ति एक ही विभाग में केन्द्रित कर दी गई है और दूसरे यह कि कुछ सामान्य सिद्धान्त अपनाए गए हैं जिनके आधार पर केन्द्रीय विभाग स्वीकृति देने अथवा रोकने का कार्य करते हैं। एक विभाग में इस शक्ति को केन्द्रित करने के पक्ष में बताते हुए स्वास्थ्य मन्त्रालय ने कहा कि कर्ज की स्वकृति देने की शक्ति एक विभाग में केन्द्रित करने के पीछे पर्याप्त संगत कारण है क्योंकि यहां पर

---

*"It should be regarded as being is reserve and its use is subject to very important safe-guard of the matter having to be brought before parliament."

मात्र रास्ता है जिसके द्वारा एक स्थानीय सत्ता की पूरी वित्तीय व्यवस्था को प्रभावशाली रूप से पुनरीक्षित किया जा सकता है। इसे वास्तविक मितव्ययता के पक्ष में माना जाता है अर्थात् धन को इस प्रकार खर्च किया जाए कि उससे अधिक से अधिक उपयोगिता प्राप्त की जा सके। यह लक्ष्य तभी पूरा किया जा सकता है जबकि केन्द्रीय सत्ता स्थानीय व्यय को एक व्यवस्थित रूप प्रदान करे।

सन् १६१८ की सरकार के यन्त्र की समिति ने यह प्रस्ताव रखा कि कर्जों की स्वीकृति प्रदान करने के लिए उत्तरदायी सत्ता ट्रेजरी होनी चाहिए। इस प्रस्ताव के कुछ लाभ भी थे क्योंकि ट्रेजरी में अधिक लोग वित्तीय विशेषज्ञ होते हैं और यह अन्य विभागों की अपेक्षा धन सम्बन्धी बजारों में अधिक संलग्न रहती है। जिन सिद्धान्तों को मन्त्रालय द्वारा कर्जा स्वीकृत करने में अपनाया जाता है वे सामान्य प्रशासकीय सिद्धान्त होते हैं। मन्त्रालय को यह सन्तोष होना चाहिए कि प्रस्तावित खर्चा जिस कार्य के लिए लिया जा रहा है वह कार्य आवश्यक है। उसको उचित रूप से तथा भली प्रकार से नियोजित किया गया है तथा सत्ता की वित्तीय स्थिति ऋण लेने के लिए बाध्य करती है। कर्ज के सम्बन्ध में निर्णय लेते समय मन्त्रालय द्वारा स्थानीय सत्ता के क्षेत्र, जनसंख्या, कर योग्य मूल्य, वर्तमान समय में लगाए गए कर, वर्तमान कर्जा, काम में न ली गई कर्जे की शक्तियां, प्रतिबन्धों के आर्थिक शक्तियों की दूरी तथा नियोजन आदि के सम्बन्ध में सूचना प्राप्त की जाती है। स्वास्थ्य मन्त्रालय कर्ज लेने के सिद्धान्तों पर स्थानीय सत्ता को बुद्धिपूर्ण परामर्श देता है और प्राय: उसके प्रत्येक वार्षिक प्रतिवेदन में इसके उदाहरण प्रस्तुत किए जाते हैं। कई एक लेखकों ने यह सुझाव दिया है कि राष्ट्रीय वित्तीय स्थायित्व की दृष्टि से स्थानीय परिषदों की कर्ज लेने की शक्ति पर कठोर नियन्त्रण रखना चाहिए किन्तु एक खतरा यह भी है कि स्थानीय प्रस्तावों की अधिक विस्तृत परीक्षा नौकरशाही के हस्तक्षेप को प्रोत्साहित करेगी और इस प्रकार केन्द्र केवल हस्तक्षेप के लिए हस्तक्षेप करेगा।

(४) केन्द्र द्वारा स्थानीय सत्ताओं पर नियन्त्रण का एक अन्य तरीका आडिट है। कानून के अनुसार सभी काउन्टीज, शहरी एवं देहाती जिलों एवं पेरिशों के लेखों को वार्षिक रूप से केन्द्रीय सत्ता के अधिकारियों अर्थात् जिला आडिटरों द्वारा आडिट किया जाता है। समय-समय पर असाधारण आडिट भी किए जाते हैं। कभी कभी देर करने से हानि की सम्भावना रहती है। ऐसी संकटकालीन स्थिति में कभी भी आडिट का प्रारम्भ किया जा सकता है। काउन्टी एवं गैरकाउन्टी बारोज के सामान्य लेखों का आडिट नहीं किया जाता किन्तु उनकी शिक्षा तथा गृह-निर्माण से सम्बन्धित लेखे आडिट किए जाते हैं। काउन्टी तथा गैरकाउन्टी बारोज अपने आपको स्वेच्छापूर्वक स्वास्थ्य मन्त्रालय के आडिट का विषय भी बना सकते हैं। यह कार्य हमेशा उनकी स्वेच्छा पर निर्भर नहीं करता किन्तु जब कभी एक स्थानीय सत्ता ऐसे वित्तीय संकट में पड़ जाए जिसकी सहायता के लिए केन्द्र सरकार द्वारा धन दिया जाना जरूरी हो तो ऐसी स्थिति में केन्द्र उस सत्ता को आवश्यक रूप से आडिट का विषय बना सकता है। यहां यह प्रश्न किया

कुछ स्थानीय सेवाओं के सम्बन्ध में सम्बन्धित मन्त्री द्वारा निरीक्षकों या अन्य अधिकारियों की नियुक्ति की जा सकती है जो कि सत्ताओं एवं मन्त्री के बीच सम्बन्ध बनाए रख सकें। उदाहरण के लिए शिक्षा मन्त्री काननी रूप से यह शक्ति रखता है कि वह निरीक्षक द्वारा यह मालूम करता रहे कि स्कूल की सीमाओं में दिए गए नियमों एवं निर्देशों का पालन किया जाता है अथवा नहीं। गृह सचिव भी स्थानीय सत्ताओं की अग्नि सेवाओं तथा पुलिस सेवाओं का निरीक्षण करने के लिए निरीक्षक नियुक्त करता है। वैसे स्थानीय सरकार को निरीक्षित करने की केन्द्रीय सरकार के पास कोई सामान्य शक्ति नहीं है। विभिन्न सेवाओं के लिए जो निरीक्षक नियुक्त किए जाते हैं उनको स्वतन्त्र स्तर प्रदान करने के लिए उन्हें क्राउन द्वारा नियुक्त किया जाता है। मन्त्री द्वारा सहायक निरीक्षकों की नियुक्ति की जाती है। निरीक्षकों का कार्य केवल यह है कि वे जो कुछ देखें उसके सम्बन्ध में प्रतिवेदन दे दें। उनको किसी प्रकार की अनुशासनात्मक शक्ति प्राप्त नहीं होती। यदि निरीक्षकों द्वारा किसी असन्तोषजनक स्थिति का पता लगाया जाए तो यह शक्ति मन्त्रियों की होगी कि वे उठाए जाने वाले उपयुक्त कदम के बारे में विचार करें। वैसे निरीक्षकों द्वारा पर्याप्त परामर्श प्रदान किया जाता है। वे व्यापक अनुभव एवं सम्मान वाले लोग होते हैं। जहां कहीं मन्त्री को एक सेवा का निरीक्षण करने की शक्ति नहीं होती वहां भी वह सेवा को निरीक्षित करने तथा पर्यवेक्षित करने के लिए एक अधिकारी की नियुक्ति करके पर्याप्त प्रभाव का उपयोग कर सकता है। कुछ लेखकों के विचारानुसार ये अधिकारी सत्ताओं को केवल सुझाव या परामर्श ही प्रदान नहीं करते वरन् ये मन्त्री के आंख और कान होते हैं। विभागीय नीति के बारे में उनके सामने जो मत व्यक्त किए जाते हैं और वे जो कुछ भी देखते हैं उस सबको अपने प्रतिवेदन में स्थान देते हैं। वे कम कार्यकुशल सत्ताओं को ऐसे तरीकों का सुझाव देते हैं जो कि अधिक सफल सत्ताओं द्वारा अपनाए जा रहे हैं और ऐसा करके वे सेवा के स्तर को ऊंचा उठाने का प्रयास करते हैं।

जब कभी एक स्थानीय सत्ता किसी कार्य को करने के लिए या धन उधार देने के लिए कोई प्रस्ताव करती है तो मन्त्री अपना निर्णय लेते समय निरीक्षक के प्रतिवेदन को आधार बनाता है। कई बार यह सम्भावना व्यक्त की जाती है कि निरीक्षण की व्यवस्था द्वारा स्थानीय सत्ताओं को यह अनुभव होने लगता है कि उनके ऊपर जासूसी की जा रही है और इसलिए केन्द्रीय विभाग तथा स्थानीय सत्ता के बीच सरलता से मनमुटाव पैदा हो सकता है। जहां तक शिक्षा सेवाओं का प्रश्न है उनके सम्बन्ध में इस सम्भावना को कम कर दिया गया है। इसका प्रथम कारण यह है कि केन्द्रीय विभाग स्थानीय शिक्षा सत्ता को अपना एक हिस्सेदार मानते हैं तथा हमेशा यह चाहते हैं कि शिक्षा सेवा के विभिन्न पहलुओं की परीक्षा के लिए परामर्शदाता समितियां नियुक्त करे। स्थानीय विशेषज्ञों को समिति के सम्मुख गवाहियां देने की सुविधा दी जाती है तथा शिक्षा मन्त्री प्रायः समिति की सिफारिशों को मान लेता है। दूसरे, शिक्षा मन्त्रालय अपनी इच्छा को स्थानीय शिक्षा सत्ता पर उस समय नहीं लादना चाहेगा जब तक कि कोई राष्ट्रीय नीति नहीं उलझती है।

(६) कानून द्वारा मन्त्रियों को अधीनस्थ व्यवस्थापन की जो शक्ति दी जाती है उसके द्वारा भी केन्द्रीय नियन्त्रण की मात्रा बढ़ जाती है। उदाहरण के लिए शहर एवं देश के नियोजन को लिया जा सकता है जहां कि दिन प्रति दिन के बहुत बड़े भाग को अनेक विनियमों द्वारा नियुक्त किया जाता है। ये विनियम अपने आप में किसी प्रशासकीय नियन्त्रण की रचना नहीं करते क्योंकि ये तो शुद्ध रूप से व्यवस्थापन होते हैं किन्तु इन विनियमों के द्वारा ही कुछ ऐसी अनुमतियां प्रदान की जाती हैं जिन्हें प्रशासकीय नियन्त्रण का जनक माना जा सकता है।

(७) जब कोई निश्चित प्रावधान नहीं होता तो स्थानीय सत्ता अपने कार्य को जैसा उपयुक्त समझती है उसी रूप में संगठित कर लेती है किन्तु इन कार्यों को करते समय उसे मन्त्री से प्राप्त 'निर्देशों के अनुसार कार्य करना होता है। एक सामान्य प्रावधान के अनुसार मन्त्री पड़ौस की स्थानीय सत्ताओं को इस बात के लिए मजबूर कर सकता है कि वे किसी विशेष उद्देश्य से संयुक्त निकाय की रचना करे और यदि सेवा के लिए छोटे निकाय की जरूरत है तो वह बड़ी स्थानीय सत्ता को छोटी सत्ताओं के लिए शक्ति हस्तान्तरित करने को कह सकता है। स्थानीय संगठन पर एक अन्य प्रकार का नियन्त्रण यह होता है कि कानून द्वारा यह व्यवस्था की जाए कि किसी भी समिति के संविधान को मन्त्री द्वारा स्वीकृत होना चाहिए। इसका अर्थ यह नहीं है कि मन्त्री समिति के वास्तविक नामों को स्वीकार करे किन्तु केवल यह है कि वह उनकी केवल संख्या एवं सामान्य बनावट के सम्बन्ध में निर्देश दे सकता है।

(८) स्थानीय सत्ताओं पर केन्द्रीय नियंत्रण का एक रूप यह है कि स्थानीय सत्ता को कई एक मामलों में निर्णय लेने से पूर्व केन्द्र की अनुमति प्राप्त करनी होती है। ऐतिहासिक रूप से इसको नियंत्रण का एक आधुनिकतम रूप माना जाता है। वर्तमान अधिनियमों की यह प्रवृत्ति है कि वे स्थानीय सत्ताओं को जो सेवायें सौंपते हैं उनके बारे में वे एक कार्य-क्रम की रचना को आवश्यक बना देते हैं। स्थानीय सत्ता अपने लिए निर्धारित कार्यक्रमों को सम्पन्न करने के लिए विस्तृत योजनायें बनाती है। ये सभी योजनायें विस्तृत रूप में उचित मंत्री के पास भेजी जाती हैं। मंत्री को यह अधिकार है कि वह संशोधन के साथ अथवा उसके बिना ही योजना को स्वीकार करे या न करे। इस प्रकार केन्द्रीय मन्त्रालय स्थानीय सत्ताओं के नवीन कार्यों का रूप निर्धारित करने में महत्वपूर्ण रूप से नियन्त्रण रखता है।

प्रोफेसर फाइनर के कथनानुसार केन्द्रीय विभाग को मुख्य रूप से चार क्षेत्रों में स्वीकृति की सत्ता (Sanctioning authority) प्राप्त है।* प्रथम, वह स्थानीय निकायों के क्षेत्र में परिवर्तन करने की स्वीकृति प्रदान करता है; दूसरे, उपकानूनों (Bye-laws); तीसरे, कानून द्वारा निर्धारित सेवाओं की क्रियान्विति की प्रशासकीय योजनायें तथा चौथे, स्थानीय सत्ता द्वारा लिये जाने वाले फीस एवं यात्री कर आदि के क्षेत्र में।

Herman Finer, Op. cit., P. 311.

स्थानीय सत्ताओं को या तो उनके संविधान द्वारा अथवा किसी विशेष कानून द्वारा उपकानून बनाने की शक्ति प्राप्त होती है। इस शक्ति का मूल आधार यह है कि क्षेत्र की समस्याओं पर तत्काल ही कुछ कार्यवाही करने के लिए इन सत्ताओं के हाथ में कुछ अधिकार होना चाहिए ताकि होने वाली देरी के कारण असुविधायें एवं नवीन समस्यायें उत्पन्न न हो जायें। उपकानूनों के माध्यम से स्थानीय सत्ता लाउडस्पीकर एवं बेतार के तार आदि द्वारा होने वाली असुविधा को रोकने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठाती हैं। स्थानीय सत्ताओं को ये शक्तियां यदि निर्बाध रूप से प्रयुक्त की जायें तो कई एक समस्यायें पैदा कर देती हैं। अत: उचित यह समझा जाता है कि सरकार के आधीनस्थ क्षेत्रों को कुछ राष्ट्रीय सिद्धान्तों का विषय बनाया जाये। इस दृष्टि से उपकानून बनाने की स्थानीय सत्ताओं की शक्ति को दो प्रकार के नियन्त्रण का विषय बनाया जाता है अर्थात प्रशासकीय नियन्त्रण एवं न्यायिक नियन्त्रण। इस नियन्त्रण का पर्याप्त महत्व होता है। केन्द्रीय सत्ताओं का व्यापक अनुभव यह सम्भव बनाता है कि निर्णय लेने में अथवा कानून बनाने में गलती न की जाये तथा स्थानीय सत्ता अपने लक्ष्य को आसानी से प्राप्त कर सके। केन्द्रीय सरकार द्वारा जो आदर्श या नमूने के उपकानून बनाये गये हैं वे सैकड़ों ही सत्ताओं के प्रस्तावों पर तथा लम्बे अनुभव पर आधारित हैं। कोई भी स्थानीय सत्ता अपने मौलिक उपकानून को स्वीकृत कराने में कठिनाई का अनुभव करती है क्योंकि प्रत्येक उपकानून पर विचार करते समय केन्द्रीय विभाग परम्पराओं की मांग करते हैं।

उपकानूनों पर नियन्त्रण का एक अन्य साधन कानून का न्यायालय है। उपकानून बनाने की शक्ति कानून द्वारा प्रदान की जाती है और इस अर्थ में इसे अधीनस्थ व्यवस्थापन भी माना जा सकता है। इसे बुद्धिपूर्ण होना चाहिए। यदि वह ऐसा नहीं है तो न्यायालय द्वारा अनुचित करार दिया जा सकता है।

स्थानीय सत्ताओं द्वारा कुछ जन-उपयोगी सेवाओं को प्रशासित किया जाता है। इसके सम्बन्ध में जो कीमत उपभोक्ताओं से वसूल की जाती है उस पर मन्त्री की पूर्व स्वीकृति अनिवार्य है। इस प्रकार श्मशान फीस, बाजार कर, अधिक गृह कर आदि के सम्बन्ध में स्वास्थ्य मंत्रालय को सत्ता सौंपी गई है। सामान्य रूप से यह कहा जा सकता है कि केन्द्रीय सत्ता को अधिकतम कीमत निश्चित करने का अधिकार दिया गया है। ऐसा करते समय केन्द्रीय सत्ता दो बातों का ध्यान रखती है। प्रथम तो यह कि सेवा कहीं घाटे में न चली जाये और दूसरे, यह कि लाभ थोड़ा ही हो तथा जनता के कन्धों पर अधिक भार न पड़े।

(९) कानून द्वारा मंत्री को स्थानीय सरकार अधिकारियों की नियुक्ति, वेतन एवं पदविमुक्ति आदि के सम्बन्ध में कुछ नियंत्रण रखने का अधिकार दिया गया है। उदाहरण के लिए काउन्टी परिषद क्लर्क का वेतन मंत्री द्वारा स्वीकृत किया जाता है तथा उसको बिना मंत्री की स्वीकृति के हटाया नहीं जा सकता। इसी प्रकार काउन्टी के स्वास्थ्य के मैडी[illegible] [illegible]धिकारी [illegible] योजनायें [illegible]त्री द्वारा निर्धारित की जाती हैं इसी प्रकार [illegible] [illegible]विमुक्त करते समय

मंत्री की स्वीकृति ली जाती है। अन्य स्थानीय सत्ताओं के कई एक अधिकारियों के सम्बंध में भी केन्द्रीय सत्ता के नियंत्रण की व्यवस्था की गई है। यह नियंत्रण इस बात पर निर्भर करता है कि वे स्थानीय सत्तायें उन सेवाओं के लिए केन्द्रीय अनुदान प्राप्त करती हैं अथवा नहीं। पहले स्थानीय शिक्षा सत्ता को यह अधिकार दिया गया था कि वह स्वेच्छापूर्वक जिसे चाहे उसी को शिक्षा अधिकारी के पद पर नियुक्त कर दे। इस पद के लिए कोई निश्चित योग्यता नहीं थी। परम्परागत रूप से उम्मीदवार के पास विश्वविद्यालय की डिग्री हो तथा कुछ अध्यापन का अनुभव हो एवं कुछ प्रशासकीय अनुभव हो। किन्तु सन् १९४४ के शिक्षा अधिनियम ने स्थानीय शिक्षा सत्ता के कर्तव्यों को बताते हुए कहा कि सत्ता के मुख्य शिक्षा अधिकारी के पद पर वह किसी उपयुक्त व्यक्ति को नियुक्त करे किन्तु कोई भी स्थानीय सत्ता इस प्रकार की नियुक्ति बिना मन्त्री से पूर्व विचार किए नहीं कर सकती और जब मन्त्री से इस प्रकार का विचार-विमर्श करना हो तब वह सत्ता मन्त्री के पास उम्मीदवारों के नाम, पूर्व अनुभव, योग्यताएं एवं अन्य परिचयात्मक सूचनाएं भेजती हैं लेकिन मन्त्री के मतानुसार इस प्रकार प्रस्तुत व्यक्तियो के नामों में कोई भी योग्य नही है तो वह इस प्रकार की नियुक्तियों को रोकने के लिए निर्देश जारी कर सकता है। इस प्रावधान को व्यावहारिक रूप में स्थानीय सत्ता मन्त्री की स्वीकृति के लिए प्रस्तुत करती है और मन्त्री उसमें से योग्यता के आधार पर उम्मीदवारों के सम्बन्ध में अपना मत प्रकट करता है। मन्त्री को यह अधिकार है कि वह किसी भी व्यक्ति की योग्यताओं के बारे में सन्देह करके उसके नाम को काट सके। वह इन नामों को उस समय तक काटता रह सकता है जब तक कि उसे सन्तोषजनक सूची प्राप्त न हो।

स्थानीय अधिकारियों के सम्बन्ध में केन्द्रीय सरकार का नियन्त्रण रखने के पीछे कई कारण हैं। प्रथम यह है कि किसी भी स्थानीय प्रशासकीय निकाय पर विश्वास नहीं किया जा सकता कि वह पर्याप्त सुयोग्य अधिकारियों की नियुक्ति कर सकेगी तथा उस प्रकार का वेतन प्रदान कर सकेगी जो कि योग्य उम्मीदवारों को आकर्षित कर सके। दूसरे, ग्रेट ब्रिटेन में यद्यपि स्थानीय अधिकारियों के ऊपर नियन्त्रण रखा गया है किन्तु फिर भी यह नियन्त्रण इतना नहीं है कि वह उन अधिकारियों को केन्द्रीय सरकार का केवल एजेन्ट मात्र बना दे।

रखता हो। ऐसी स्थिति में दोनों ही पक्षों द्वारा अपनी-अपनी बात कही जाती है और इन बातों के आधार पर निरीक्षक एक व्यक्तिगत प्रतिवेदन तैयार करता है और मन्त्रालय उस पर निर्णय लेता है। कई एक व्यक्तियों द्वारा जिनमें कि मुख्य रूप से वकील लोग शामिल हैं, यह मत प्रकट किया जाता है कि अपील की यह प्रक्रिया उचित नहीं है क्योंकि इससे असल में यह ज्ञात नहीं हो पाता कि निर्णय किसके द्वारा लिया गया है। इस प्रक्रिया में यह भी सम्भावना रहती है कि निर्णय दी गई गवाहियों के आधार पर न लिए जाएं किन्तु उन तथ्यों के आधार पर लिए जाएं जो कि कार्यालय की फाईलों में हैं तथा जो प्रार्थी के लिए अज्ञात हैं। यह समस्या अत्यन्त जटिल है और इस पर निर्णय लेने के लिए अधिकारियों की एक समिति को नियुक्त किया गया। वास्तविक कठिनाई यह है कि इसके निर्णयों की प्रकृति कुछ न्यायिक होती है जिसमें कि प्राय: नीति के प्रश्न भी उलझ जाते हैं।

जब दो या दो से अधिक स्थानीय सत्ताओं के बीच कोई झगड़ा उत्पन्न हो जाए तो उसका निर्णय करने की शक्ति अनेक अधिनियमों द्वारा मंत्री को सौंपी गई है। इस शक्ति के माध्यम से केन्द्रीय सरकार सत्ताओं के बीच के सम्बन्धों को नियमित करती है। स्वास्थ्य मन्त्रालय को यह अधिकार दिया गया है कि दो स्थानीय शिक्षा संस्थाओं के बीच झगड़ा उत्पन्न होने पर तथा स्थानीय शिक्षा संस्था एवं स्कूल प्रबन्धक के बीच मतभेद उत्तपन्न होने पर की जाने वाली अपीलों के बारे में विचार करे। शिक्षा मंत्रालय की भांति स्वास्थ्य मन्त्रालय और दूसरे विभागों को भी इस सम्बन्ध में महत्वपूर्ण शक्तियां प्राप्त हैं। यह व्यवस्था झगड़ों एवं मतभेदों को तय करने के लिए अत्यन्त उपयोगी मानी जाती है क्योंकि केन्द्रीय विभाग को किसी अन्य पंचालय की अपेक्षा स्थिति की अधिक जानकारी होती है और यह प्रक्रिया अन्य न्यायिक प्रक्रियाओं की तुलना में कम खर्चीली होती है। कई एक मामलों में विभागों की अपील की शक्तियां अन्तिम एवं वाध्यकारी होती हैं। उनके निर्णय के विरुद्ध किसी न्यायालय में कार्यवाही नहीं की जा सकती। कुछ विषय ऐसे हैं जिनके सम्बंध में न्यायालय भी बोल सकता है।

(११) व्यवस्थापन द्वारा प्राय: मन्त्रियों को यह शक्ति दी जाती है कि यदि स्थानीय सत्ता कोई कार्यवाही करने में असफल रहे तथा वह अपने उत्तरदायित्वों को सन्तोषजनक रूप से पूरा न कर सके तो वह उसके विरुद्ध कार्यवाही करे। इन शक्तियों को अवहेलना की शक्तियां (Default Powers) कहा जाता है। केन्द्रीय सत्ता, स्थानीय सत्ता को अपने कर्त्तव्यों का निर्वाह करने में वाध्य बनाने के लिए परमादेश का लेख जारी कर सकती है जो कि एक प्रकार से स्थानीय सत्ताओं को उनके कानूनी कर्त्तव्यों को सम्पन्न करने की आज्ञा होती है। सन् १८७५ के जन-स्वास्थ्य अधिनियम के सम्भाग २९९ में अवहेलना की इन शक्तियों का वर्णन किया गया है। इसके द्वारा स्वास्थ्य मन्त्रालय को यह शक्ति दी गई कि वह भुलाए गए कर्त्तव्यों को सम्पन्न करने की दिशा में कदम उठा सके। जो व्यक्ति सम्भावित सेवा में रुचि लेता है वह मन्त्रालय के सम्मुख अपनी शिकायत प्रस्तुत करेगा। ऐसी स्थिति में मन्त्रालय उस कार्य को पूरा करने के लिए व्यक्तियों को नियुक्त

करने की शक्ति रखता है। साथ ही वह यह भी निर्देश जारी कर सकता है कि की जाने वाली सेवा में जो खर्चा होगा और नियुक्त व्यक्तियों को जो वेतन दिया गया, उस सारे खर्चे को सम्बन्धित स्थानीय सत्ता द्वारा दिया जाए। इस प्रकार के आदेश को यदि जरूरी हो तो न्यायालय द्वारा भी प्रभावी बनाया जा सकता है। इस प्रकार की सेवा सम्पन्न करने के लिए नियुक्त व्यक्ति वे सारे अधिकार रखते हैं जो कि सम्बन्धित स्थानीय सत्ता के उस सम्बन्ध में हैं किन्तु वे कर संग्रह नहीं कर सकते।

अवहेलना की शक्तियों के प्रयोग का एक अन्य रूप यह भी हो सकता है कि जब मन्त्री यह देखे कि एक स्थानीय सत्ता ने वह कार्य नहीं किया है जो कि उसे करना चाहिए था तो वह एक ऐसा आदेश जारी कर सकता है कि वे इस कार्य को सम्पन्न करें। इस आज्ञा को जब स्थानीय सत्ता द्वारा नहीं माना जाता है तो मन्त्री न्यायालय द्वारा परमादेश का लेख जारी करा सकता है। स्थानीय सत्ता द्वारा अपने कर्त्तव्यों की अवहेलना किए जाने पर मन्त्री एक कदम यह भी उठा सकता है कि वह उन शक्तियों को सत्ता से छीन ले। ऐसा भी प्रावधान है कि मन्त्री उन शक्तियों को अन्य स्थानीय सत्ता के लिए सौंप दे। द्विसूत्रीय स्थानीय सरकार की व्यवस्था में सामान्यत: यह प्रावधान पाया जाता है कि यदि निम्न सूत्र कर्त्तव्यों की अवहेलना का दोषी पाया जाए तो इसकी शक्तियां बड़ी सत्ता को सौंपी जा सकती हैं। जब स्थानीय सत्ता न्यायालय के आदेशों का पालन नहीं करती तो इसे न्यायपालिका की अवहेलना समझा जाता है। नियन्त्रण के इस प्रकार के तरीकों को बहुत कम काम में लाया जाता है। इनको केन्द्रीय सत्ता भी काम में लाना पसन्द नहीं करती। केवल गम्भीर स्थिति उत्पन्न हो जाने पर ही ये काम में लाए जाते हैं। कुछ लोगों का कहना है कि अवहेलनापूर्ण कार्यों के सम्बन्ध में उठाए जाने वाले ये कदम स्थानीय सत्ताओं के क्षेत्र में प्रत्यक्ष हस्तक्षेप कहे जा सकते हैं। इनको असंवैधानिक रूप से स्थानीय स्वायत्त सरकार की परम्पराओं का उलंघन कहा जा सकता है। केन्द्रीय सत्ता अपनी इच्छाओं को क्रियान्वित करने के लिए प्राय: इनका प्रयोग नहीं करती किन्तु जब कभी उसे चुनौतियां दी जाती हैं तो वह उनको बाध्य हो कर अपनाती है। अवहेलनापूर्ण कार्यों के सम्बन्ध में किस कदम को उठाया जाएगा, इस बात का निर्णय करते समय कई एक बातों को ध्यान में रखा जाता है।

प्रथम बात यह ध्यान में रखी जाती है कि यदि मन्त्रालय स्थानीय सत्ता के अधिकारों को अपने हाथ में ले लेता है तो क्या वह उनको सम्पन्न कर पाएगा। यदि वह सम्पन्न करने में कठिनाई का अनुभव करे तो हो सकता है कि स्थिति और भी अधिक बिगड़ जाए। शिक्षा-सेवाओं को इसके उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। यह कहा जाता है कि यदि शिक्षा सत्ता अपने कर्त्तव्यों को करने में असफल हो जाए तो उन्हें केन्द्रीय सत्ता द्वारा सम्भालना अधिक सुविधाजनक नहीं रहेगा क्योंकि स्कूलों का संचालन करने में मन्त्रालय अनेक प्रकार की कठिनाइयों में उलझ जाएगा। शिक्षा-मन्त्रालय के पास अध्यापकों का इतना स्टाफ भी नहीं होता कि वह उचित रूप से इन नए दायित्वों का निर्वाह कर सके। ऐसी स्थितियों में तथा इस

प्रकार की सेवाओं के सम्बन्ध में यह उचित समझा जाता है कि मन्त्री सत्ता को अवहेलनापूर्ण (Default) घोषित कर दे तथा यह आदेश जारी करे कि उस सत्ता को क्या करना चाहिए। यदि वह सत्ता उन कार्यों को सम्पन्न न करे तो मन्त्री न्यायालय के द्वारा परमादेश की आज्ञा जारी करा दे। कुछ ऐसी भी सेवाएं होती हैं जिनको सम्पन्न करने की शक्ति एवं सामर्थ्य मन्त्री में होती है। उदाहरण के लिए नागरिक-सुरक्षा को प्रस्तुत किया जा सकता है। जब कभी अवहेलनापूर्ण शक्तियों का प्रयोग किया जाता है तो स्थानीय सत्ता किसी प्रकार से वित्तीय लाभ में नहीं रहती। इन सेवाओं का संचालन चाहे स्वयं उनके द्वारा किया जाए अथवा केन्द्रीय मन्त्रालय द्वारा, उसके व्यय का भार अन्तिम रूप से स्थानीय सत्ता द्वारा ही वहन किया जाता है। जब केवेन्ट्री (Coventry) नगर में नागरिक-सुरक्षा सेवाएं सीधे गृह कार्यालय द्वारा प्रदान की गईं तो भी इनका खर्चा स्थानीय सत्ता द्वारा ही दिया गया था। प्रावधान के अनुसार समय पर मन्त्री इन सेवाओं के लिए स्वयं धन खर्च कर सकता है क्योंकि यह धन क्राउन का धन होता है इसलिए वह इसे वापस लेने का अधिकार रखता है। यदि स्थानीय सत्ता इस धन को प्रदान न करे तो केन्द्रीय सत्ता द्वारा अन्य प्रकार के दबावों को काम में लाया जा सकता है। यदि इन अवहेलनापूर्ण शक्तियों का प्रयोग करने के कारण कोई स्थानीय सत्ता कर्जदार हो जाए तो उसको दिए जाने वाले अनुदान का उतना भाग रोक लिया जाएगा।

प्रशासकीय नियन्त्रण का सामान्य प्रभाव [The General Effect of Administrative Control]—प्रशासकीय नियन्त्रण के विभिन्न साधनों का प्रयोग करके केन्द्रीय सत्ता स्थानीय सत्ताओं के क्षेत्र में पर्याप्त महत्वपूर्ण हस्तक्षेप का अधिकार रखती है। मन्त्रियों को जिन मामलों की सूचना दी जाती है वे उनमें हस्तक्षेप कर सकते हैं। वे स्वयं भी स्थानीय सत्ताओं के कार्यों को निरीक्षित कर सकते हैं तथा अनुदान रोक कर अथवा अन्य प्रकार से उनकी क्रियाओं को प्रतिबन्धित कर सकते हैं। नियन्त्रण के ये विभिन्न प्रावधान स्थानीय स्वतन्त्रता एवं पहल को पूरी तरह से समाप्त नहीं कर देते; इसके विपरीत उनमें पहल एवं स्वायत्तता पर्याप्त मात्रा में प्राप्त होती है। केन्द्रीय सरकार प्रायः इस बात में रुचि लेती है कि स्थानीय सत्ताएं अपना कार्य करती रहें। वह उनको कार्य करने से प्रतिबन्धित नहीं करती। केन्द्रीय नियन्त्रण बहुत कुछ अप्रत्यक्ष एवं हल्का होता है। मन्त्री केवल इसीलिए हस्तक्षेप करते हैं कि सत्ता को उचित रूप से कार्य करने के लिए प्रेरित कर सकें।

जब केन्द्रीय नियन्त्रण के विभिन्न प्रकारों को एक साथ मिला दिया जाता है तो उनकी मात्रा अत्यन्त हो जाती है। केन्द्रीय सरकार किसी न किसी तरीके से स्थानीय सरकार की सभी क्रियाओं को रोकने में समर्थ है। वह चाहे तो स्थानीय सत्ता को सरकार का दृष्टिकोण क्रियान्वित करने के लिए बाध्य कर सकती है; किन्तु जैसा कि आर० एम० जैक्सन [R. M. Jackson] का कहना है कि इसका अर्थ यह नहीं होता कि केन्द्रीय सरकार असल में नियन्त्रण की सभी शक्तियों को का[illegible] लेती है या वह ऐसा कर

सकती है, फिर भी ये शक्तियां उनको मिली हुई हैं।* इन शक्तियों के सम्बन्ध में दो बातों की जानकारी अत्यन्त महत्वपूर्ण सिद्ध हो सकती है। प्रथम यह कि नियन्त्रण की इन शक्तियों का प्रयोग किस सीमा तक किया गया है और दूसरा यह कि किस आधार पर केन्द्रीय सरकार के इन कार्यों को न्यायोचित ठहराया जा सकता है। प्रायः यह कहा जाता है कि इन शक्तियों का विकास नवीन युग की देन है किन्तु यह पूरी तरह से सच नहीं है क्योंकि नियन्त्रण के प्रमुख रूपों का विकास पिछली दशाब्दी में स्थानीय सरकार के विकास के साथ-साथ होता रहा है। नियन्त्रण के इन तरीकों का विकास केन्द्रीय सरकार एवं स्थानीय सत्ताओं के बीच स्थित सम्बन्धों की बदलती हुई परिस्थितियों से प्रभावित होता रहा है। जब एक कस्बा शाही चार्टर प्राप्त करके बारो बन जाता था तो वह बहुत कुछ इस नियन्त्रण से बच जाता था जो कि काउन्टीज में प्रयुक्त किया जाता था। शताब्दियों तक बारोज को अपने कार्यों को उनकी इच्छा से सम्पन्न करने के लिए स्वतन्त्र छोड़ दिया गया था।

अन्य स्थानीय निकाय जैसे पेरिश तथा काउन्टीज आदि को शान्ति के न्यायाधीशों द्वारा संचालित किया जाता था, इनको भी केन्द्रीय नियन्त्रण से बहुत कुछ मुक्त रखा गया। वर्तमान युग में औद्योगिक क्रान्ति के फलस्वरूप स्थानीय एवं राष्ट्रीय सरकार की प्रवृत्तियों में महत्वपूर्ण परिवर्तन आए हैं। कस्बों की गन्दी स्थिति के कारण स्थानीय सत्ताओं को उप-कानून बनाने की शक्ति दी गई। इसके अतिरिक्त कानून और व्यवस्था की स्थापना तथा गरीबों को राहत देने के कार्यों के क्षेत्र में अनेक नई समस्याएं उत्पन्न हुईं। इन समस्याओं के समाधान के लिए जो व्यवस्था की गई, उसमें केन्द्रीय नियन्त्रण को बहुत कठोर रखा गया। निर्धन राहत प्रशासन के क्षेत्र में केन्द्रीय सरकार द्वारा अनेक विनियमन किए गए अनेक निर्देश एवं आदेश निरन्तर रूप से जारी किए गए। इन सबके परिणामस्वरूप इस क्षेत्र में स्थानीय सत्ताओं के अधिकार न के बराबर हो गए हैं। जो स्थानीय अधिकारी इस कार्य को सम्पन्न करते थे, उन पर केन्द्रीय नियन्त्रण प्रत्यक्ष रूप से इतना अधिक था कि उनको स्थानीय संरक्षकों का अधिकारी नहीं कहा जा सकता था बल्कि ऐसा लगता था कि उन्हें सीधे कानून द्वारा शक्ति प्राप्त है। इसके अतिरिक्त निरीक्षण, आडिट एवं वित्तीय नियन्त्रण पूरी तरह से था: इस व्यवस्था से पूर्व की स्थिति इतनी खराब थी कि जनता ने इस व्यवस्था को बिना किसी विरोध के अपना लिया।

स्थानीय सरकार के विकास काल के प्रारम्भ में यह प्रवृति रही कि केन्द्रीय सरकार को व्यापक शक्तियां सौंपी जाएं और केन्द्रीय सरकार भी इनका प्रयोग करने के लिए इच्छुक रहती थी। यदि केन्द्रीय हस्तक्षेप लागू

---

* "This does not mean that the central Govt. does, in fact, exercise all its powers of control or that it is likely to do so, but nevertheless the powers are there."

—*R. M. Jackson*, Op. cit., P. 244

न किया जाता तो यह सम्भावना थी कि स्थानीय सरकार विशेष रूप से जन-स्वास्थ्य के क्षेत्र में वे कदम न उठा पाए जो कि राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय जनता की दृष्टि से अत्यन्त आवश्यक हैं। केन्द्रीय सरकार के नियन्त्रण ने समर्थ एवं ईमानदारी स्थानीय प्रशासन प्रदान करने की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किया। नियन्त्रण की इस कठोर व्यवस्था ने अपना कार्य कैसे सम्पन्न किया, इसका एक मुख्य कारण यह है कि केन्द्रीय सरकार के अधिकारियों की सामान्य बुद्धिमत्ता का स्तर स्थानीय स्तर पर काम करने वाले अधिकारियों की तुलना में पर्याप्त ऊंचा था।

पिछले पचास या इससे अधिक वर्षों में स्थानीय प्रशासन ने अपनी प्रवृत्ति को बहुत कुछ बदल दिया है तथा पहले जिन कारणों को केन्द्रीय नियन्त्रण का उचित आधार समझा जाता था उनको अब कम महत्वपूर्ण समझा जाने लगा। अब केन्द्रीय सरकार स्थानीय सत्ता का कोई कार्य करने में असमर्थता महसूस करने लगी। पहले यह होता था कि किसी भी प्रस्ताव को स्थानीय सत्ता केवल इस आधार पर अस्वीकार कर देती थी कि उसमें पर्याप्त धन खर्च हो जाएगा। ऐसी स्थिति में करदाता स्वयं उस सेवा की व्यवस्था करते थे। मतदाताओं की भी यह प्रवृत्ति थी कि वे किसी ऐसी सेवा के लिए धन नहीं देना चाहते थे जो गरीबों का लाभ करे। किन्तु आजकल यह प्रवृत्ति बदल चुकी है तथा स्थानीय सत्ता पर अधिक से अधिक सेवा प्रदान करने के लिए दबाव डाले जाते हैं। आज कोई भी यह नहीं चाहता कि स्थानीय सरकार की सेवाओं में कटौती की जाए किन्तु प्रयास यह रहता है कि इन सेवाओं को अधिक कुशलतापूर्वक सम्पादित करके, कर की मात्रा को कम किया जाए अथवा करदाताओं को उनके धन का अधिक से अधिक मूल्य प्रदान किया जाए। आज केन्द्रीय विभाग स्थानीय सत्ताओं के मामलों में कठोरतापूर्ण रवैया तभी अपनाते हैं जब कि स्थानीय परिषदें राष्ट्रीय स्तर की राजनीति में भाग लेने लगी हैं।

स्थानीय प्रशासन का स्तर बढ़ चुका है। अब उसमें भ्रष्टाचार एवं कर्त्तव्यों के प्रति उदासीनता बहुत कम रह गई है। स्थानीय सरकार के क्षेत्रों में प्राय: यह विश्वास किया जाता है कि केन्द्रीय विभागों के स्टाफ को बहुत लापरवाही से संगठित किया जाता है। लोक प्रशासन में कार्यकुशलता की मान्यता अब पर्याप्त कठिन बन चुकी है। वर्तमान परिस्थितियों में केवल यह कहना पर्याप्त नहीं है कि प्रशासन को यथासम्भव कार्य करने चाहिए किन्तु इसके साथ ही यह कहना भी जरूरी बन जाता है कि वह कार्य किस उपयुक्त स्तर पर किया जाए। यह स्तर भी परिस्थितियों के अनुसार बदलता रहता है। समय के साथ चलने वाले स्थानीय प्रशासन के विकास के इन विभिन्न परिवर्तनों के प्रसंग में जो परिणाम प्राप्त हुए तथा स्थानीय एवं केन्द्रीय सम्बन्धों का रूप बदला, उसे आर. एम. जैक्सन के शब्दों में रखते हुए यह कहा जा सकता है कि अब केन्द्रीय एवं स्थानीय सम्बन्ध नियन्त्रण से हटकर परामर्श एवं सहायता देने की ओर उन्मुख हो गए हैं।*

---

*"... the central-local relationship would have moved away from control and towards the giving of advise and assistance." —*R. M. Jackson*, op. cit., P. 251.

होते। असल में उनकी शिकायत यह रहती है कि स्थानीय सत्ताओं को केवल स्थानीय एजेन्ट समझा जाता है जो किसी कार्य के लिए विशेष रूप से उत्तरदायी नहीं हैं और जिनके प्रत्येक व्यवहार पर निगरानी रखना, प्रतिबन्ध लगाना और किसी केन्द्रीय अधिकारी की स्वीकृति प्राप्त करना अत्यन्त जरूरी है।

स्थानीय केन्द्रीय सम्बन्धों के विषय में उठने वाले विभिन्न प्रश्नों के बारे में स्थानीय सत्ता संस्थाओं तथा सम्बन्धित मन्त्रालयों के बीच पर्याप्त विचार-विमर्श हुआ। इसके परिणामस्वरूप जनवरी, १९४९ में स्थानीय सरकार मानव शक्ति समिति (Local Goverment Man-Power Committee) नियुक्त की गई। यह समिति चांसलर आफ एक्सचेंकर द्वारा नियुक्त की गई। इसमें सरकारी विभागों के प्रतिनिधि, स्थानीय सत्ताओं के प्रतिनिधि एवं स्थानीय सत्ता संघों के सचिव थे। समिति का मुख्य कार्य स्थानीय एवं केन्द्रीय सत्ताओं के बीच प्रक्रिया के बारे में व्यापक सिफारिशें करना था ताकि मानवीय शक्ति में मितव्ययता लाई जा सके। अपने कार्य को सम्पन्न करने के लिए समिति ने अनेक उपसमितियों का गठन किया।

वर्तमान समय की स्थितियों को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि अनेक क्षेत्रों में केन्द्रीय सरकार स्थानीय सत्ताओं के कार्यों पर अपना नियन्त्रण रख सकती है। आजकल इस बात पर जोर दिया जाता है कि केन्द्रीय सरकार का नियन्त्रण उन कार्यों तक सीमित कर दिया जाए जो कि अच्छी सरकार के लिए महत्वपूर्ण हैं तथा इस नियन्त्रण का व्यवहार एवं प्रशासन इस रूप में किया जाए कि स्थानीय सत्ताओं को यथासम्भव स्वतन्त्रता प्राप्त हो सके। केन्द्रीय सरकार का स्थानीय सत्ताओं के प्रति जो दृष्टिकोण होता है उससे अनेक कठिनाइयां पैदा हो जाती है। प्रक्रिया एवं दृष्टिकोण से सम्बन्धित विभिन्न समस्याओं के पीछे मुख्य रूप से आर्थिक आधार होता है। यह एक महत्वपूर्ण सिद्धान्त बन चुका है कि यदि धन का स्रोत एक्सचेंकर है तो केन्द्रीय विभागों को उसके व्यय पर नियन्त्रण रखना चाहिए तथा यह देखना चाहिए कि क्या उसे उसी रूप में खर्च किया जा रहा है जो कि केन्द्रीय नीति के अनुकूल है। कई एक लेखकों का यह सन्देह पूर्णतः उपयुक्त दिखता है कि जब तक स्थानीय सरकार केन्द्रीय धन पर अवलम्बित है, उसके व केन्द्रीय सरकार के बीच अच्छे सम्बन्धों की आशा बहुत कम है।

७

स्थानीय सरकार का वित्त

[THE FINANCE OF LOCAL GOVT.]

स्थानीय सरकार के वित्तीय स्रोतों की प्रकृति, सामर्थ्य एवं भविष्य के आधार पर स्थानीय सरकार के कार्य, शक्तियां एवं उत्तरदायित्व बदलते रहते हैं। कई बार इसके कार्य एवं उत्तरदायित्वों में परिवर्तन के परिणामस्वरूप भी वित्तीय स्रोतों में परिवर्तन किए जाते हैं। वर्तमान समय में स्थानीय सत्ताओं द्वारा किये जाने वाले व्यय की व्यवस्था मुख्य रूप से तीन स्रोतों द्वारा की जाती है। प्रथम, सरकारी अनुदान जो कि करीब २/५ हिस्सा होता है; दूसरे, भूमि एवं भवनों के स्वामियों द्वारा दी जाने वाली स्थानीय रेट जिसकी मात्रा भी लगभग इतनी ही होती है और तीसरे, नगरपालिका गृहों का किराया तथा ब्याज आदि से प्राप्त आमदनी जो कि कुल आय का लगभग १/५ हिस्सा होता है। स्थानीय सरकार द्वारा जो भी पूंजीगत व्यय (Capital Investment) किए जाते हैं उनका अधिकांश भाग ऋण लेकर प्रबन्धित किया जाता है।* स्थानीय सरकार के इन विभिन्न वित्तीय स्रोतों का विस्तार के साथ अध्ययन किया जाना उपयोगी रहेगा।

सहायता अनुदान
[Grants-in-aid]

[illegible] (Sidney Webb) के कथनानुसार सहायता अनुदान [illegible] ग्रेट ब्रिटेन [illegible] कानूनी [illegible] के लिए देता है।† [illegible]

---

*. Local Govt. in Britain, B. I. S. [illegible] 65., P. 19.

†"By a grant-in-Aid, the English [illegible] stands a sub-vention payable from the [illegible] United Kingdom to a local Govt. [illegible] assist that authority in the [illegible] its statutory duties."

— Sidney Webb.

रूप में दिया जाता है। यह समय की परिस्थितियों के अनुरूप अलग-अलग मात्रा में हो सकती है अथवा बिना किसी शर्त के एक जैसी मात्रा में भी हो सकती है। इसकी मात्रा मुख्य रूप से जनसंख्या के विकास या उसके किसी एक भाग के विकास या किसी विशेष सेवा की मात्रा पर अथवा नियुक्त किए जाने वाले अधिकारियों की संख्या अथवा उनके वेतन पर या प्राप्त करने वाली सत्ता के व्यय पर तथा उसके जिलों की करारोपण की शक्ति पर, उसके कार्यों की कुशलता पर एवं ऐसी ही अन्य शर्तों पर निर्भर करती है।

केन्द्रीय सरकार द्वारा स्थानीय सत्ताओं को दिए जाने वाले अनुदान की कई एक अच्छाइयां बताई जाती हैं। यह कहा जाता है कि कई एक स्थानीय सेवाएं जो कि सामान्य कल्याण से सम्बन्ध रखती हैं, संसद द्वारा लागू की जाती हैं और ये असल में स्थानीय रूप से प्रशासित राष्ट्रीय सेवाएं होती हैं। इस प्रकार का व्यय प्राय: सभी सत्ताओं में एक जैसा होता है और इसका भार राज्य के सहयोग द्वारा वहन किया जाना चाहिए। ये राज्य द्वारा दिए जाने वाले सहायता अनुदान एक प्रकार से अनुपूरक नहीं हैं किन्तु ये ऐसा धन होते हैं जो कि करदाता से ग्रहण किया जाना चाहिए किन्तु ग्रहण नहीं किया जाता है। बिना इस सहायता के तथा कुछ नियन्त्रण लागू किए यह सम्भव बन जाता है कि वांछित परिणामों एवं उपयुक्त लाभों को प्राप्त न किया जा सके। सहायता अनुदान एक प्रकार से उन सत्ताओं के लिए प्रेरक का काम करता है जो कि अपने कार्यों के प्रति अवहेलना बरत सकती हैं। इससे संसद को कुछ ऐसी सेवाओं तथा कार्यों के प्रशासन में एकरूपता का स्तर बनाने में सहायता मिलती है जो कि विशेषज्ञों द्वारा पर्यवेक्षित एवं समन्वित किए जाने चाहिए। सहायता अनुदान का धन सरकारी कोष से आता है। ऐसी स्थिति में कई बार यह पसन्द किया जाता है कि इस धन को रेट्स (Rates) से लिया जाय अथवा करों से। इन दोनों की प्रकृति पूर्णत: भिन्न होती है। रेट्स (Rates) तो स्वामित्व की गई सम्पत्ति के वार्षिक मूल्य पर निर्भर करते हैं जब कि करों का आधार वार्षिक आय तथा कुछ उपयुक्त वस्तुओं का मूल्य है। जो लोग रेट्स (Rates) से प्राप्त व्यय के लाभों का उपभोग करते हैं वे रेट देने से तो बच जाते हैं किन्तु उन्हें कर देना पड़ता है। व्यापारिक लाभ एवं व्यक्तिगत सम्पत्ति पर रेट नहीं लगाया जाता।

सहायता अनुदान की व्यवस्था का कई बार विरोध करते हुए उसे बुरा बताया जाता है। यह कहा जाता है कि यह एक खतरनाक सिद्धान्त है जिसके द्वारा राष्ट्रीय एक्सचेकर पर अनेक दावे किए जा सकते हैं। ऐसे व्यय पर कोई प्रभावशील संसदीय नियन्त्रण नहीं रखा जा सकता और मितव्ययता की भी कोई गारन्टी नहीं रहती। जहां तक स्थानीय सत्ताओं का प्रश्न है, उनको यदि बिना उत्तरदायित्व के सहायता अनुदान दिया गया तो वे उस धन को पानी की तरह खर्च करेंगी। इसके साथ ही उन विषयों को निश्चित रूप से परिभाषित करना कठिन है जिनको राहत मिलनी चाहिए। इसके अतिरिक्त सहायता अनुदान का अनुपात क्या हो तथा विभिन्न क्षेत्रों को कितना सहायता अनुदान दिया जाए, यह निश्चित करना भी अत्यन्त कठिन रहता है। जिस सेवा पर होने वाले खर्च को आंशिक रूप से राष्ट्रीय सहायता

इस आवश्यकता को पूरा होने से रोक देती है। स्थानीय सरकार के अधिकांश कार्य राष्ट्रीय नीतियों एवं स्थानीय सत्ता की अपेक्षा राष्ट्रीय लक्ष्यों के लिए संचालित किए जाते हैं। जब पुलिस एवं शिक्षा जैसी सेवाओं में कार्यकुशलता की आवश्यकता को अनुभव किया गया तो यह उचित समझा गया कि स्थानीय सत्ताओं के व्यय को राष्ट्रीय कोष के अनुदान द्वारा पूरा किया जाए। उन्नीसवीं शताब्दी के अन्तिम वर्षों में स्थानीय सरकार ने जो विकास किए उनकी पृष्ठभूमि में केन्द्रीय सरकार द्वारा दी जाने वाली वित्तीय सहायता को अधिक महत्व दिया जाने लगा। जब केन्द्रीय सरकार ने स्थानीय सरकार के वित्त में अपने योगदान की मात्रा बढ़ा दी तो स्वाभाविक रूप से स्थानीय सरकार की क्रियाओं में उसका नियन्त्रण भी बढ़ गया।

सरकार द्वारा दिया जाने वाला सहायता अनुदान किसी विशेष सेवा के लिए भी दिया जा सकता है और स्थानीय सत्ता के सामान्य राजस्व में योगदान के रूप में भी। जब इन अनुदानों को किसी विशेष सेवा के लिए दिया जाता है तो वह प्रायः उस सेवा में किए जाने वाले खर्चे से सम्बन्धित रहता है। इस सम्बन्ध में दो प्रकार के व्यवहार प्रचलित हैं। प्रथम यह कि इस अनुदान को व्यय के प्रतिशत के रूप में दिया जा सकता है। इसके लिए कोई ऐसा केन्द्रीय तरीका होना चाहिए जिसके आधार पर व्यय की परीक्षा की जा सके। अनुदान देने का दूसरा तरीका यह है कि सेवा की इकाई को ले लिया जाता है और उसके किसी एक कार्य के लिये केन्द्र सहायता देता है। दो स्थितियों में स्थानीय सत्ताओं के बीच अनेक विभिन्नताएं रह सकती हैं। इन अनुदानों का उद्देश्य मुख्य रूप से एक जैसा ही होता है। यदि स्थानीय सत्ताएं किसी विशेष प्रकार की सेवा के प्रति अपना झुकाव दिखाती हैं तो वे उसे इस प्रकार के अनुदान द्वारा आगे बढ़ाने के लिये प्रोत्साहित कर सकती हैं। जब कभी किसी विषय पर परिषद में विचार किया जाता है तो प्रायः इस तरह से विचार किया जाता है कि इस सेवा का पचास प्रतिशत खर्च अनुदान द्वारा प्राप्त हो जायेगा और शेष पचास प्रतिशत खर्च का भार स्थानीय कोष पर पड़ेगा। इससे स्थानीय सत्ताओं को नई सेवाएं प्रारम्भ करने में प्रोत्साहन मिलता है। इस प्रकार के अनुदानों का दूसरा उपयोग यह है कि स्थानीय सत्ताएं अपने कार्यों को सरलतापूर्वक सम्पन्न कर सकती हैं।

इन विशेषीकृत अनुदानों (Ear-marked grants) की एक मुख्य विशेषता यह है कि ये सभी स्थानीय सत्ताओं को बिना उनकी विशेष आवश्यकताओं का ध्यान रखे ही किये जाते हैं। यदि केन्द्रीय सरकार यह निर्णय ले ले कि पुलिस का आधा खर्चा उसके द्वारा सहन किया जायेगा तो एक सम्पन्न स्थानीय सत्ता भी अपनी पुलिस सेवा पर किये गये खर्च का आधा भाग प्राप्त करेगी, यद्यपि उसे ऐसी सहायता की कोई आवश्यकता नहीं है। दूसरी ओर एक निर्धन स्थानीय सत्ता अपने व्यय का आधा भाग अनुदान के रूप में पाने के बाद भी खर्चा चलाने में मुश्किल अनुभव करेगी। विभिन्न प्रकार के वित्तीय स्रोतों की विभिन्नतापूर्ण आवश्यकताओं के आधार पर जो कठिनाइयां उत्पन्न होती हैं उनको दूर करने के लिये अनुदान के दूसरे रूप का विकास किया गया। इस प्रकार का अनुदान किसी विशेष सेवा से

आज पीछे रह चुका है तथा यह एक सामान्य मान्यता बन गई है कि आवश्यक सेवाएं सभी क्षेत्रों को प्रदान की जानी चाहिए। उदाहरण के लिए यह माना जाता है कि प्रत्येक बालक को अच्छी शिक्षा प्राप्त होनी चाहिए चाहे उसके माता-पिता गरीब हों अथवा धनवान, चाहे वे शहर में रहते हों अथवा गांव में। यही बात अन्य आवश्यक सेवाओं के बारे में भी लागू होती है।

केन्द्रीय सरकार द्वारा दिए जाने वाले अनुदान के लिए समय-समय पर विभिन्न तरीके अपनाए गए हैं। सेवा के अनुसार भी ये तरीके बदल जाते हैं; जैसे कि पुलिस अनुदान हमेशा ही स्थानीय सरकार के व्यय के प्रतिशत पर निर्भर रही है। स्थानीय सरकार अधिनियम सन् १९२९ ने ब्लाक अनुदान (Block Grants) की व्यवस्था की जिसके अनुसार केन्द्रीय धन को स्थानीय सत्ताओं की आवश्यकता के अनुसार वितरित किया गया। वर्तमान समय में इस बात पर अधिक जोर दिया जाता है कि यदि सन्तोष-जनक इकाइयां बनाई जा सकें तो यह अधिक उपयुक्त रहेगा कि अनुदान को व्यय की पारिभाषित इकाइयों के आधार पर वितरित किया जाय।

सन् १९२९ से पूर्व जो सहायता अनुदान दिया जाता था वह उस समय की परिस्थितियों से प्रभावित था। सर्वप्रथम सहायता अनुदान दिया गया तो यह कोई सुव्यवस्थित व्यवस्था के अनुसार नहीं था तथा इसको केन्द्रीय नियन्त्रण का एक साधन भी नहीं माना गया। सन् १८३५ तक यह मान्यता विकसित नहीं हो पाई थी कि केन्द्रीय एवं स्थानीय सत्ताएं सावयवी सम्बन्ध रखती हैं तथा स्थानीय एवं केन्द्रीय-दोनों ही सत्ताएं सामान्य उद्देश्यों के लिए हिस्सेदार हैं। इस प्रकार स्थानीय सत्ताओं का विकास बिना किसी व्यापक प्रतियोगिता के हुआ है। सन् १८८८ के बाद स्थानीय सरकार में सावयवी एवं एकीकृत भावना का विकास होने लगा। बेन्थम, चार्डविक एवं उनके अनेक मित्रों ने अपने कटु अनुभव द्वारा प्रभावित होकर यह विचार प्रकट किया कि स्थानीय सरकार, सरकार के महान यन्त्र का एक तत्व मात्र है। इस काल में कुछ स्थानीय सेवाओं में सुधार के लिए केन्द्रीय सहायता अनुदान का समर्थन किया गया। सन् १९१९ के पूर्व के सहायता अनुदान के इतिहास को मुख्य रूप से तीन भागों में बांटा जा सकता है। इसका प्रथम युग सन् १८३५ से प्रारम्भ होकर सन् १८४६ तक चलता है। इस प्रारम्भिक युग में केन्द्रीय सरकार का अनुदान मुख्य रूप से कृषकों के हित की साधना के लिए दिया जाता था। शहरी क्षेत्रों पर होने वाले खर्च की बढ़ी हुई मात्रा को बहुत कुछ देहाती जनता द्वारा दान किया जाता था। देहाती जनता का यह तर्क था कि केवल वास्तविक सम्पत्ति के मूल्य के आधार पर स्थानीय कर को तय करना एक प्रकार से अन्यायपूर्ण है। बदलते हुए समय के अनुसार सम्पत्ति के रूप भी बदल जाते हैं। औद्योगीकरण एवं व्यवसाय का जब विकास हुआ तो शहरी क्षेत्रों की आमदनी बढ़ी किन्तु देहाती जनता को अब भी अधिक कर देना होता था। कृषि का पतन और अन्यायपूर्ण स्थानीय कर-व्यवस्था के फलस्वरूप केन्द्रीय सत्ता को स्थानीय व्यय में हाथ बंटाने के लिए प्रभावित किया गया।

इस युग में केन्द्रीय सरकार द्वारा दिए जाने वाले सहायता अनुदान पर वार्षिक मतदान होता था और यह परम्परा सन् १८८८ के गोशेन (Goschen) सुधारों तक चलती रही। सहायता अनुदान से सम्बन्धित पहल एवं नियन्त्रण केन्द्रीय सत्ता के हाथ में रहे। प्रति वर्ष सहायता अनुदान पर विचार होने के कारण संसदीय नियन्त्रण प्रभावशील तथा निरन्तर रूप से नहीं रह पाता था।

दूसरा काल सन् १८४६ से लेकर सन् १८८८ तक चलता है। इस काल में स्थानीय सरकार ने तीव्र गति से प्रगति की। प्रत्येक जगह पुलिस सत्ताओं की स्थापना कर दी गई। सन् १८६२ के बाद सड़कें पूरी तरह से स्थानीय सत्ताओं के नियन्त्रण में आ गयीं। सन् १८४८ से जनस्वास्थ्य प्रशासन के बारे में व्यापक स्तर की नीतियां अपनाई गयीं। सन् १८७१ में प्राथमिक शिक्षा प्रारम्भ की गई और सन् १८७६ में उसे मुफ्त प्रदान किया जाने लगा। इन सभी नए विकासों के लिए धन की आवश्यकता थी। कृषि हितों की यह शिकायत थी कि शहरों द्वारा देहाती इलाकों की अपेक्षा कम योगदान किया जाता है जब कि वे देहाती इलाकों में रहने वाले लोगों की अपेक्षा स्थानीय सेवाओं का अधिक लाभ उठाते हैं। कृषकों ने अपने हितों एवं दावों को रूढ़िवादी दल के माध्यम से सामने रखा। उनके प्रवक्ता थे डिजरैली और सर मैसे लोप्स (Sir Massey Lopes) सर जार्ज कार्नवेल लेविस (Sir George Cornewall) Lewis, ने यह बताया कि प्रत्येक सरकारी सेवा को राष्ट्रीय कोष से प्रबन्धित किया जाना चाहिए। यह एक सामान्य नियम है और यदि कोई अपवाद रूप में यह चाहे कि किसी विशेष सेवा का दायित्व स्थानीय कोष पर आए तो उसको यह सिद्ध करना होगा कि सामान्य नियम को किन कारणों से तोड़ा जाए, क्या ऐसा करना अधिक सुविधाजनक रहेगा अथवा ऐसी परम्परा पहले से चली आ रही है। कुछ सेवाएं ऐसी होती हैं जिनमें यदि केन्द्रीय कोष से सहायता दी जाए और उनका प्रशासन स्थानीय लोगों के हाथों में छोड़ दिया जाए तो स्थानीय सत्ताओं में अधिक धन मांगने के लिए एक प्रकार से प्रतियोगिता प्रारम्भ हो जाएगी जब धन केन्द्रीय सत्ता से आ रहा है तो स्थानीय सत्ता अपना खर्च कम करने में रुचि नहीं लेगी। मितव्ययता लाने में उसे कोई लाभ नजर नहीं आएगा। जब कर स्थानीय रूप से संग्रहीत होता है तो यदि बुद्धिहीन रूप से खर्च किया गया तो अधिक कर लगाने की जरूरत पड़ेगी और इसके जो गम्भीर परिणाम होंगे, वे शीघ्र ही स्थिति में परिवर्तन ला देंगे। लेविस तथा अन्य लोगों ने यह तर्क किया कि यदि केन्द्रीय सरकार सहायता देती है तो यह आवश्यक है कि केन्द्रीय निरीक्षण एवं स्थानीय अधिकारियों की नियुक्ति पद विमुक्ति के सम्बन्ध में उसका निर्देशन बढ़ जाएगा। संसद बिना अपना नियन्त्रण रखे किसी धन का भुगतान करने की स्वीकृति नहीं दे सकती। यह आशंका की जाती है कि केन्द्रीय सत्ता द्वारा दिए जाने वाले योगदान के कारण नौकरशाही पनपेगी।

स्थानीय सरकार के विकास के साथ ही यह आवश्यकता महसूस की जाने लगी कि सरकारी अनुदान की व्यवस्था में परिवर्तन किया जाए।

काउन्टी परिषद द्वारा जो अनुदान प्राप्त किया जाता था उसको काउन्टी परिषद एवं उसके क्षेत्र के काउन्टी जिलों की परिषदों में बांट दिया जाता था। जब काउन्टी के अनुदान को गैरकाउन्टी बारोज, शहरी जिलों एवं देहाती जिलों में बांटा जाता था तो ऐसा करते समय जनसंख्या को आधार बनाया जाता था। जिला परिषदों द्वारा प्राप्त मदों को कैपीटेशन अनुदान (Capitation Grant) कहा जाता था क्योंकि जनसंख्या के प्रत्येक व्यक्ति को अनुदान की निश्चित मात्रा प्रदान की जानी थी। शहरी क्षेत्रों में दिया जाने वाला प्रति व्यक्ति अनुदान देहाती क्षेत्रों के प्रति व्यक्ति अनुदान से पाँच गुना होता था। इस अन्तर का मुख्य कारण यह था कि देहाती जिलों में प्रशासित सेवाओं का मूल्य कम होता था क्योंकि वहां जनसंख्या कम रहती थी। दूसरे, अनेक सेवाओं का खर्च भी उन्हें नहीं सम्भालना होता था। इस अधिनियम ने कृषि, भूमि एव भवनों को रेट देने से मुक्त कर दिया औद्योगिक एवं यातायात संस्थाओं को भी तीन-चौथाई रेट देने से मुक्त कर दिया गया।

सन् १८४८ के अधिनियम के अनुदान व्यवस्था में और भी परिवर्तन किए। इसके द्वारा अस्पताल एवं जन-सहयोग को स्थानीय सरकार से केन्द्रीय सरकार को हस्तान्तरित कर दिया गया। इन क्षेत्रों में स्थानीय सत्ताओं द्वारा एक बहुत बड़ी रकम खर्च की जाती थी। अतः सरकारी अनुदान के स्तर में कुछ परिवर्तन किया जाना अत्यन्त आवश्यक बन गया। इसके अतिरिक्त स्थानीय सेवाओं के खर्च का भी मूल्य बढ़ गया। सन् १९२९ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने अनुदान के वितरण के लिए जो व्यवस्था की थी, वह असन्तोषजनक प्रतीत होने लगी। इसके अतिरिक्त सरकार निर्धनतम स्थानीय सत्ताओं को अधिक वित्तीय सहायता देने के लिए उत्सुक थी तथा उनको उनके क्षेत्रों में सेवाएं विकसित करने के लिए प्रोत्साहित किया गया। सन् १९४८ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने कोषाध्यक्ष के सम्मानतापूर्ण अनुदान (Exchequer Equalisation Grants) की व्यवस्था की। यह अनुदान भी पूर्ववर्ती ब्लाक अनुदान की भांति जन-संख्या पर आधारित था किन्तु इसमें एक नए सूत्र को अपनाया गया ताकि निर्धन स्थानीय सत्ताओं को अधिक उदारतापूर्वक सहायता दी जा सके। ब्लाक अनुदान की तरह से यह अनुदान भी स्थानीय सरकार को उसके सामान्य खर्चे की दृष्टि से दिया जाता था, न कि किसी विशेष सेवा के लिए। विशेष सेवाओं के लिए जो सहायता दी जाती थी, उसको सन् १९४८ के अधिनियम ने बन्द नहीं किया। इस प्रकार का अनुदान गृह-निर्माण, शिक्षा, पुलिस एवं सड़कों के सम्बन्ध में दिया जाता था।

सन् १९५८ में स्थानीय सरकार अधिनियम पास हुआ। इसमें भी सरकारी अनुदान की व्यवस्था में कुछ परिवर्तन किए गए। सन् १८५७ में एक सरकारी श्वेत-पत्र [White-Paper] प्रकाशित हुआ जिसमें बताया गया कि तत्कालीन प्रतिशत अनुदान ने स्थानीय सत्ताओं को अपव्ययपूर्ण रूप में खर्च करने के लिए प्रोत्साहित किया था और इसके कारण केन्द्रीय सरकार का नियन्त्रण एवं प्रतिबन्ध का उत्तरदायित्व बढ़ गया। सन् १८५८ के अधिनियम ने काउन्टीज तथा काउन्टी बारोज की परिषदों को नए सामान्य

अनुदान प्रारम्भ किए जिन्हें अप्रैल माह से प्रारम्भ किया गया। इसके साथ ही कुछ अनुदानों को रोक दिया गया। इनमें कई सेवाओं से सम्बन्धित विशेष अनुदान थे; जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य एवं कल्याण-सेवाएं, शहर-नियोजन, अग्नि-सेवाएं, खाद्य सुरक्षा, सड़क सुरक्षा, पुलिस यातायात, शारीरिक प्रशिक्षण एवं मनोरंजन आदि। इस अधिनियम ने गृह-निर्माण, सड़क और पुलिस सेवाओं से सम्बन्धित अनुदान को प्रभावित नहीं किया। जब प्रत्येक स्थानीय सत्ता के लिए अनुदान की मात्रा को निर्णीत किया गया तो कई एक तत्वों को ध्यान में रखा गया; जैसे जनसंख्या का आकार एवं वितरण, पन्द्रह साल से कम उम्र वाले बच्चों की संख्या, पांच वर्ष से कम उम्र वाले बच्चों की संख्या, पैंसठ वर्ष से ऊपर की उम्र वाले लोगों की संख्या तथा स्कूलों में पढ़ने वाले बालकों की संख्या।

स्थानीय कर
[Local Taxation]

कर से सम्बन्धित समस्याएं प्रत्येक प्रकार की मुख्य समस्याएं होती हैं। सरकार के विभिन्न दायित्वों को पूरा करने के लिए जो सेवाएं सम्पन्न की जाती हैं, उनमें धन की आवश्यकता होती है और यह धन स्थानीय जनता से उगाया जा सकता है किन्तु धन को उगाहने का ऐसा कोई तरीका नहीं है जिसके प्रति विरोध प्रकट न किया जा सके। दूसरे शब्दों में पूर्णतः श्रेष्ठ कर एक शब्दों का विरोधाभासमात्र है। कर को अच्छा कहने का अर्थ केवल यही है कि उसको देने वाले व्यक्तियों को परेशानी महसूस न हो और उसे आसानी से वसूल किया जा सके। कर अच्छे होने का अर्थ यह भी हो सकता है कि इससे कुछ सामाजिक नीतियों को क्रियान्वित करने में सुविधा रहती है। उदाहरण के लिए यातायात कर को लिया जा सकता है। यातायात कर राजस्व की वृद्धि के लिए लगाया जाता है किन्तु कई बार यह यातायात को कम करने के लिए भी एक साधन का काम करता है ताकि देश के उद्योगों को उपज के लिए बाजार प्रदान किया जा सके। कई एक वस्तुओं की खपत कम करने के लिए भी उन पर कर लगाया जाता है, उदाहरण के लिए यदि अधिक शराब पीना एक सामाजिक बुराई है तो स्प्रिट पर कर लगाने से इस बुराई को रोका जा सकता है और यह कर एक अच्छा कर कहलाएगा किन्तु यह कर उन लोगों द्वारा बुरा समझा जाएगा जो कभी अधिक पीते थे। कहने का अर्थ यह है कि उपयोगी एवं आवश्यक चीजों पर लगाया गया कर प्रायः अच्छा नहीं माना जाता क्योंकि इससे अधिकांश लोगों को असुविधा होती है। दूसरी ओर सामाजिक बुराइयों को रोकने के उद्देश्य से लगाया गया कर यद्यपि कुछ लोगों की परेशानी का कारण बनता है किन्तु फिर भी इसे अच्छा समझा जाता है।

कर के सम्बन्ध में एक दूसरी कठिनाई यह उत्पन्न होती है कि इसे लगाते समय समानतापूर्ण व्यवहार किया जाए अथवा असमानतापूर्ण। दोनों व्यवस्थाओं की अपनी बुराइयां हैं। यदि सभी नागरिकों की समानता को आधार बनाकर 'कर' का भार सभी व्यक्तियों पर एक जैसा डाला जाए तो एक गरीब व्यक्ति को भी उतना ही धन देना

पड़ेगा जितना एक धनवान एवं समर्थ व्यक्ति को। यह व्यवस्था और भी अधिक अन्यायपूर्ण है। यदि हम लोगों पर उनकी देने की क्षमता के आधार पर कर लगाएं तो दूसरे प्रकर की कठिनाई उत्पन्न होती है, वह यह कि स्तर के निम्नतम बिन्दुओं पर हम कुछ भी कर न लगाने के लिए प्रेरित होंगे; किन्तु कुछ लोगों को कर देने के उत्तरदायित्व से मुक्त कर दिया गया तो वे अपने राजनैतिक उत्तरदायित्वों के प्रति सजग नहीं रह सकेंगे। यदि देने की योग्यता के आधार पर कर का निश्चय किया जाए तो मध्यम वर्ग एवं उच्च वर्ग पर भार और भी बढ़ जाएगा तथा इसका पर्याप्त विरोध किया जाएगा। करारोपण की इस उलझी हुई व्यवस्था में मानवीय शक्ति की एक बहुत बड़ी मात्रा इस संघर्ष में ही लग जाएगी कि कर अधिक से अधिक लिया जाए और कर कम से कम लिया जाए। यदि कर लगाते समय सामाजिक न्याय को ध्यान में रखा जाए तो जो व्यवस्था सामने आएगी, वह अत्यन्त जटिल होगी तथा प्रशासकीय दृष्टि से अत्यन्त अपव्ययपूर्ण। यदि कर की किसी व्यवस्था में करों की चोरी की सम्भावनाएं अधिक रहती हैं तो उस कर व्यवस्था को श्रेष्ठ नहीं समझा जा सकता; उदाहरण के लिए आय कर को लिया जा सकता है। यदि राजस्व सत्ताएं अपना पूरा स्टाफ न रखें तो वेतनभोगी लोग आयकर दे देंगे किन्तु किसान और व्यापारी लोग कर देने के उत्तरदायित्व से पूरी तरह बच निकलेंगे। अतः एक अच्छी कर-व्यवस्था को सरल तथा आसान बनाया जा सकता है ताकि वह अधिक जटिल एवं व्यापक सैद्धान्तिक नियमों के कारण अपूर्ण प्रशासन का कारण न बन जाए।

करारोपण के क्षेत्र में कुछ ऐसे सिद्धान्त होते हैं जिनको अपनाया जा सकता है किन्तु फिर भी बहुत कुछ निर्णय समझौतेपूर्ण प्रक्रिया द्वारा लिए जाते हैं। यह एक ऐसा क्षेत्र है जिसमें किसी प्रस्ताव के परिणामों के बारे में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। लोगों की प्रतिक्रिया क्या होगी इसका निश्चय करना अत्यन्त कठिन है। जो अर्थशास्त्री, जो हो चुका है तथा जो हो रहा है—उसका विश्लेषण करने में अत्यन्त कुशल होते हैं वे क्या होगा—यह दिखाने के लिए सामान योग्यता प्रदर्शित नहीं करते। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है क्योंकि बदली हुई परिस्थितियों में लोग कैसा व्यवहार करेंगे, यह केवल अध्ययन के आधार पर नहीं जाना जा सकता।

स्थानीय करों के सम्बन्ध में कुछ बातें ध्यान में रखने योग्य और भी हैं। इनमें प्रथम यह है कि यह कर स्थानीय होना चाहिए। स्थानीय चीजें स्पष्ट रूप से जमीन तथा व्यक्ति होते हैं। व्यक्तियों पर स्थानीय निर्वाचकों या परिवारों के मुखियाओं के रूप में कर लगाए जा सकते हैं। प्रति व्यक्ति कर लगा कर राजस्व को बढ़ाना एक अत्यन्त लोकप्रिय तरीका है। इस प्रकार का कर गरीबी या अमीरी का ध्यान नहीं रखता है। भुगतान की योग्यता के अनुसार कर लगाने की बात को आयकर के सम्बन्ध में माना जाता है। इस सम्बन्ध में गम्भीर कठिनाई यह उत्पन्न हो जाती है कि व्यक्ति की आय को स्थानीय सरकार की इकाइयों से सम्बन्धित नहीं किया जा

सकता। कई एक मामलों में हम यह नहीं कह सकते कि आय किस क्षेत्र से की जा रही है। आमदनी किसी कम्पनी, किसी व्यापार, उसकी किसी शाखा या ऐसे स्रोतों से हो सकती है जिनके स्थानों का पता नहीं लगा पाता। आय प्राप्त करने वाला व्यक्ति, कार्य एक स्थान पर करता है किन्तु वह दूसरे स्थान पर रह सकता है। किसी व्यक्ति की चल सम्पत्ति पर जो कर लगाया जाता है, उसके सम्बन्ध में ये कठिनाइयां उत्पन्न नहीं होती क्योंकि इस सम्पत्ति को किसी विशेष स्थानीय सत्ता में रखा जा सकता है। मोटर-गाड़ियों पर, कुत्तों पर या अन्य विशेष चीजों पर कर लगाने में कोई विशेष तकनीकी कठिनाई नहीं होती किन्तु इन सम्पत्तियों का वार्षिक मूल्यांकन करने में पर्याप्त कठिनाई होती है। निवास स्थान के बारे में किसी प्रकार के शक की गुंजाइश नहीं रहती, इसलिए उस पर स्थानीय कर आसानी से लगाया जा सकता है। जिन वस्तुओं पर कर लगाया जाता है, उनके सम्बन्ध में भी अनेक व्यावहारिक कठिनाईयां उत्पन्न हो जाती हैं।

स्थानीय सत्ता के क्षेत्रों के लिए चुंगी और आबकारी कर का मूल्यांकन तथा संग्रह आसानी से नहीं किया जा सकता। चुंगी प्रायः सीमाओं पर अथवा समुद्री बन्दरगाहों पर ली जाती है और आबकारी कर उन वस्तुओं के निर्माताओं से लिया जाता है। यह अनुपयुक्त समझा जाता है कि एक स्थानीय सत्ता ऐसी वस्तु पर कर लगा कर उसके धन को अपने पास रख ले जो कि उसके क्षेत्र में निर्मित हुई है किन्तु उसे अन्य सत्ता के क्षेत्र में बेचा जा रहा है। इसी तरह से एक सत्ता को अपने बन्दरगाह पर आने वाले उस सामान पर कर नहीं लगाने दिया जाएगा जो कि पूरे देश में वितरित किया जाता है। ऐसी अनेक वस्तुएं एवं क्रियाएं हैं जो कि स्थानीय हैं और जिन पर बिना किसी तकनीकी कठिनाई के स्थानीय सत्ता के राजस्व के लिए कर लगाया जा सकता है। ग्रेट ब्रिटेन में मोटर-गाड़ी के लाइसेन्स तथा कुछ अन्य परमिटों से होने वाली आय स्थानीय सत्ताओं को प्राप्त होती है। इनमें से कुछ लाइसेन्स तो केवल नियमन के लिए होते हैं और इनसे लिये जाने वाले धन की मात्रा केवल इतनी होती है कि जितना इनके प्रशासन में खर्च हो जाता है किन्तु मोटर-गाड़ियों के लाईसेन्सों से एक बहुत बड़ा राजस्व प्राप्त होता है। यहां एक परेशानी यह उत्पन्न हो जाती है कि जिन स्रोतों से सर्वाधिक धन प्राप्त हो सकता था, वे केन्द्रीय सरकार ने पहले से ही अपने हाथ में ले लिए हैं किन्तु इससे स्थानीय सत्ता के कर लगाने की शक्ति पर कोई प्रतिबन्ध नहीं आती। वह भी इन सेवाओं या चीजों पर अतिरिक्त कर लगा सकती है किन्तु इस रूप में प्राप्त धन पर्याप्त नहीं होता। ऐसी स्थिति में यह सुझाव दिया जाता है कि केन्द्रीय सरकार को स्थानीय सत्ताओं के स्थानीय कर के कुछ स्रोतों को छोड़ देना चाहिए। जब जमीन या भवन को स्थानीय कर का आधार बनाया जाता है तो ऐसी कोई कठिनाई उत्पन्न नहीं होती। स्थानीय सरकार की प्रायः सभी व्यवस्थाएं अपने राजस्व का अधिकांश भाग जमीन पर कर लगा कर प्राप्त करती हैं। ग्रेट ब्रिटेन में इस प्रकार के कर के लिए अत्यन्त विकसित रूप से रेट की व्यवस्था है। इसमें अनेक कठिनाइयां हैं और इसको एक आदर्श के रूप में नहीं अपनाया जा सकता किन्तु इसके कुछ उपयोग भी हैं।

रेट की व्यवस्था [The Rating System]—रेट्स स्थानीय करों के रूप हैं जो कि स्थानीय सरकार के क्षेत्र में रहने वाले जमीन एवं भवनों के स्वामियों द्वारा प्रदान किए जाते हैं। ये कर उन सेवाओं के बदले में दिए जाते हैं जो कि क्षेत्र द्वारा प्रदान की जाती हैं। स्वामी द्वारा भुगतान की जाने वाली मात्रा जमीन के अनुमानित वार्षिक मूल्य पर (Rateable Value) कहा जाता है। यह मूल्य उस मात्रा के बराबर होता है जो कि एक किराए-दार द्वारा प्रतिवर्ष किराए के रूप में दिए जाने की आशा की जाती है। यह किराया उसके द्वारा तब दिया जाता है जब कि रेट्स, बीमा एवं मरम्मत तथा अन्य उन खर्चों का भार भी उसी के द्वारा वहन किया जाता है जो कि किराया लेने के लिए राज्य में सम्पत्ति को बनाए रखने के लिए जरूरी है। इस प्रकार यह भी एक घर का रेट योग्य मूल्य चालीस पौंड प्रति वर्ष है तो उक्त स्थिति में किराएदार सौलह शिलिंग प्रति सप्ताह कम करके किराया देगा।

रेटिंग व्यवस्था के इतिहास का प्रारम्भ मध्यकालीन पेरिशों के साथ प्रारम्भ होता है। उस समय प्रत्येक पेरिशवासी अपने साधनों के अनुसार स्थानीय चर्च की व्यवस्था के लिए योगदान करता था। सन् १५५५ के अधि-नियम ने पेरिशवासियों का यह कर्त्तव्य बना दिया कि वे स्थानीय सड़कों के बनाने में उनकी सेवायें प्रदान करें। यदि पेरिशें अपना यह कार्य न कर पायें तो शान्ति का न्यायाधीश उन पर जुर्माना लगा सकता था। यह जुर्माना उतना ही होता था जितना कि उन सड़कों की मरम्मत में खर्च करना पड़े। सन् १६९१ के सड़क अधिनियम के अनुसार इस प्रकार दण्डित कोई भी पेरिश-वासी यदि अपना दण्ड स्वयं देने में असमर्थ है तो वह इसे अपने साथियों से उगाह कर इकट्ठा कर सकता था। इस व्यवस्था ने सड़क रचना के लिए रेटिंग व्यवस्था (Rating System) की स्थापना की।

सन् १६०१ का निर्धन राहत अधिनियम यह मांग करता था कि स्थानीय निवासी पेरिश के गरीबों की राहत के लिए अपना योगदान करें। अधिनियम द्वारा चर्च वार्डन तथा पेरिश के ओवरसीयर को प्रत्येक निवासी की अचल सम्पत्ति मूल्यांकन करने की एवं उसके आधार पर निर्धन राहत के व्यय के के लिए उस पर कर लगाने की शक्ति प्रदान की। प्रारम्भ में इस प्रकार संग्र-हीत धन का उपयोग निर्धन राहत के लिए किया जाता था किन्तु बाद में औद्योगीकरण के परिणामस्वरूप जब स्थानीय सत्ताओं के कार्य बढ़े तो इस धन का प्रयोग अन्य कार्यों के लिए भी किया जाने लगा और अतिरिक्त कर लगाये जाने लगे। अधिकाश नये कर सम्पत्ति के उसी मूल्यांकन पर निर्भर रहे जो कि निर्धन कानून के तहत किया गया था सैकड़ों वर्ष पूर्व यह एक सामान्य धारणा थी कि व कभी किसी सरकारी कार्य से व्यक्तिगत सम्पत्ति का सुधार हो जाये तो उसे उस कार्य के लिए उसी अनुपात में योगदान करना चाहिए जिसमें उसे लाभ प्राप्त है। उन्नीसवीं शताब्दी तक विभिन्न के लिए अनेक प्रकार के रेट्स (Ra.es) की व्यवस्था कर दी गई। उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में कई एक विधेयक संसद में प्रस्तुत किये गये ताकि एक-रूप एवं सरल रेटिंग व्यवस्था को स्थापित किया जा सके।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि रेटिंग का इतिहास स्थानीय सरकार के इतिहास के साथ प्रारम्भ होता है। जेक्सन महोदय लिखते हैं कि रेट्स (Rates) के रूप में जाना जाने वाला स्थानीय कर सदा ही स्थानीय सत्ताओं के साथ और मुख्य रूप से पेरिशों के साथ संयुक्त रहा है।* जब कभी पेरिश द्वारा कोई ऐसा खर्च किया जाता जो कि उसके निवासियों द्वारा चुकाया जाना चाहिए तो इसके लिए रेट लगा दी जाती थी। एक कार्य में होने वाले कुल व्यय को सम्पत्ति के मूल्यांकन के आधार पर उसके अनुपात में स्थानीय निवासियों में बांट दिया जाता था। रेट्स वैसे स्थानीय कर होते हैं किन्तु कुछ विचारक करों एवं रेट्स में अन्तर पाते हैं। उनका कहना है कि यदि आपको एक निश्चित मात्रा में धन एकत्रित करना है और आप यह तय कर देते है कि प्रत्येक व्यक्ति द्वारा इस मात्रा के लिए कितना धन दिया जायेगा तो जो कुछ भी लिया जा रहा है वह रेट्स है; किन्तु जब लोगों से सार्वजनिक व्यय का भुगतान करने के लिए धन की एक निश्चित मात्रा लेनी पड़े तो यह कर कहा जायेगा। यह कोई उल्लेखनीय अन्तर नहीं है। कोई भी सरकार ऐसा नहीं करती कि पहले वह कुछ धन एकत्रित कर ले और बाद में वह यह सोचे कि इस धन का क्या किया जाये। केन्द्रीय सरकार के अनेक ऐसे व्यय होते है जिनके लिए धन संग्रह करना ही होता है तथा करों को कुल वांछित मात्रा के अनुसार निश्चित कर दिया जाता है।

रेटिंग की प्रारम्भिक मान्यता एक स्थानीय कर के रूप में ही थी जिसको कि व्यक्ति की सम्पत्ति की मात्रा के अनुसार तय किया जाता था। उसकी सारी सम्पत्ति का अर्थात् भूमि, भवन, घर की चीजें, पशु आदि का, मूल्यांकन कर लिया जाता था। बाद में चल सम्पति का मूल्यांकन करने में कठिनाई का अनुभव किया गया और मूल्यांकन का एकमात्र आधार भूमि एवं भवन बन गया।

रेट के आधार पर जो स्थानीय सत्ता धन एकत्रित करती थी, वह यह तय करती थी कि सम्पत्ति के प्रत्येक स्वामी से कितना धन एकत्रित किया जायेगा और उसके बाद वह करदाता के सामने अपनी मांग रख देगी। इस प्रकार करदाता को काउन्टी की मांग प्राप्त होती, दूसरी देहाती जिले से, तीसरी पेरिश से, चौथी स्कूल बोर्ड से तथा इसी प्रकार अन्य दूसरी सत्ताओं से। जब स्थानीय सत्ताओं को पुनः प्रवर्तित किया गया तो विशेष उद्देश्य वाली सत्ताओं के स्थान पर सामान्य उद्देश्य वाली सत्ताओं को स्थापित किया गया। स्थानीय सत्ताओं के संगठन में जब सूत्र व्यवस्था (Tiers System) को लागू किया गया तो काउन्टी, काउन्टी जिले तथा देहाती जिलों में परिषदों के लिए उसने रेट प्रदान करने की व्यवस्था की गई। करदाता को दो या तीन भुगतानों की परेशानियों से बचाने के लिए जिला परिषदों को रेट लेने

---

*"The form of local taxation known as rates has always been associated with local authorities and principally with parishes."

—*R. M. Jackson*, op. cit., P. 163.

वाली सत्ता बना दिया गया। इसका अर्थ यह था कि आवश्यक धन को एकत्रित करने का दायित्व इन्हीं पर डाल दिया गया। काउन्टी परिषद तथा पेरिश परिषदें अपनी मांगों की औपचारिक सूचना देहाती जिलों के पास भेज देती है तथा देहाती जिले अपनी मांगें करदाता के सामने रखते हैं तो वे इन मांगों को भी साथ ही मिला लेते हैं। धन संग्रह के बाद देहाती जिले अपने अनुपात को रख कर, बाकी का धन काउन्टी परिषद एवं प्रत्येक पेरिश को उनके अनुपात के आधार पर सौंप देते है।

स्थानीय रेटिंग व्यवस्था के आधारभूत सिद्धान्त मुख्य रूप से चार हैं–प्रथम यह कि एक व्यक्ति की रेट देने की योग्यता, उसके द्वारा स्वामित्व की गई वास्तविक सम्पत्ति, भूमि, भवन आदि के किराये के मूल्य के आधार पर निर्धारित की जाती है। दूसरे, रेट का भुगतान करने का उत्तरदायित्व मुख्य रूप से वास्तविक सम्पत्ति के स्वामी पर आकर पड़ता है। तीसरे, विभिन्न स्थानीय सत्ताओं के दावे एक ही रेट में समूहीकृत कर दिये जाते हैं और करदाता से एक ही सामूहिक मांग रखी जाती है। चौथे मूल्यांकन के सिद्धान्तों एवं तरीकों में एकरूपता लाने के लिए मूल्यांकन का क्षेत्र बड़ा हो गया है।

रेट लगाने की प्रक्रिया उस क्षेत्र के प्रश्न के कारण जटिल बन जाती है जिसमें एक भुगतान को फैलाया जाना है। यह काउन्टीज के प्रसंग में अत्यन्त महत्वपूर्ण है क्योंकि शिक्षा आदि कई एक खर्चीली सेवाओं का दायित्व काउन्टी परिषदों का ही होता है तथा इन सेवाओं का खर्च पूरी काउन्टी पर डाला जाना चाहिए। किन्तु यदि काउन्टी का एक जिला किसी सेवा का प्रबन्ध स्वयं ही करता है तो उससे सम्बन्धित कर को वह काउन्टी को देने को बाध्य नहीं है। उदाहरण के लिए यदि एक गैर–काउन्टी बारो की स्वयं की पुलिस सत्ता है तो जब काउन्टी द्वारा पुलिस सेवा के लिए काउन्टी भर में कर लगाया जायेगा तो उस जिले को छोड़ दिया जायेगा। जो कर पूरे क्षेत्र पर लगाया जा सके, वह सामान्य कहलाता है और जिसे केवल एक क्षेत्र मात्र पर ही लगाया जाये, वह विशेष कहलाता है। क्षेत्र की यह समस्या प्राय: देहाती जिलों में उठती है। वहां यदि जल वितरण की सेवा अथवा नाली सफाई से सम्बन्धित सेवा जिले के एक भाग मात्र को प्रदान की जा रही है तो क्या उससे संबंधित कर केवल उसी भाग से लिया जाये अथवा पूरे जिले से ही लिया जाये। कुछ लोगों का कहना यह है कि जो सेवा पूरे क्षेत्र के लिए लाभ प्रदान नहीं करती है, उसके खर्चे को केवल उस भाग से ही लिया जाना चाहिए जो कि लाभान्वित हो रहा है। दूसरी ओर यह भी कहा जाता है कि कर के भार को जितने अधिक लोगों में बांटा जायेगा वह उतना ही हल्का हो जायेगा। इङ्गलैण्ड में पहले यह व्यवस्था थी कि एक सेवा से सम्बन्धित खर्च के लिए कर केवल उसी भाग से लिया जाये जो कि लाभान्वित हो रहा है। किन्तु युद्ध के बाद व्यवहार बदल गया है तथा यह एक सामान्य व्यवहार बन गया है कि कर का भार पूरे जिले पर ही डाला जाये। यदि कर का निर्धारण कर-दाताओं की इच्छा से किया जाये तो ज्ञात होगा कि वे किसी भी सेवा को प्राप्त करने के लिए उत्सुक नहीं है। वे कर से बचने के लिए यह चाहेंगे कि

व्यापार के इतने महत्वपूर्ण तत्वों पर रेट प्रदान करे। इसी अधिनियम के द्वारा औद्योगिक एवं माल का यातायात करने वाली सम्पत्तियों को तीन चौथाई कर प्रदान करने से मुक्त कर दिया गया। यह अनुभव किया गया कि औद्योगिक एवं माल यातायात की वस्तुओं पर कर लगाना अन्यायपूर्ण है तथा उत्पादक इतनी सेवा प्राप्त नहीं कर पाते कि रेट की पूरी मात्रा का भुगतान कर सकें। रेट की व्यवस्था में परिवर्तन करने का एक अन्य कारण इस शिकायत को दूर करना भी था कि रेट्स व्यापारिक दुनियां पर प्रत्यक्ष कर हैं।

सन् १९४८ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने कोषाध्यक्ष की समान अनुदान व्यवस्था को प्रारम्भ किया जो कुछ स्थानीय सत्ताओं के लिए प्रदान किए जाने थे।एक सत्ता का रेट युक्त मूल्य जितना कम होता था, उसको इस प्रकार के अनुदान की उतनी ही अधिक मात्रा प्रदान की जाती थी। इस व्यवस्था में यह खतरा था कि एक सत्ता अपनी स्थानीय सम्पत्ति का अनुमान लगाने में दूसरी की अपेक्षा उदारता बरतेगी और इसके परिणामस्वरूप अधिक अनुदान प्राप्त करने का प्रयास करेगी। इस प्रवृति की पहले से ही कल्पना करके सम्पत्ति के मूल्यांकन करने का कार्य स्थानीय सत्ताओं से अन्तर्देशीय राजस्व विभाग को स्थानान्तरित कर दिया गया। इस अधिनियम ने हाल ही में राष्ट्रीयकृत किए उद्योगों के सम्बन्ध में भी विशेष प्रावधान बनाए। इन उद्यमों के सम्बन्ध में होटल तथा अन्य ऐसी ही जन सम्पत्तियों का प्रयोग किया जाता है जिन्हें प्रत्यक्ष रूप से मूल्यांकित किया जा सकता है। उनके साथ साधारण व्यवहार किया गया और उनके वार्षिक मूल्य के आधार पर रेट निर्धारित की गई। बाकी सम्पत्तियों को रेटिंग से मुक्त रखा गया। कारखानों को रेट्स के स्थान पर वार्षिक भुगतान करना होता है।ये वार्षिक भुगतान इंगलैण्ड तथा वेल्स स्थित सभी स्थानीय सत्ताओं के लाभ के लिए होते हैं तथा इनके क्षेत्र के रेट युक्त मूल्यों के अनुरूप होते हैं।

रेटिंग तथा मूल्यांकन अधिनियम सन् १९५३ के द्वारा सम्पत्ति के मूल्यांकन में एक नए आधार को प्रारम्भ किया गया। घरों का रेट युक्त मूल्य उनके किराए पर आधारित किया। अन्य सम्पत्तियों, जैसे होटलों, कार्यालयों, दुकानों, सिनामाओं को वर्तमान मूल्य पर आधारित किया गया। यह स्पष्ट था कि इन सम्पत्तियों द्वारा रेट के एक बहुत बड़े भाग का भार वहन किया जा रहा था। सन् १९५७ के अधिनियम ने इन सम्पत्तियों के स्वामियों को राहत प्रदान करने के लिए सम्पत्तियों के बीस प्रतिशत भाग को रेट मुक्त कर दिया।

सन् १९५८ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने औद्योगिक क्षेत्रों को रेट भुगतान करने की मात्रा को बढ़ा दिया तथा अब उनको ७५ प्रतिशत के स्थान पर केवल ५० प्रतिशत रेट मुक्त रखा गया।

रेटिंग तथा मूल्यांकन अधिनियम १९६१ को १ अप्रेल, १९६३ से प्रारम्भ किया गया। इसके मुख्य प्रावधानों में प्रथम यह था कि निवास स्थानों का मूल्यांकन सन् १९३९ के मूल्यांकन की अपेक्षा वर्तमान के आधार पर किया गया। इस अधिनियम ने यह बताया कि बढ़ाए हुए रेट्स के कारण

स्वामित्व (Legal Posses ion) होता है, वास्तविक अधिकार (Actual Occupation) होता है तथा एक ऐसा सम्बन्ध होता है जो कि अधिक अस्थायी नहीं होता। एक अस्थायी निवासी का स्वामित्व ऐसा नहीं होता जिस पर रेट लगाया जा सके क्योंकि वह केवल उस कमरे का प्रयोग करने का अधिकार रखता है किन्तु उस पर कोई कानूनी स्वामित्व प्राप्त नहीं होता। एक किराएदार प्रायः सम्पत्ति का अधिकारी बन जाता है क्योंकि वह उस पर व्यापक स्वामित्व रखता है। वह एक प्रकार से सम्पत्ति का मालिक ही होता है क्योंकि असली स्वामी तो कभी सामने नहीं आता जब उस सम्पत्ति पर रेट लगाई जाएगी तो वह इस अधिकार के आधार पर लगाई जाएगी। यदि किसी बड़े भवन का स्वामी उसे कई भागों में विभाजित कर दे तो उसके प्रत्येक भाग पर रेट लगाई जा सकती है। इसके लिए यह देखना होगा कि स्वामित्व इतना अस्थायी तो नहीं है कि उस पर रेट न लगाई जा सके; उदाहरण के लिए यदि किसी भ्रमणकारी सर्कस के लिए कोई जमीन किराए पर दे दी जाए तथा उसे एक सप्ताह के लिए उस जमीन से सम्बंधित पूरे अधिकार प्रदान कर दिए जाएं तो भी हम यह नहीं कह सकते कि उस सर्कस पर रेट लगाई जाए। यह रेट तो उस व्यक्ति पर लगाई जाएगी जिसने सर्कस वालों को अपनी भूमि प्रदान की है। सर्कस को देने का तथ्य उस भूमि के मूल्यांकन का एक आधार बन जाएगा।

यद्यपि रेट देने का मुख्य उत्तरदायित्व अधिकृतकर्त्ता (Occupier) का ही होता है किन्तु फिर भी इसके कुछ सम्भव विकल्प होते हैं। यह सम्भव है कि रेट स्वामी (Owner पर लगाई जाये, चाहे वह उस सम्पत्ति का प्रयोग कर रहा है अथवा नहीं। यह भी सम्भव है कि रेट के उत्तरदायित्व को स्वामी तथा किरायेदार के बीच बांट दिया जाय यद्यपि ऐसा किया जाना बड़ा मुश्किल है। यह भी सम्भव है कि रेट का उत्तरदायित्व भवन में रहने वाले असली निवासी पर ही डाला जाए। जब रेटिंग व्यवस्था को प्रारम्भ में स्थापित किया गया था तो इसका भुगतान करने वालों के लिए निवासियों (Inhabitants) तथा पेरिशवासियों (Perishners) शब्दों का प्रयोग किया था। निवासी शब्द बहुत व्यापक एवं अनिश्चित है और इसमें उन लोगों को भी सम्मिलित किया जा सकता है जो कि कुछ समय एक स्थान पर रहते हैं और दूसरे समय दूसरे स्थान पर। यही कारण है कि प्रारम्भिक दिनों में न्यायालयों को इस समस्या पर पर्याप्त विचार करना पड़ा कि क्या रेट उन लोगों पर लगाई जाये जिनकी सम्पत्ति पेरिश में है किन्तु जो रहते उसके बाहर हैं।

सन् १५९७ के अधिनियम ने यह व्यवस्था की थी कि निर्धनों को राहत देने के लिए प्रत्येक निवासी एवं कथित पेरिश में भूमि पर अधिकार रखने वाले प्रत्येक व्यक्ति पर रेट लगाने चाहिए किन्तु बाद के अधिनियमों ने निवासी (Inhabitants) शब्द को हटा दिया। इसका कारण यह बताया जाता है कि किसी विशेष पेरिश के ओवरसीयर यह पता नहीं लगा पाते थे कि पेरिश से बाहर रहने वाले एक निवासी की सम्पत्ति एवं आय क्या है इसलिए उन्होंने अपनी जांच-पड़ताल को केवल अपनी पेरिश में अधिकृत की गई वास्तविक भूमि एवं घरों तक ही सीमित रखा। इस प्रकार धीरे-

धीरे रेट्स का दायित्व केवल निश्चित सम्पत्ति के अधिकारी पर ही आ गया। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि सम्पत्तिगत स्वामी ही उसका अधिकारी होता है और इस प्रकार स्वामी एवं अधिकारी दोनों पद ऐसे प्रसंगों में समानार्थक बन जाते हैं; किन्तु ऐसा प्राय: बहुत कम होता है। वर्षों से इस बात का झगड़ा चला आ रहा है कि रेट्स का भुगतान करने का उत्तरदायित्व मुख्यतः किसका होना चाहिये तथा उसका जो अन्तिम परिणाम है, क्या वह न्यायपूर्ण है। इस प्रश्न पर विचार करने के लिए एक के बाद एक समिति नियुक्त की गई और एक के बाद एक सरकार ने इसे अपने विचार का विषय बनाया।

आर० एम० जैक्सन ने बताया है कि सम्पत्ति का अधिकार (Occupation) ऐसा होना चाहिए जो कि सामान्यतः उपयोगी कहा जा सके किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि वह लाभदायक हो।* उन्होंने बताया है कि यदि मैं एक दुकान पर अधिकार रखता हूं और अपने व्यापार में मुझे निरन्तर हानि हो रही है तो भी मेरा अधिकार (Occupation) इस अर्थ में उपयोगी रहेगा कि मैं उस दुकान का प्रयोग तो कर रहा हूँ और इसलिए मुझे उससे कुछ उपयोग भी मिल रहा है। इस सिद्धान्त का मुख्य प्रयोग रिक्त सम्पत्ति के सम्बन्ध में किया जा सकता है। यदि किसी घर में फर्नीचर को डाल कर उससे स्टोर का काम लिया जाता है तो निश्चय ही यह अधिकार उपयोगी माना जायगा। इसी प्रकार से एक ऐसे रिक्त भवन को भी उपयोगी कहा जा सकता है जो कि संकट-काल में प्रयोग के लिए सुरक्षित रखा गया है। कोई भी सम्पत्ति केवल इसी हालत में रेट योग्य नहीं होती जब कि वह रिक्त है तथा उसका स्वामी उसे बेचने या किराये पर उठाने की फिराक में है, साथ ही वह उसका कोई उपयोग भी नहीं कर रहा है।

रेट्स के लिए सम्पत्ति का मूल्यांकन [Assessment of Property for Rates]—एक व्यक्ति द्वारा प्रदान किये जाने वाले रेट की मात्रा उसकी सम्पत्ति के रेट योग्य मूल्य पर निर्भर करती है। यदि निर्धारित रेट प्रदान न किये जा सकें तो रेटिंग सत्ता को यह अधिकार है कि वह सम्मन जारी करने के लिए न्यायालय को कहे। ऐसा होने पर भी यदि सम्बन्धित व्यक्ति उपस्थित न हो सके तो वह वारन्ट जारी करा सकता है। इस वारन्ट के द्वारा सत्ता को यह शक्ति प्राप्त हो जाती है कि वह सम्बन्धित व्यक्ति के माल की कुड़की कर ले तथा उसके साज-सामान को बेच कर अपनी रेट्स के धन की मात्रा को वसूल कर ले। यदि सब कुछ बेचने के बाद भी पूरा धन प्राप्त न हो सके तो दोषी व्यक्ति को जेल भेजा जा सकता है किन्तु ऐसा केवल तभी किया जायगा जब कि दोषी व्यक्ति ने जानबूझ कर ऐसा व्यवहार किया है। यदि रेटिंग सत्ता यह सोचे कि दोषी व्यक्ति अपनी गरीबी के कारण भुगतान न कर सका तो वह रेट के धन को आंशिक रूप से या पूरी तरह कम कर सकती है।

---

*"The occupation must be what is generally called 'beneficial', but that is a very misleading term because it does not mean that it must be profiteble."

—*R. M. Jackson*, Op. cit., P. 167

है तो यह तर्क दिया जा सकता है कि मुझे उस सम्पत्ति का प्रयोग निवास-स्थान के रूप में नहीं करना चाहिए किन्तु दुकान या कार्यालय के रूप में उसे बदल कर उसका अधिक से अधिक लाभ उठाना चाहिए। ऐसा करने पर भी जब कभी उस भवन का रेट के लिए मूल्यांकन किया जाये तो यही देखा जायेगा कि निवास स्थान के रूप में उस भवन का वार्षिक मूल्य क्या है। उसके लाभपूर्ण प्रयोग की बात को तथा उसके स्थान के महत्व को ध्यान में नहीं रखा जायेगा।

एक भवन का वार्षिक मूल्य जानने के लिए यह देखना होगा कि यदि मकान मालिक द्वारा इसकी मरम्मत तथा बीमा का खर्च किया जाये और किरायेदार द्वारा किराये की रेट तथा कर दिये जायें तो इस भवन का वार्षिक किराया क्या हो सकता है। वह कल्पनात्मक किरायेदार कितना धन देगा, इस बात का पता लगाने के लिए कई एक तरीकों को काम में लाया जा सकता है। इनमें प्रथम यह है कि साधारण घरों, दुकानों, कार्यालयों आदि के बारे में हम यह आसानी से पता लगा सकते हैं कि यदि इनको किराये पर उठाया जाता तो कितना किराया प्राप्त हो सकता था। ऐसी सम्पत्तियों के बारे में हम बाजार की ज्ञात बातों के आधार पर अनुमान लगा सकते हैं। यहां हमारा सम्बन्ध भवन के वास्तविक किराये से कतई नहीं रहता है क्योंकि यह बाजार मूल्य से कम भी हो सकता है और अधिक भी। दूसरे, जहां कहीं सम्पत्ति के वास्तविक मूल्य का अनुमान लगाने के लिए पर्याप्त बाजार न हो अर्थात् उदाहरणों को देख कर अन्दाजा लगाने की सुविधा न हो, वहां भूमि व उस पर बनाये गए भवन की रचना की लागत[Capital Value] को देख कर कुछ अनुमान लगाना होगा। पूंजीगत मूल्य जानने के बाद यह विचार करना होगा कि इतनी सम्पत्ति का न्यायपूर्ण प्रतिदान कितना होना चाहिए तथा सम्पत्ति का स्वामी उसे किराये पर देना चाहे तो वह कितना किराया प्राप्त करना चाहेगा। तीसरे, कुछ सम्पत्तियां ऐसी भी होती हैं जिनके बारे में हम किरायेदार की कल्पना ही नहीं कर सकते। यह बात अनेक सार्वजनिक कम्पनियों एवं सार्वजनिक उपयोगिताओं के बारे में सच है। इन सभी मामलों में व्यवहार यह रहता है कि प्राप्त किये गये लाभ की मात्रा पर विचार करने के बाद कोई निर्णय लिया जाये। एक बार एक ऐसे चिड़िया घर का मूल्यांकन करना था जिसमें कि जनता धन देकर प्रवेश पाती थी। इस मूल्यांकन के समय भी इसी सिद्धान्त को अपनाया गया।

प्रारम्भ से ही कई एक सम्पत्तियों को रेट का भुगतान करने से मुक्त रखा गया है। क्राउन की सम्पत्ति, स्कूल एवं अन्य भवनों पर किसी प्रकार का रेट वसूल नहीं किया जाता। सम्पत्ति के कुछ ऐसे भी रूप हैं जो कि अपने मूल्यांकन से कम अनुपात में भुगतान करते हैं। इस प्रकार सम्पत्ति का कुल मूल्य [Net Value] तथा रेटयोग्य मूल्य [Ratable Value] दो अलग-अलग बातें हैं।

रेटिंग व्यवस्था की अनेक विशेषतायें हैं जो वैसे तो सरल हैं किन्तु आसानी से दिखाई नहीं देती हैं। इनमें से एक विशेषता यह है कि मूल्यांकनों को एक दूसरे के सम्बन्ध में अधिक नहीं होना चाहिए, इनका पूर्ण रूप से सही

होना जरूरी नहीं है। मूल्यांकन करते समय सभी क्षेत्रों में यथासम्भव एकरूपता बनाये रखनी चाहिए। जैसा कि पहले भी बताया जा चुका है, काउन्टी में मूल्यांकन में एकरूपता लाने के लिए एक विशेष समिति स्थापित की गई जो कि प्रत्येक काउन्टी जिले के अधिकारियों द्वारा किये गये मूल्यांकनों को देखने का कार्य करती है। राष्ट्रीय समिति द्वारा सामान्य परामर्श दिया जाता है। विश्व-युद्ध के बाद स्थिति में परिवर्तन आ गया। दो महत्वपूर्ण तत्वों ने मूल्यांकन के पुराने तरीके को असंतोषजनक बना दिया। केन्द्रीय सरकार के अनुदानों की नवीन व्यवस्था की मांग की गई तथा इसके लिए प्रत्येक क्षेत्र के वित्तीय स्रोतों का लेखा देखना जरूरी था। जब केन्द्रीय धन के वितरण का यह आधार बनाया गया तो यह जरूरी हो गया कि देश भर में रेट्स के लिए सम्पत्ति के मूल्यांकन का एक जैसा आधार ही काम में लाया जाये। यह समझा गया कि मूल्यांकन के कार्य को अनेक स्थानीय सत्ताओं के हाथों में ही नहीं छोड़ा जा सकता। इसी विचार से प्रभावित हो कर १९४८ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने मूल्यांकन करने का कार्य स्थानीय सत्ता के हाथों से लेकर केन्द्रीय सरकार के अन्तर्देशीय राजस्व विभाग (Inland Revenue Deptt.) को सौंप दिया। दूसरा महत्वपूर्ण तत्व यह था कि निवास स्थानों का मूल्यांकन करने का कल्पनात्मक किरायेदार का पुराना तरीका अब अनुपयुक्त सिद्ध हुआ। यह तरीका उस समय तो उपयुक्त था जबकि घरों का किराया तय करने के लिए एक स्वतन्त्र बाजार था किन्तु बहुत वर्ष बीते ग्रेट ब्रिटेन में अब यह नहीं रह गया है, वहां प्रथम विश्व-युद्ध के दौरान छोटे घरों का किराया उसी स्तर पर रखने का प्रयास किया गया जो कि १९१४ में था।

सन् १९२० में तथा उसके बाद स्थानीय सत्ताओं ने एक बड़ी मात्रा में आवास गृहों की रचना की। इन घरों को अलग-अलग मात्रा में सहायता प्रदान की गई। इस समय घरों की अनेक श्रेणियां हैं, इसलिए जब हम यह विचार करने लगते हैं कि एक घर विशेष का किराया हमारा कल्पनात्मक किरायेदार कितना दे सकेगा, तो हम भ्रम में पड़ जाते हैं। यदि किसी क्षेत्र में निश्चित किराये वाले अधिकांश घर हों तो हमको यह देखना होगा कि वास्तव में लोग वहां क्या किराया दे रहे हैं और उसी को उचित किराया मानना पड़ेगा। यही स्थिति उस समय भी रहेगी जबकि एक ही प्रकार के अनेक परिषद-गृह हों। जैक्सन महोदय का यह कहना पूरी तरह से सही है कि इंगलैंड में वर्षों से मांग व पूर्ति के आधार पर निश्चित किराये वाले मकान मालिकों से मिल जाते है और इस प्रकार स्वतन्त्र बाजार पर आधारित कल्पनात्मक किरायेदार की जांच अब काम नहीं करती।* ऐसी स्थिति में कोई अन्य तरीका निकालने के लिये व्यवस्थापन किया गया। मूल्यांकन का

---

*"It is so many years since houses have been available to let in England at rents fixed by supply and demand that the test of a hypothetical tenant, which supposes a free market, has become unworkable."

—*R. M. Jackson*. Op. cit , P. 172.

प्रथम आधार इस शर्त को बनाया गया जो कि प्रत्येक प्रकार के मकान की रचना में व्यय हुआ है। जब अन्तर्देशीय राजस्व विभाग ने इस आधार को अपनाने का प्रयत्न किया तो पाया कि यह वास्तव में उपयोगी नहीं था। अतः सन् १९५३ में एक दूसरा आधार अपनाया गया। इसके अनुसार एक घर का किराया उतना तय किया गया, जो कि जून १९३९ के अन्त में उस बस्ती में प्रभावशील था। इस आधार को अपनाते समय यह देखना जरूरी था कि घर तथा बस्ती की परिस्थितियाँ मूल्यांकन करते समय भी ऐसी ही हों। कुल मिलाकर यह एक कठिन समस्या थी।

मूल्यांकन की व्यवस्था चाहे कैसी भी अपनायी जाये किन्तु अपील करने के लिए अवकाश का होना जरूरी था। वर्तमान इंगलैंड का कानून स्थानीय मूल्यांकन न्यायालय की स्थापना करता है जिसमें एक वकील को सभापति बनाया जाता है तथा अन्य दो सदस्य उस क्षेत्र की सूची द्वारा बनायी गई पैनल के सामान्य (गैर-विशेषज्ञ) सदस्य होते हैं। इस न्यायालय के निर्णय अन्तिम नहीं होते; इनके विरुद्ध भी अपील की जा सकती है। यह अपील भूमि पंचनिर्णय के लिए की जाती है जो कि उच्च स्तर का राष्ट्रीय पंचनिर्णय होता है। यह मूल्यांकन अनेक विषयों से सम्बन्धित होता है।

रेट्स को वर्ष में दो बार संग्रहीत किया जाता है। कई वर्गों तथा व्यापारिक भवनों से सम्बन्धित रेट्स की मांग अधिकृत कर्ता (Occupier) से की जाती है और वह प्रत्यक्ष रूप से रेटिंग सत्ता के लिए भुगतान करता है। संयुक्तीकरण (Compounding) की व्यवस्था भी हो सकती है जिसके अनुसार मकान मालिक अपने सभी किरायेदारों से किराये के साथ-साथ रेट्स की रकम भी वसूल कर लेता है और सबको मिलाकर एक साथ ही वह रेटिंग सत्ता को सौंप देता है। छोटी सम्पत्ति का स्वामी इस प्रकार से कार्य कर सकता है जबकि दूसरी सम्पत्तियों के सम्बन्ध में स्वामी तथा रेटिंग सत्ता के बीच समझौता हो सकता है। इस प्रकार मजदूर वर्ग के सभी मकानों के बारे में इसी प्रकार का प्रबन्ध कर दिया जाता है। इसका लाभ यह होता है कि किरायेदार रेट्स का भुगतान साप्ताहिक रूप से कर देता है और उसको अर्द्धवार्षिक भुगतान के लिए पैसा बचाने की आवश्यकता नहीं रह जाती। भूस्वामी जिस प्रकार अपना किराया इकट्ठा करता है, उसी प्रकार रेट्स भी एकत्रित कर लेता है। इस प्रकार किसी पेचीदगी या अतिरिक्त श्रम की आवश्यकता नहीं होती। भूस्वामी धन को रखने का तरीका जानता है तथा वह भविष्य के लिए सावधान बना रहता है और तभी वह अर्द्धवार्षिक रूप से रेट्स को सम्बन्धित सत्ता को सौंपने में किसी प्रकार की कठिनाई का अनुभव नहीं करता। इस प्रकार रेट का संग्रह सस्ता पड़ता है। इसकी एक हानि यह है कि जब लोग साप्ताहिक रूप से भुगतान करते हैं तो उनको ऐसा लगता है मानो वे इतना धन किराये में ही दे रहे हों। कई एक सत्तायें इसी कारण जानबूझ कर इस तरीके से काम नहीं लेतीं। वे स्वयं रेट्स का संग्रह सीधे किरायेदार से ही करती हैं ताकि लोगों को यह

अनुभव होता रहे कि वे जो सेवायें प्राप्त करते हैं उनके लिये उन्हें भुगतान भी करना होता है।

रेटिंग व्यवस्था के गुण-दोष [**Merits and Demerits of the Rating System**]—इस सम्बन्ध में पर्याप्त वाद-विवाद होता रहता है कि इंगलैंड की रेटिंग व्यवस्था स्थानीय उद्देश्यों के लिये धन संग्रह का एक उचित साधन है अथवा नहीं है। रेटिंग व्यवस्था प्रत्येक कर व्यवस्था की तरह न तो पूरी तरह से अच्छी है और न ही पूरी तरह से खराब ही। इसके लाभ भी हैं और हानियां भी।

वर्तमान रेटिंग व्यवस्था की प्रथम हानि यह बतायी जाती है कि यह दूसरे करों की तुलना में अन्यायपूर्ण है; उदाहरण के लिये हम आय कर को ले सकते हैं। इस कर का योगदान भुगतान की योग्यता पर आधारित रहता है। व्यक्ति के योगदान से उसको क्या लाभ मिलेगा इसका कोई लेखा नहीं रखा जाता किन्तु रेटिंग व्यवस्था के पीछे जो सिद्धांत कार्य करता है; वह इससे भिन्न प्रकार का है। यह सोचा गया था कि रेट एक प्रकार से ऐसा कर है जो कि व्यक्ति को प्राप्त की गई सेवाओं के बदले में देना होता है। जितनी सेवायें वह प्राप्त करेगा उतनी ही रेट्स का वह भुगतान करेगा। प्रारम्भ में जब स्थानीय सत्ता द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवायें थोड़ी थीं तो यह निश्चय करना सरल होता था कि एक व्यक्ति को कितना योगदान करना चाहिये। यह सोचना पूर्णतः उपयुक्त प्रतीत होता है कि एक व्यक्ति की भूमि का क्षेत्र जितना बड़ा होगा वह नाली, सड़क, पुल आदि से उतना ही अधिक लाभ उठायेगा। रेट्स के मूल्यांकन का यह आधार समस्यात्मक बन जाता है। इसका कारण यह है कि किसी व्यक्ति का घर बड़ा होने का अर्थ यह नहीं हो जाता कि वह एक समर्थ एवं अधिक धनवान व्यक्ति है। [illegible] प्रवृत्ति के अनुसार लोग छोटे घरों में रहना तथा धन को किसी अन्य [illegible] में लगाना अच्छा मानते हैं। एक खर्चीली [illegible] का मूल्य ही एक [illegible] घर के मूल्य से अधिक हो सकता है। रेटिंग व्यवस्था उन लोगों को [illegible] करती है जिनको अधिक बड़े स्थान की आवश्यकता है। जिन लोगों का परिवार बड़ा होता है उनका खर्च भी बड़ा होता है किन्तु [illegible] [illegible] कम रहती है। इन्हें अपना मकान भी बड़ा रखना होता है और [illegible] अधिक रेट्स का भुगतान करना होता है। इस स्थिति से स्पष्ट हो जाता है कि छोटे परिवार वाले समर्थ व्यक्ति रेट्स कम देंगे और बड़े परिवार वाले असमर्थ व्यक्ति को अधिक रेट्स प्रदान करने होंगे। इस अर्थ में यह व्यवस्था अन्यायपूर्ण कही जाती है।

दूसरे, रेटिंग की इस व्यवस्था को निर्धन [illegible] के सम्बन्ध में नहीं अपनाया जा सकता क्योंकि जो लोग इस सेवा का लाभ उठाते हैं वे भुगतान करने की सामर्थ्य ही नहीं रखते।

तीसरे, यह रेटिंग व्यवस्था अच्छे प्रकार के घरों के [illegible] को रोकती है। यदि कोई व्यक्ति अपने घर का विस्तार करना चाहे तो स्वाभाविक है कि उसके घर का मूल्यांकन अधिक हो जायेगा और उसको अधिक रेट्स का भुगतान करना होगा। ऐसी स्थिति में वह यह सोचेगा कि मकान का [illegible]

विस्तार के साथ विचार किया। इस समिति ने सन् १९५२ में अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। इस समिति का निष्कर्ष था कि इस प्रकार का प्रयास नहीं किया जाना चाहिए। यह कहा जाता है कि यदि मूल्यांकन की प्रक्रिया में कोई परिवर्तन किया जाय तो यह परिवर्तन इस प्रकार किया जाना चाहिए कि सम्पत्तियों का मूल्यांकन उनके पूंजीगत मूल्य के आधार पर किया जाए। पूंजीगत मूल्य स्वतः ही वातावरण एवं अन्य सुविधाओं के मूल्य को तथा उसकी सामर्थ्य को अपने ध्यान में रख लेगा। जब रेटिंग व्यवस्था की आलोचना की जाती है तथा जिन आधारों पर की जाती है वे आधार ऐसे हैं कि उनको अपनाया नहीं जा सकता। इसमें किसी प्रकार का सुधार तभी हो सकता है जब कि कर की प्रकृति को बदल दिया जाए। इसी प्रकार से पतनोन्मुख विशेषता (Regressive Characteristic) भी उसकी एक निहित विशेषता है। यदि इसे सुधारना है तो पूर्ण रूप से दूसरे प्रकार का कर लगाना पड़ेगा। जहां तक अधिकार-कर्ताओं (Occupiers) की अपेक्षा स्वामियों (Owners) पर कर लगाने का प्रश्न है, इसके सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि स्वामी अपने ऊपर लगाए गए कर के भार को अधिकारकर्ता पर ही डाल देगा अर्थात् उसका किराया बढ़ा देगा। रेटिंग व्यवस्था के हानि-लाभों पर विचार करने के बाद यह कहा जा सकता है कि इसमें हानियों की अपेक्षा लाभ अधिक हैं इसीलिए यह अब तक बनी रही और मूलतः अपने वर्तमान रूप में ही बनी रहेगी।*

स्थानीय कर के अन्य रूप

[Others Forms of Local Taxes]

वर्तमान समय की प्रवृत्तियां कुछ इस प्रकार की हैं कि स्थानीय सत्ताओं के कार्य निरन्तर बढ़ते ही जा रहे हैं और इन कार्यों के साथ-साथ इनका खर्च भी बढ़ता जा रहा है। यह कहा जाता है कि निकट भविष्य में इस प्रवृत्ति के रुकने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता, इसके विपरीत यह और अधिक बढ़ती चली जाएगी। ऐसी स्थिति में स्थानीय राजस्व के लिए अन्य व्यवस्था करना परमावश्यक बन जाता है। धन का मूल्य परिवर्तित होने के कारण भी स्थानीय सत्ताओं के व्यय में पर्याप्त वृद्धि हुई है। स्थानीय सत्ताओं के खर्च को चलाने के लिए केन्द्रीय सरकार द्वारा अनुदान दिया जाता है और इसके परिणामस्वरूप स्थानीय सत्ताएं केन्द्रीय सरकार पर अधिक निर्भर हो जाती हैं। स्थानीय नियन्त्रण को कम करने के लिए और उसके बढ़ते हुए उत्तरदायित्वों को सम्पन्न करने की सुविधा देने के लिए यह जरूरी बन जाता है कि स्थानीय करों के अन्य रूपों की तलाश की जाए। इस सम्बन्ध में सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि ब्रिटिश स्थानीय सरकार में अन्य प्रकार के कर प्रचलित नहीं हैं और रेट्स ही एक मात्र स्थानीय राजस्व का स्रोत लगता है यदि स्थानीय सरकार के अत्यधिक व्यय का प्रबन्ध स्थानीय रूप में ही करना हो

---

*"Rating has survived and will continue in substantially form because on the whole its merits are its de-merits."

—*R. M. Jackson*, Op. cit., P. 177.

तो इसके लिए रेट्स की मात्रा को बढ़ाना पड़ेगा। स्थानीय राजस्व को इस रूप में बढ़ाने के विरुद्ध विचारकों द्वारा कई एक तकनीकी समस्याएं उठाई जाती हैं तथा यह सुझाया जाता है कि स्थानीय राजस्व का संग्रह करने के लिए कोई नया तरीका ही ढूंढा जाए। ऐसा करना दो कारणों से महत्वपूर्ण माना जाता है। प्रथम इसलिए कि अतिरिक्त तरीकों के कारण रेट को पौंड से ऊंचा नहीं ले जाना पड़ेगा और दूसरे, स्थानीय कर का कुल स्तर ऊंचा होने से केन्द्रीय सरकार का नियन्त्रण स्थानीय सत्ताओं पर अत्यधिक न रहेगा। विश्व भर में स्थानीय सत्ताएं करों के अनेक रूपों का प्रयोग करती हैं किन्तु इंगलैण्ड को इसका एक अपवाद माना जाता है क्योंकि यहां केवल एक ही प्रकार का कर लगाया जाता है। फिर भी यह कहा जाता है कि यदि यहां स्थानीय करों के क्षेत्र को विस्तृत कर दिया जाए तो अनुपयुक्त न रहेगा।

आय के अन्य साधन ढूंढने की आवश्यकता, देश के प्रायः उन भागों को पड़ती है जो कि अपेक्षाकृत गरीब हैं, आकर्षणहीन हैं और जिनकी सम्पत्ति के मूल्य नीचे होते हैं। इन क्षेत्रों के जो लोग अधिक धन देने की सामर्थ्य रखते हैं और अपेक्षाकृत सम्पन्न हैं तो वे या तो ऐसे क्षेत्र को छोड़ कर चले जाते हैं अथवा उसके प्रति किसी प्रकार का आकर्षण नहीं रखते। बाकी लोगों की भुगतान करने की सामर्थ्य बहुत थोड़ी होती है और इस प्रकार स्थानीय सत्ता के राजस्व का उसकी आवश्यकताओं से साथ कोई सम्बन्ध नहीं रहता। यहां एक बात और भी उल्लेखनीय है कि निर्धन क्षेत्रों में सम्पन्न क्षेत्रों की अपेक्षा अधिक सेवाओं की आवश्यकता होती है किन्तु वे नहीं प्रदान कर सकतीं। स्थानीय सत्ताओं के राजस्व असमानता को दूर करने के लिए केन्द्रीय सरकार निर्धन सत्ताओं को अधिक अनुदान देती है किन्तु यह प्रयास सामयिक होता है और बाद में रेटिंग व्यवस्था को बदलना अधिक जरूरी बन जाता है। कुल मिला कर यह कहा जा सकता है कि यदि स्थानीय सत्ताएं अपने स्तर को बनाए रखना चाहती हैं तो वे केन्द्रीय सत्ताओं पर अधिक आश्रित बन जाएं। इसका अर्थ यह होगा कि स्थानीय सरकार कई एक सेवाओं को केन्द्रीय सरकार के निकायों अथवा दूसरे सत्ताओं को सौंप देगी। स्थानीय सत्ताओं को आय के अन्य स्रोत ढूंढने ही होंगे क्योंकि इनका विकल्प अनेक हित में नहीं रहता किन्तु ऐसा करना भी कोई सरल काम नहीं है। इसका एक प्रत्यक्ष प्रमाण इस रूप में ही प्राप्त हो जाता है कि रेटिंग व्यवस्था दोषपूर्ण होते हुए भी चली आ रही है।

विस्तार के साथ विचार किया । इस समिति ने सन् १९५२ में अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया । इस समिति का निष्कर्ष था कि इस प्रकार का प्रयास नहीं किया जाना चाहिए । यह कहा जाता है कि यदि मूल्यांकन की प्रक्रिया में कोई परिवर्तन किया जाय तो यह परिवर्तन इस प्रकार किया जाना चाहिए कि सम्पत्तियों का मूल्यांकन उनके पूंजीगत मूल्य के आधार पर किया जाए । पूंजीगत मूल्य स्वतः ही वातावरण एवं अन्य सुविधाओं के मूल्य को तथा उसकी सामर्थ्य को अपने ध्यान में रख लेगा । जब रेटिंग व्यवस्था की आलोचना की जाती है तथा जिन आधारों पर की जाती है वे आधार ऐसे हैं कि उनको अपनाया नही जा सकता । इसमें किसी प्रकार का सुधार तभी हो सकता है जब कि कर की प्रकृति को बदल दिया जाए । इसी प्रकार से पतनोन्मुख विशेषता (Regressive Characteristic) भी उसकी एक निहित विशेषता है । यदि इसे सुधारना है तो पूर्ण रूप से दूसरे प्रकार का कर लगाना पड़ेगा । जहां तक अधिकार-कर्ताओं (Occupiers) की अपेक्षा स्वामियों (Owners) पर कर लगाने का प्रश्न है, इसके सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि स्वामी अपने ऊपर लगाए गए कर के भार को अधिकारकर्त्ता पर ही डाल देगा अर्थात् उसका किराया बढ़ा देगा । रेटिंग व्यवस्था के हानि-लाभों पर विचार करने के बाद यह कहा जा सकता है कि इसमें हानियों की अपेक्षा लाभ अधिक हैं इसीलिए यह अब तक बनी रही और मूलतः अपने वर्तमान रूप में ही बनी रहेगी ।*

स्थानीय कर के अन्य रूप

[Others Forms of Local Taxes]

वर्तमान समय की प्रवृत्तियां कुछ इस प्रकार की हैं कि स्थानीय सत्ताओं के कार्य निरन्तर बढ़ते ही जा रहे हैं और इन कार्यों के साथ-साथ इनका खर्च भी बढ़ता जा रहा है । यह कहा जाता है कि निकट भविष्य में इस प्रवृत्ति के रुकने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता, इसके विपरीत यह और अधिक बढ़ती चली जाएगी । ऐसी स्थिति में स्थानीय राजस्व के लिए अन्य व्यवस्था करना परमावश्यक बन जाता है । धन का मूल्य परिवर्तित होने के कारण भी स्थानीय सत्ताओं के व्यय में पर्याप्त वृद्धि हुई है । स्थानीय सत्ताओं के खर्च को चलाने के लिए केन्द्रीय सरकार द्वारा अनुदान दिया जाता है और इसके परिणामस्वरूप स्थानीय सत्ताएं केन्द्रीय सरकार पर अधिक निर्भर हो जाती हैं । स्थानीय नियन्त्रण को कम करने के लिए और उसके बढ़ते हुए उत्तरदायित्वों को सम्पन्न करने की सुविधा देने के लिए यह जरूरी बन जाता है कि स्थानीय करों के अन्य रूपों की तलाश की जाए । इस सम्बन्ध में सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि ब्रिटिश स्थानीय सरकार में अन्य प्रकार के कर प्रचलित नहीं हैं और रेट्स ही एक मात्र स्थानीय राजस्व का स्रोत लगता है यदि स्थानीय सरकार के अत्यधिक व्यय का प्रबन्ध स्थानीय रूप में ही करना हो

---

*"Rating has survived and will continue in substantially its present form because on the whole its merits are greater than its de-merits."
—*R. M. Jackson*, Op. cit., P. 177.

तो इसके लिए रेट्स की मात्रा को बढ़ाना पड़ेगा। स्थानीय राजस्व को इस रूप में बढ़ाने के विरुद्ध विचारकों द्वारा कई एक तकनीकी समस्याएं उठाई जाती हैं तथा यह सुझाया जाता है कि स्थानीय राजस्व का संग्रह करने के लिए कोई नया तरीका ही ढूंढा जाए। ऐसा करना दो कारणों से महत्वपूर्ण माना जाता है। प्रथम इसलिए कि अतिरिक्त तरीकों के कारण रेट को पौंड से ऊंचा नहीं ले जाना पड़ेगा और दूसरे, स्थानीय कर का कुल स्तर ऊंचा होने से केन्द्रीय सरकार का नियन्त्रण स्थानीय सत्ताओं पर अत्यधिक न रहेगा। विश्व भर में स्थानीय सत्ताएं करों के अनेक रूपों का प्रयोग करती हैं किन्तु इंगलैण्ड को इसका एक अपवाद माना जाता है क्योंकि यहां केवल एक ही प्रकार का कर लगाया जाता है। फिर भी यह कहा जाता है कि यदि यहां स्थानीय करों के क्षेत्र को विस्तृत कर दिया जाए तो अनुपयुक्त न रहेगा।

आय के अन्य साधन ढूंढने की आवश्यकता, देश के प्रायः उन भागों को पड़ती है जो कि अपेक्षाकृत गरीब हैं, आकर्षणहीन हैं और जिनकी सम्पत्ति के मूल्य नीचे होते हैं। इन क्षेत्रों के जो लोग अधिक धन देने की सामर्थ्य रखते हैं और अपेक्षाकृत सम्पन्न हैं तो वे या तो ऐसे क्षेत्र को छोड़ कर चले जाते हैं अथवा उसके प्रति किसी प्रकार का आकर्षण नहीं रखते। बाकी लोगों की भुगतान करने की सामर्थ्य बहुत नीची होती है और इस प्रकार स्थानीय सत्ता के राजस्व का उसकी आवश्यकताओं के साथ कोई सम्बन्ध नहीं रहता। यहां एक बात और भी उल्लेखनीय है कि निर्धन क्षेत्रों में सम्पन्न क्षेत्रों की अपेक्षा अधिक सेवाओं की आवश्यकता होती है जिन्हें वे नहीं प्रदान कर सकतीं। स्थानीय सत्ताओं में व्याप्त असमानता को दूर करने के लिए केन्द्रीय सरकार निर्धन सत्ताओं को अधिक अनुदान देती है किन्तु यह प्रयास सामयिक होता है और बाद में रेटिंग व्यवस्था को बदला जाना जरूरी बन जाता है। कुल मिला कर यह कहा जा सकता है कि यदि स्थानीय सत्ताएं अपने स्तर को बनाए रखना चाहती हैं तो वे केन्द्रीय सत्ताओं पर अधिक आश्रित बन जाएं। इसका अर्थ यह होगा कि स्थानीय सरकार कई एक सेवाओं को केन्द्रीय सरकार के निकायों अथवा दूसरे संगठनों को सौंप देगी। स्थानीय सत्ताओं को आय के अन्य स्रोत ढूंढने ही होंगे क्योंकि इसका विकल्प अनेक हित में नहीं रहता किन्तु ऐसा करना भी कोई सरल काम नहीं है। इसका एक प्रत्यक्ष प्रमाण इस तथ्य से ही प्राप्त हो जाता है कि रेटिंग व्यवस्था दोषपूर्ण होते हुए भी चली आ रही है।

यह स्वाभाविक है कि स्थानीय जनता नए प्रकार के कर लगाने में रुचि नहीं लेगी। जिस देश में करों का स्तर पहले से ही बहुत ऊंचा हो तो वहां नए कर लगाने के किसी भी प्रस्ताव का स्वागत नहीं किया जाएगा। ऐसी स्थिति में नए कर लगाना पूर्णतः अनुपयुक्त एवं असम्भव सा है किन्तु यह किया जा सकता है कि वर्तमान कर व्यवस्था में ही परिवर्तन करके समायोजन किया जाए। यह कहा जाता है कि यदि स्थानीय सत्ताएं वर्तमान की अपेक्षा करों द्वारा अधिक धन का संग्रह कर सकें तो उन्हें केन्द्रीय सरकार द्वारा दिए गए अनुदान की आवश्यकता नहीं रहेगी। इससे केन्द्रीय कोषाध्यक्ष का भार हलका हो जाएगा, फलतः केन्द्रीय कर कम कर दिए जाएं। यह

प्रक्रिया अत्यन्त महत्वपूर्ण है क्योंकि केन्द्रीय सरकार अपने करों के किसी भी क्षेत्र को उस समय तक नहीं छोड़ना चाहती जब तक कि उसे धन की आवश्यकता से मुक्ति प्रदान न कर दी जाए। इस स्थिति का उदाहरण देते हुए आर० एम० जैक्सन ने मनोरंजन कर का उल्लेख किया है। वे बताते हैं कि एक व्यक्ति जो सिनेमा जाता है और टिकट खरीदता है, वह जानता है कि उसके टिकट का एक भाग केन्द्रीय सरकार को जाएगा। यदि कर का यह भाग केन्द्रीय सरकार को न जा कर स्थानीय सत्ता को चला जाए तो सिनेमा दर्शक की जेब पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा किन्तु इससे कोषाध्यक्ष को करीब चार करोड़ पौंड प्रति वर्ष की हानि होगी। इतना धन वह स्थानीय सत्ताओं को दिए जाने वाले अनुदान को रोक कर बचा सकता है और इस तरह से उसे कोई हानि नहीं रहेगी; किन्तु मुश्किल यह है कि मनोरंजन कर की भांति ऐसे कर बहुत कम हैं जिनको स्थानीय सत्ता के लिए हस्तान्तरित किया जा सके।

स्थानीय राजस्व की स्थिति को सुधारने के लिए एक अन्य महत्वपूर्ण सुझाव यह दिया जाता है कि स्थानीय आयकर को प्रारम्भ किया जाए। रेटिंग व्यवस्था को समाप्त नहीं किया जा सकता। इसकी परम्पराएं बहुत पुरानी हैं तथा इनको अच्छी तरह से जांचा जा सकता है। इनका उपयोगी स्थायी तथा व्यापक है। इसकी कठिनाइयां गम्भीर होते हुए भी पुरानी हैं और स्वीकृत हो चुकी हैं। स्थानीय आयकर लगाने की शक्ति स्थानीय सत्ताओं को देने का कई विचारकों द्वारा समर्थन किया जाता है। इस कर की शक्ति काउन्टीज तथा काउन्टी बारोज को दी जानी चाहिए। स्थानीय आयकर का सुझाव भी कई एक कठिनाइयों से पूर्ण है आयकर के संग्रह के लिए बड़े यन्त्र की आवश्यकता पड़ती है जो कि प्रायः किसी भी कर के संग्रह में आवश्यक नहीं होता। ऐसा यन्त्र स्थानीय स्तर पर स्थापित करना मुश्किल रहेगा इसलिए स्थानीय आयकर को मूल्यांकित करने तथा संग्रहीत करने का कार्य राष्ट्रीय व्यवस्था पर आधारित रहेगा। स्थानीय आयकर को व्यक्तिगत आमदनियों एवं रोजगारी प्राप्त करने वालों तथा वेतन भोगियों पर लगाने में अधिक कठिनाई नहीं होती क्योंकि वे पहले से ही अपनी आय में से कर को काटते हैं। वे स्थानीय सत्ता के लिए भी चाही गई मात्रा को भी कटा सकती है। यह कहा जाता है कि यदि एक व्यक्ति काउन्टी में रहता है और वह कार्य किसी काउन्टी बारो में करता है तो उसकी आय के कर को काउन्टी बारो द्वारा लिया जाएगा तथा काउन्टी उसके निवास स्थान पर लगाई गई रेट्स को ग्रहण करेगी।

स्थानीय आयकर का संग्रह किस प्रकार किया जाये, इसके सम्बन्ध में अलग-अलग मत हैं। कुछ लोग कहते हैं कि केन्द्रीय सरकार को अपनी कर की दरें बढ़ा देनी चाहिये और अतिरिक्त राजस्व में से धन स्थानीय सत्ताओं को वितरित कर देना चाहिये, किन्तु इस योजना के द्वारा अन्य प्रश्न उठ खड़े होते हैं; जैसे, केन्द्रीय सरकार यह किस प्रकार तय करेगी कि प्रत्येक स्थानीय सत्ता को कितना भाग दिया जाये। यदि इस व्यवस्था को रेट्स के स्थान पर रख दिया जाये तो स्थानीय सरकार का सारा धन केन्द्रीय सरकार

के हाथ में होकर आयेगा और इसके परिणामस्वरूप स्थानीय सत्ताओं पर केन्द्रीय नियन्त्रण वर्तमान से भी अधिक हो जायेगा। दूसरे लोगों का यह कहना है कि स्थानीय आयकर को संग्रहीत करने का केवल व्यावहारिक मार्ग यह है कि स्थानीय सत्ताएं अपने क्षेत्र के निवासियों की आय को इस कर का आधार बनाये। इस सुझाव का विरोध करने वाले यह कहते हैं कि स्थानीय कर के प्रशासन पर विचार करने के लिये अधिकारियों की एक बड़ी सेना की आवश्यकता थी तथा बहुत कुछ उस कार्य को दुहराया जायेगा जो कि अन्तर्देशीय राजस्व विभाग का किया जाता है। यह भी कहा जाता है कि जब इन लोगों की आय पर नियन्त्रण करने के लिये पहले से ही केन्द्रीय आयकर स्थित है तो फिर स्थानीय आयकर को और क्यों थोपा जाये। स्थानीय आयकर क्योंकि किसी अन्य निकाय द्वारा लगाया जायेगा जिसमें केन्द्रीय सरकार के राजनैतिक दल का प्रभाव भी हो सकता है और ऐसी स्थिति में वह निकाय अपनी शक्तियों का प्रयोग सरकार के उद्देश्य के विरुद्ध भी कर सकता है। इस कर के विरुद्ध एक आपत्ति यह उठाई जाती है कि निर्धन क्षेत्र वाली सत्ताएं अपने निवासियों की आय से अधिक राजस्व एकत्रित नहीं कर सकतीं और उनकी अभावग्रस्त स्थिति वैसी की वैसी बनी रहेगी। आयकर को अवितरित कम्पनी लाभों के ऊपर लगाना मुश्किल होता है। आयकर के सम्बन्ध में निश्चित रूप से स्थानीय कुछ भी नहीं होता। एक बड़ा व्यापारिक उद्यम अपनी विभिन्न शाखाओं द्वारा धन कमाता है और देश के विभिन्न भागों में वह कार्य करता है। कम्पनियों के लाभों को जब तक वितरित नहीं किया जाता है, उस समय तक उस पर कौन कर लगाया जाये, यह एक समस्या है।

आयकर की प्रकृति प्रगतिशील (Progressive) होती है और ऐसी स्थिति में यह सम्भावना व्यक्त की जाती है कि यह रेट्स की अवनतिशील विशेषता की प्रतिक्रिया करेगा।

आयकर के अतिरिक्त स्थानीय सरकार को कुछ अन्य कर सौंपने की भी मांग की जाती है। यह कहा जाता है कि जिन करों को वर्तमान में केन्द्रीय सरकार द्वारा लगाया जाता है, उनको स्थानीय सत्ताओं को हस्तान्तरित कर देना चाहिये। मनोरंजन कर को ऐसे कर के उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। एक दूसरा कर जिसे स्थानीय सत्ताओं को हस्तान्तरित किया जा सकता है वह है मोटर-गाड़ियों पर लगाया जाने वाला कर और चालक की लाइसेन्स फीस। ये कर इस समय काउन्टी परिषदों तथा काउन्टी बरोज द्वारा संग्रहीत किये जाते हैं। ये सत्तायें कोषाध्यक्ष के नाम पर [illegible] करती हैं। ये जितना भी धन इकट्ठा करती हैं उस सबको केन्द्रीय [illegible] दे देती हैं तथा उन्होंने जो खर्चा किया है उसे वे बाद में [illegible]। चालक के लाइसेंस की फीस उस काउन्टी या काउन्टी बरो [illegible] है जहां कि प्रार्थी रहता है तथा ऐसी व्यवस्था करने में कोई कठिनाई नहीं हो सकती कि जो सत्ता इस धन को इकट्ठा करे उसी को [illegible] जाये। मोटरगाड़ी का लाइसेंस प्रायः उस काउन्टी या [illegible] लिया जाता है जिसमें वह मोटर रखी जाती है। इसके द्वारा [illegible]

हैं। उदाहरण के लिये अधिकांश व्यापारिक संस्थायें जो मोटर गाड़ियां रखती हैं, उनके लाइसेंस वगैरह वे एक ही स्थान से बनवाती हैं अर्थात् जहां पर उनका मुख्य कार्यालय होता है।

मोटर-गाड़ियों से सम्बन्धित कर के सम्बन्ध में एक कठिनाई है और वह यह कि यह कर परम्परागत रूप से सड़क कोष (Road fund) से सम्बद्ध है। मोटर गाड़ियों के प्रारम्भिक दिनों में यह कहा जाता था कि इन पर लगाया गया कर सड़कों की रचना एवं सुधार के काम में ही लाया जाये। यह विचार वर्षों पहले ही ठुकरा दिया गया था किन्तु फिर भी मोटर-गाड़ियों से सम्बन्धित प्रत्येक व्यक्ति का यह मूल विचार रहता है कि मोटर-गाड़ियों पर लगाये गये सभी करों को केवल सड़कों के ही काम में लाया जाना चाहिये, अन्य किसी काम में नहीं। केन्द्रीय सरकार भी मोटरों पर लगाये गये कर को एक साधारण कर समझती थी तथा उसे सड़कों पर ही खर्च करने की ओर विशेष ध्यान नहीं देती थी। जिस प्रकार तम्बाकू तथा नशीली चीजों पर लगाया गया कर नशेबाजों पर ही खर्च किया जाना जरूरी नहीं था। उसी प्रकार मोटर-गाड़ी से सम्बन्धित कर को भी सड़कों पर खर्च किया जाना जरूरी नहीं था। इतने पर भी यह निश्चित है कि यदि मोटर-गाड़ी कर को स्थानीय सत्ताओं को दिया गया तो इसका विरोध किया जायेगा क्योंकि इससे यह आशा पूरी तरह समाप्त हो जाती है कि सड़क कोष को एक दिन पुनः चालू किया जायेगा।

एक सुझाव यह भी दिया जाता है कि खेरूज की बिक्री पर स्थानीय कर लगा दिया जाये। यह व्यवस्था संयुक्त राज्य अमरीका में व्यापक रूप से प्रचलित है। वर्तमान में स्थानीय सत्ताओं के राजस्व के मुख्य स्रोत रेट्स तथा सरकारी अनुदान हैं।

कर्जे
(Loans)

स्थानीय सरकार द्वारा किये जाने वाले कई एक कार्यों में बहुत अधिक धन की आवश्यकता होती है। इस धन का प्रबन्ध स्थानीय राजस्व द्वारा नहीं किया जा सकता अतः उसके लिये कर्ज लेकर व्यवस्था की जाती है। एक सामान्य मान्यता यह भी है कि जिन कार्यों का लाभ करदाताओं की भावी संततियों को प्राप्त होने वाला है अर्थात् वह कार्य स्थायी प्रकृति का है तो उसके लिये व्यवस्था कर्ज द्वारा धन लेकर की जानी चाहिये ताकि खर्च को कई वर्ष में चुकाया जा सके और भावी संतति भी अपने लाभ का अंशदान दे सके। एक नियम के अनुसार स्थानीय सत्तायें कर्ज के रूप में जो भी धन प्राप्त करती हैं उसे वे एक निश्चित समय के बाद वापिस कर देती हैं। कोई भी कर्जा अस्सी वर्ष से अधिक तक नहीं चलना चाहिये। स्थानीय सत्ता इसके लिये ब्याज देती है। यह नियम सदैव ही अपनाया जाता है चाहे किये गये खर्च से राजस्व उत्पन्न हो अथवा न हो। यह कर्जा व्यापारिक कम्पनी की उस पूंजी से भिन्न है जिसमें कर्ज द्वारा धन लिया जाता है किन्तु उसे उस समय तक नहीं चुकाना होता जब तक कि कम्पनी व्यापार कर रही है।

स्थानीय सत्ताओं की साख प्रायः अच्छी होती है अतः उनको व्यक्तिगत उद्यमों की अपेक्षा अधिक सस्ते ब्याज पर धन प्राप्त हो जाता है, किन्तु कर्ज को वापिस देने के उनके उत्तरदायित्व का अर्थ होता है कि उनके द्वारा किया जाने वाला भुगतान व्यक्तिगत उद्यम से ज्यादा हुआ जिसे केवल ब्याज ही देना होता है। उदाहरण के लिए हम जल वितरण की सेवा को ले सकते हैं। एक व्यक्तिगत उद्यम जब कर्ज लेकर इस सेवा का संचालन करेगा तो वह इसे उस स्थानीय सत्ता की अपेक्षा अधिक सस्ते दामों पर उपलब्ध करा सकेगा जो स्वयं भी इसे कर्ज लेकर चलाती है। इसका कारण यह है कि व्यक्तिगत उद्यम को अपने कर्जदाता को केवल ब्याज की छोटी रकम ही देनी होगी जब कि स्थानीय सत्ता ब्याज के साथ-साथ रकम का भी एक भाग वापिस करेगी। अतः स्वाभाविक है कि उसके द्वारा प्रदत्त सेवा का मूल्य अधिक होगा। इस व्यवस्था के परिणामस्वरूप जब स्थानीय सत्ता अपना पूरा कर्जा चुका देती है तो जनता को वह सेवा कम दामों में ही प्राप्त हो जाती है, केवल उतने में ही जितना कि उसके प्रबन्ध में खर्च किया गया है।

धन उधार लेने की शक्ति अन्य शक्तियों की भांति व्यवस्थापन द्वारा प्रदान की जाती है। यह शक्ति इतनी महत्वपूर्ण होती है कि इसको देते समय यह प्रावधान रख दिया जाता है कि जब भी कभी इसका प्रयोग किया जाये तो पहले केन्द्रीय सरकार की स्वीकृति प्राप्त कर ली जाये। इस स्वीकृति का प्रावधान दो लक्ष्यों की साधना के लिए रखा गया। प्रथम यह कि इस प्रकार से स्थानीय सत्ता की सामान्य स्थिति की पुनरीक्षा की जा सके तथा यह देखा जा सके कि वह अपने साधनों का प्रयोग भली प्रकार से कर रही है अथवा नहीं। एक बार धन उधार लेने के बाद सत्ता उस धन का उपयोग करती है। यदि वह ऐसा न करे तो इससे गम्भीर परिणाम हो सकते हैं। यह न केवल उस सत्ता के लिए ही वरन सामान्य रूप से स्थानीय सरकार के लिए ही महत्वपूर्ण होगा। स्थानीय सत्ताओं की आज साख बनी हुई है, इसका कारण यह है कि इनके द्वारा सदैव ही इनके दायित्वों का पालन किया गया है। यदि एक ने भी गलत उदाहरण पेश कर दिया तो भय है कि सभी सत्ताओं के सम्मान को धक्का लगेगा और कलंक लग जायेगा। केन्द्रीय सरकार द्वारा प्रस्तावित कर्जों की स्वीकृति का एक अन्य उपयोग यह है कि केन्द्रीय सत्ता पूंजीगत कार्य की मात्रा पर नियन्त्रण रखने में समर्थ हो जाती है। वर्तमान समय में केन्द्रीय सरकार की इतनी शक्ति एवं सामर्थ्य नहीं है कि सारे कार्यों को वह स्वयं ही सम्पन्न कर सके। अतः वह वांछनीय कार्यों का दायित्व स्थानीय सत्ताओं पर छोड़ देती है किन्तु स्वयं उनकी क्रियाओं पर नियन्त्रण रखती है ताकि यह देख सके कि सरकार की सामान्य नीति के अनुसार प्राथमिकता दी जा रही है अथवा नहीं। यदि केन्द्रीय सरकार यह अनुभव करे कि किसी विशेष स्थानीय सत्ता द्वारा बहुत अधिक विकास-कार्य सम्पन्न कर लिया गया है तो वह इसे कम करने के लिए एक सरल साधन अपना सकती है कि प्रस्तावित कर्ज को स्वीकृति प्रदान न करे। कुछ ऐसी परिस्थितियां भी आ जाती हैं जब कि केन्द्र सरकार स्थानीय सरकारों को पूंजीगत व्यय के लिए प्रोत्साहित करती है। यह कहा जाता है कि जब कभी यह

आवश्यक समझा जाये कि सामान की मांग को बढ़ाया जाय अथवा रोजगार की स्थिति को अच्छा किया जाये तो स्थानीय संस्थाओं को अधिक कार्य सौंप दिये जाते हैं और ऐसा करने पर उनको कर्ज लेने की शक्ति भी दे दी जाती है।

स्थानीय सत्ता जब कर्ज लेती है तो वह किसी भी ऐसे तरीके को अपना सकती है जो कि किसी भी अन्य उद्यम द्वारा अपनाया जाता है। इसके अतिरिक्त इसको कुछ विशेष सुविधाएं भी प्रदान की जाती हैं। बैंक ओवर-ड्राफ्ट, गिरवी (Mortgages), बाण्ड्स आदि द्वारा कर्ज लिया जाता है। बैंक ओवरड्राफ्ट का प्रयोग बहुत कम किया जाता है। इसे प्राय: अस्थायी उद्देश्य के लिए काम में लाया जाता है। बान्ड तथा गिरवी की व्यवस्था द्वारा कर्ज लेने की प्रक्रिया सरल होती है। इस व्यवस्था में बाहरी दलाल रखने की आवश्यकता नहीं होती तथा खर्च को भी कम से कम रखा जा सकता है। जब कभी स्थानीय परिषद को कर्ज लेना होता है तो वह इसके लिए समाचार पत्रों में विज्ञापन देती है कि उसे इन शर्तों पर कर्ज लेना है। स्थानीय सत्ता की सम्पत्ति एवं रेट्स द्वारा प्राप्त राजस्व एक प्रकार से उसकी जमानत होती है। प्रार्थना-पत्र परिषद के कार्यालय में दिये जाते हैं। यह कर्ज एक निश्चित काल के लिए और प्रायः सात वर्ष के लिए होता है। इस पर दिया जाने वाला ब्याज भी निश्चित होता है।

स्थानीय सत्तायें जिन तरीकों से कर्ज ले सकती हैं उनमें सबसे महत्व-पूर्ण तरीका जनकार्य कर्जा आयुक्तों (Public Works Loans Commissio-ners) से कर्ज लेना है। इन आयुक्तों को संसद के अधिनियम द्वारा स्थापित किया गया है। राजकोष (Treasury) द्वारा उनको कुछ धन सौंप दिया जाता है। इसमें से वे स्थानीय एवं सार्वजनिक सत्ताओं को कर्जा दे सकते हैं। जिस सत्ता को कर्ज लेने की आवश्यकता होती है वह आयुक्तों को प्रार्थना-पत्र भेजती है। आयुक्त इस बात पर विचार करते हैं कि उनको प्रार्थना-पत्र का समर्थन करना चाहिये अथवा नहीं। आयुक्त सामान्य रूप से कर्ज की अनुमति दे देते हैं अथवा अनिच्छा दिखाते हैं—यह बात सरकार की आर्थिक नीति पर निर्भर करेगी। कर्ज पर लिया जाने वाला ब्याज पहले ही सरकार तय कर देती है। जब आयुक्तों द्वारा ऋण देना स्वीकार कर लिया जाये तो सरकार यह निर्णय करती है कि यह कितने समय तक के लिए दिया जाना चाहिए। उसके बाद स्थानीय सत्ता को यह बता दिया जाता है कि प्रति वर्ष उसे ब्याज के रूप में तथा मूलधन लौटाने के लिए कितनी रकम देनी होगी। स्थानीय सत्ता प्रायः इस व्यवस्था में सुविधा का अनुभव करती है। आयुक्तों के निकाय का अपना महत्व एवं उपयोगिता है।

यह कर्ज के अन्य स्रोतों को ब्याज के रूप में अनुचित धन कमाने से रोकती है। योरोप के देशों में यह व्यवस्था न होने के कारण वहां की नगर-पालिका संस्थाओं को धन उधार लेने में भारी कठिनाई का अनुभव होता है। आर० एम० जेक्सन का यह कहना सच है कि छोटे कस्बे खुले बाज़ार में नहीं जा सकते और उनको बैंकों, बीमा कम्पनियों तथा अन्य व्यावसायिक धन-

दाताओं की दया पर निर्भर रहना होता है और ऐसे कस्बों को प्रायः अधिक ब्याज देना पड़ता है।*

कई बार ऐसा होता है कि बीमा कम्पनियां स्थानीय सरकारों को इस शर्त पर ऋण देती हैं कि किसी निश्चित स्थान को उनका कार्यालय बनाने के लिए दे दिया जाये। इंगलैण्ड में यदि कोई संस्था स्थानीय सत्ताओं से ऋण की अधिक दर प्राप्त करना चाहे अथवा कोई अनुपयुक्त शर्त को मन्जूर कराना चाहे तो वह सीधी आयुक्तों के पास जा कर ऋण की मांग कर सकती है। आयुक्तों के ब्याज की दर सभी को ज्ञात रहती है। आयुक्तों की व्यवस्था का स्पष्ट अर्थ यह है कि राजकोष के पास इतना धन रहता है कि वह स्थानीय सत्ताओं के कर्ज के हेतु आयुक्तों को दे सके।

स्थानीय सत्ता द्वारा जब आयुक्तों से कर्ज लिया जाता है तो यह समझौता किया जाता है कि वे इतने वर्षों तक इतना धन प्रति वर्ष देती रहेंगी। अनेक तकनीकी कठिनाइयों एवं सुविधाओं का अध्ययन करने के बाद बड़ी स्थानीय सत्तायें खुले बाजार से धन लेना पसन्द करती हैं जब कि छोटी स्थानीय सत्ताओं को आयुक्तों के पास जाने में सुविधा महसूस होती है। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद के वर्षों में आयुक्तों द्वारा यह नीति अपनायी गई थी कि वे प्रायः कर्ज दे ही देते थे। सरकार भी कम ब्याज लेने में रुचि रखती थी ताकि स्थानीय सत्ताओं के पूंजीगत कार्यों को बढ़ाया जा सके। सन् १९५५ में कोषाध्यक्ष द्वारा यह नीति बदल दी गई। उसने पूंजीगत व्यय को पूर्णतः कम करने की ओर कदम उठाये। आयुक्तों के कार्य एकदम सीमित हो गये। पहले वे प्रायः कर्जा दे दिया करते थे किन्तु अब की नीतियों के अनुसार वे स्थानीय सत्ता को केवल तभी धन देते थे जब कि वो बहुत जरूरत हो और वह किसी और साधन से धन प्राप्त करने में असमर्थ हो। इसके अतिरिक्त ब्याज की दरें भी बढ़ा दी गईं। इसके परिणामस्वरूप बड़ी स्थानीय सत्ताओं ने खुले बाजार से धन लेना प्रारम्भ किया और छोटी स्थानीय सत्तायें गिरवी द्वारा धन उधार लेने लगीं। इस व्यवस्था के आधीन स्थानीय सत्ताओं का पूंजीगत कार्यों पर व्यय कम हो गया।

प्रत्येक स्थानीय सत्ता विभिन्न मदों पर थोड़ा बहुत धन रखती है। [illegible] कोष की भांति इनके पास कुछ एक कोष रहते हैं। इस व्यवस्था द्वारा उन्हें प्रति वर्ष कर्जा नहीं लेना होता तथा वह अपने व्यय में संतुलन स्थापित कर लेती है। प्रत्येक बजट में भावी व्यय के लिए बचत करने का प्रावधान भी रखा जाता है। ऐसा नहीं किया जाये तो जिस वर्ष धन की आवश्यकता होगी उस वर्ष स्थानीय सत्ता को अधिक धन कर्ज के रूप में लेना होगा। अतः यह उचित समझा जाता है कि इसका पहले से ही प्रबन्ध कर लिया जाये। उदा-

*"A smaller town can not go to the open market and it is at the mercy of banks, insurance companies and other money-lenders and often such towns have had to pay a high rate of interests."

—*R. M. Jackson*, Op. cit., P. 186

हरण के लिए यदि एक स्थानीय सत्ता कर्ज लेकर एक मोटर-गाड़ी खरीदती है तथा दस वर्षों में वह उस कर्ज को चुका पाती है तो तब तक ली हुई मोटर-गाड़ी पुरानी हो चुकेगी तथा उसके स्थान पर नई लेना जरूरी हो जायेगा। नई मोटर गाड़ी लेने के लिए पुनः कर्ज लिया जाये और उसे दस साल तक चुकाया जाये। इस प्रकार वह स्थानीय सत्ता निरन्तर रूप से कर्जदार ही बनी रहेगी तथा लगातार ब्याज चुकाने में धन व्यय करती रहेगी। इस स्थिति से बचने के लिए एक उपाय यह बताया जाता है कि स्थानीय सत्ता प्रति वर्ष अपने विशेष कोष में पर्याप्त धन रखे और जब कभी मोटर गाड़ी नई बदलने की आवश्यकता हो तो उस कोष के धन का प्रयोग कर लिया जाये। इस धन पर उसे ब्याज भी नहीं देना पड़ेगा।

जब स्थानीय सत्ता के पास एक विशेष कोष होगा तो उसको भी वह तभी खर्च करेगी जबकि उसे धन की आवश्यकता है। वह इस धन को चाहे तो किसी कार्य में लगा भी सकती है तथा इस पर ब्याज भी ले सकती है। स्थानीय परिषद जब अपने विशेष कोष के धन को किसी कार्य में लगायेगी तो पहले इस बात की पूरी जांच पड़ताल कर लेगी कि उसका धन वहां सुरक्षित भी रहेगा अथवा नहीं और ऐसी स्थिति में उसको उसकी अपेक्षा कम ब्याज प्राप्त होगा जितना कि उसे स्वयं को उधार लिये गये धन पर देना होता है। यह सुझाव दिया जाता है कि उपयुक्त एवं सुविधाजनक व्यवस्था यह रहेगी कि स्थानीय सत्ता अपने विशेष कोष के धन को पूंजीगत व्यय में लगा दे और उस पर के ब्याज को विशेष कोष में जमा करे। यह आन्तरिक (Internal borrowing) वाह्य कर्जदारी की तुलना में श्रेष्ठ रहती है।

स्थानीय सत्ता एक ऐसा विशेष कोष भी रख सकती है जिसका एक मात्र लक्ष्य पूंजीगत व्यय की व्यवस्था करना ही हो। स्थानीय सत्ता के बजट में प्रति वर्ष इस प्रकार के कर्ज के ब्याज तथा मूलधन को चुकाने का प्रावधान रहता है। यह धन स्थानीय सत्ता के उस विशेष कोष में ही चला जाता है जिससे लिया गया था। जहां तक स्थानीय सत्ता द्वारा कर्ज लेने की शक्ति का प्रश्न है, उसमें अत्यधिक नियंत्रण नहीं किया जाना चाहिए किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि उनको पूरी तरह से स्वतन्त्र छोड़ दिया जाये क्योंकि ऐसा करना अन्य स्थानीय सत्ताओं के हित में न रहेगा। प्रत्येक स्थानीय सत्ता अपने पड़ौस की स्थानीय सत्ता में रुचि रखती है तथा उसे उसकी सीमाओं में ही रखना चाहती है। जिस सत्ता के नागरिक जागरुक होते हैं वे स्वयं इस बात की निगरानी रखते हैं कि उनकी सत्ता उतना धन न ले जितना कि वह चुका न सके किन्तु प्रत्येक स्थानीय सत्ता इतनी योग्य नहीं होती। यदि वह अपनी सामर्थ्य से बाहर कर्ज लेने का प्रयास करे तो केन्द्रीय सरकार द्वारा उस पर सीमा लगाई जा सकती है।

व्यापारिक सेवायें एवं आमदनी के अन्य स्रोत

[Trading Serviees and Other Sources of Income]

स्थानीय सत्तायें अपने द्वारा प्रदान की गई सेवाओं के बदले तथा किराये के रूप में भी धन प्राप्त कर सकती हैं। इन सत्ताओं की विभिन्न सेवाओं को व्यापारिक सेवा एवं गैर-व्यापारिक सेवाओं के रूप में वर्गीकृत

किया जा सकता है। व्यावहारिक रूप से उस सेवा को व्यापारिक सेवा कहा जाता है जिसको व्यक्तिगत उद्यम द्वारा भी संचालित किया जा सके। उदाहरण के लिए यात्री यातायात सेवा को ले सकते हैं। यह सेवा व्यापारिक रूप में संचालित की जाती है। दूसरे प्रकार की सेवाओं में कूड़ा-करकट को हटाने के कार्य को लिया जा सकता है। कोई भी व्यक्तिगत उद्यम प्राय: इस कार्य को नहीं करना चाहेगा। स्थानीय सत्तायें भी इन सेवाओं को व्यापारिक रूप में संचालित नहीं करतीं।

व्यापारिक सेवायें (Trading Services) वे होती है जिनके संचालन के लिए करों के माध्यम से धन संग्रह किया जाता है। प्रारम्भ में मान्यता यह थी कि सरकार द्वारा किये जाने वाले व्यय का धन उस आय से लिया जाये जो कि सरकारी सम्पत्ति से प्राप्त होती है। पहले राष्ट्रीय राजस्व में तथा राजा की व्यक्तिगत सम्पत्ति में कोई भेद नहीं समझा जाता था। उस समय यदि किसी उच्च अधिकारी को कुछ धन देना हो तो उसे एक भू-भाग प्रदान कर दिया जाता था तथा उससे प्राप्त होने वाली आमदनी का प्रयोग करने की उसे छूट रहती थी। जब सामाजिक परिस्थितियां बदलीं तो स्थानीय सत्तायें अनेक सेवाओं का संचालन करने लगीं। इन सेवाओं से ही नगरपालिका वाणिज्य का विकास हुआ। वैसे नगरपालिका वाणिज्य से स्थानीय सत्ताओं को जो धन प्राप्त होता है वह न के बराबर है। नगरपालिका वाणिज्य (M·inicip·l Trading) उन सेवाओं को कहा जाता है जिनके प्रयोग के लिए स्थानीय सत्तायें प्रयोगकर्त्ता से प्रत्यक्ष रूप में धन वसूल करती हैं। गैस वितरण सेवा को इसके उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। गैस वितरण के क्षेत्र में पहल करने का श्रेय मैन्चेस्टर को दिया जा सकता है। गैस उत्पादन का विकास गलियों में प्रकाश करने के लिए किया गया था किन्तु बाद में यह इतना उपयोगी सिद्ध हुआ कि अधिकांश लोग घरों के लिए इसकी मांग करने लगे। फलत: इस क्षेत्र में उल्लेखनीय तकनीकी विकास किया गया और अब कई एक स्थानीय सत्तायें एक बड़ी व्यापारिक सेवा का संचालन कर रही हैं। जल–वितरण की सेवा भी कुछ इसी प्रकृति की सेवा है।

स्थानीय सत्ताओं की इन व्यावसायिक सेवाओं के विकास में समाजवादी आन्दोलनों ने महत्वपूर्ण रूप से भाग लिया। फेबियन समाजवादी विचारकों का मत था कि नगरपालिका क्रियाओं के माध्यम से समाजवाद की स्थापना की जा सकती है। इसी मत से प्रभावित होकर उन्होंने नगरपालिका की दूकानों, धोबीखानों, फैक्ट्रियों आदि का समर्थन किया। नगरपालिका के व्यापार की सफलता को प्रदर्शित करने के एक उदाहरण के रूप में उन्होंने यात्री यातायात को लिया। अनेक कस्बों को ट्राम चलाने की शक्ति प्राप्त हो गई और उन्होंने इस शक्ति का प्रयोग बड़ी सफलता के साथ किया। वे वित्तीय दृष्टि से पर्याप्त सफल रहीं। कई एक स्थानीय सत्ताओं धीरे विद्युत एवं गैस के वितरण का कार्य भी सम्भाल लिया।

पिछले कुछ वर्षों से नगरपालिका सेवाओं के क्षेत्र में आया। कुछ सेवाओं की प्रकृति में तकनीकी रूप से परिवर्तन

को अब कम कर दिया गया तथा मोटर बसों द्वारा किया जाने वाला सड़क यातायात केवल शहरी क्षेत्रों तक ही सीमित न रहा वरन् यह देहाती इलाकों में फैल गया। गैस तथा विद्युत की खपत बहुत बढ़ जाने के कारण इन दोनों ही सेवाओं का राष्ट्रीयकरण करना पड़ा। अब स्थानीय सत्ताओं को इन दोनों ही सेवाओं के बारे में कुछ भी नहीं करना होता।

जब ग्रेट ब्रिटेन का औद्योगीकरण हो गया तो वहां क्रियाओं के राष्ट्र-व्यापी क्षेत्र तथा बड़ी इकाइयों की ओर अधिक ध्यान दिया जाने लगा। व्यक्ति द्वारा उपयुक्त प्रत्येक चीज का उत्पादन स्थानीय स्तर पर करना न तो उपयोगी रह गया और न सम्भव ही। यदि किसी सेवा को स्थानीय स्तर पर चलाया भी जाये तो वह राष्ट्रीय स्तर की सेवा के मुकाबले प्रतियोगिता में नहीं टिक सकती।

नगरपालिका व्यापार द्वारा लाभ पैदा किया जाये अथवा न किया जाये; इसके बारे में भी आजकल विचार बहुत कुछ बदल गये हैं। प्राचीन मान्यता के अनुसार यदि ऐसी सेवाओं से लाभ प्राप्त किया जा सके तो अवश्य ही करना चाहिए। इस प्रकार जो लाभ कमाया जाये, वह सत्ता के सामान्य कोष में जाये ताकि करों की मात्रा को कम किया जा सके। इस सम्बंध में वर्तमान विचार यह है कि इन सेवाओं को इस प्रकार संचालित किया जाये कि वे अपना खर्चा स्वयं ही निकाल सकें अर्थात न तो फायदा ही प्राप्त किया जाये और न नुकसान ही। इसके लिए यह तर्क दिया जाता है कि एक नगर-पालिका उद्यम को न तो कर का रूप धारण कर लेना चाहिए और न ही स्थानीय सरकार को सहायता देने का ही। उदाहरण के लिए शहर की बस सेवा को लिया जा सकता है। यदि शहर की बस सेवा लाभ प्राप्त करती है तो इसका स्पष्ट अर्थ यह है कि यात्रियों से जो लिया जाना चाहिए उससे अधिक लिया जा रहा है। इससे करों में कमी की जायेगी अर्थात यात्रियों ने एक प्रकार से स्थानीय सत्ता को कर प्रदान किया जो कि गलत था; क्योंकि कोई भी कर कुछ चुने हुए लोगों पर ही न लग कर सामान्य जनता पर लगना चाहिए था। दूसरी ओर यदि शहर की बस सेवा हानि के साथ चलती है तो सत्ता को रेट्स से प्राप्त धन में से प्रबन्ध करना होगा। इसका अर्थ हुआ कि यात्रियों को जो सेवा प्राप्त हो रही है उसका धन सारे स्थानीय करदाताओं की जेब से आ रहा है। ये दोनों ही स्थितियां गलत हैं। निष्कर्ष यह है कि सेवा को अपना खर्चा स्वयं ही चलाना चाहिए। ऐसा हो सकता है कि मरम्मत या बदलाव के लिए एक विशेष कोष भी बना दिया जाये। इन सेवाओं से इतना अतिरिक्त धन नहीं कमाना चाहिए कि स्थानीय करों को राहत प्रदान की जा सके। यही सिद्धान्त राष्ट्रीयकृत उद्योगों में भी अपनाया गया है।

वर्तमान समय में जब कभी नगरपालिका सेवाओं के प्रसार का सुझाव रखा जाता है तो कई लोग जिनके हितों पर इसका विपरीत प्रभाव पड़ता है, इसका विरोध करते हैं। युद्ध के दौरान संकट काल की स्थिति में नगर-पालिका ने जो रेस्तरां प्रारम्भ किये उनमें से कई एक को तो अब बन्द कर दिया गया है। अनुभव ने यह बताया है कि नगरपालिका का रेस्तरां व्यक्ति-गत उद्यमों के साथ प्रतियोगिता करता हुआ अधिक दिन नहीं चल सकता जब

तक कि सरकारी कोष द्वारा उसको सहायता न दी जाये। यह प्रायः असम्भव सा है कि नगरपालिकाओं को कोई ऐसी नई सेवा मिल सके जो कि लाभदायक हो और स्थानीय निवासियों के लिए उपयोगी भी हो।

यदि स्थानीय सरकार द्वारा स्वामित्व की गई स्थानीय सत्ताओं एवं व्यक्तिगत उद्यमों के बीच तुलना का प्रयास किया जाये तो हमें पर्याप्त कठिनाई का सामना करना होगा। दोनों के तरीकों एवं मूल्यों के बीच पर्याप्त अन्तर रहता है,। उदाहरण के लिए हम जंगलात को ले सकते हैं। जो जंगलात व्यक्तिगत कार्य-कर्त्ताओं के हाथ में हैं वे उनके सम्बन्ध में नीतियां अपनाते समय एवं योजनाओं को क्रियान्वित करते समय दीर्घकालीन लाभ पर विचार नहीं करते। यही कारण है कि कई एक जंगल समाप्त हो गये क्योंकि उनके भावी विकास को ध्यान में रख कर नये पौधे लगाने की ओर कोई ध्यान नहीं दिया गया। इसके विपरीत स्थानीय सत्ता द्वारा वह सब कार्य किया जाता है जो कि किया जाना चाहिए तथा जिसके आधार पर भविष्य को सुरक्षित बनाया जाना चाहिए। यदि हम तत्कालीन हानि-लाभ की दृष्टि से विचार करें तो पायेंगे कि व्यक्तिगत प्रबन्धक अधिक सफल रहता है किन्तु जब हम दीर्घकालीन नीति की दृष्टि से सोचते हैं तो लगता है कि स्थानीय सत्ता का व्यवहार मितव्ययतापूर्ण था।

वस्तु स्थिति को देखकर निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि नगरपालिका सेवायें कुल मिलाकर अधिक लाभदायक नहीं होतीं। यहां तहां कुछ उद्यम ऐसे हो सकते हैं जो अच्छी आय प्रदान कर सकें किन्तु फिर भी व्यावसायिक सेवाओं का राजस्व इतना नहीं होता कि स्थानीय सत्ता केवल इसी की आय पर अवलम्बित रह सकें। स्थानीय सत्ता का मूल खर्च तो स्थानीय करों पर ही आधारित रहता है। केन्द्रीय सरकार से प्राप्त होने वाला अनुदान भी इस दृष्टि से महत्वपूर्ण होता है।

अनुभव के आधार पर यह बताया जाता है कि स्थानीय सरकार को प्रत्यक्ष रूप से किसी सेवा में कुछ भी व्यय नहीं करना चाहिए। यदि एक उद्योग के अनुकूल वातावरण तैयार करने में धन खर्च किया गया तो इसके परिणामस्वरूप जिले की कर देने की सामर्थ्य बढ़ जायेगी तथा करों के द्वारा आवश्यक धन आसानी से प्राप्त किया जा सकता है। अतः यह सुझाव दिया जाता है कि उद्योग, कृषि एवं व्यापार का वातावरण सुधारने के लिए संचार व्यवस्था जल-वितरण एवं अन्य ऐसी ही सेवाओं पर विशेष ध्यान दिया जाये। यह कहा जाता है कि यदि रेलवेज की तथा सड़कों की व्यवस्था को सुधार दिया जाये तो अपेक्षाकृत अधिक मूंगफलियां पैदा हो सकेंगी। सम्भवतः उससे भी अधिक पैदा होंगी जितनी कि उनके उत्पादन वृद्धि की की योजना को अपनाने पर होतीं।

नगरपालिका व्यवसाय के लाभ [The Advantages of Municipal Trading]—नगरपालिका द्वारा सम्पन्न की जाने वाली व्यापारिक सेवाओं के क्षेत्र का प्रसार करने की मांग करने वाले विचारक इनके अनेक लाभ गिनाते है। उनका कहना है कि ये जनस्वाथ्य एवं सुविधा की दृष्टि से उपयोगी रहती हैं, उदाहरण के लिए स्थानीय सत्ताओं द्वारा जल के वितरण

को लिया जा सकता है। यह सेवा इतनी मूल प्रकृति की होती है कि इसके उपयोग एवं सार्वजनिक महत्व को भुलाया नहीं जा सकता। दूसरे, एक अन्य तर्क यह दिया जाता है कि कई एक सेवाओं की प्रकृति ऐसी होती है जिनको व्यक्तिगत व्यवसायी सम्पन्न नहीं करना चाहते। सम्वतः इसका कारण यह है कि इन सेवाओं से प्राप्त होने वाला लाभ संतोषजनक नहीं होता। यदि स्थानीय सत्ता इन सेवाओं का संचालन न करे तो सामान्य जनता इनका उपभोग करने से वचित रह जायेगी। ऐसी सेवा के उदाहरण के रूप में यात्री यातायात सेवा को लिया जा सकता है। तीसरे, नगरपालिका उद्यम कम दामों पर अच्छी सेवा प्रदान कर पाता है। ऐसा इस कारण सम्भव बनता है क्योंकि ये उद्यम अधिक लाभ कमाने की फिक्र में नहीं रहते। चौथे, नगरपालिका सेवाओं द्वारा जो लाभ प्राप्त किया जाता है वह पूरे समाज के काम में आता है। इसके विपरीत उसे कुछ सीमित भागीदारों की जेब में ही नहीं रख दिया जाता। पांचवें, जब आर्थिक संकट अथवा मन्दी का समय होता है उस समय भी मूल सेवायें प्रदान की जाती हैं। छटे, लोक प्रशासन में प्रायोगिक क्रियाओं को निरुत्साहित नहीं किया जाता और यही कारण है कि व्यक्तिगत प्रशासन की अपेक्षा लोक प्रशासन को इन सेवाओं के सम्बन्ध में कुशल माना जाता है। सातवें, केन्द्रीय सरकार के नियन्त्रण ने इन सत्ताओं को वित्तीय स्थायित्व प्रदान किया है।

नगरपालिका व्यवसाय की हानियां [Disadvantages of Municipal Trading]—नगरपालिका उद्यम द्वारा संचालित की जाने वाली सेवायें सदैव ही उपयोगी एवं लाभदायक ही नहीं होतीं। इनके भी प्रत्येक मानवीय क्रिया की भांति अच्छे व बुरे दोनों ही पक्ष हैं। कुछ विचारकों का कहना है कि इन क्रियाओं में बाद वाला पक्ष अधिक प्रबल रहता है और इसलिए इनको कम से कम प्रयुक्त किया जाना चाहिए। ये विचारक अपने पक्ष के समर्थन में कई एक तर्क प्रस्तुत करते हैं। उनका प्रथम तर्क यह है कि जब स्थानीय सत्तायें अपने मौलिक कार्य क्षेत्र से बाहर के विषयों पर ध्यान देने लगती हैं तो उनकी कार्यकुशलता का स्तर गिर जाता है। दूसरे, प्रशासन में भ्रष्टाचार की सम्भावनायें बढ़ जाती हैं। तीसरे, क्योंकि इन सेवाओं को भागीदारों के लाभ के लिए संचालित नहीं किया जाता अतः ये लाभदायक कम तथा खर्चीली अधिक होती हैं। चौथे, यह हो सकता है कि मितव्ययता की दृष्टि से एक सेवा के क्षेत्र को व्यापक बनाना जरूरी हो जाये किन्तु स्थानीय सत्ता या तो ऐसा होने न देगी और यदि हुआ भी तो वह प्रभावहीन बन जायेगी क्योंकि उसका अधिकार क्षेत्र एक निश्चित सीमा प्रदेश ही हो सकता है। पांचवें, जब एक स्थानीय सत्ता व्यापारिक सेवायें सम्पन्न करने के लिए ही बहुत अधिक कर्जा ले डालती है तो वह अधिक उपयोगी सेवाओं के लिए कर्ज नहीं ले सकेगी।

गैर व्यावसायिक सेवायें [Non-Trading Services]—यह एक तथ्य है कि स्थानीय सत्ताओं की सेवाओं में कोई भी ऐसी नहीं होती जिसे बिना किसी रूप में धन प्राप्त किये ही सम्पन्न किया जाता हो। कीमत, फीस अथवा किराया, किसी भी रूप में इन सेवाओं के बदले धन लिया जाता है।

इस धन की मात्रा कम भी हो सकती है और अधिक भी। सार्वजनिक पुस्तकालय से जो लोग पुस्तकें निकलवाते हैं, उनको कुछ धन जमा कराना होता है। यद्यपि यह केवल नाम मात्र का होता है। अजायबघरों में प्रवेश निःशुल्क होता है किन्तु वहां भी निर्देशक पुस्तिकायें एवं चित्रित पोस्टकार्ड बेचे जाते हैं। शिक्षा सेवा सबसे अधिक खर्चीली सेवा होती है किन्तु महत्वपूर्ण होने के कारण इसके बदले जो धन प्राप्त किया जाता है उसकी मात्रा बहुत कम होती है। जिस सेवा से अधिक धन प्राप्त किया जाता है, वह अपेक्षाकृत उतनी ही कम महत्वपूर्ण होती है।

गृह-निर्माण के लिए स्थानीय सरकार द्वारा जो धन प्राप्त किया जाता है वह अपेक्षाकृत अधिक होता है। गृह-निर्माण को एक स्थानीय सत्ता की सेवा बनाने का कारण यह था कि व्यक्तिगत उद्यमों द्वारा इस कार्य को सम्पन्न नहीं किया जा सका। प्रारम्भ में जब गृह-निर्माण को एक सेवा बनाया गया तो उसमें लगने वाले मूल्य का प्रबन्ध किराये से, सरकारी सहायता से तथा रेट्स से होने वाले योगदान से किया गया। फिर भी गृह-निर्माण को एक व्यावसायिक सेवा कहा जा सकता, यह सेवा रेट्स के कोष की सेवा है। गृहों पर जो रेट्स या किराये की दर लगाई जाती है वह पर्याप्त ऊंची होती है। इसके परिणामस्वरूप यह स्रोत स्थानीय सत्ताओं की अतिशय आमदनी का स्त्रोत बन जाता है।

स्थानीय सत्ताओं का बजट

[The Budget of Local Authorities]

सरकार द्वारा प्रदान की जाने वाली सभी सेवाओं में वित्त आवश्यक रूप से लगाना होता है। यह धन जहां से आता है तथा इस पर जिसका अधिकार होता है वही वास्तविक शक्ति सम्पन्न समझा जाता है। स्थानीय सत्ताओं को जब तक वित्तीय स्वतंत्रता नहीं सौंपी जाती, उस समय तक उनसे वह कार्य सम्पन्न करने की आशा नहीं की जा सकती जो कि उनको करने चाहिए। किन्तु यहां यह भी ध्यान में रखने योग्य है कि स्थानीय सत्ताओं को उनके क्षेत्र में पूर्ण स्वतन्त्रता प्रदान नहीं की जा सकती। इसका कारण यह है कि स्थानीय सत्तायें 'पूर्ण' का एक भाग मात्र होती हैं उनका अपने आप में कोई स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं होता। उनका सम्प्रभुता प्राप्त नहीं होती। वित्तीय क्षेत्र में केन्द्रीय एवं स्थानीय सत्ताओं के बीच सम्बन्ध रखना परम आवश्यक समझा जाता है, इसका कारण यह है कि दोनों की आय का स्रोत आम जनता है। साधारण नागरिक की जेबों से ही दोनों ही स्तर पर धन आता है। यदि दोनों को असम्बद्ध रूप से व्यवहार करने दिया जाये तो अनेक व्यावहारिक कठिनाइयां उत्पन्न हो जाती हैं। उदाहरणार्थ आयकर को लिया जा सकता है। केन्द्रीय सरकार नागरिकों की आय पर कर लगाती है। यदि स्थानीय सत्तायें भी असीमित रूप से नागरिकों की आय पर कर लगा सकें तो इसका परिणाम यह भी हो सकता है कि नागरिकों को अपनी पूरी आय कर के रूप में ही देनी पड़ जाये। ऐसी स्थिति में इस बात का निर्णय करना जरूरी हो जाता है कि स्थानीय सत्ताओं को कितनी स्वतन्त्रता प्रदान की जाये।

इसका एक तरीका यह है कि स्थानीय सत्ता को एक सीमित मद में धन प्रति वर्ष रखने की स्वतंत्रता दी जाये तथा उससे अधिक धन रखने की उसे अनुमति न दी जाये। इसके लिए ऐसा भी किया जा सकता है कि केन्द्रीय सरकार स्थानीय सत्ताओं को एक निश्चित मात्रा में धन प्रदान करे अथवा स्थानीय सत्ताओं को स्थानीय कर के माध्यम से धन एकत्रित करने की अनुमति दी जाये। ऐसा करते समय अधिक से अधिक एकत्रित किये जाने वाले धन की सीमा निर्धारित कर दी जाती है। इस स्थिति की तुलना गृह-कार्य के लिए सौंपे जाने वाले एक निश्चित धन से भी की जा सकती है। इस बात की पूरी जानकारी रखी जाती है कि जो धन निर्धारित किया जाये वह अधिक से अधिक लाभ के लिए प्रदान किया जाना चाहिए। यहां यह बात ध्यान में रखने योग्य है कि वित्तीय प्रावधान चाहे कितना भी सजगतापूर्ण क्यों न किया जायें किन्तु हर इच्छित कार्य को अच्छी प्रकार सम्पन्न करने के लिए प्रावधान नहीं किया जा सकता। प्रबन्ध की विशेषता यह होती है कि वह लक्ष्यों का चयन करने में पर्याप्त बुद्धि से काम लेता है तथा उन लक्ष्यों को क्रियान्वित करने में मितव्ययता का व्यवहार करता है। आर्थिक साधनों पर जो सीमा लगा दी जाती है उसके परिणामस्वरूप दुर्भाग्यपूर्ण फल भी उत्पन्न हो सकते हैं। ऐसी स्थिति में यह परम आवश्यक हो जाता है कि आय तथा व्यय का व्यय का बजट पूर्णतः सोच विचार कर बनाया जाये।

स्थानीय सरकार को केन्द्रीय सरकार द्वारा जो सहायता प्रदान की जाती है उसकी एक सीमा होती है और उस सीमा से आगे वह धन प्रदान करने में प्रायः असमर्थ रहती है। अतः यह जरूरी हो जाता है कि स्थानीय सत्ता अपनी आय का अधिकांश भाग स्थानीय कर द्वारा संग्रहीत करे। जहाँ तक बजट का सम्बंध है,यह प्रति वर्ष बनाया जाता है तथा इसका मुख्य उद्देश्य करों द्वारा प्राप्त किये जाने वाले धन तथा व्यय का निर्धारण करना होता है। लोक वित्त के व्यवहार में ऐसा होता है कि पहले हम इस बात का निर्णय करते है कि हमको क्या खर्च करना है तथा उसके बाद यह देखते हैं कि यह खर्च कहां से किया जायेगा। उसके लिये आवश्यक आय का प्रबन्ध कहां से किया जायेगा। यह प्रक्रिया पूर्णतः स्वाभाविक है क्योंकि जब तक यह पता न हो कि खर्च क्या करना है. उस समय तक यह नहीं जाना जा सकता कि कर द्वारा कितना धन एकत्रित किया जाये; किन्तु इसके साथ ही यह भी आवश्यक है कि एक उत्तरदायी निकाय ऐसी नीति को मान्यता नहीं देगा जिसमें एक बहुत बड़े धन की आवश्यकता हो तथा जिसे एकत्रित भी न किया जा सके। बजट के द्वारा प्रतियोगी मांगों के बीच एवं आय तथा व्यय के बीच संतुलन स्थापित किया जाता है।

इंगलैण्ड में कानून द्वारा यह निर्धारित कर दिया गया है कि काउन्टी परिषद वार्षिक बजट बनाये तथा एक वित्तीय समिति का गठन करे। ये दोनों ही बातें स्थानीय सरकार के उचित कार्य-संचालन के लिए इतनी जरूरी हैं कि ये प्रायः सभी स्थानीय सत्ताओं के व्यवहार की सामान्य बात बन गई हैं।

स्थानीय सत्ता की प्रत्येक समिति पहले बजट के अनुमानों पर विचार करती है। उसके बाद ये अनुमान वित्तीय समिति के पास जाते हैं। यह समिति इन सभी अनुमानों पर विचार करती है। वित्तीय समिति चाहे तो किसी भी समिति को कुछ प्रस्तावों पर पुनर्विचार के लिए भी कह सकती है। वित्तीय समिति द्वारा उसका प्रतिवेदन परिषद के सामने रखा जाता है, उसके बाद प्रपत्र तैयार किये जाते हैं। जिन विभिन्न समितियों के द्वारा बजट के अनुमान पास किये जाते हैं वे इन पर अपना अधिक समय नहीं लगातीं। मूल रूप से जिन विषयों पर वाद-विवाद किया जाता है वे प्रायः ऐसे होते हैं जिनमें अधिक व्यय की बात कही गई हो। यदि समिति का सभापति तथा विभाग का मुख्य अधिकारी बजट के अनुमानों से सहमत हो जाये तो अन्य सदस्य उन पर प्रायः आपत्ति नहीं करते तथा एक लम्बे वाद-विवाद की आवश्यकता नहीं होती।

सभी अनुमानों को वित्तीय समिति के पास भेजा जाता है, वहां पर कोषाध्यक्ष तथा उनका स्टाफ उनका सर्वेक्षण करता है; साथ ही वित्तीय समिति के सम्मुख अपनी राय जाहिर करता है। वित्तीय समिति का कार्य अत्यन्त जटिल प्रकृति का होता है क्योंकि इसी को यह निर्णय करना होता है कि क्या प्रस्तावित व्यय अनिवार्य हैं? यह निर्णय वह व्यय का नीति के साथ सामंजस्य स्थापित करके करती है। इसकी जटिलता एक अन्य कारण पर भी अवलम्बित करती है और वह कारण यह है कि विभागीकरण की समस्या उत्पन्न हो जाती है जिससे ब्रिटिश प्रशासन बड़ी जल्दी ही प्रभावित हो जाता है। प्रत्येक विभागीय अध्यक्ष यह चाहता है कि उसकी ही क्रियाओं का प्रसार किया जाये। प्रत्येक समिति अपनी ही सेवाओं के बारे में सोचने लगती है। प्रत्येक समिति अपने ही अनुकूल वातावरण बनाने की धुन में रहती है। एक समिति अन्य समिति से उतना ही भेद रख सकती है जितना एक स्थानीय सत्ता अन्य स्थानीय सत्ता से रखती है। जब एक समिति अन्य समिति के साथ किसी प्रकार का सम्बन्ध रखती है तो उसकी खराब प्रवृत्तियां उभर उठती हैं। वित्तीय समिति विभिन्न विभागों एवं समितियों के विरोधी दावों तथा मांगों के बीच सामंजस्य पैदा करने का प्रयास करती है। यह समिति परिषद की सम्पूर्ण क्रियाओं से सम्बन्ध रखती है जब कि अन्य सभी समितियां एक या अधिक अलग-अलग सेवाओं से सम्बंध रखती हैं। वित्तीय समिति विषयों पर सामान्य दृष्टिकोण से विचार करती है किन्तु वित्तीय समिति के सदस्य अन्य समितियों के भी सदस्य होते हैं। वित्तीय समितियों के सेवीवर्ग के बारे में एकरूप व्यवहार नहीं होता। कुछ परिषदें अपने सभी सदस्यों को वित्तीय समितियों में नियुक्त कर देती हैं। पूरी परिषद अनेक विषयों पर गहराई के साथ विचार नहीं कर सकती इसलिए अनेक विषयों पर परीक्षण करने एवं प्रतिवेदन करने के लिए परिषद द्वारा कई एक समितियां नियुक्त की जाती हैं। इसका अर्थ हुआ कि वित्तीय समिति को नियुक्त तो कर दिया गया किन्तु उसे यह नाम नहीं दिया गया तथा उसकी रचना की समस्या को भी नहीं सुलझाया जा सका। दूसरी कुछ सत्ताओं में वरिष्ठ अधिकारियों को वित्तीय समिति में नामजद कर दिया जाता है।

प्रायः व्ययकारी समितियों के सदस्यों को वित्तीय समिति का सदस्य बनाया जाता है तथा इसके पक्ष में यह तर्क दिया जाता है कि वे अपनी समितियों की आवश्यकताओं को अधिक अच्छी तरह से स्पष्ट कर सकते हैं। यह बात बहुत कुछ सही भी है किन्तु इसके साथ ही यह भी सही है कि इस प्रकार से संगठित समिति के सदस्य एक दूसरे के बढ़े हुए व्यय का समर्थन करें। उनमें से कोई भी अन्य सदस्य के व्यय में कटौती करने के लिए तैयार नहीं होगा क्योंकि ऐसा करने पर उसे यह खतरा नहीं रहता है कि वह भी ऐसे ही आक्रमण का निशाना बन सकता है। यह खतरा इतना गम्भीर है कि इस प्रकार के संगठन से प्राप्त लाभ महत्वहीन सा बन जाता है। यह कहा जाता है कि विभिन्न व्ययकारी विभागों की आवश्यकताओं की पर्याप्त जानकारी के लिए यह भी व्यवस्था की जा सकती है कि इन समितियों के सभापतियों को उस समय आमन्त्रित कर लिया जाये जबकि अनुमान पर विचार किया जा रहा है। वित्तीय समिति का कौन सा प्रकार ठीक प्रकार से कार्य कर रहा है, इसके बारे में कुछ भी नहीं कहा जा सकता। फिर भी यह तो स्पष्ट है कि कहीं भी यह निष्पक्ष न्यायाधीशों की भांति कार्य नहीं करती।

ऐसी स्थिति भी उत्पन्न हो जाती है जबकि वित्तीय समिति स्पष्ट रूप से यह विचार रखती है कि प्रस्तावित व्यय का योग स्थानीय करों की संख्या एवं मात्रा को बढ़ा देगा किन्तु ऐसा होने पर भी वह ऐसा कोई विषय नहीं देख पाती जिस पर होने वाले व्यय की मात्रा को कम किया जा सके। ऐसी हालत में यह समिति विभिन्न व्ययकारी समितियों से अनुमानों की पुनरीक्षा करने को कह सकती है ताकि एक निश्चित प्रतिशत तक इसमें कमी की जा सके। मितव्ययता लाने का एक आम तरीका यह भी है कि कुछ कार्यों को छोड़ ही दिया जाये। वित्तीय समिति पूंजीगत व्यय की धन व्यवस्था करने का कार्य भी करती है।

जब वित्तीय समिति द्वारा अनुमानों को स्वीकार करके कुल व्यय का निर्धारण कर दिया गया है तो उस व्यय का प्रबन्ध करने के लिए परिषद कर लगाती है। इस व्यवस्था का प्रावधान करके प्रति वर्ष आय एवं व्यय के बीच संतुलन स्थापित करने का प्रयास किया जाता है। ऐसा नहीं हो सकता कि परिषद यह निर्णय कर ले कि ये दिन सम्पन्नता के दिन हैं अतः आवश्यकता से अधिक धन का कर के रूप में संग्रह कर लिया जाये तथा उस धन का उस समय प्रयोग किया जाये जबकि कठिन समय उपस्थित हो जाये। इसी प्रकार वह यह निर्णय भी नहीं ले सकती कि इस समय स्थिति कठिन चल रही है अतः कर की मात्रा को कम कर दिया जाये। हानि का बजट तैयार कर लिया जाये तथा इस कमी को उस वर्ष पूरा कर लिया जाये जब स्थिति अच्छी हो जाये। स्थानीय सत्ता के हाथ में जो कार्य है उसे सम्पन्न करने के लिए उसके पास उचित धन का होना अत्यन्त आवश्यक है। नियमानुसार स्थानीय सत्ता को न तो हानि वाला [Deficit] बजट बनाना चाहिए और न ही अतिशय [Surplus] वाला ही; किन्तु परिस्थितिवश ऐसा बनाना जरूरी भी हो जाये, उसको संतुलित करना होगा। यदि कभी हानि वाला

बजट बनाना जरूरी हो तो स्थानीय सत्ता को अपने कार्य सम्पादित करने के लिए पर्याप्त धन उधार लेना होगा। आने वाले वर्ष के बजट में इस कर्ज को चुकाने का भी प्रावधान रखना होगा। वैसे वास्तविक व्यवहार में अनेक कारणों से हानि का बजट एक असामान्य चीज बन जाता है।

किसी भी स्थानीय सत्ता के लिए यह प्रायः अत्यन्त कठिन हो जाता है कि वह प्रति वर्ष उन सभी कार्यों को सम्पन्न कर सके जिनको करने का उसने संकल्प किया है किन्तु वह इन सेवाओं को सम्पन्न नहीं कर पाती तो इनके लिए किसी प्रकार का कर क्यों दिया जायेगा। जो सेवा सम्पन्न नहीं की जाती, उसके कर्मचारियों को भी वेतन देने का प्रश्न नहीं उठता। स्टाफ के सदस्य हटा दिये जाते हैं तथा नवीन नियुक्तियां न होने तक रिक्त स्थान बने ही रहते हैं। इस व्यवस्था के परिणामस्वरूप वेतन के रूप में बहुत कम खर्च किया जाता है। बजट प्रति वर्ष आय और व्यय के बीच काम चलाऊ संतुलन स्थापित करने में महत्वपूर्ण योगदान करता है। यह कुल मिला कर वित्तीय प्रस्ताव होता है जिसमें लगाये जाने वाले रेट्स का भी वृतान्त रहता है। इसे समिति की सिफारिश के रूप में परिषद के सामने रखा जाता है। वित्तीय समिति का सभापति इन प्रस्तावों को प्रस्तुत करते समय सामान्य वित्तीय नीति की एक पुनरीक्षा प्रस्तुत करता है।

आन्तरिक वित्तीय नियंत्रण
[Internal Financial Control]

आन्तरिक वित्तीय नियन्त्रण का प्रयोग परिषद, वित्तीय समिति एवं उसके अधिकारियों द्वारा किया जाता है जबकि बाह्य नियन्त्रण को एक बाहरी अभिकरण 'आडिट' द्वारा लागू किया जाता है। आन्तरिक वित्तीय नियन्त्रण के पीछे कार्य करने वाले मुख्य रूप से दो सिद्धान्त हैं। प्रथम यह कि प्रत्येक व्यय पर परिषद की स्वीकृति प्राप्त होना जरूरी है। परिषद के कार्यों पर जो भी धन खर्च किया जाये उसके लिए परिषद के किसी प्रस्ताव की शक्ति अवश्य प्राप्त होनी चाहिए। दूसरा सिद्धान्त यह है कि परिषद के लिए जो भी भुगतान किये जायें वे कोषाध्यक्ष के द्वारा किये जाने चाहिए और परिषद द्वारा जो भुगतान किये जायें वे भी कोषाध्यक्ष द्वारा ही किये जाने चाहिये। कोषाध्यक्ष वैधानिक शक्ति सम्पन्न एक कानूनी अधिकारी होता है जिसे भुगतान प्राप्त करने एवं देने की शक्तियां रहती हैं। वह भुगतान करते समय उसकी पूरी छानबीन करता है तथा मुख्य रूप से दो बातों पर ध्यान देता है कि यह परिषद द्वारा स्वीकृत है अथवा नहीं। यह कानून के अनुसार है अथवा नहीं। यदि उसे यह ज्ञात हो कि भुगतान गैर-कानूनी है तो वह उसे न करेगा। कुल मिला कर कोषाध्यक्ष की स्थिति अत्यन्त कठिन बन जाती है। वह परिषद का अधिकारी होता है तथा उसका कार्य है परिषद के निर्देशों का पालन करना। यदि वह परिषद के व्यवहार को अस्वीकार कर दे तो परिषद उसको हटा भी सकती है। इतने पर भी यदि कोषाध्यक्ष यह देखता है कि कोई भुगतान गैर-कानूनी है तो वह उसे स्वीकार करने से मना कर सकता है। ऐसी स्थिति में यह भी सम्भव है कि परिषद को यह गलत सूचना दे दी जाये कि कोषाध्यक्ष उसकी सत्ता के विरुद्ध अन्यायपूर्ण रूप से अपनी शक्तियों

का प्रयोग कर रहा है। कोषाध्यक्ष भी अन्य अधिकारियों की भांति तथा अन्य साधारण नागरिकों की भांति कानून को तोड़ने की शक्ति नहीं रखता। कानून के मामलों में कोषाध्यक्ष क्लर्क के परामर्श को मान कर अपने मार्ग को सुरक्षित बना लेता है। क्लर्क परिषद का भी कानूनी परामर्शदाता होता है। यदि कोषाध्यक्ष एवं क्लर्क के मतों के बीच कोई अन्तर हो तो परिषद की राय को मान्यता देने की प्रथा है।

यह जरूरी नहीं है कि कोषाध्यक्ष स्थानीय सत्ता का मुख्य वित्तीय अधिकारी हो। अतीतकाल में अधिकांश स्थानीय सत्तायें स्थानीय बैंक मैनेजर को अपना कोषाध्यक्ष नियुक्त कर देती थीं। यह मैनेजर दिये जाने वाले तथा लिए जाने वाले भुगतानों की वैधानिकता को देखता था। परिषद में एक वित्तीय अधिकारी होता था जो परिषद को वित्तीय विषयों पर परामर्श देने की शक्ति रखता था एवं वित्तीय विभाग को संचालित करता था। बाद में इन दोनों कार्यों को मिला दिया गया। वर्तमानकाल में कोषाध्यक्ष इन दोनों ही कार्यों को सम्पन्न करता है। आन्तरिक वित्तीय नियन्त्रण के मुख्य रूप से तीन पहलू माने जाते हैं। प्रथम, नये व्यय को स्वीकार करने की प्रक्रिया; दूसरे, बजट का प्रभाव और तीसरे, समझौतों, भुगतानों एवं स्वीकृतियों का प्रबन्ध करना।

(i) **नये व्यय की स्वीकृति**—प्रत्येक वर्ष विभिन्न सेवाओं से सम्बन्धिता अनेक ऐसे प्रोजेक्ट आते हैं जिनको कि विभिन्न समितियों में विचारा जा सकता है; साथ ही अनेक प्रस्तावों को प्रत्येक परिषद की बैठक में विचार का विषय बनाया जाता है। इन प्रोजेक्टों एवं नवीन योजनाओं के प्रस्तावों में स्वाभाविक है कि कुछ धन खर्च होता है। यदि यह खर्च वर्तमान वित्तीय वर्ष में किया जाये तो बजट से भिन्न व्यवहार को अपनाना होगा; किन्तु प्रोजेक्ट ऐसा भी हो सकता है जिसमें वर्तमान वर्ष में कोई भी व्यय करने की आवश्यकता न हो। सुदूर भविष्य में ऐसे ही प्रोजेक्ट्स परिषद के व्यय पर प्रभावशील असर रखते हैं। प्रत्येक चीज अपने आप में अत्यन्त आवश्यक हो सकती है और ऐसा होने पर भी विशेषत: व्ययकारी नहीं हो किन्तु सबका कुल मिलाकर पड़ने वाला असर उल्लेखनीय हो सकता है। यही कारण है कि ऐसे विषयों में व्यय प्रति वर्ष बढ़ता ही चला जाता है। यह विशेष रूप से उस समय होता है जबकि इन कार्यों की संख्या भी प्रति वर्ष बढ़ती चली जाये। स्टाफ को बढ़ाना एक ऐसा ही कार्य है। स्टाफ को एक बार बढ़ा देने के बाद यह बड़ा कठिन होता है कि व्यय को कम किया जा सके। सामान्य जनता यह मानती है कि वार्षिक बजट पास करते समय मितव्ययता वरती जानी चाहिए किन्तु कानूनी दृष्टि से यह एक भ्रम-मात्र है। बजट परिषद में पहुंचता है उससे पूर्व ही अनेक मदों का व्यय निश्चित कर लिया जाता है। स्थानीय सत्ता से सम्बन्धित किसी भी नये व्यय की सूचना परिषद को दी जाना जरूरी है जो कि उस पर पर्याप्त विचार करती है, उसे स्वीकार करती है तथा क्या हो रहा है इस बात से अपने आपको पूरी तरह परिचित रखती है।

(ii) **बजट का प्रभाव**—बजट के मुख्य रूप से दो भाग होते हैं। इसके प्रथम भाग में किया जाने वाला व्यय होता है तथा दूसरे भाग में वह धन होता है जिसे कर के रूप में इकट्ठा किया जाना है। रेट्स इकट्ठा करने के लिए जो निर्णय लिया जाता है वह निर्धारित समय तक ही प्रभावशील रहता है। यह समय परिषद की रेट लगाने की शक्ति एवं रेट देने वाले की उपयुक्तता आदि पर निर्भर करता है किन्तु व्यय पक्ष की ओर ऐसी कोई बाध्यता नहीं होती। परिषद द्वारा स्वयं के निर्देशन के लिए योजनायें बनायी जाती हैं तथा इन योजनाओं पर खर्च करने के लिए बजट में धन की मात्रा निश्चित की जाती है। इस मात्रा को मानने के लिए वह बाध्य नहीं होती। यदि वह आवश्यक समझे तो अपनी किसी बैठक में सड़क पर किये जाने वाले व्यय को आधा कर सकती है तथा उस सारे धन को पुस्तकालय की पुस्तकें खरीदने में खर्च कर सकती है।

वैधानिक रूप से ऐसा करने में परिषद को किसी प्रकार की कठिनाई का अनुभव नहीं होता किन्तु असल में जब वह व्यवहार करने लगती है तो इस प्रकार के परिवर्तनों के लिए बहुत कम स्थान रहता है। यदि परिषद ने कुछ समझौते कर लिए हैं तो इन समझौतों को वह केवल इस कारण रद्द नहीं कर सकती कि उसने अपना विचार बदल लिया है। कोई भी बड़ा परिवर्तन उस समय तक नहीं किया जा सकता जब तक कि उसके लिए पृष्ठभूमि तैयार न कर ली जाये। ऐसे परिवर्तन जब भी कभी होते हैं उनका विरोध किया जाता है। बजट के कई एक प्रस्तावों का सम्बन्ध केन्द्रीय अनुदानों से होता है। यदि ये प्रस्ताव माने न जायें तो अनुदान भी समाप्त कर दिया जायेगा। जब यह कहा जाता है कि परिषद प्रस्तावित बजट के प्रस्तावों को मानने के लिए बाध्य नहीं है तो उसका मूल लक्ष्य एक यही होता है कि परिषद को ही वित्तीय कार्यों के लिए पूर्ण रूप से उत्तरदायी बनाया जाये। इंगलैण्ड की स्थानीय सत्ता समय-समय पर अपने बजट में परिवर्तन करने पर विचार करती है।

बजट के व्ययकारी भाग में कुछ मदों को रख देने से ही धन खर्च करने का कानूनी अधिकार प्राप्त नहीं हो जाता। इस प्रकार के व्यय की शक्ति प्रदान करने के लिए परिषद को विशेष प्रस्ताव पास करना होता है। उन विभिन्न विषयों के बीच भी अन्तर रखना होता है जिनके लिए धन प्रदान किया गया है। प्रायः सभी मदों पर व्ययकारी समितियों द्वारा विस्तार के साथ विचार कर लिया जाता है। इसके बाद वित्तीय समिति इनका अच्छी प्रकार से मन्थन कर लेती है। बाद में इन पर विचार करने के लिए अधिक कुछ शेष नहीं रह जाता, केवल परिषद की स्वीकृति की जरूरत होती है। कुछ ऐसी मदें भी हो सकती हैं जिन पर विस्तार से विचार न किया गया हो। उदाहरण के लिए बालकों से सम्बन्धित समिति बाल-रक्षा के लिए एक मकान किराये पर लेने के लिए धन का प्रावधान करती है तो वह गोल रूप में एक मद को निर्धारित कर देती है तथा इस परिणामस्वरूप यह स्पष्ट नहीं हो पाता कि असल में कितना धन व्यय किया जायेगा। ऐसे मामलों में परिषद सिद्धान्त रूप में स्वीकार कर लेती है किन्तु धन को व्यय करने की शक्ति नहीं देती। जहां कहीं एक विशेष भवन एक निश्चित किराये पर लेना हो, वहां इसके लिए अलग

से प्रस्ताव किया जाता है। यह प्रस्ताव वित्तीय समिति द्वारा विचारा जाता है तथा स्वीकृति के लिए इसे परिषद के पास भेजा जाता है। परम्परा के अनुसार बजट में इस प्रकार की मदों को इंगित कर दिया जाता है। परिषद इन मदों के अतिरिक्त अन्य के सम्बन्ध में प्रस्ताव पास कर लेती है।

एक वित्तीय वर्ष में कई बार यह आवश्यकता उठ सकती है कि बजट के प्रस्तावों से भिन्न मार्ग अपनाया जाये। किन्तु जब कभी ऐसा किया जाता है तो उसे विचारार्थ पहले परिषद के सम्मुख प्रस्तुत किया जाता है। इसी प्रकार जब बजट द्वारा व्यय की शक्ति दिये बिना ही एक मद रख दी जाती है तो उसके विस्तारों पर भी परिषद की स्वीकृति लेना जरूरी होता है। किसी भी समिति को यह अधिकार नहीं होता कि वह बजट द्वारा स्वीकृत किसी कार्य को सम्पन्न न करके वचत कर ले अथवा किसी अन्य कार्य पर धन खर्च कर दे। यदि कभी भी वह ऐसा करना चाहे तो उसे परिषद को प्रतिवेदित करना होगा तथा उसकी स्वीकृति प्राप्त करनी होगी। यह कहा जाता है कि जब योजनाओं में परिवर्तन किया जाये तो ऐसा करने के लिए अतिरिक्त धन की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए। कार्य करते समय इस सिद्धान्त को ध्यान में रखना चाहिए कि धन को परिषद की स्वीकृति के बिना खर्च न किया जा सके। यदि कोई समिति उन मदों पर धन खर्च करना चाहे जिनको अनुमानों में समाहित नहीं किया गया है तो वह इसके लिए अनुपूरक अनुमान भेज सकती है। यह अनुपूरक अनुमान भी उसी प्रकार विचार एवं स्वीकृति के विषय होंगे जिस प्रकार अनुमान हुआ करते हैं। अनुपूरक अनुमान पहले वित्तीय समिति को ही भेजे जाते हैं। यह प्रावधान अत्यन्त महत्वपूर्ण है क्योंकि यह खतरा रहता है कि अधिक धन खर्च करने के प्रस्ताव को परिषद बिना उसके परिणामों पर भली प्रकार से विचार किये ही स्वीकार कर ले।

अनुपूरक अनुमानों को स्वीकार करने के मार्ग में एक सबसे बड़ी बाधा यह उत्पन्न हो जाती है कि उनके स्वीकार करने के लिए पर्याप्त धन ही न हो। अतः वित्तीय समिति का एक कार्य यह भी होना चाहिए कि वह आय तथा व्यय पर निरन्तर देख-रेख रखे और यदि कभी अतिरिक्त व्यय का प्रश्न उठे तो वह परिषद की वित्तीय स्थिति को बता सके। कुछ अनुपूरक अनुमान परिषद को प्रायः कोई विकल्प ही नहीं सौंपते। मूल्य बढ़ने के कारण, वेतन बढ़ने के कारण तथा नवीन व्यवस्थापन द्वारा नई सेवायें बढ़ जाने के कारण जो परिणाम होते हैं वे प्रायः ऐसे हैं जिनको मौलिक अनुमान बनाते समय नहीं देखा जा सकता किन्तु फिर भी परिषद को उनके व्यय का भार वहन करना होता है। अन्य अनेक कारणों से भी अतिरिक्त अनुपूरक अनुमान जरूरी हो सकते हैं।

(iii) **समझौते एवं भुगतान**—जब परिषद द्वारा व्यय को स्वीकार कर लिया जाता है, उसके बाद भी एक व्यापक क्षेत्र बच रहता है जिसमें नियन्त्रण की आवश्यकता रहती है। व्यय की स्वीकृति का अर्थ निकट से जानने के बाद ही उसके पूरे अर्थ को समझा जा सकता है; किन्तु विभिन्न प्रशासनिक मामलों में परिषद कितनी दूर तक जा सकती है, यह बात विषय के

[Control of Local Government Finance]

स्थानीय सत्तायें राष्ट्रीय कोपाध्यक्ष से सहायता अनुदान के रूप में धन प्राप्त करती है तथा स्थानीय रेट्स के रूप में सार्वजनिक धन एकत्रित करती हैं। ऐसी स्थिति में यह स्वाभाविक है कि उनके व्यय को कई प्रकार से नियंत्रित किया जाये। प्रथम, सावारण कानून द्वारा यह व्यवस्था कर दी जाती है कि अनुचित अथवा अनधिकार व्यय न किया जा सके। स्थानीय सत्ताओं के धन को सार्वजनिक उद्देश्य के लिए प्राप्त एक दान या धन समझा जाता है तथा एक स्थानीय सत्ता या इसके व्यक्तिगत सदस्य तथा अधिकारी इस गैर-कानूनी रूप से इसका प्रयोग करते हैं तो उनके विरुद्ध कार्यवाही न्यायालय में की जायेगी। दूसरे, ऐसे कानूनी प्रावधान बना दिये गये हैं जिनके अनुसार स्थानीय सत्ताओं को व्यवस्थित रूप से लेखे रखने होते हैं। प्रत्येक काउंटी जिला परिपद को एक सामान्य रेट कोप रखना होता है। यह इसका लेखा रखती, जिसमें कि सभी प्राप्तियों को रखा जाता है और जिसमें से सभी अदायगियों को लिया जाता है। देहाती जिले भी सामान्य रेट कोप रखते हैं किन्तु उनको लेखों के दो सेट रखने होते हैं—सामान्य खर्च के लिए सामान्य जिला लेख और विशेप खर्च के लिए विशेप जिला लेखा देहाती परिषदों के वित्तीय विचारों को सीमित करने वाले नियम निर्धारित कर दिये गये हैं। वारो परिषदों को भी अपना सामान्य रेट कोप बनाना होता है तथा इसका लेखा भी रखना होता है। वारो का कोपाध्यक्ष सभी प्राप्तियाँ इसमें रखता

से प्रस्ताव किया जाता है। यह प्रस्ताव वित्तीय समिति द्वारा विचारा जात है तथा स्वीकृति के लिए इसे परिषद के पास भेजा जाता है। परम्परा अनुसार बजट में इस प्रकार की मदों को इंगित कर दिया जाता है। परि इन मदों के अतिरिक्त अन्य के सम्बन्ध में प्रस्ताव पास कर लेती है।

एक वित्तीय वर्ष में कई बार यह आवश्यकता उठ सकती है कि के प्रस्तावों से भिन्न मार्ग अपनाया जाये। किन्तु जब कभी ऐसा जाता है तो उसे विचारार्थ पहले परिषद के सम्मुख प्रस्तुत किया जाता इसी प्रकार जब बजट द्वारा व्यय की शक्ति दिये बिना ही एक मद जाती है तो उसके विस्तारों पर भी परिषद की स्वीकृति लेना जरूरी है किसी भी समिति को यह अधिकार नहीं होता कि वह बजट द्वारा किसी कार्य को सम्पन्न न करके बचन कर ले अथवा किसी अन्य कार्य खर्च कर दे। यदि कभी भी वह ऐसा करना चाहे तो उसे परिषद वेदित करना होगा तथा उसकी स्वीकृति प्राप्त करनी होगी। यह व है कि जब योजनाओं में परिवर्तन किया जाये तो ऐसा करने के रिक्त धन की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए। कार्य करते समय को ध्यान में रखना चाहिए कि धन को परिषद की स्वीकृति के f किया जा सके। यदि कोई समिति उन मदों पर धन खर्च करना अनुमानों में समाहित नहीं किया गया है तो वह इसके लिए मान भेज सकती है। यह अनुपूरक अनुमान भी उसी प्रकार वि कृति के विषय होंगे जिस प्रकार अनुमान हुआ करते हैं। अ पहले वित्तीय समिति को ही भेजे जाते हैं। यह प्रावधान अत्यन्त क्योंकि यह खतरा रहता है कि अधिक धन खर्च करने के प्रस्ता बिना उसके परिणामों पर भली प्रकार से विचार किये कर ले।

अनुपूरक अनुमानों को स्वीकार करने के मार्ग में एक सबसे यह उत्पन्न हो जाती है कि उनके स्वीकार करने के लिए पर्याप्त हो। अतः वित्तीय समिति का एक कार्य यह भी होना चाहिए कि तथा व्यय पर निरन्तर देख-रेख रखे और यदि कभी अतिरिक्त व्यय उठे तो वह परिषद की वित्तीय स्थिति को बता सके। कुछ अनुपूरक परिषद को प्रायः कोई विकल्प ही नहीं सौंपते। मूल्य बढ़ने के कारण, बढ़ने के कारण तथा नवीन व्यवस्थापन द्वारा नई सेवायें बढ़ जाने जो परिणाम होते हैं वे प्रायः ऐसे हैं जिनको भौतिक अनुमान बन नहीं देखा जा सकता किन्तु फिर भी परिषद को उनके व्यय का भार करना होता है। अन्य अनेक कारणों से भी अतिरिक्त अनुपूरक अनुमान हो सकते हैं।

(iii) समझौते एवं भुगतान—जब परिषद द्वारा व्यय को स्वीक लिया जाता है, उसके बाद भी एक व्यापक क्षेत्र बच रहता है नियन्त्रण की आवश्यकता रहती है। व्यय की स्वीकृति का अर्थ जानने के बाद ही उसके पूरे अर्थ को समझा जा सकता है; किन्तु प्रशासनिक मामलों में परिषद कितनी दूर तक जा सकती है, यह बात

जाये उसको अधिकृत बनाने वाले व्यक्तियों या व्यक्ति से उस व्यय को वसूल करना। सम्बन्धित व्यक्ति स्थानीय सत्ता के सदस्य भी हो सकते हैं जो कि प्रस्ताव द्वारा इस प्रकार के व्यय को अधिकृत बना दें। आडीटर द्वारा जिस व्यक्ति का नाम लिया जाये, वह गैर-कानूनी रूप से खर्च किये गये धन के लिए स्थानीय सत्ता के कोष में रकम जमा करायेगा। तीसरे, आडीटर द्वारा इस प्रकार लिए जाने वाले धन की रकम निर्धारित व प्रमाणित की जायेगी। चौथे, वह आडिट के निष्कर्ष रूप में लेखों के अपने मत्त को प्रमाणित करेगा। जिला आडीटर के सम्मुख प्रस्तुत किये जाने वाले किसी भी व्यय पर स्थानीय सरकार का कोई भी निर्वाचक आपत्ति कर सकता है। परिषद के जिस सदस्य से पैसा वसूल (Surcharge) किया जाता है उसे कार्यालय के लिए कुछ समय तक अयोग्य ठहरा दिया जाता है।

स्थायी आदेशों द्वारा व्यय का नियन्त्रण
[Control of Expenditure by Standing Order]

स्थानीय सरकार अपनी समितियों के कार्य का संचालन स्थायी आदेशों के माध्यम से करती है। सन् १९३४ में स्वास्थ्य मन्त्री ने पूर्व अनुभव के आधार पर नमूने के लिए स्थायी आदेश जारी किये स्थानीय सत्तायें केवल ठेकों के बारे में ही स्थायी आदेश जारी कर सकती हैं। प्रायः सभी स्थानीय सत्ताओं को इनकी आवश्यकता पड़ती है अतः इन्होंने नमूने के तौर पर स्थायी आदेशों की रचना कर ली है। इसके माध्यम से प्रक्रिया को एकरूप बनाने में सहायता मिलती है। ठेकों के मामले में जो स्थायी आदेश दिये जाते हैं, वे स्थायी सत्ता को निम्नतम दर वाले टेन्डर के अतिरिक्त टेन्डर स्वीकार करने से रोकते हैं। यदि कभी ऐसा करना जरूरी भी हो तो इसके लिए उचित व्यावसायिक परामर्श लिया जायेगा। अन्य स्थायी आदेशों में से कुछ पूंजीगत लेखे तथा साधारण सामयिक व्यय के भुगतान के तरीके को नियमित करते हैं। इसके द्वारा यह भी निर्धारित किया जाता है कि स्थानीय सत्ताओं के जो सदस्य सत्ता के सम्मुख आने वाले जिस विषय में स्वार्थ रखते हों वे उसकी प्रक्रियाओं में भाग न लें। इस प्रकार स्थायी आदेश स्थानीय सत्ताओं के अनुचित व्यय के विरुद्ध एक अन्य सुरक्षा की व्यवस्था करते हैं।

इस प्रकार वित्तीय क्षेत्र में स्थानीय सरकार की क्रियाओं को नियंत्रित करने के लिए विभिन्न तरीके अपनाये जाते हैं। यदि हम ग्रेट ब्रिटेन की स्थानीय सरकार के वित्त पर एक समग्र दृष्टिकोण से विचार करें तो पायेंगे कि यहां के प्रशासन की कुशलता, ईमानदारी एवं न्यायोचितता किसी भी देश की तुलना में कम नहीं है।

८

समिति व्यवस्था

[THE COMMITTEE SYSTEM]

समिति को व्यक्तियों का एक ऐसा निकाय कहा जा सकता है जो कि विशेष कार्यों को सम्पन्न करने के लिए परिषद द्वारा नियुक्त की जाती है। इस प्रकार से नियुक्त समितियां परिषद के कार्यों के किसी एक भाग का संचालन करती हैं तथा उस कार्य पर परिषद की स्वीकृति प्राप्त कर लेती हैं। समितियों की स्थापना करना कई एक कारणों से आवश्यक बन जाता है। स्थानीय सत्ता के पास करने के लिए भारी कार्य होता है तथा इस सबको वह अपने बड़े आकार के कारण सुविधापूर्वक कर सकने में असमर्थ रहती है। वह इस कार्य को कुशलता के साथ भी नहीं कर सकती। परिषद की कार्यवाही में अनेक अनौपचारिकतायें बरती जाती हैं जिनके कारण वह किसी विषय पर विस्तार के साथ विचार कर सकने में असमर्थ नहीं हो पाती। इसके परिणामस्वरूप समिति व्यवस्था को प्रारम्भ किया गया है। इस व्यवस्था के आधीन परिषद की शक्तियों एवं कर्त्तव्यों का व्यवहार समिति द्वारा किया जाता है। समिति व्यवस्था इंगलैण्ड के स्थानीय प्रशासन की एक मुख्य विशेषता समझी जाती है। इन दोनों का विकास बहुत कुछ साथ-साथ ही हुआ है। समिति व्यवस्था का विकास इस कारण किया गया है क्योंकि छोटे-छोटे अनेक कार्य परिषद के दायित्व बन गये हैं। पहले जो कई कार्य एडहॉक (Adhoc) निकायों द्वारा किये जाते थे उनको अब स्थानीय सत्ताओं द्वारा ले लिया गया है। स्थानीय सत्ताओं द्वारा जो सेवायें अभी ली गई हैं, उनका संचालन पृथक विभागों द्वारा एवं उन्हीं अधिकारियों के माध्यम से किया जाता है जो उनको पहले संचालित करते थे।

समिति व्यवस्था के लाभ

[Advantages of Committee System]

समिति व्यवस्था केवल आवश्यकता की ही जननी नहीं है वरन् इसके अनेक लाभ भी हैं। प्रथम, परिषद को अपने द्वारा सम्पन्न की जाने वाली सेवाओं के बारे में विस्तार के साथ सोचना होता है तथा ऐसा करते हुए वह

अपने सभी दायित्वों का निर्वाह नहीं कर सकती तथा केवल समितियों तक अपने आपको मर्यादित कर लेती है। समिति व्यवस्था उसे इस परिस्थिति के विरुद्ध सहारा देती है। दूसरे, परिषद का कोई भी नया सदस्य उस समिति के कार्यों से परिचित नहीं होता जिसका वह सदस्य बनाया गया है। परिषद के कार्यों के केवल एक भाग मात्र से ही सम्बन्ध रखने के कारण वह शीघ्र ही एक समिति के कार्यों का परिचय पा जाता है। यह ऐसी परिस्थिति में अत्यन्त महत्वपूर्ण है जब कि समस्त स्थानीय सरकार की सेवायें अधिक से अधिक तकनीकी होती जा रही हैं। इसके लिए या तो सवैतनिक अधिकारियों को ही रखा जाये अथवा निर्वाचित सदस्यों में तकनीकी ज्ञान का विकास किया जाये। तीसरे, समिति व्यवस्था अत्यन्त लोचशील होती है इसको परिस्थिति के अनुसार ढाला जा सकता है। यदि नई सेवाओं का संचालन करना है अथवा स्थापित सेवाओं का कोई भाग इतना बढ़ गया है कि उसके लिए अलग से विचार करने की आवश्यकता है तो नई समितियां स्थापित की जा सकती हैं। जब एक समिति की आवश्यकता नहीं रहती तो उसको समाप्त किया जा सकता है। जब कभी एक विभाग को दूसरे के साथ मिला दिया जाये अथवा सेवा को स्थानीय सत्ता के अन्य निकाय को सौंप दिया जाये तो समिति की जरूरत ही नहीं रह जाती और ऐसा होने पर आसानी से समिति को समाप्त किया जा सकता है। चौथे, समिति की बैठकों में किया जाने वाला वाद-विवाद पर्याप्त तकनीकी होता है तथा एक बार जब समिति द्वारा तकनीकी निर्णय ले लिये जाते हैं तो परिषद अपना समय नीति से सम्बन्धित मामलों पर विचार करने में लगा सकती है। पांचवें, एक समिति में पूरी परिषद की अपेक्षा केवल कुछ लोग ही बैठते हैं। अपनी छोटी संख्या के कारण समिति अपना कार्य आसानी से कर सकती है। स्थानीय सरकार की प्रकृति ही कुछ ऐसी है कि कार्यों पर विस्तार के साथ विचार किया जाना जरूरी होता है। समिति एक ऐसा निकाय होती है जो कि संतोषजनक रूप से छोटी-छोटी बातों पर भी विचार कर सकती है। छटे, समिति की बैठकें व्यक्तिगत रूप से होती हैं जबकि परिषद की बैठकें सामान्य जनता के लिए भी खुली हो सकती हैं। समिति में कार्य का संचालन अपेक्षाकृत अधिक अनौपचारिक रूप से किया जा सकता है। परिषद का व्यवहार वाद-विवाद के अनेक नियमों से तथा स्थायी आदेशों से मर्यादित रहता है। समिति का सदस्य जो भी उसके दिमाग में आये वह अपने साथी सदस्यों से कहने के लिए स्वतन्त्र होता है, किन्तु परिषद की बैठक में दिया जाने वाला भाषण ऐसा ही होता है मानो जनता के सामने दिया गया हो। ऐसी स्थिति में परिषद का सदस्य कई बार अपनी वास्तविक इच्छाओं को प्रकट नहीं करना चाहता। वह वही बात कहता है जो उसे प्रेस के सामने कहनी चाहिए तथा जिसके लिए वह जनता की प्रक्रिया सहने को तैयार हो।

समिति व्यवस्था की हानियां

[Disadvantages of the Committee System]

समिति व्यवस्था उपयोगी है, आवश्यक है तथा लाभदायक है किन्तु यह सब होने पर भी वह आलोचनाओं से परे नहीं है। आलोचकों द्वारा

समिति व्यवस्था की कई प्रकार से आलोचनायें की जाती हैं। इसकी प्रथम आलोचना यह है कि परिषद के सदस्यों के पास एक सीमित समय होता है और वह केवल कुछ ही समितियों में कार्य कर पाती है। जिन समितियों में वे कार्य करते हैं, उनके सम्बन्ध में उनका ज्ञान व्यापक एवं तकनीकी हो जाता है किन्तु वे शेष कार्यों के बारे में प्रायः अनभिज्ञ रहते हैं। दूसरे, परिषद यह प्रयास करती है कि वे अधिक से अधिक समितियों में कार्य कर सकें जहां कहीं भी वे ऐसा करने लगते हैं तो उनकी कार्यकुशलता समाप्त हो जाती है। पार्षद प्रायः उन समितियों में कार्य करना चाहते हैं जो जनता में अधिक लोकप्रिय होती हैं, उदाहरण के लिए शिक्षा समिति। अन्य कम महत्वपूर्ण समितियों में कार्य करने के प्रति अधिकांश सदस्य प्रायः अपना उत्साह प्रकट नहीं करते उदाहरणार्थ पुस्तकालय समिति। इस प्रकार की कम महत्वपूर्ण समितियां इस प्रवृत्ति के परिणामस्वरूप और भी अधिक महत्वहीन बनती चली जाती हैं। तीसरे, समिति व्यवस्था स्थानीय सत्ता के कार्य को बांट देती है तथा प्रत्येक समिति अपने आपको एक स्वतन्त्र निकाय समझने लगती है। यह स्थिति उस समय और भी खराब हो जाती है जब परिषद समितियों को पर्याप्त सत्ता सौंप देती है तथा एक तकनीकी विशेषज्ञ को विभाग का अध्यक्ष बना दिया जाता है। विशेषज्ञों की यह प्रकृति होती है कि वे दूसरे कार्यों को ग्रहण करने में बहुत कम रुचि लेते हैं तथा जहां पारस्परिक सहयोग की आवश्यकता होती है वहां संघर्षपूर्ण स्थिति पैदा हो जाती है। चौथे, समितियों की बैठकों से जनता को अलग रखा जाता है। इस व्यवहार के कारण जनता से सम्बन्धित विषयों को भी जनता से गुप्त रखने का प्रयास किया जाता है। इस व्यवस्था का दुरुपयोग भी किया जा सकता है। जिन विषयों पर परिषद में सार्वजनिक रूप से विचार किया जाना चाहिए था उनको निर्वाचकों से छिपा कर रखा जाता है।

समितियों के प्रकार
[Kinds of Committees]

स्थानीय स्तर पर जिन शक्तियों का प्रयोग किया जाता है उन समितियों को कई भागों में विभाजित किया जाता है। इनमें से कुछ प्रमुख निम्न प्रकार हैं—

१. स्थायी समितियां [Standing Committees]—स्थायी समितियां उनको कहा जाता है, जिनको स्थानीय सत्ता द्वारा अनिश्चित काल के लिए या प्रत्येक वार्षिक बैठक में नगरपालिका के प्रशासकीय वर्ष की अवधि में करने के लिए नियुक्त करते हैं। परिषद् प्रत्येक वर्ष किसी भी विशेष सेवा में सम्पन्न करने के लिए इस प्रकार की समितियों की नियुक्ति करती है। स्थायी समिति को भी कार्य की प्रकृति के आधार पर प्रायः दो भागों में विभाजित किया जाता है। प्रथम हैं सेवा समितियां (Service Committees)। ये समितियां वे होती हैं जो कि परिषद् के कार्यों में से ही किसी एक को सम्भाल लेती हैं; किसी विशेष सेवा के प्रबन्ध का भार अपने ऊपर ले लेती हैं। दूसरी समितियां विभागीय सिमितियां (Departmental Committees) कहलाती

है। इन समितियों के कार्यों की प्रकृति उनसे भिन्न होती है जो विभाग या विभागों द्वारा संचालित किए जाते हैं।

२. विशेष समितियां [Special Committees]—विशेष समिति को परिषद् द्वारा किसी विशेष कार्य के लिए नियुक्त किया जाता है तथा इस समिति का कार्यकाल उतना ही होता है जब तक कि वह कार्य समाप्त नहीं हो जाता। इस प्रकार यह एक अस्थायी समिति है। कभी-कभी वह कार्य जिसके लिए इस प्रकार की समिति की स्थापना की जाती है, इतना अधिक बढ़ जाता है कि यह एक प्रकार से स्थायी समिति ही बन जाती है। इस प्रकार की समिति के उदाहरण के रूप में हम उस समिति को रख सकते हैं जो किसी नयी समस्या, एक प्रस्तावित नई सेवा या किसी खास प्रशासकीय प्रश्न के सम्बन्ध में छानबीन करती है। परिषद् में जब समय-समय पर विशेष कार्य उत्पन्न होते हैं तो नियमत रूप से उनके लिए विशेष समितियां नियुक्त कर दी जाती हैं। इस प्रकार की समितियों का एक अन्य उदाहरण कुछ स्थानीय सत्ताओं द्वारा नियुक्त वे समितियां हैं जिनका लक्ष्य मेयर को चुनना होता है। मेयर का चुनाव एक ऐसा कार्य है जिसमें लोगों के व्यक्तित्व के बारे में आवश्यक रूप से विवेचना का प्रश्न आता है। यह विवेचना यदि एक समिति के माध्यम से आन्तरिक विवेचना तथा समझौते की प्रक्रिया से की जाय तो अधिक अच्छा रहे। परिषद् की खुली बैठक में ऐसे विषयों पर विचार करने से अनेक जटिलतायें पैदा हो जाती हैं किन्तु जब समिति अपनी अनौपचारिक बैठक में इस सम्बन्ध में निर्णय ले लेती है तो कार्य अधिक कुशलतापूर्वक सम्पन्न हो जाता है। कहीं-कहीं यह प्रथा है कि मेयर का चुनाव प्रति वर्ष अलग-अलग दलों से किया जाये। ऐसे स्थानों पर भी मेयर के चुनाव के लिए एक समिति (Mayoralty Committee) नियुक्त की जा सकती है। जब परिषद् मेयर का वेतन निश्चित करना चाहती है तो इसके लिए वह तत्सम्बन्धी समिति से परामर्श लेती है, स्थानीय परिस्थितियों पर विचार करती है तथा मेयर बनने वाले व्यक्ति से भी सम्पर्क स्थापित करती है।

३. संविधि द्वारा निर्मित समितियां [Statutory Committees]:— [illegible] के अनुसार कुछ समितियों की स्थापना करना जरूरी होता है। इनकी [illegible] की स्थापना के लिए स्थानीय सत्ता बाध्य होती है। प्रमुख स्थानीय [illegible] का संचालन इस प्रकार की समितियों द्वारा किया जाता है। एक [illegible] सत्ता में कितने प्रकार की समितियां रहेंगी? यह बात इस तथ्य पर [illegible] करती है कि वह स्थानीय सत्ता किस प्रकार की है। मुख्य-मुख्य परि[illegible] वित्तीय समिति की स्थापना करती है। काउन्टी परिषदों को इस [illegible] कई एक समितियों की स्थापना करनी होती है। उदाहरण के [illegible] शिक्षा, स्वास्थ्य, [illegible], वित्त एवं कल्याण से सम्बन्धित समितियां। [illegible] के लिए इस प्रकार की समिति को नियुक्त कर दिया जाता है, [illegible] सभी विषय इस प्रकार की समिति को विचारार्थ प्रस्तुत किये [illegible]। इस प्रकार की समिति से संबंधित किसी भी विषय पर परिषद् [illegible] तक वह समिति की सिफारिश एवं

प्रतिवेदन प्राप्त न कर ले। संकट काल में इस नियम का अपवाद भी हो सकता है। इस प्रकार की सभी समितियां स्थायी समितियां होती हैं किन्तु सभी स्थायी समितियां इस प्रकार की समितियां नहीं होती।

इस प्रकार की समितियों की रचना एवं गठन के सम्बन्ध में विशेष प्रावधान रखे जा सकते हैं। एक वित्तीय समिति में परिषद् के ही सदस्य होते हैं वहां सहवृत सदस्यों (Co-opted members) के लिए कोई स्थान नहीं रहता। शिक्षा समिति में अनुभवी तथा ऐसे व्यक्ति होने चाहिए जो क्षेत्र की शैक्षणिक परिस्थितियों से सम्बन्ध रखते हों तथा परिचित हों। इस समिति की रचना की मुख्य बात यह है कि इसका प्रबन्ध शिक्षा मंत्रालय द्वारा स्वीकृत किया जाता है। राष्ट्रीय सहायता अधिनियम के आधीन गठित की जाने वाली समिति में पुरुषों की भांति स्त्रियां भी हो सकती हैं। इस प्रकार की समितियों की बनावट के सम्बन्ध में एक अन्य महत्वपूर्ण बात यह देखनी होती है कि सहवृत सदस्यों की नियुक्ति के लिए प्रावधान रखा गया है अथवा नहीं। वर्तमान के कुछ अंग्रेजी अधिनियम यह व्यवस्था कर देते हैं कि समिति के कम से कम आधे सदस्यों को परिषद् से ही लिया जाये। इस प्रकार सहवृत सदस्य अधिक नियुक्त करने का अवसर प्राप्त हो जाता है।

४. अनुमति द्वारा निर्मित समितियां [Permissive Committees]—संविधि द्वारा निर्मित समितियों का क्षेत्र अधिक व्यापक नहीं है। इनकी तुलना में उन समितियों का क्षेत्र अधिक व्यापक है जिनकी स्थापना स्थानीय सत्ता द्वारा इसलिए की जाती है कि उनको ऐसा करने की अनुमति प्राप्त है। उन समितियों का गठन करते समय सत्ता को यह स्वतन्त्रता रहती है कि समिति के विशेष कार्य-क्षेत्र के अनुसार जिस प्रकार की समिति का संगठन वे चाहें कायम कर लें। कई बार यह सुझाव दिया जाता है कि यह अधिक उपयुक्त होगा यदि कानून द्वारा निर्मित समितियों के लिए सभी निर्देश उठा दिये जाते या उनको एकत्रित करके एक सरल निर्देश का रूप दे दिया जाता। जिन कानूनों के द्वारा स्थानीय सत्ता की स्थापना की जाती है वे कानून उनको इस प्रकार की समितियां नियुक्त करने की तथा ऐसी शक्ति को हस्तांतरित करने की सत्ता प्रदान कर देते हैं। इस प्रकार की समितियों की रचना से सम्बन्धित कानून समय-समय पर पास किए गये हैं। अतः वे एक या दो स्थानीय प्रकार की सत्ताओं के बारे में विचार करते हैं। सभी प्रकार की स्थानीय सत्ताओं के बारे में एक साथ नहीं। विभिन्न प्रकार की स्थानीय सत्ताओं को समिति नियुक्त करने की जो शक्ति दी जाती है वह अलग-अलग होती है। स्थानीय सरकार अधिनियम, १९३३ के अनुसार सभी पूर्व व्यवस्थापनों को महत्वहीन बना दिया गया और स्थानीय सत्ताओं को यह शक्ति दी गई कि अपने कार्य का संचालन करने के लिए वे जो भी आवश्यक समझें समिति नियुक्त कर लें।

५. साधारण समितियां [Ordinary Committees]—एक सामान्य नियम के अनुसार परिषद उतनी समितियां बना सकती हैं जितनी वह आवश्यक समझें। इन समितियों में पूरी तरह से परिषद के सदस्य हो सकते हैं अथवा सहवृत सदस्य; किन्तु सामान्य रूप से समिति के कम से कम दो-

[Allocation of Responsibility to Committees]

जब स्थानीय परिषद द्वारा अपनी समितियों को सत्ता सौंपी जाती है तो इसके लिए वह दो प्रकार के तरीके अपना सकती है। प्रथम, प्रत्येक सेवा के लिए जिसके लिए कि सत्ता उत्तरदायी है, एक समिति नियुक्त कर दी जाती है। यह तरीका अपने आप में बहुत पुराना है। जब स्थानीय सत्ताओं का प्रारम्भ किया गया था उसी समय से इस प्रकार की समितियां प्रचलित हैं और वर्तमान में भी ये अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। जब एक स्थानीय सत्ता समितियों के गठन के इस तरीके को काम में लेती है तो वह स्वास्थ्य, शिक्षा, जल वितरण एवं अपने द्वारा सम्पन्न होने वाली सभी सेवाओं के लिए एक-एक स्थायी समिति नियुक्त कर देती है। प्रायः सभी संविधि द्वारा निर्मित समितियां एक विशेष सेवा से सम्बन्ध रखती हैं। दूसरे, परिषद के कर्त्तव्यों को कार्य के प्रकार के अनुसार भी विभाजित किया जा सकता है। इस व्यवस्था के अनुसार वित्त, कानूनी व्यापार, सचिवालय–कार्य, समिति चिकित्सा सम्बन्धी कार्य, इन्जीनियरिंग-कार्य, आदि के लिए एक-एक समिति नियुक्त की जायगी। सभी काउन्टी परिषदें एवं राजधानी बारो परिषदें कानून के अनुसार एक वित्तीय समिति रखती हैं। इस समिति को छोड़ कर सभी संविधि द्वारा निर्मित समितियां एक प्रदत्त सेवा का नियन्त्रण करती हैं। अन्य प्रकार की सत्ताओं में वित्तीय समिति अनुमति द्वारा निर्मित समिति होती है तथा अधिकांश परिषदें इस प्रकार की समिति का गठन करती हैं। कार्य के प्रकार पर आधारित अन्य समितियां जिनको प्रायः अधिकांश परिषदों द्वारा नियुक्त किया जाता है वे हैं स्टाफ समितियां (S aff Committees) और कार्य समितियां (Works Committees)।

यह कहा जाता है कि जब स्थानीय सत्ता समितियों के गठन का निर्णय करे तो उसे मुख्य रूप से तीन बातों पर विचार करना चाहिए। प्रथम, परिषद के सभी कार्यों को इस प्रकार विभाजित करना चाहिए कि हर कोई यह जान सके कि कौन सी समिति कौन सा कार्य सम्पन्न करती है। इसी विधि के द्वारा यह निश्चित हो पाता है कि सभी विषयों पर विचार किया जाता है और सभी सम्बन्धित तत्वों को ध्यान में रखा गया है। हर समय

ऐसी अनेक समस्याएं रहती हैं जो कि वर्तमान समितियों के अधिकार क्षेत्र से बाहर होती हैं। इन पर विचार करने के लिए एक सामान्य उद्देश्य समिति का गठन किया जा सकता है। दूसरे, जन समितियों के कार्यों को समूहीकृत किया जाय तो सत्ता की क्रियाओं के सुपरिचित सम्मार्गों को ध्यान में रखना चाहिए तथा इसे उन लोगों की स्वेच्छा पर नहीं छोड़ देना चाहिए जो कार्य निर्धारित करते समय परिषद में कार्य कर रहे हों। जन-स्वास्थ्य एवं गृह-निर्माण जैसी कुछ सेवाएं होती हैं जिन पर विचार करने के लिए पृथक समितियों की आवश्यकता होती है। समितियों की रचना छोटी एवं कम महत्वपूर्ण सेवाओं के लिए भी उतनी ही महत्वपूर्ण है। इनको समितियों में इस प्रकार संयुक्त किया जाता है ताकि उचित समन्वय बना रहे। तीसरे, यह कहा जाता है कि समितियों की संख्या जितनी कम होगी उतना ही अच्छा है। इसका अर्थ यह नहीं कि समितियों की संख्या इतनी कम हो जाये कि उनका कार्य-भार अधिक बढ़ जाए तथा उनको लम्बे समय तक बैठकें करनी पड़ें; किन्तु जब समितियां अधिक होती हैं तो खतरा यह हो जाता है कि सत्ता का एकीकरण समाप्त हो जाता है। प्रत्येक समिति अपने आपको परिषद की एक छोटी इकाई मानने की अपेक्षा एक स्वतन्त्र व्यक्तित्व मानने लग जाती हैं।

एक पारषद सम्पूर्ण स्थानीय सत्ता के हितों को ध्यान में रखे बिना केवल अपनी ही समिति के लक्ष्यों को पूरा करना चाहेगा। वर्तमान समय में यह प्रवृत्ति अधिक जोर पर है कि कई समितियों का गठन किया जाना चाहिए। अधिक समितियों को प्रजातन्त्र का प्रतीक माना जाता है। पृथक [illegible]र्य के लिए पृथक समिति की रचना करके उस कार्य में लोगों का उत्साह [illegible] दृढ़ इच्छा भी जागृत की जा सकती है। इसका परिणाम अच्छा भी हो सकता है और बुरा भी। अधिक समितियां होने से सामञ्जस्य की समस्या तो रहती ही है साथ ही यह मनोवैज्ञानिक दृष्टि से भी खराब समझी जाती है। प्रत्येक समिति में एक अलग विचारधारा विकसित करने की प्रवृत्ति प्रमुख हो जाती है। यह प्रवृत्ति अपने आप में लाभदायक भी सिद्ध हो सकती है किन्तु इसका एक महत्वपूर्ण पहलू है कि यह एक गलत प्रकार की स्वतन्त्रता की भावना को जन्म देती है जो कि आसानी से दूसरी समितियों के साथ संघर्ष पैदा कर देती है।

समितियों की रचना

[The Composition of Committees]

किसी समिति की रचना किस प्रकार की जाएगी, उसके सदस्य किस प्रकार नियुक्त होंगे तथा उसका आकार क्या होगा, आदि बातों का निर्णय स्थानीय सत्ताओं द्वारा लिया जाता है। सामान्य रूप से यह माना जाता है कि छोटी समितियां सर्वश्रेष्ठ ढंग से काम करती हैं किन्तु कभी-कभी छोटी समितियां प्राप्त करना अत्यन्त कठिन हो जाता है। विशेष रूप से काउंटी क्षेत्र में जहां कि सामान्य भावना यह रहती है कि काउन्टी के प्रत्येक जिले का प्रत्येक समिति में प्रतिनिधित्व होना चाहिए। अधिक घने शहरी क्षेत्रों में यह भावना नहीं पाई जाती। छोटे तथा पुराने बारोज़ में यह सोचा जाता है कि

समितियों का गठन करते समय प्रत्येक वार्ड से एक–एक सदस्य लिया जाए किन्तु बड़े शहरों में यह सिद्धान्त काम में नहीं लिया जाता। शहरी क्षेत्रों मे राजनैतिक दल व्यवस्था स्थानीय सत्ता में भली प्रकार समाविष्ट हो जाती है। एक समिति की बनावट पर राजनैतिक दृष्टि से विचार किया जाता है तथा एक समिति के सदस्यों को इस प्रकार नियुक्त किया जाता है कि समिति का राजनैतिक सम्भाग सम्पूर्ण परिषद के राजनैतिक सम्भाग को प्रदर्शित करता है। जहां समितियों की सदस्यता राजनैतिक आधार पर निर्धारित होती है वहां प्रवर समिति की सिफारिशों को कार्यात्मक रूप दिया जाता है। स्थायी समितियों के सभापति का चुनाव करते समय दल की महत्ता काम कर जाती है। कहीं-कहीं पर प्रमुख दल सभापतित्व के सभी स्थानों को ले लेता है।

समिति की रचना से सम्बन्धित एक अन्य महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि इसमें कितने परिषद के सदस्य हों तथा कितने सहवृत सदस्य हों। जब कभी एक सेवा के सगठन पर विचार किया जाता है तो ऐसे अवसरों पर एक समिति के संविधान को प्रायः निश्चित कर लिया जाता है और जब कभी आवश्यक समझा जाए तो इसमें संशोधन कर लिया जाता है। अनेक संविधि द्वारा निर्मित समितियों का आकार एवं रचना संसद के अधिनियम द्वारा निर्धारित की जाती है। कई बार यह प्रावधान किया जाता है कि समिति के सदस्य परिषद के सदस्य न हों किन्तु वे अनिर्वाचित सदस्य हों तथा उनको समिति की सेवाओं के सम्बन्ध में विशेष ज्ञान एवं अनुभव के कारण समिति का सदस्य बना दिया जाए। कई बार एक समिति के आकार एवं बनावट से सम्बन्धित नियमों को सेवाओं के प्रशासन के लिए सत्ता द्वारा निर्मित एवं मन्त्री द्वारा स्वीकृत योजनाओं में समाहित कर लिया जाता है।

जिन सदस्यों को किसी निकाय में उसके स्थित सदस्यों के मतदान द्वारा चुना जाता है उनको सहवृत सदस्य (Coopted Members) कहते हैं। सन् १६३३ से पूर्व अनेक संविधि द्वारा निर्मित समितियों में बहुत से सहवृत सदस्य होते थे। इनको सम्बन्धित संसदीय अधिनियम द्वारा निर्धारित तरीके से चुना जाता था। सन् १६३३ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने एक सामान्य प्रावधान रखा जिसके अनुसार सभी स्थानीय सत्ताए वित्तीय समिति को छोड़ कर सभी समितियों के लिए ऐसे सदस्यों को सहवृत कर सकती हैं जो कि परिषद के सदस्य नहीं हैं। इस प्रकार से नियुक्त व्यक्तियों को सहवृत सदस्य कहा जाता है। ये परिषद के रूप में कार्य करने के योग्य होने चाहिए। किसी भी समिति के एक–तिहाई से अधिक सदस्यों को सहवृत नहीं किया जा सकता। इस प्रकार प्रत्येक समिति के कम से कम दो–तिहाई सदस्य परिषद सदस्य होते हैं और इस प्रकार स्थानीय सत्ता नियन्त्रण रख पाती है।

प्रजातन्त्र यह मान कर नहीं चलता कि सार्वजनिक जीवन में प्रत्येक व्यक्ति निर्वाचित ही होगा। इस दृष्टि से केवल यही पर्याप्त है कि निर्वाचित तत्व को प्रधानता दी जाए। स्थानीय सरकार के कार्य में ऐसे व्यक्तियों को साथ लेने के अनेक अवसर आते हैं जो कि परिषद के सदस्य नहीं हैं। इन अवसरों को कई दृष्टियों से न्यायोचित बताया जाता है। प्रथम, चुनाव की प्रक्रिया निश्चित रूप से यह प्रदर्शित नहीं करती कि स्थानीय मत के प्रत्येक पहलू का प्रतिनिधित्व किया गया है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि चुनाव प्रायः समहों द्वारा नियन्त्रण रहते हैं जिनमें वे सभी लोग सम्मिलित नहीं होते जो कि स्थानीय सरकार के कार्य में भाग लेना चाहते हैं। ऐसे अनेक लोग होते हैं जो स्थानीय सरकार के कार्यों को महत्वपूर्ण रूप से सम्पन्न कर सकते हैं किन्तु जो अपने आपको राजनैतिक दलों में नहीं मिलाना चाहते तथा स्वतन्त्र उम्मीदवार के रूप में चुनाव प्रचार एवं मत प्राप्त करने के पचड़े में नहीं पड़ना चाहते।

दूसरे, यह हो सकता है कि प्रतिनिधित्व पूर्ण रूप से प्राप्त हो जाए अर्थात् परिषद में स्थानीय मत के सभी रूपों को स्थान मिल जाए किन्तु ऐसा होने पर भी यह सम्भव है कि सदस्यों के पास बुद्धिपूर्ण निर्णय लेने के लिए आवश्यक ज्ञान एवं विशेषज्ञता न हो। यह विशेष रूप से उस समय होता है जब कि राजनैतिक दल व्यवस्था सुस्थापित होती है और सदस्यों का निर्वाचन दलीय स्तर के आधार पर होता है न कि उनकी बुद्धि एवं ज्ञान के आधार पर। तीसरे, पारषद प्रायः सार्वजनिक भावना से प्रभावित लोग होते हैं जो कि अनेक स्थानीय क्रियाओं में भाग लेते हैं जिनका सम्बन्ध परिषद से नहीं होता। यदि परिषद के सदस्य अपना सारा समय स्थानीय सरकार के कार्यों में लगा दें तो भी वे विशेषज्ञ नहीं बन सकते। विशेषज्ञता के अभाव में वे बैठकों में भाग लेना नहीं चाहेंगे। ऐसी स्थिति में उन लोगों को समितियों में रखना उपयुक्त रहेगा जो कि अपनी रुचि एवं विशेषज्ञता पूर्ण ज्ञान के कारण समितियों में उपस्थित होने के लिए प्रोत्साहित होंगे। चौथे, अपनी सहवृत की शक्ति का प्रयोग करके एक स्थानीय सत्ता अपनी समितियों में ऐसे लोगों की शक्ति एवं विशेषज्ञतापूर्ण ज्ञान का लाभ उठा सकती है जिनका परामर्श उस समय बहुत महंगा पड़े जब कि सत्ता इसके लिए वेतन देने के लिए तैयार हो।

सहवृत्ति का सिद्धान्त लाभदायक होने के साथ-साथ कुछ दोष भी रखता है। कई स्थानों पर इस सिद्धान्त का प्रयोग नहीं किया जाता। पारषदों में यह भावना मुख्य रहती है कि वे ऐसे व्यक्ति को सहवृत सदस्य बनाना चाहते हैं जो उनका साथी है तथा जो चुनाव में हार चुका है। इस प्रकार मतदान के समय जनता द्वारा अभिव्यक्त इच्छा का उल्लंघन किया जाता है। परिषद के सदस्य प्रायः ये नहीं देखते कि व्यक्ति समिति के कार्यों से सम्बन्धित ज्ञान एवं रुचि रखता है कि नहीं और वे अपने मित्रों या स्थित पारषदों की पत्नियों को सहवृत बना देते हैं। सहवृत्ति के सिद्धान्त का एक अन्य खतरा यह बताया जाता है कि इसके द्वारा ऐसे व्यक्तियों को शक्ति सौंप दी जाती है जो कि मतदाताओं के प्रति प्रत्यक्ष रूप से उत्तरदायी नहीं होते। यह कहा

जाता है कि परिषद के पास इतना समय नहीं होता कि वह अपनी समितियों के कार्यों को निकट से देख सके या संशोधित कर सके। इसके परिणाम स्वरूप एक समिति के दो या तीन सदस्य अपने विशेषीकृत ज्ञान के कारण समिति को प्रभावित करने में समक्ष हो जाते हैं।

एक वार जव समिति स्थापित कर दी जाती है और वह कार्य करने लगती है तो उसकी रचना में सुधार भी किया जा सकता है। समिति के संविधान में किसी प्रकार का सुधार करने की शक्ति स्वयं समिति के पास ही रहती है। इस सम्बन्ध में लिया गया कोई भी निर्णय एक सिफारिश के रूप में होगा, इसे परिषद के सम्मुख विचारार्थ प्रस्तुत किया जाएगा और परिषद इसके लिए प्रस्ताव पास करेगी।

समितियों का अधिकार क्षेत्र (Terms of Reference of the Committees)—एक समिति को क्या कार्य करने के लिए उत्तरदायी ठहराया जाएगा यह बात उस प्रस्ताव में निहित रहती है जिसके द्वारा परिषद समिति को स्थापित करती है। इस प्रस्ताव के शब्दों का अत्यन्त महत्व होता है और उनको ध्यान से देखा जाना जरूरी है तभी परिषद के कार्यों का संचालन आसानी से किया जा सकेगा जवकि यह जानना सरल हो कि किस कार्य को किस समिति द्वारा सम्पन्न किया जाता है। समिति की शक्तियों के प्रसार के सम्बन्ध में कोई सन्देह नहीं होना चाहिए। यह स्पष्ट रूप से उल्लेख कर देना चाहिए कि समिति का मुख्य कार्य परिषद को परामर्श देना मात्र है अथवा यह परिषद की ओर से हस्तान्तरित शक्तियों का प्रयोग करेगी।

समिति के सदस्यों का चयन (Selection of the Committee Members)—कुछ समितियों का निर्वाचन प्रति वर्ष किया जाता है जहां परिषद के सदस्य एक निश्चित अनुपात में प्रति वर्ष सेवा निवृत्त होते हैं और नए सदस्यों को निर्वाचित किया जाता है वहां यह जरूरी बन जाता है कि समितियों को प्रति वर्ष नए सिरे से नियुक्त किया जाय। जिन सत्ताओं में परिषद के सदस्य तीन वर्ष तक अपने पद पर रहते हैं वहां यह सम्भव होता है कि समिति के सदस्यों को आम चुनाव के समय नियुक्त कर दिया जाय और तीन वर्ष तक उनको पद पर रहने दिया जाए। वैसे वार्षिक निर्वाचन के अपने कुछ लाभ हैं क्योंकि प्रतिवर्ष नई समस्याएं उत्पन्न होती हैं और उनके अनुसार परिवर्तन किया जाना भी जरूरी हो जाता है। अतः यह परिवर्तन थोड़ा वहुत करने की अपेक्षा प्रति वर्ष पूरी तरह से ही किया जाए तो अधिक अच्छा रहेगा। परिषद एक व्यक्ति को एक वर्ष के लिए नियुक्त करती है। उस काल में वह सदस्य आवश्यक रूप से परिषद का सदस्य नहीं रहता। परिषद द्वारा यह भी प्रस्ताव पास किया जा सकता है कि समिति के एक सदस्य को परिषद की सदस्यता से वंचित रख दिया जाए तथा उसके स्थान पर अन्य सदस्य को नियुक्त कर दिया जाए।

समिति में कार्य करने के लिए सदस्यों का चुनाव करते समय कई तत्वों को ध्यान में रख कर चलना होता है। सदस्यों की प्राथमिकताओं को देख कर चलना अधिक उपयुक्त रहता है। इसके लिए उचित तरीका यह है कि परिषद के सभी सदस्यों को समितियों की एक सूची प्रदान कर दी

जाए और उनसे उनकी प्राथमिकता का पता लगाया जाए कि वे किस समिति में सेवा करना चाहते हैं। एक सदस्य को एक से अधिक समितियों का सदस्य भी बनाया जा सकता है। एक सदस्य प्रायः तीन या चार समितियों का सदस्य रहता है किन्तु सदस्यों को जितनी अधिक समितियों का सदस्य बनाया जाता है उतना ही समिति व्यवस्था को नुकसान रहता है। समिति का सदस्य अपने विस्तृत कार्य को एक या दो मुख्य क्षेत्रों में सीमित करके अपने विशेषज्ञतापूर्ण ज्ञान का विकास करता है तथा परिषद के कार्य के विशेष पहलुओं में रुचि को बढ़ाता है।

समिति के सदस्यों की नियुक्तियां परिषद के प्रस्ताव द्वारा की जाती हैं जिसमें यह बता दिया जाता है कि कौन सदस्य किस समिति में कार्य करेगा। परिषद के अन्य सभी कार्यों की भांति समिति की सदस्यता तय करने में भी पूरी तैयारी की जरूरत होती है। यह एक प्रकार से एक जटिल समस्या का समाधान करने के समान है। कुछ टुकड़ों को उचित रूप से संयुक्त कर दिया जाता है और तब यह ज्ञात होता है कि इससे कोई अन्य भाग विस्थापित हो जाएगा। जब इस भाग को समायोजित किया जाता है तो अन्य भाग को भी समायोजित करने की आवश्यकता उत्पन्न हो जाती है। जब कभी परिषद में किसी राजनैतिक दल का प्रभाव होता है तो समितियों की सदस्यता का निर्णय भी राजनैतिक दलों द्वारा किया जाता है किन्तु जहां राजनैतिक दल शक्तिशाली नहीं होते वहां दो तरीके अपनाए जाते हैं।

प्रथम तरीका यह है कि परिषद के सदस्य एक व्यक्तिगत बैठक बुलाते हैं जिसे तकनीकी रूप से सत्ता की बैठक नहीं कहा जा सकता। वे यह विचार करते हैं कि किस प्रकार समितियों का गठन किया जाए और इसके लिए वे एक सूची बनाते हैं ऐसा वे या तो एक समझौते के द्वारा कर लेते हैं अथवा मतदान द्वारा ऐसा करते हैं। बाद में यह भी निर्धारित कर दिया जाता है कि कुछ व्यक्ति नामों का प्रस्ताव करेंगे और कुछ उनका समर्थन करेंगे। जब इस सूची को परिषद के सम्मुख रखा जाता है तो कोई एक सदस्य नामों को प्रस्तावित करता है और पारषदों का बहुमत उस प्रस्ताव को स्वीकार कर लेता है जिसे उसने अपनी व्यक्तिगत बैठक में पहले ही स्वीकार कर लिया है। समिति के सदस्यों की नियुक्ति का एक दूसरा तरीका चयन समिति द्वारा नियुक्ति है। यह समिति परिषद की प्रतिनिधि होनी चाहिए। इसमें नेता लोग तथा प्रभावशाली सदस्य होते हैं। यह समिति प्रत्येक समिति के लिए नामों की एक सूची बनाती है और इसे परिषद के सदस्यों के पास सुझाव के रूप में भेजती है। जिस परिषद में चयन समिति होती है वह इस बात पर जोर देती है कि परिषद में आने से पूर्व समितियों की सभी नियुक्तियों को चयन समिति द्वारा विचार लिया जाना चाहिए। इसका अर्थ यह हुआ कि यदि कोई परिषद का सदस्य किसी व्यक्ति का नाम जोड़ने या घटाने के सम्बन्ध में संशोधन प्रस्तुत करे तो परिषद इस पर तब तक निर्णय नहीं लेगी जब तक कि विषय को चयन समिति के पास नहीं भेज दिया जाए।

समितियों के सम्बन्ध में और विशेष रूप से चयन समिति के सम्बन्ध में एक मुख्य कठिनाई यह रहती है कि ये वास्तविक की अपेक्षा सैद्धान्तिक

अधिक होती हैं। परिषद के कार्यों का संचालन निर्विवाद रूप से किया जाता है। ऐसी स्थिति में यह स्वाभाविक है कि समितियां उस समय तक बनी रहें जब तक कोई नई समिति नियुक्त न की जाए। कानून के अनुसार एक परिषद के समाप्त होने के बाद जब दूसरी परिषद निर्वाचित की जाती है तो बीच में कोई अवकाश नहीं रहता। जिस प्रकार एक नई परिषद चुनाव के तुरन्त बाद नहीं मिल पाती, उसी प्रकार इस सम्बन्ध में भी कोई प्रावधान होना चाहिए कि कुछ दिन तक पूर्व परिषद द्वारा नियुक्त समितियां कार्य करती रहें। इसके विरुद्ध यह कहा जाता है कि चुनाव द्वारा परिषद का रूप ही बदल दिया जाता है और ऐसी स्थिति में ये समितियां गैर प्रतिनिधि हो सकती हैं। ऐसा होना कम से कम चयन समिति के लिए असामान्यपूर्ण रहेगा। इससे कुछ कठिनाई भी उत्पन्न हो जाती है। जब एक समिति को यह मालूम हो जाता है कि चुनाव परिणामों के कारण शीघ्र ही उनकी सदस्यता में परिवर्तन होने वाले हैं तो वह अपने कार्य को पहले की भांति ही रखेगी। सहवृत सदस्य सामान्यतः किसी अन्य सत्ता या स्वेच्छापूर्ण निकायों के प्रतिनिधि होते हैं। ऐसी स्थिति में परिषद का कलर्क सत्ता से या निकाय से उन व्यक्तियों का नाम पूछता है जो सहवृत होना चाहते हैं। इन व्यक्तियों को नियुक्त करने के लिए नहीं कहा जा सकता क्योंकि यह शक्ति परिषद में निहित होती है। जिस सदस्य को नामांकित किया जाता है उसे परिषद प्रायः नियुक्त ही कर लेती है। यदि वह व्यक्ति पूर्णतः अनुपयुक्त ही हो तो बात दूसरी है। कभी-कभी तीन या चार नामों की प्रार्थना की जाती है ताकि परिषद को चयन का अवसर मिल सके।

वित्तीय समितियों की सदस्यता के बारे में कुछ कहना विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। व्यावहारिक रूप से कुछ छोटी सत्ताओं को छोड़कर प्रायः सभी सत्ताएं वित्तीय समिति नियुक्त करती हैं। परिषद के वित्तीय कार्यों पर नियन्त्रण करने के लिए किस प्रकार की समिति अधिक उपयुक्त रहेगी, इस सम्बन्ध में अलग-अलग मत हैं कुछ लोगों का कहना है कि यदि वित्तीय समिति में अन्य सभी समितियों के सभापति रख दिए जाएं तो कार्य सरल हो जायगा। जब विभिन्न समितियों के सभापति वित्तीय समिति की बैठक में उपस्थित होते हैं तो वे अपनी समितियों के दृष्टिकोण को स्पष्ट एवं अभिव्यक्त कर सकते हैं। अन्य लोगों का कहना है कि वित्तीय समिति में सदस्यों का चुनाव वित्तीय मामलों में उनकी विशेष योग्यता एवं रुचि के आधार पर किया जाना चाहिए। यह भी तर्क दिया जाता है कि यदि समिति के सदस्य अन्य समितियों के सभापति नहीं रहे तो वे अधिक स्वतन्त्रतापूर्वक विचार कर सकते हैं। यदि अन्य समितियों के सभापतियों को वित्तीय समिति का सदस्य बनाया गया तो वे प्राप्त कोष को आपस में बांटने के लिए सौदेबाजी करेंगे और बचत की अपेक्षा व्यय करने पर केन्द्रित हो जाएंगे।

समितियों के सभापति

[The Chairmen of Committees]

स्थानीय सत्ताओं की समितियों का सभापति एक विशेष [illegible] होता है। वह बैठकों को नियन्त्रित करने के अलावा अन्य रूप से

पूर्ण होता है। समिति के सभापति एवं समिति द्वारा किए जाने वाले कार्यों से सम्बन्धित अधिकारी के बीच विशेष रूप से घनिष्ठ सम्बन्ध रहता है। जब कभी ऐसे तत्कालीन विषय उत्पन्न हो जाते हैं जबकि समिति की दूसरी बैठक में विचार करने से पूर्व ही निर्णय लिया जाना जरूरी हो तो इन दोनों के बीच विशेष रूप से घनिष्ठ सम्बन्ध बढ़ जाते हैं। ऐसी परिस्थितियों में अधिकारी का कार्य निर्णय लेने का होता है और परिषद उस निर्णय को मानती है। निर्णय लेते समय अधिकारी समिति के सभापति से विचार करता है और सभापति उसे परामर्श एवं निर्देशन देता है। परामर्श देते समय सभापति यह ध्यान रखता है कि उसकी समिति उससे क्या करने की आशा करती है। उसे यह जानना चाहिए कि समिति के सदस्य किस प्रकार सोचते हैं। समिति का सभापति उसका एक मान्य सदस्य होता है। वह सभापति तभी बन पाता है जब कि उसने समिति में एक लम्बे समय तक कार्य किया है या वह समिति के कार्य का कुछ विशेष ज्ञान रखता है या वह अपनी स्थानीय राजनैतिक संस्था का एक प्रमुख व्यक्ति है। सभी परिस्थितियों में वह एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है और समिति का नेतृत्व एवं निर्देशन करने की स्थिति में होता है।

परिषद समिति के सभापति को नियुक्त कर सकती है क्योंकि समिति को परिषद द्वारा बनाया जाता है और वही इस बात का निर्णय लेती है कि समिति का क्या रूप होगा। इतने पर भी परिषद स्वयं सभापति की नियुक्ति नहीं करती वरन् वह प्रत्येक समिति पर ही छोड़ देती है कि वह अपने सभापति की नियुक्ति करे। यदि किसी समिति में उप-सभापति की आवश्यकता हो तो वह भी इसी रूप में नियुक्त किया जाएगा जिस प्रकार सभापति को नियुक्त किया जाता है। समिति के सभापति की नियुक्ति प्रायः प्रति वर्ष की जाती है। यद्यपि एक ही व्यक्ति को कई बार नियुक्त किया जा सकता है। समिति की प्रथम बैठक का सभापतित्व परिषद के सभापति द्वारा अथवा किसी वरिष्ठ सदस्य द्वारा किया जा सकता है अथवा सभापति की कुर्सी को खाली छोड़ा जा सकता है ऐसी स्थिति में क्लर्क नामजदगी आमन्त्रित करेगा तथा नियुक्ति के लिए एक उचित मोशन रखेगा। जहां कहीं परिषद दलीय आधार पर संचालित होती है वहां सभापति का चयन दल की व्यक्तिगत बैठक में किया जा सकता है। इसका अर्थ यह कदापि नहीं है जिस दल का परिषद में बहुमत है वह आवश्यक रूप से सभी समितियों में अपने दल का सभापति और उप-सभापति रखना चाहेगी। कुछ परिषदें राजनैतिक दिमाग वाली भी होती हैं जो कि अपनी समितियों पर राजनीतिक को हावी नहीं होने देतीं। जहां कहीं ये बातें दलीय यन्त्र द्वारा निश्चित नहीं की जाती वहां प्रभावशाली सदस्य ही इस बात पर विचार करते हैं कि किस व्यक्ति के नाम को आगे रखा जाए। अधिकांश स्थानीय सत्ताएं वर्षों तक सभापति को उसके पद पर बनाए रखती हैं। इसके लिए शर्त यह है कि वह व्यक्ति परिषद का सदस्य बना रहे और अन्य सदस्यों का विश्वास-पात्र बना रहे। किसी समिति के सभी कार्यों को सीखने में समय लगता है इसलिए यह अत्यन्त उपयोगी रहेगा कि एक अनुभवी व्यक्ति को लगातार सभापति पद पर बनाए रखा जा सके। इसके

कुछ दुष्परिणाम भी हैं। सभापति के विशेष उत्तरदायित्व होते हैं और उनका निर्वाह करते हुए व्यक्ति जिन बातों को सीख पाता है उनको साधारण सदस्य नहीं सीख सकता। ऐसी स्थिति में एक सदस्य को प्रशिक्षित करने का सर्वश्रेष्ठ मार्ग यही है कि उसको समिति का सभापति बना दिया जाए। जब एक समिति के सभापति को प्रति वर्ष बदल लिया जाता है तो इसके परिणाम-स्वरूप यह सच है कि समिति का सभापति कम योग्य एवं कुशल रहेगा किन्तु इससे समिति के सभी सदस्य अधिक उत्तरदायी बन जाएंगे।

समितियों के सभापति परिषद के निर्वाचित प्रतिनिधियों में महत्वपूर्ण तत्व होते हैं। वे समिति द्वारा संचालित की जाने वाली सेवा के साथ एकाकार हो जाते हैं तथा समिति के संचालन का मार्ग प्रशस्त करते हैं।

समितियों की बैठकें
[The Meetings of Committees]

परिषद तथा उसकी समितियों की सभी बैठकों के लिए एक कार्य-क्रम होता है। समिति की बैठकें प्रायः उसके कार्य की मात्रा से निर्धारित की जाती हैं किन्तु फिर भी कार्यक्रम कुछ सीमाएं लगा देता है। समितियों के कार्य का मुख्य लक्ष्य परिषद को प्रतिवेदन प्रस्तुत करना होता है। कई एक समितियां सीधे परिषद को प्रतिवेदन प्रस्तुत नहीं करतीं वरन् वे अपने विचार-विमर्श के निष्कर्ष अन्य समिति के सामने रखती हैं। इस प्रकार कई एक समितियां मिल कर किसी निष्कर्ष पर पहुंचती हैं। ऐसी स्थिति में यह जरूरी होता है कि इन समितियों का कार्य-क्रम पहले से ही निश्चित कर दिया जाए ताकि कार्यों में देरी न हो और भ्रम पैदा न हो। पूरे वर्ष के कार्यक्रमों को एक डायरी के रूप में छपाया जा सकता है।

समितियां अपनी बैठकें गुप्त रूप से करती हैं अर्थात् प्रेस अथवा जनता उसमें नहीं बैठते। कमरे का प्रबन्ध भी इस दृष्टि से महत्व रखता है। सदस्य गोल मेज के रूप में बैठते हैं और वाद-विवाद में अनौपचारिकता बरती जाती है। समिति के सभापति के एक ओर क्लर्क बैठता है और दूसरी ओर सम्बन्धित विभाग का अध्यक्ष। यदि कोई अन्य विभाग भी कार्यों में रुचि ले रहा हो तो उसके उचित प्रतिनिधि भी बैठक में भाग ले सकते हैं। यदि समिति को अपना कार्य उचित रूप से संचालित करना है तो उसे पर्याप्त सचिवालयी सहायता प्राप्त होनी चाहिए। इसका एक एजेन्डा उचित रूप में तैयार किया जाना चाहिए और उसके साथ सभी आवश्यक कागजात लगाए जाने चाहिए। अधिकांश विषय वस्तु सम्बन्धित विभाग से प्राप्त होगी और यह सुविधाजनक प्रतीत होता है कि विभाग के अध्यक्ष को समिति का क्लर्क बना दिया जाए। कानून के अनुसार ऐसी कोई बाधा नहीं है कि स्वास्थ्य के मेडिकल अधिकारी को स्वास्थ्य समिति का क्लर्क न बनाया जा सके या शिक्षा संचालक को शिक्षा समिति का; किन्तु व्यवहार में एक समिति का सचिवालय सम्बन्धी कार्य अन्य विभागों के कार्यों से भी सम्बन्धित रहता है और सम्पूर्ण परिषद से भी उसका सम्बंध रहता है। परिषद का क्लर्क परिषद के सभी कार्यों में समन्वय स्थापित करने के लिए उत्तरदायी होता है.

यदि उसका विभाग समितियों के लिए सचिवालय के रूप में कार्य करे तो समितियों के बीच तथा विभिन्न विभागों के अधिकारियों के बीच कार्य अच्छी प्रकार से संचालित हो सकेगा।

परिषद का क्लर्क कितनी समितियों में उपस्थित रहेगा तथा उसके सचिवालय सम्बन्धी कार्य को करेगा, यह बात सत्ता के आकार पर निर्भर करती है। समिति का क्लर्क आवश्यक परिपत्रों को एकत्रित करता है, उनको व्यवस्थित रूप में रखता है और उन्हें सदस्यों के पास भेजता है। बैठक के समय वह समस्त कागजी कार्यवाही करने के लिए उत्तरदायी है। वह प्रक्रिया के विषय में तथा व्यवहार के सामान्य सचालन के बारे में समिति को परामर्श देता है। वह सदस्यों की उपस्थिति को लिखता है तथा समिति की प्रक्रियाओं एवं निर्णयों का अभिलेख रखता है। बैठक के बाद वह समिति के उन निर्देशनों को संचालित करता है जो सचिवालय सम्बन्धी कार्य की सीमा में आते हैं। वह आवश्यक कागजों को तथा समिति के निर्णयों को उन उचित कार्यालयों एवं विभागों को भेजता है जिनसे उनका सम्बन्ध है। एक अच्छे कार्यालय का सगठन इसलिए जरूरी समझा जाता है ताकि वह विषयों को विभिन्न विभागों के बीच में खो जाने से बचा सके और सूचना एवं प्रतिवेदन को वापिस समिति में मंगवाने का प्रयत्न कर सके ताकि समिति का क्लर्क आगे की बैठक के लिए कार्यक्रम बना सके। इसे वह कार्य अपने हाथ में नहीं लेना चाहिए जो कि अन्य विभागों के अधिकार क्षेत्र में आता है। उसे विभागीय स्टाफ के पर्यवेक्षक के रूप में कार्य नहीं करना चाहिए फिर भी उसे समिति के कार्य से उत्पन्न सभी विषयों की देख-रेख करनी चाहिये। यदि अधिकारियों के बीच कोई मतभेद हो तो उसकी सूचना फौरन दी जानी चाहिए। सदस्यों को ऐसे कागज प्राप्त नहीं करने चाहिये जिनमें विरोध-पूर्ण प्रतिवेदन दिये गये हैं या उनके अधिकारियों द्वारा बैठकों में विरोधी परा-मर्श दिया गया है। समिति के क्लर्क को यदि किसी विषय में कोई सन्देह हो तो उसे चाहिये कि वह परिषद के क्लर्क के सम्मुख उसे रख दे।

समिति का एक अच्छा क्लर्क वह माना जाता है जो अधिकारियों तथा सदस्यों के बीच के सम्बन्ध को अच्छी-तरह से समझता है। उसके पास स्थायी आदेशों तथा परिषद के व्यवहार के सम्बन्ध में विशेषज्ञता पूर्ण ज्ञान होना चाहिए; इसके अतिरिक्त समिति द्वारा संचालित किए जाने वाले कार्य की प्रकृति से भी वह परिचित होना चाहिए। विभिन्न कागजों को उसे केवल यह देखने के लिए नहीं पढ़ना चाहिए कि वे व्यवस्था के अनुसार हैं या नहीं किन्तु यह भी देखना चाहिए कि उसमें किन-किन बातों का विशेष रूप से उल्लेख किया गया है तथा वाद-विवाद में कौन सी बात आकर्षण का विषय रही। समितियां प्रायः अपने सभी निर्णय स्वयं नहीं लेतीं। क्लर्क को हमेशा यह ध्यान रखना चाहिये कि वह निर्णयों का अभिलेख रखने के लिए वहां है, न कि उनका आविष्कार करने के लिए। यदि समिति किसी निर्णय पर नहीं पहुंची है या उसे स्पष्ट रूप से ज्ञात नहीं हो सका है कि वह निर्णय क्या है तो वह स्थिति को स्पष्ट करने के लिए सभापति को कह सकता है। कुछ विषयों में उसे कुशलतापूर्वक यह देखना चाहिए कि समिति के सम्मुख एक

संक्षिप्त रूप में प्रस्ताव रखा जा सके जिसे सभापति आसानी से पढ़ सके और उसे समझने में कोई कठिनाई न हो।

संयुक्त समितियां
[Joint Committees]

स्थानीय सत्तायें एक दूसरे के साथ मिल कर एक संयुक्त समिति बनाने को राजी हो सकती हैं; इसमें सम्बन्धित परिषद के प्रतिनिधि रहेंगे। इस प्रकार की संयुक्त समितियों को गठित करने का मुख्य लक्ष्य इस प्रकार की सेवाएं प्रदान करना है जिनमें भारी खर्च करना होता है तथा कोई भी एक सत्ता पूरी तरह से उसे सम्पन्न नहीं कर सकती। छोटी सत्ताएं सार्वजनिक यातायात की सेवाओं के लिए अथवा विकसित तकनीकी के लिए कोई भी कदम उठाने में उस समय तक असमर्थ रहती हैं जब तक कि वे एक साथ मिल कर कार्य न करें। ये सेवाएं किसी भी एक निर्णायक सत्ता द्वारा प्रशासित की जा सकती हैं तथा पड़ोसी सत्ताओं द्वारा इनके लिए इतना ही योगदान दिया जायेगा जितना कि वे इन सेवाओं का लाभ उठायेंगी। जब कभी एक संविधि द्वारा निर्मित समिति के कार्यों को सम्पन्न करने के लिए संयुक्त समिति का गठन किया जाता है तो इसके लिए उन विशेष प्रावधानों की आवश्यकता होती है जो सविधि द्वारा निर्मित समिति की स्थापना के लिए आवश्यक हुआ करते हैं। संयुक्त समितियों का प्रचलन स्थानीय स्तर पर इतना अधिक नहीं है। ये असल में वहीं प्रयुक्त की जाती हैं जहां आवश्यक होती हैं।

समितियों की हस्तांतरित शक्तियां
[The Delegated Powers of Committees]

समितियों के लिए शक्ति का हस्तांतरण अर्थात परिषद के नाम पर इसे कार्य करने का अवसर प्रदान करना स्वयं परिषद की स्वेच्छा पर ही निर्भर करता है। एक स्थानीय परिषद द्वारा अपनी समितियों को कितनी सत्ता हस्तांतरित की जाती है इसके सम्बन्ध में कोई एक जैसा व्यवहार नहीं है। परिषद को यह अधिकार है कि वह अपनी किसी भी शक्ति को समिति के लिए हस्तांतरित कर सके। यह जरूरी नहीं है कि जिस समिति को हस्तांतरण किया जा रहा है वह आवश्यक रूप से संविधि द्वारा निर्मित समिति ही हो। परिषद अपनी रेट लगाने की शक्ति एवं धन उधार लेने की शक्ति को हस्तांतरित नहीं कर सकती। कानून के अनुसार काउन्टी परिषद वर्ष भर में केवल चार वार ही मिलती है जबकि इसका मिलना जरूरी होता है। काउन्टी परिषद अपनी हस्तांतरण की शक्ति का प्रयोग व्यापक रूप से करती है। समितियों को नीति सम्बन्धित प्रश्नों पर निर्णय लेने की शक्ति भी हस्तांतरित कर दी जाती है। यह सामयिक रूप से अपनी प्रक्रिया से सम्बंधित प्रतिवेदन परिषद को देती रहती है।

उपसमितियां
[Sub-Commitees]

स्थायी समितियां प्रायः सामयिक या स्थायी रूप से ही उपसमितियों की रचना कर लेती हैं। यदि कोई समिति यह चाहती है कि प्रत्यायोजन में

उसे प्राप्त शक्तियों का प्रयोग उसकी उपसमिति द्वारा किया जाये तो इसके लिए यह जरूरी है कि शक्तियां स्वयं परिषद द्वारा ही उपसमिति को सौंप दी जायें। ऐसा इसलिए किया जाता है ताकि इस सम्बन्ध में किसी प्रकार की कानूनी कठिनाई पैदा न हो। वैसे समितियां उपसमितियों की रचना करने की स्वतंत्र शक्ति रखती हैं। उनके ऊपर परिषद का आदेश या निर्देश तो रहता ही है। इसे एक अत्यन्त महत्वपूर्ण नियम माना जाता है कि शक्ति को उस समय तक हस्तांतरित नहीं किया जाये जब तक विशेष वैधानिक मान्यता उसके पीछे न हो। परिषद द्वारा जब किसी समिति को शक्तियां हस्तांतरित की जाती हैं तो इसका यह अर्थ कदापि नहीं होता कि वह समिति इन प्राप्त शक्तियों को किसी और को हस्तांतरित कर दे।

यह कहा जाता है कि उपसमितियां कायम रखने की प्रथा पर कुछ निगरानी रखी जानी चाहिए। कुछ समितियों में यह प्रवृत्ति पाई जाती है कि वे छोटी-छोटी कठिनाई उत्पन्न होने पर भी उपसमितियां नियुक्त कर देती हैं। दूसरी ओर कई एक समितियां आवश्यकता होने पर भी उपसमितियां नियुक्त नहीं करतीं। ये दोनों ही प्रवृत्तियां उचित निर्देशन के बाद रोकी जा सकती हैं। उप-समितियों के सदस्य ऐसे होते है जो कि अपने कार्यों में पूरी समिति की अपेक्षा अधिक रुचि लेते हैं, कुशलता के साथ करते हैं तथा कम समय में ही सम्पन्न करने का प्रयास करते हैं। साधारणतया यह समझा जाता है कि यदि नित्य प्रति के कार्यों को सम्पन्न करने के लिए उपसमितियों की नियुक्ति कर दी जाये तो अधिक अच्छा रहे। कोई भी उपसमिति यदि पूरे वर्ष के लिए स्थायी रूप से नियुक्त कर दी जाये तो अधिक उपयुक्त रहेगी। स्थायी वार्षिक उपसमिति की रचना कई एक दृष्टिकोणों से सर्वोत्तम मानी जाती है। नित्य प्रति के कार्यों के अतिरिक्त कुछ विशेष समस्यायें भी समय-समय उत्पन्न होती रहती हैं जिन पर विचार करने के लिए उपसमितियों की नियुक्ति करना उचित समझा जाता है। ये उपसमितियां स्थायी नहीं होनी चाहिए। विशेष समस्या का समाधान होते ही इनकी स्थापना का महत्व जाता रहता है। प्रमुख समिति द्वारा प्रायः ऐसे विषयों को उपसमिति में विचारार्थ भेजा जाता है जो कि विशेष ज्ञान की अपेक्षा स्थिरता एवं अधिक विचार की आवश्यकता रखते हैं। उपसमिति उन पर नियमितता एवं शीघ्रता से विचार कर सकती है। उनके निर्णयों की अवहेलना प्रायः कम ही की जा सकती है। बड़ी योजनाओं तथा नीति सम्बन्धी विषयों पर प्रमुख समिति ही भली प्रकार विचार कर सकती है।

उपसमिति का सचिवालय-सम्बन्धी कार्य सम्बन्धित विभाग के एक अधिकारी द्वारा सम्पन्न किया जाता है। उपसमिति प्रमुख समिति को अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत करती है। इनके कार्यों में उचित समन्वय भी आसानी से स्थापित किया जा सकता है। एक प्रमुख समिति में उपसमितियों तथा उप-उप-समितियों की बनावट रह सकती है, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार कि परिषद में उपसमितियों की रचना रहती है। इस प्रकार शिक्षा समिति में प्राथमिक, माध्यमिक एवं आगे की शिक्षा के लिए भी अनेक उपसमितियां गठित की जाती हैं। एक ऐसा कार्यक्रम होना चाहिए जिसके अनुसार पूर्ण

शिक्षा समिति को उसकी सभी उपसमितियों के प्रतिवेदन प्राप्त हो सकें तथा यह समिति अन्य समितियों से विचार-विमर्श करने के बाद कोई निर्णय लेती है। इस प्रकार परिषद के सम्मुख प्रस्तुत करने से पूर्व विषय को प्रायः सम्बन्धित समितियों के सम्मुख प्रस्तुत किया जाना चाहिए।

परिषद एवं समितियां
[Council and Committees]

स्थानीय सत्ता के अनेक कार्य एवं उत्तरदायित्व होते हैं अतः उसको अनेक समितियों एवं उपसमितियों के माध्यम से कार्य करना होता है। इन निकायों की रचना आंशिक रूप से निर्वाचित सदस्यों द्वारा की जाती है और आंशिक रूप से परिषद के बाहर वाले सदस्यों से। परिषद को इन छोटे निकायों के कार्यों के बीच समन्वय भी स्थापित करना होता है। साथ ही यह भी देखना होता है कि किसी समिति या उपसमिति द्वारा ऐसी नीति न अपनाई जाये जो परिषद की मूल नीति से भिन्न हो। उनके कार्य परिषद की सामान्य नीति में उपयुक्त बैठने वाले होने चाहिए।

समन्वय प्राप्त करने के लिए परिषद अनेक प्रकार के तरीके अपना सकती है। यह हस्तांतरित किये जाने वाले कार्यों को अच्छी प्रकार से पारिभाषित कर सकती है ताकि समिति को अपने कार्यों के बारे में किसी प्रकार का संदेह न रहे। यह भी स्पष्ट होना चाहिए कि जब कोई ऐसा विषय उपस्थित हो जाये जिससे एक से अधिक समितियों का सम्बन्ध हो तो क्या कदम उठाना चाहिए। उदाहरण के लिए यदि स्नान समिति (Baths Committee) यह प्रस्ताव रखे कि स्कूल से बच्चों के जो दल स्कूल के घंटों में तरणताल को देखने आते हैं उनसे लिए जाने वाले पैसे बढ़ा दिए जायें तो यह स्पष्ट है कि इस प्रस्ताव से शिक्षा समिति भी प्रभावित होगी क्योंकि वही बढ़ी हुई दरों को देने के लिए उत्तरदायी होगी।

कुछ परिषदें परिषद की सेवाओं को सम्पन्न करने के लिए एक सामान्य उद्देश्य समिति (General Purpose Committee) नियुक्त करती हैं। यह समिति ऐसे विषयों पर भी विचार कर सकती है जिसका सम्बन्ध एक से अधिक समितियों से हो। यह समिति सम्बन्धित समितियों के दृष्टिकोण के बीच समन्वय स्थापित करती है। इस सामान्य उद्देश्य वाली समिति एवं अन्य समितियों के बीच सम्बन्ध स्थापित करने के लिए कुछ परिषदें अन्य सभी समितियों के सभापतियों को इस नीति निर्मायक निकाय में नियुक्त कर सकती हैं।

समितियों को अपने कार्य का संचालन करने में पर्याप्त धन का उपयोग करना होता है। केवल कुछ ही समितियां ऐसी होती हैं जो अपने कार्यों को सम्पन्न करने के लिए धन का उपयोग नहीं करतीं। समिति को कोई रेट लगाने या कर संग्रह करने की शक्ति नहीं होती अतः परिषद् का समितियों पर पूरा वित्तीय नियंत्रण रहता है। काउन्टी परिषद् तथा राजधानी बारो परिषद् को एक वित्तीय समिति की स्थापना करनी होती है। अन्य स्थानीय सत्ताएं इस समिति की स्थापना करने के लिए बाध्य नहीं है वरन् वास्तविक व्यवहार में प्रायः वे सभी वित्तीय समिति का संगठन करती हैं। प्रत्येक

आय तथा व्यय का वर्ष भर का अनुमान तय करती है। जहां आवश्यक समझती है वहां इनमें कमी करती है तथा परिषद के सम्मुख अपनी सिफारिश प्रस्तुत करती है। परिषद का यह वित्तीय नियंत्रण समितियों के कार्यों पर देख-रेख करने में तथा उन पर नियन्त्रण रखने में अत्यन्त प्रभावशाली होता है।

स्टाफ समिति
[Staff Committee]

स्टाफ समितियों को स्थानीय सरकार के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण नवीन विकास माना जाता है। ये समितियां संविधि द्वारा निर्मित (Statutory) नहीं होती वरन् इनको स्वेच्छा से (Permissive) कायम किया जाता है। हैडो विभागीय समिति (Hadow Departmental Committee) ने अपने १९३४ के प्रस्तुत प्रतिवेदन में यह कहा था कि ऐसी समितियां स्थापित की जानी चाहिए जो कि स्थानीय पदाधिकारियों की भर्ती, प्रशिक्षण एवं योग्यता आदि के बारे में विचार कर सके। सन् १९३४ के पूर्व भी बड़ी-बड़ी स्थानीय सत्तायें इस प्रकार की समितियां नियुक्त करने लगी थीं। इस प्रकार की समिति की स्थापना के प्रायः वे सभी कारण थे जो कि वित्तीय समिति की स्थापना के कारण थे। जब परिषद के कार्यों का क्षेत्र बढ़ा तो यह भी स्वाभाविक था कि स्थानीय सत्ता के कर्मचारियों की संख्या एवं प्रकार भी अनेक हो जाते। इन सभी कर्मचारियों की स्थिति एवं समस्याओं पर परिषद द्वारा पर्याप्त रूप से विचार नहीं किया जा सकता। प्रशासन को कुशल रूप से संचालित करने के लिए यह परम आवश्यक समझा जाता है कि कर्मचारियों के प्रबन्ध में तथा अधिकारियों के कार्यों की विभिन्न शाखाओं में श्रेणी का निर्धारण करते समय पर्याप्त सावधानी बरती जाये। इस कार्य को यदि सूक्ष्म परीक्षण के बाद सम्पन्न किया जाना है तो यह जरूरी है कि इस कार्य के लिए एक अलग से समिति स्थापित की जाये।

वर्तमान स्टाफ समितियां यद्यपि कर्मचारियों से सम्बंधित विभिन्न समस्याओं पर विचार करती है किन्तु इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि उनकी नियुक्ति योग्यता, प्रशिक्षण आदि पर इस समिति का ही एकाधिकार हो जायेगा। कुछ परिषदों का विचार है कि इस प्रकार का केन्द्रीकरण न तो आवश्यक है और न उपयोगी ही। स्टाफ समिति को मुख्य रूप से जिन कार्यों के लिए उत्तरदायी रखा गया वे हैं—वेतन, सेवा की शर्तें तथा श्रेणी विभाजन आदि के संबंध में साधारण योजना को लागू करना, स्थायी समिति की सिफारिश के अनुसार प्रत्येक विभाग की स्थापना की स्वीकृति देना, स्थायी समिति की श्रेणी के पुनर्विभाजन तथा नये पदों के सम्बन्ध में प्रस्ताव पर विचार करना आदि। जब स्थायी समिति के हाथों में नियुक्ति का काम सौंप दिया जाता है तथा पदोन्नति एवं श्रेणी के पुनर्विभाजन की सिफारिश वह करती है तो इनका सूक्ष्म परीक्षण स्टाफ समिति द्वारा किया जाता है।

कार्यों के इस विभाजन के विरुद्ध यह कहा जाता है कि जहां इस प्रकार कार्यों का विभाजन होता है वहां संतोषजनक परिणाम प्राप्त होने की गुंजायश बहुत कम रह जाती है। कार्यों के बीच विभाजन रेखा भी

स्पष्ट रूप से नहीं खींची जा सकती क्योंकि कर्मचारियों की स्थिति एवं सेवा की शर्तें निरन्तर बदलती रहती हैं। यदि कार्यों का विभाजन भी उपयुक्त एवं स्थायी रूप से कर दिया जाये तो भी विचारों एवं विवरण, को समिति से दूसरी समिति तक भेजे जाने में पर्याप्त समय लग जायेगा और यह प्रक्रिया अधिक सुविधाजनक भी नहीं रहेगी। कई लेखकों का विचार है कि कर्मचारियों के वेतन, भत्ते, सेवा की शर्तें, बहाली, प्रशिक्षण आदि से संबंधित बातों को यदि स्टाफ समिति के हाथों में सौंप दिया जावे तो अत्यन्त महत्त्वपूर्ण रहेगा तथा उपयोगी भी। वित्तीय समिति में अन्य समितियों के सभापतियों के उपस्थित होने की जो बात कही जाती है वह स्टाफ समिति के प्रसंग में और भी अधिक उपयोगी रहेगी। स्थायी समितियों के सभापतियों को विभाग के कर्मचारियों के बारे में अधिक जानकारी रहती है। इस समिति में संतुलन स्थापित रखने के लिए कुछ तटस्थ सदस्यों को रखा जाना अत्यन्त आवश्यक है किन्तु इस बात का ध्यान रहे कि सदस्यों की संख्या बहुत अधिक न हो जाये।

काय समिति

[The Works Committee]

कार्य समिति की स्थापना एक अत्यन्त विवादपूर्ण विषय है। इस समिति का सम्बन्ध उन सेवाओं से होता है जिनको विभाग द्वारा मजदूरों या ठेकों के माध्यम से सम्पन्न किया जाता है। ये विभाग प्रत्यक्ष रूप से जनता की सेवा करते हैं। ये अन्य विभागों को केवल मंत्रणा मात्र ही नहीं देते वरन् स्थायी समितियों के आदेश के अनुसार अपने उत्तरदायित्व को निभाते हैं। इस प्रकार बारी का अभियन्ता स्वास्थ्य समिति से निर्देश प्राप्त करेगा जब कि उसे भूगर्भ नलवाहिनी से संबंधित कार्य को सम्पन्न करना हो। इसी प्रकार यदि उसके कार्य का सम्बन्ध सड़कों से है तो वह सड़क समिति का परामर्श एवं निर्देश प्राप्त करेगा। स्थायी समितियों से यह आशा की जाती है कि वे इन कार्यों में भाग लेंगी तथा इस प्रकार वे अपने अभ्यावर्कीय लक्ष्यों की प्राप्ति करेंगी। ऐसी परिस्थितियों में यह प्रश्न किया जाता है कि कार्य समिति को क्यों स्थापित किया जाये। उसे स्थापित करके हम किसी लक्ष्य को पूरा करना चाहते हैं। कार्य समिति के समर्थकों का कहना है कि कार्य समिति कार्यों को संचालित करेगी, ठेकों का प्रबन्ध करेगी तथा ठेके के बाब में उत्पन्न प्रश्नों पर विचार करेगी। इन सब कार्यों को एक समिति ही अच्छी प्रकार से सम्पन्न कर सकती है क्योंकि यह विभिन्न क्षेत्रों में प्राप्त अनुभव से एक पारस्परिक सम्बन्ध कायम करके इन प्रश्नों के सम्बन्ध में पूर्ण अनुभव से काम ले सकते हैं।

सभापति, सदस्यों एवं अधिकारियों के बीच सम्बन्ध

[The relationship of Chairman, Members an' Officials]

समिति के संगठन में उसके सभापति का स्थान मुख्य रूप से महत्त्वपूर्ण होता है। वह बैठकों की अध्यक्षता करता है और इस रूप में उसे परम्परागत रूप से, न्यायपूर्वक एवं निष्पक्षता के साथ कार्य सम्पन्न करने चाहिए यदि वह किसी विशेष नीति में रुचि लेता हो तो वह और उसके

सदस्य इस प्रकार की नीति अपना सकते हैं कि उसे स्वीकार कर लिया जाये। जब एक समिति का सभापति अन्य समितियों के साथ सम्बन्ध रखता है अथवा परिषद से कोई बात करता है तो वह केवल उस समिति का ही प्रवक्ता नहीं होता वरन् उन सेवाओं के अधिकारियों का भी होता है जिनके साथ समिति का सम्बन्ध है। इस प्रकार प्रत्येक समिति में सम्बन्धों के तीन रूप हमारे सामने आते हैं —प्रथम है सभापति एवं अधिकारियों के बीच, दूसरा है सभापति एवं सदस्यों के बीच और तीसरा है सदस्यों एवं अधिकारियों के बीच।

समिति का सभापति अधिकारियों एवं समिति के बीच एक जोड़ने वाली कड़ी होता है। वह यह देखता है कि ये दोनों एक दूसरे को भली प्रकार समझ सकें। प्रत्येक बैठक से पूर्व सभापति को कुछ समय मुख्य अधिकारियों के साथ व्यतीत करना चाहिए। एजेन्डा को भली प्रकार पढ़ कर यह देखना चाहिए कि वह उसे समझ पाता है अथवा नहीं तथा प्रत्येक विषय पर लिये जाने वाले निर्णय के सम्बन्ध में वह स्पष्ट है अथवा नहीं। अधिकारियों को चाहिए कि वे एजेन्डा के पूरक के रूप में सभी आवश्यक लेख सभापति कोप्रस्तुत करें। इसका रूप सभापति की आदतों के अनुसार निर्धारित होगा। कुछ सभापति कठिन प्रश्नों पर मौलिक स्पष्टीकरण को प्रमुखता देते हैं जब कि अन्य लिखित को प्राथमिकता देते हैं।

स्थानीय सरकार की सफलता बहुत कुछ उसके अधिकारियों एवं सदस्यों के अच्छे सम्बन्ध पर निर्भर करती है। समिति के सदस्य यह आसानी से जान सकते हैं कि अधिकारियों के पास विशेषीकृत ज्ञान एवं अनुभव होता है। ऐसी स्थिति में समिति का बहुत कुछ कार्य इनके ही द्वारा सम्पन्न किया जाएगा। यह बहुत कठिन बात है कि सदस्य यह देख सकें कि अधिकारियों का मुख्य कार्य क्या है अथवा अधिकारी यह देख सकें कि निर्वाचित सदस्यों का महत्व क्या है। कुछ सदस्य मूर्ख तथा अज्ञानी होते हैं तथा वे उत्तरदायी अधिकारियों के कार्यों में हस्तक्षेप करते हैं। फिर भी अधिकारी को यह मान कर चलना चाहिए कि सारा संसार कुशल एवं सुसूचित लोगों से ही पूर्ण नहीं है और यद्यपि ग्राहक उपयुक्त नहीं है किन्तु फिर भी बाजार तो ग्राहकों पर ही निर्भर करता है। निर्वाचित सदस्य यदि योग्य नहीं हैं तो भी वे ही स्थानीय सरकार का मूल होते हैं। जब अधिकारी अधिक गहराई से सोचता है तो उसे ज्ञात होता है कि यदि उसकी विशेषज्ञता एवं साधारण सदस्य की विशेष योग्यताओं को मिला दिया जाये तो यह प्रशासकीय दृष्टि से उपयोगी रहता है।

एक व्यवसायिक प्रशासक अपने व्यवसाय से सम्बन्धित कुछ विशेषताओं का विकास कर सकता है। वह सामान्य लोगों की आदतों से ही ऊपर उठता है। वह जितना ऊपर उठता है उतना ही उसके स्वांश लेने की हवा कम होती चली जाती है। वह चीजों को एकरूप देखना चाहता है तथा सदैव ही उचित कानूनों को लागू करना चाहता है। इस व्यवहार द्वारा वह पक्षपातपूर्ण व्यवहार की आलोचनाओं से ऊपर उठ जाता है किन्तु पूर्ण व्यवस्था की तलाश में वह कई एक समस्याएं भी पैदा कर देता है। परेशानी उस समय

उत्पन्न होती है जब कि साधारण सदस्य यह पाता है कि प्रशासकीय भवन आराम एवं सुविधा से युक्त उसके विचारों के अनुरूप नहीं है।

निर्वाचित सदस्यों के अन्य दो गुण होते हैं। एक उम्मीदवार बन जाने तथा चुनाव लड़ने मात्र से भी पर्याप्त शिक्षा प्राप्त होती है। एक सदस्य के रूप में वह अपने निर्वाचन क्षेत्र के लोगों के सम्पर्क में रहता है। वह यह जानता है कि साधारण लोग क्या चाहते हैं तथा क्या नहीं चाहते हैं तथा उनकी सहनशीलता की क्या सीमायें है। इस सम्बन्ध में आर० एम० जेक्सन महोदय का यह कहना उपयुक्त ही प्रतीत होता है कि यदि अधिकारियों एवं सदस्यों को एक साथ मिल कर अच्छी प्रकार कार्य करना है तथा प्रत्येक से उसका श्रेष्ठ कार्य प्राप्त करना है तो पारस्परिक सम्मान एवं अच्छे आचरण रहने चाहिए। समिति का सभापति इस स्थिति को प्राप्त करने की दिशा में बहुत कुछ कर सकता है।

समिति की बैठकों की प्रक्रिया औपचारिक नहीं होनी चाहिए। यद्यपि सदस्यों के व्यवहार पर थोड़ा नियंत्रण अवश्य होना चाहिए। उनको अपने भाषणों में उपयुक्त तथा अपने व्यवहार में व्यवस्थित रहना चाहिए। समिति के सदस्य बोलते समय प्राय: बैठे ही रहते हैं। सभापति यह देखता है कि अधिकारियों को बोलने का पूरा अवसर प्राप्त हो सके। उसे पहले से ही यह ज्ञात कर लेना चाहिए कि अधिकारी बोलना चाहता है अथवा बैठक के दौरान उसे अनुमति दी जा सकती है अथवा नहीं। सदस्यों एवं अधिकारियों के बीच कभी-कभी मनमुटाव भी पैदा हो जाते हैं। ये प्रायः सदस्य की गलती से होते है। उनको स्टाफ पर नियंत्रण की शक्ति दी जाती है किन्तु उन्हें यह भी समझना चाहिए कि यदि वे किसी से अच्छा काम लेना चाहते हैं तो उसके साथ अच्छा व्यवहार करें। कई एक सदस्यों के साथ कठिनाई यह होती है कि वे अपने आपको अनिश्चित समझते है तथा यह अनुभव करते हैं कि अधिकारियों द्वारा अपेक्षाकृत उनके ज्ञान के अभाव का लाभ उठाया जा रहा है। इस प्रकार के सदस्य आत्मस्वाभिमानी तथा गर्वीले होते है तथा अपनी स्वतंत्रता दिखाने में सदैव प्रयत्नशील रहते हैं। यदि एक समिति का सभापति अनुभवी है तो वह कई एक समस्याओं को आसानी से दूर कर सकेगा। इसके लिए वह परिषद के क्लर्क या सभापति का भी सहयोग प्राप्त कर सकता है।

इस सम्बन्ध में मुख्य समस्या यही होती है कि सदस्य गण अधिकारियों की स्थिति को किस प्रकार समझें। कुछ सदस्य यह मानकर चलते है कि अधिकारी परिषद के सेवक होते हैं तथा उनके साथ एक सेवक जैसा ही व्यवहार किया जाना चाहिए। यह दृष्टिकोण वकीलों का दृष्टिकोण है तथा गलत है। यदि सही दृष्टि से देखा जाये तो मुख्य अधिकारी व्यावसायिक

---

*"If officials and members are to work well together each getting the west out of each other, there must be mutual respect, and good manners. Committee chairmen can do a great deal to secure that state of affairs."
—*R. M. Jackson*, Op. cit., P. 76.

व्यक्ति होते हैं। इनके व्यावसायिक व्यवहार की एक आचरण संहिता होती है। सदस्यों को उनकी सलाह मानना उसी प्रकार जरूरी नहीं है जिस प्रकार कि वे अपने डाक्टर, वकील या अन्य व्यावसायिक व्यक्ति की सलाह मानने के लिए वाध्य नहीं होते। अधिकारी-गरण को यदि अवसर प्रदान किया गया तो वे सहायता दे सकते हैं। अधिकारी परिषद के सेवक होते है न कि व्यक्तिगत सदस्यों। के इन अधिकारियों को आदेश दिये जा सकते हैं, उनके कार्यों की जांच की जा सकती है तथा उन पर अनुशासन रखा जा सकता है; किन्तु यह सब परिषद द्वारा अधिकृत उचित प्रक्रिया द्वारा ही सम्पन्न किया जा सकता है। समिति के सभापति को अधिकारियों की रक्षा करनी चाहिए क्योंकि परिषद की बहस में उनको बोलने का अधिकार नहीं होता। दूसरे, सभापति को अच्छे व्यक्तिगत सम्बन्धों की रचना के लिए सदैव ही प्रयत्नशील रहना चाहिए। इसके लिए कुशलता, सहानुभूति एवं दृढ़ नेतृत्व की आवश्यकता रहती है।

६

समस्याएं एवं भावी सम्भावना

[PROBLEMS AND FUTURE PROSPECTS]

इङ्गलैण्ड की स्थानीय सरकार की बनावट, अधिकार क्षेत्र, कार्य, आदि का अध्ययन करने के बाद यह आवश्यक हो जाता है कि हम इन विभिन्न विषयों में स्थानीय सत्ताओं द्वारा वहन की जाने वाली विभिन्न समस्याओं का अध्ययन करें और इन समस्याओं की भूमिकाओं में उसके भावी विकास की रूपरेखा निश्चित करें। वस्तु-स्थिति को देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि इङ्गलैण्ड की स्थानीय सरकार के प्रति आशावादी एवं निराशावादी दोनों ही दृष्टिकोण अपनाये जा सकते हैं। फ्रैंक जेसप (Frank Jessup) के कथनानुसार स्थानीय सरकार अपने विकास में एक आलोचनापूर्ण सोपान तक पहुंच चुकी है जहां पर यह या तो व्यापक एवं मानवीय तत्व बन सकती है पर इस रूप में उस मार्ग की ओर सामूहिक नियमन के नये रूपों का उद्भव करेगी जिधर कि हम जा रहे हैं अथवा यह जल्दी ही समाप्त हो जायगी।* इन दोनों ही मार्गों में से प्रथम मार्ग वांछित है किन्तु फिर भी यह कठिन है जब कि दूसरा मार्ग अवांछित होते हुए भी स्वाभाविक सा लगता है। यद्यपि स्थानीय सरकार की समस्याओं के बारे में सामान्य रूप से कुछ भी कहना खतरे से खाली नहीं है क्योंकि अनेक रूप होने के कारण इसके सम्बन्ध में कोई सामान्यीकरण नहीं किया जा सकता। जो बात एक स्थान एवं एक समय के लिए सच है वह बात दूसरे स्थानों, दूसरे समयों के लिए आवश्यक रूप से सच नहीं हो सकती।

---

*"I believe that Local Government has reached a critical stage in its development; either it will become a vital and humanising element tempering the new forms of collective regulation towards which we are grouping our way, or it will soon disappear altogether."

—*Frank Jessup*, Problems of Local Government in England and Wales, Cambridge University Press, 1949, in Preface.

इंगलैण्ड की स्थानीय सरकार के सम्मुख विकास के इन क्षणों में एक खतरा आया हुआ है। इस खतरे के मुख्यतः दो रूप हैं—प्रथम यह कि स्थानीय सरकार अपने वर्तमान रूप में उन सामाजिक सुधारों को लाने में असमर्थ रहेगा जो कि इसे सौंपे गये हैं तथा जिन्हें प्राप्त करने के लिए पूरा देश प्रयत्नशील है। इसके परिणामस्वरूप सुधार की आशाएं मन्द पड़ जाती हैं अथवा समाप्त हो जाती हैं। दूसरे, वर्तमान समय में सर्वाधिकारवादी राज्य की ओर जो समय का बहाव चला जा रहा है उसमें स्थानीय सरकार भी मिल सकती है और अन्तिम रूप से समाप्त हो सकती है। जिस प्रकार स्थानीय सरकार को मार्ग में ये दो खतरे हैं इसी प्रकार इसके सामने दो महत्वपूर्ण आशाएं भी हैं। प्रथम यह कि स्थानीय सरकार के द्वारा सामाजिक सुधार के कार्यक्रमों को कागजों से निकाल कर व्यवहार में क्रियान्वित किया जा सकता है। दूसरे उचित रूप से विकसित हो कर यह व्यक्तिवाद एवं समष्टि-वाद के बीच का मार्ग प्रशस्त कर सकती है। छोटे समाज के राजनैतिक संगठन व्यक्ति के महत्व को नहीं भुला देते और उसे समूह के साथ पूर्णतः एकाकार नहीं कर देते और ऐसी स्थिति में वे स्वतन्त्रता एवं समानता के बीच सामञ्जस्य स्थापित करने का सफलतापूर्ण प्रयास करते हैं।

इंगलैण्ड की स्थानीय सरकार के पिछले सौ वर्षों का इतिहास देखने पर यह ज्ञात हो जाता है कि इसकी प्राप्तियां महत्वपूर्ण हैं। जन स्वास्थ्य, गृह-निर्माण, शिक्षा, पुलिस, आदि दर्जनों ही सेवाओं के क्षेत्रों में इसने जो विकास किये हैं उनको देखते हुए इसका महत्व भुलाया नहीं जा सकता। इतना होने पर भी इसका वर्तमान कार्य भी ऐसा है जिसे देख कर बहुत कम लोग सन्तोष की भावना व्यक्त कर पाते हैं। कई बार इसे गलत कारणों से आलोचित किया जाता है। आलोचना करने वाले प्रायः गलियों में चलने वाले और रेट देने वाले लोग होते हैं वे इसे रेट बढ़ जाने के लिए अथवा ऐसे कार्यों के लिए आलोचना का पात्र बनाते हैं जिनके लिए असल में स्थानीय सरकार उत्तरदायी नहीं है। जनता का ध्यान स्थानीय सरकार की ऊपरी कमियों की ओर जाता है और स्थानीय सरकार आजकल असल में जिन समस्याओं का सामना कर रही है उनकी ओर उसका ध्यान बहुत कम जाता है। स्थानीय सरकार द्वारा उठाई जाने वाली मुख्य समस्याओं को संक्षेप में दो प्रकार की माना जा सकता है। प्रथम, स्थानीय सरकार के यन्त्र का संचालन करने के लिए निर्वाचित प्रतिनिधियों एवं अधिकारियों के रूप में पर्याप्त संख्या में उपयुक्त व्यक्तियों की तलाश और दूसरे, पर्याप्त वित्तीय स्रोतों की उपलब्धता। ये दोनों ही मूल समस्यायें हैं। इनके अतिरिक्त कुछ कम मौलिक समस्याएं भी होती हैं जो कि अपेक्षाकृत कम महत्वपूर्ण नहीं होतीं। यदि स्थानीय सरकार की सेवाओं के क्षेत्र को न भी बढ़ाया जाए तो भी इसकी जो दो मौलिक समस्याएं हैं वे कई एक गम्भीर कठिनाइयां उत्पन्न करती हैं। यदि स्थानीय सरकार का कार्य क्षेत्र बढ़ाना हो तो सरकार को उन दोनों ही क्षेत्रों में शक्तिशाली बनाना होगा। यदि यह नहीं किया गया तो अनेक सामाजिक सेवाएं विकसित होने के स्थान पर स्वयं स्थानीय सरकार व्यवस्था के साथ समाप्त हो जाएगी। सामाजिक सेवाओं का प्रशासन केन्द्रीय सरकार के हाथ में आ जाएगा और

स्थानीय सरकार केवल अपने ऐतिहासिक अस्तित्व की एक शक्तिहीन तस्वीर मात्र रह जायेगी।

स्थानीय सरकार की कीमत पर केन्द्रीयकरण की ओर प्रवृत्ति वर्तमान समय की एक विशेषता वन गई है। युद्ध से पूर्व राज्य व्यक्ति के जीवन में बहुत कम हस्तक्षेप करता था किन्तु युद्ध के वाद की परिस्थितियों ने उसके कार्यों में प्रसार ला दिया है। जब कभी इस केन्द्रीयकरण से पूर्ण प्रवृत्ति के प्रति प्रश्न किये जाते हैं तो इसे आत्मसन्तोषी अकल्पनाशील और साहस-विहीन व्यक्ति के प्रति क्रियावादी प्रवृत्तियों का प्रतीक माना जाता है। यह सच है कि इस प्रवृत्ति का विरोध करने वाले लोग प्रायः वे हैं जो कि इसके कारण भाग्यहीन वन चुके हैं अथवा वैसे ही भाग्य के सताये हुए हैं। किन्तु दूसरी ओर जो लोग केन्द्रीयकरण के विरोध को वुरा वताते हैं वे सौभाग्यशाली हैं, वे कभी भी गन्दी वस्तियों में नहीं रहे, उनको रहने के स्थान का कभी अभाव नहीं हुआ वे कभी स्थायी रूप से भूखे नहीं रहे, उन्हें वेरोजगारी के प्रभाव का पता नहीं है, वे खतरनाक कार्य में रहने वाली असुरक्षा से परिचित नहीं हैं, वे शैक्षणिक अवसरों के अभाव में उत्पन्न होने वाली निराशा से परिचित नहीं हैं, उन्हें कभी यह अनुभव नहीं हुआ कि उनके वीमार वच्चे अथवा पत्नि उचित मेडीकल सहायता के अभाव में तड़प रहे हैं। ये सभी परिस्थितियां कभी भी उनके अनुभव का विषय नहीं वनीं और इसी कारण वे उन लोगों के प्रति कोई सहानुभूति नहीं रखते जिनके लिए ये समस्याएं प्रतिदिन के जीवन का एक भाग हैं। जिन लोगों पर उनका भाग्य हंसता है वे आसानी से उस खतरे को देख सकते हैं जो कि व्यक्ति के कल्याण के लिए राज्य के वढ़ते हुए हस्तक्षेप से उत्पन्न होता है।

केन्द्रीयकरण के खतरों से आतंकित लोग जब इससे बचने के लिए उपाय सुझाने लगते हैं तो उनका कहना होता है कि केन्द्रीय सरकार के प्रशासकीय दायित्वों को स्थानीय सरकार को सौंप दिया जाए। इस सुझाव के प्रति दो प्रकार की आलोचनाएं प्रस्तुत की जाती हैं। ये दोनों ही आलोचनाएं स्थानीय सरकार को अकार्यकुशल मान कर चलती हैं। प्रथम आपत्ति करने वाले वे लोग हैं जिनका यह विश्वास है कि केवल शक्तिशाली केन्द्रीयकृत सरकार ही सुधारों को लाने में आवश्यक गति प्रदान कर सकती है और वही इन सुधारों को कार्य रूप देने में निर्णयात्मक कदम उठा सकती है। इन लोगों का कहना है कि वे सन्तोषजनक परिस्थितियां जिनमें कि लोग रह सकें तथा अपनी जीविका कमा सकें, सरकार की प्रकृति एवं साधनों से सम्बन्धित किसी भी अच्छी विचारधारा से अधिक महत्वपूर्ण है। सन्तोषजनक परिस्थितियों को प्राप्त करने का केवल मार्ग यही है कि विशेषज्ञों का समूह उद्देश्यपूर्ण रूप से लगातार कार्य करता रहे। यद्यपि यह प्रजातन्त्रात्मक परिषद के प्रति उत्तरदायी रहेगा किन्तु इसे सार्वजनिक भलाई के लिए कुछ भी कर सकने की व्यापक शक्तियां होंगी। यह सिद्धान्त स्पष्ट रूप से इन शब्दों में प्राय: बहुत कम सामने आता है किन्तु यह सामाजिक प्रगति से सम्बन्धित आजकल के प्राय: सभी विचारों में निहित है। इस विचार को अप्रजातान्त्रिक कह कर अस्वीकार करना सरल अधिक है किन्तु लाभदायक कम।

यह सच है कि एक भूखा एवं गृह विहीन व्यक्ति सरकार की किसी भी ऐसी व्यवस्था को स्वीकार कर लेगा जो कि उसे भोजन और रहने का स्थान प्रदान कर सके। वह ऐसी प्रजातन्त्रात्मक सरकार के पीछे नहीं पड़ेगा जो उसकी समस्याओं को सुलझाने में असमर्थ रही हो। एक दूसरी आपत्ति प्राय: इस प्रकार की जाती है कि जब हम उन व्यापक शक्तियों के वितरण में स्थानीय सरकार का अधिक से अधिक प्रयोग करने का तर्क देते हैं जो कि प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अवश्य ही राज्य सरकार के विषय हैं तो हमारा यह तर्क पूर्वकल्पित भूमि पर आधारित है और इस प्रकार के आधारों पर निश्चय ही एक आकर्षक सिद्धान्त बनाया जा सकता है। किन्तु जब हम स्थानीय सत्ताओं के वर्तमान वास्तविक कार्य का अध्ययन करते हैं तो हमारा यह सिद्धान्त खण्ड-खण्ड हो जाता है। दुर्भाग्य से यह सच है कि स्थानीय सरकार वर्तमान में जिस प्रकार कार्य कर रही है वह अनेक अपूर्णताओं से युक्त है। इस आपत्ति के विरुद्ध यह कहा जा सकता है कि मनुष्य द्वारा रचित सरकार का कोई भी यन्त्र पूर्णता को प्राप्त नहीं हो सकता। इसलिए वर्तमान व्यवस्था को केवल इसलिए घातक और खतरनाक बताना उचित नहीं रहेगा कि उसने कुछ गलतियां की हैं। स्थानीय सरकार को जिन समस्याओं का सामना करना पड़ता है वे कई प्रकार की होती हैं। इनमें से कुछ का सम्बन्ध सरकारी कार्यों के वितरण से है, कुछ का स्थानीय वित्त से कुछ का स्थानीय सरकार की बनावट से और कुछ का स्थानीय सरकार के अन्य पहलुओं से है। इन समस्याओं का वर्णन निम्न शीर्षकों के अन्तर्गत किया जा सकता है।

सरकारी कार्यों का वितरण

[The distribntion of Government Functions]

जब व्यक्ति सामान्य क्रियाओं के लिए एक समूह की रचना करते हैं

तो उन समूह का आकार, क्षेत्र एवं संविधान उसके लक्ष्य के आधार पर ही निश्चित किये जाते हैं। सदियों तक यह माना जाता रहा है कि कुछ उद्देश्य जैसे विदेशी आक्रमण के विरुद्ध रक्षा, सशस्त्र सेना की रचना तथा मुद्रा विनियमन आदि को छोटी इकाइयों को नहीं सौंपा जा सकता। ये तो राष्ट्रीय स्तर की संस्था द्वारा ही सम्पन्न किये जा सकते हैं। इस प्रकृति के अनेक कार्यों को राष्ट्रीय स्तर की संस्था से नीचे की संस्था द्वारा सम्पन्न नहीं किया जा सकता क्योंकि उनमें सभी राज्यों अथवा इकाइयों के सहयोगपूर्ण कार्य की आवश्यकता होती है। उदाहरण के लिए अणुशक्ति के नियन्त्रण को लिया जा सकता है। ये कार्य राष्ट्रीय स्तर पर भी सम्पन्न नहीं हो सकते। इनके लिए अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रयास किया जाना जरूरी हो जाता है। यदि कोई लक्ष्य ऐसा है जिसे प्राप्त करने में केवल कुछ लोग ही रुचि ले रहे हैं तो इसका अर्थ आवश्यक रूप से यह कभी नहीं होता कि उनकी साधना के लिए छोटा संगठन तैयार किया जायेगा। यह एक अत्यन्त ही स्पष्ट सिद्धान्त है कि सरकार की प्रक्रिया एवं इकाई को सम्पन्न किये जाने वाले कार्य पर आधारित होना चाहिए किन्तु समस्या तब उत्पन्न हो जाती है जबकि इस सिद्धान्त का प्रायः उल्लंघन किया जाता है। इंगलैण्ड में सामाजिक सेवाओं को मुख्य रूप से चार वर्गों में विभाजित किया जाता है। इस विभाजन का आधार उनको सम्पन्न किये जाने का तरीका है। प्रथम वर्ग में वे सेवायें आती हैं जिनका उत्तरदायित्व पूरी तरह से केन्द्रीय सरकार पर ही आता है, उदाहरण के लिए बेरोजगारी सहायता एवं वृद्धावस्था की पेन्शन आदि।

प्रदान की जाने वाली सेवा की प्रकृति एवं प्रसार को विस्तार के साथ संसद के अधिनियम द्वारा अथवा विभागीय नियमन द्वारा निर्धारित किया जाता है। इस सेवा का संचालन या तो स्वयं सरकारी विभाग करता है अथवा सामयिक रूप से निर्मित एवं मंत्री के प्रति उत्तरदायी एक निकाय द्वारा किया जाता है। सेवा का प्रशासन करने वाला संगठन कितना केन्द्रीयकृत होगा, यह बात उस सेवा की प्रकृति पर ही निर्भर करती है। दूसरे वर्ग में वे सेवायें आती हैं जिनको केन्द्रीय सरकार द्वारा नियोजित किया जाता है किन्तु जनता द्वारा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित स्थानीय सरकार द्वारा प्रशासित किया जाता है। उदाहरण के लिए पुलिस या शिक्षा सेवाओं का नाम लिया जा सकता है। इन सेवाओं के व्यवस्थापन एवं नियोजन सम्बन्धी कार्य, संसद तथा सरकारी विभागों द्वारा सम्पन्न किये जाते हैं तथा स्थानीय प्रशासन केन्द्रीय पर्यवेक्षण के आधीन स्थानीय निर्वाचित निकायों को सौंप दिया जाता है। यह समझौतेपूर्ण व्यवस्थाएं प्रायः उन सेवाओं के बारे में पूर्णतः संतोषजनक सिद्ध होती हैं जिनको राष्ट्रीय रूप में नियोजित तथा संगठित किया जाना चाहिए किन्तु जिनके प्रशासन में अर्थात वास्तविक क्रियान्वयन में कुछ स्वेच्छा की आवश्यकता होती है तथा केवल नियमों का पालन करना पर्याप्त नहीं समझा जाता।''

तीसरे वर्ग की सेवाओं का नियोजन एवं प्रशासन दोनों ही कार्य स्थानीय सरकार द्वारा किये जाते हैं। अजायबघर एवं व्यावसायिक उद्यो

को इस श्रेणी की सेवाओं में लिया जा सकता है। स्थानीय स्तर पर उनके नियोजन का अर्थ यह नहीं है कि स्थानीय सत्ता को उनके विषय में कार्य करने की पूरी स्वतन्त्रता रहती है क्योंकि इन सेवाओं को जब कभी सम्पन्न किया जाता है तो केन्द्रीय सरकार द्वारा निर्धारित सामान्य प्रक्रिया को अपनाना होता है। इन सेवाओं के सम्बन्ध में केन्द्रीय पर्यवेक्षण बहुत कम रहता है तथा सत्ता द्वारा व्यापक स्वेच्छा का प्रयोग किया जाता है। वही मूलत: यह निर्णय लेती है कि सेवा को किस रूप में प्रदान किया जाता चाहिए।

चौथे वर्ग में उन सामाजिक सेवाओं को लिया जाता है जिनको स्वेच्छापूर्ण संगठनों (Voluntary organisation) द्वारा सम्पन्न किया जाता है। यह सर्वविदित है कि सामाजिक सेवाओं के अनेक क्षेत्रों में स्वेच्छापूर्ण अभिकरण ही प्रथम प्रवर्तक रहे हैं। कुछ सेवाओं का संचालन आज भी उनके द्वारा अकेले रहकर ही किया जा रहा है किन्तु अन्य क्षेत्रों में केन्द्रीय अथवा स्थानीय सरकार ने उत्तरदायित्व सम्भाल लिया है। इनका स्वरूप कभी-कभी तो स्वेच्छापूर्ण संगठनों जैसा ही होता है किन्तु कभी-कभी पर्याप्त भिन्न होता है। सामाजिक सेवाओं में सदैव ही परिवर्तन करने की आवश्यकता रहती है। उनमें परिस्थितियों के अनुसार प्रयोग किये जाते रहते हैं। इन स्थितियों में स्वेच्छापूर्ण संगठनों का अस्तित्व इस बात का द्योतक है कि ये संगठन बदली हुई सामाजिक एवं राजनैतिक परिस्थितियों के अनुरूप अपने कार्यों को बदलने की इच्छा रखते हैं।

सरकारी क्रियाओं के रूप में नियोजन एवं प्रशासन दो स्पष्ट श्रेणियां हैं, जिनको कि आसानी से पृथक-पृथक किया जा सकता है। यद्यपि इन दोनों के बीच निश्चित सीमा को परिभाषित करना बड़ा कठिन है। केन्द्रीय नियोजन सदैव ही स्थानीय प्रशासन के साथ अनुरूपता रखता है। सन् १९४४ के अधिनियम द्वारा यह व्यवस्था की गई थी कि स्थानीय शिक्षा की सत्ता को प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा के विकास के लिए विकास योजना प्रस्तुत की जानी चाहिए। जब शिक्षा मन्त्री उसे संशोधन के साथ या उसके बिना ही स्वीकार करले तो स्थानीय सत्ता को उसे कर्त्तव्य मान कर पूरा करना चाहिए। यह एक उदाहरण है जो कि स्थानीय प्रशासन को नियोजन के साथ एकरूप करने का प्रयास करता है तथा राष्ट्रीय मापदण्ड के साथ इसका कोई संघर्ष नहीं रहता। वर्तमान प्रवृत्तियों के अनुसार केन्द्रीय सरकार न केवल नियोजन में ही वरन् सामाजिक सेवाओं के वास्तविक प्रशासन में भी अधिक से अधिक भाग लेना चाहती है। स्थानीय सरकार की इकाइयां बड़ी होती जा रही हैं। केन्द्रीय एवं स्थानीय दोनों ही सत्ताएं उन उत्तरदायित्वों को सम्भालने की ओर प्रवृत्ति होती जा रही हैं जो कि पहले स्वेच्छापूर्ण संगठनों को सौंप दिये जाते थे। सड़कों से सम्बन्धित प्रशासन का इतिहास इन प्रवृत्तियों का स्पष्ट उदाहरण है।

कुछ सेवाओं की प्रकृति ही ऐसी होती है जिनमें राष्ट्रीय एवं एकरूप नीति अपनाना अनिवार्य सा बन जाता है। यदि वृद्धावस्था की पेन्शन को प्रत्येक कस्बे में अलग-अलग प्रकार से रखा जाये तो अन्याय होने की सम्भावना रहती है। कुछ लोग 'अवसरों की समानता' के तर्क से बहुत कम प्रभा-

वित होते हैं, उनका यह कहना होता है कि विभिन्न काउन्टीज में अलग-अलग उम्र के बच्चों के लिए स्कूल खोले जाने चाहिएं। जब कुछ सामाजिक सेवाओं में एक निम्नतर स्तर रखने की आवश्यकता होती है तो ऐसा करने के लिए राष्ट्रीय हस्तक्षेप जरूरी बन जाता है। एक क्षेत्र के स्वास्थ्य का प्रश्न केवल उस क्षेत्र की सीमाओं तक ही मर्यादित नहीं रहता, वरन् यह आस-पास के क्षेत्रों की स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं के साथ भी एकाकार हो जाता है। इसी प्रकार एक क्षेत्र का शैक्षणिक स्तर दूसरे क्षेत्र के शैक्षिणक स्तर पर भी पर्याप्त रूप से प्रभाव डालता है। एक स्थानीय सरकार का क्षेत्र बड़ा होना चाहिए अथवा छोटा. यह एक विवाद पूर्ण प्रश्न है। असल में दोनों ही स्थितियों का अपना-अपना लाभ है। स्थानीय सत्ताओं का आकार उनके द्वारा सम्पन्न किये जाने वाले कार्यो के आधार पर तय किया जाना चाहिए। दो विरोधी प्रवृत्तियों के बीच संतुलन स्थापित किया जाना अत्यन्त आवश्यक होता है। बड़ी इकाइयों को अधिक तकनीकी कार्यकुशलता के कारण और छोटी इकाइयों को जनता के साथ उनके निकट सम्पर्क के कारण पसन्द किया जाता है। इन दोनों प्रवृत्तियों का संतुलित रूप ही उपयुक्त रहेगा।

दो प्रकार की सामाजिक सेवाओं के प्रशासन में लोचशीलता विशेष रूप से उपयोगी मानी जाती है। प्रथम वे ऐसी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सम्पन्न की जाती हैं जो कि देश के एक भाग से दूसरे भाग के बीच पर्याप्त भिन्नता रहती हैं तथा दूसरी वे कि प्रभाव की दृष्टि से वातावरण मूलक न हो कर व्यक्तिगत होती हैं। एक प्रसिद्ध कहावत के अनुसार जूता पहनने वाला ही यह भली प्रकार जानता है कि वह कहां चुभ रहा है। इसके आधार पर यह कहा जा सकता है कि जो सेवायें स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार स्वीकृत की जाती हैं उनके बारे में स्थानीय जनता ही यह अच्छी प्रकार से जान सकती है। आवश्यकतायें क्या हैं? उनका समाधान किस प्रकार किया जा सकता है? यह धारणा सदैव ही सत्य सिद्ध नहीं होती क्योंकि अनेक बार बाहर का पर्यवेक्षक अधिक शीघ्र ही आवश्यकताओं का पता लगा लेता है तथा आवश्यक उपाय भी सुझा देता है। स्थानीय लोग प्रायः इतनी जल्दी यह सब नहीं कर पाते। बाहर के व्यक्ति द्वारा सुझाये गये उपाय आवश्यक रूप से श्रेष्ठ सरकार की साधना नहीं करते क्योंकि श्रेष्ठ सरकार असल में एक ऐसी चीज है जो केवल कुशल सरकार से भिन्न होती है। अच्छी सरकार प्रायः वह होती है जो कि लोगों की बुद्धि के साथ-साथ उनकी भावनाओं को भी प्रवृत्त कर देती हैं। फिर भी इसमें कोई शक नहीं है कि स्थानीय लोग अपनी विशेष आवश्यकताओं का निर्णय अधिक अच्छी प्रकार कर सकते हैं। अतः जिन सेवाओं में स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार भिन्नतायें अभिव्यक्त होने की आवश्गकता हो उनको स्थानीय रूप से केवल प्रशासित ही नहीं किया जाना चाहिए किन्तु जहां तक सामान्य कल्याण अनुमति दे सके, उनको स्थानीय रूप से ही संगठित एवं नियोजित किया जाना चाहिए।

स्थानीय सत्ताओं द्वारा संपन्न की जाने योग्य सेवाओं के एक अन्य समूह में वे सेवायें आती हैं जिनको स्थान भिन्न आवश्यकताओं के अनुरूप ही नहीं

वरन् भिन्न व्यक्तियों के अनुसार भी समायोजित करना होता है। असल में इन सेवाओं की प्रकृति ही स्थानीय प्रशासन को आवश्यक बनाती है। स्थानीय एजेन्ट के कई रूप हो सकते हैं, जैसे—नागरिक सेवक, निर्वाचित सदस्य अथवा किसी स्वेच्छापूर्ण संगठन का अधिकारी। यह कहा जाता है कि जहां सेवाओं में केवल तकनीक की कुशलता से कुछ अधिक की आवश्यकता हो या विनियमो को केवल गणितीय ढंग से लागू करनेसे अधिक की जरूरत हो, जहां व्यक्तिगत स्थितियों का समाधान करने के लिए विशेष प्रावधानों की स्थापना एवं स्वेच्छा पूर्ण व्यवहार की आवश्यकता हो वहां सेवाओं को नागरिक सेवा के माध्यम से सम्पन्न करने की अपेक्षा स्थानीय सरकार के माध्यम से सम्पन्न करना अधिक उपयुक्त रहेगा। इसका अर्थ यह नहीं कि स्थानीय सत्ताओं के सदस्य नागरिक सेवकों की अपेक्षा अधिकारी अधिक जागरूक तथा मानवीय होते हैं किन्तु इसका मुख्य कारण यह है कि नागरिक सेवा प्रायः प्रशासन में उन तरीकों को अपनाती है जो कि सामान्य दृष्टिकोण अपनाते हैं तथा नियमों के एक रूप व्यवहार पर निर्भर करते हैं।

स्थानीय सरकार सेवा के राष्ट्रीय पहलू से बहुत कम सम्बन्ध रखती है; अतः वह एक समस्या के सम्बन्ध में विशेष दृष्टिकोण अपनाती है और उसका समाधान करने में सफल हो जाती है। यदि हम इनके पूर्ण अतिशय पर विचार करें तो नागरिक सेवा वाला तरीका न्यायविहीन कानून का तथा स्थानीय सरकार वाला तरीका कानून द्वारा अविनियमित न्याय के प्रशासन का प्रतीत होता है। स्थानीय सत्ता द्वारा प्रशासित की जाने वाली जिन सेवाओं में स्वेच्छा की आवश्यकता पड़ती है उन पर पर्याप्त नियन्त्रण रखे जाने की व्यवस्था भी की जानी चाहिए। यह नियंत्रण उस जनता का होगा जो कि स्थानीय प्रशासन के संचालन के व्यय का भाग वहन करती है। यह कहा जाता है कि स्थानीय सरकार अनुरूपता बनाम एकरूपता एवं निश्चितता और अधिकारियों की स्वेच्छा बनाम लोकप्रिय नियंत्रण जैसे विरोधाभासों के लिए उपयुक्त प्रावधान करती है।* कार्यों के वितरण के ये सभी सामान्य सिद्धान्त अत्यन्त स्पष्ट हैं किन्तु इंगलैण्ड में विभिन्न केन्द्रीय एवं स्थानीय सरकार के विभिन्न अभिकरणों के बीच संगठनात्मक एवं प्रशासकीय कार्यों के वितरण पर इनका बहुत कम प्रभाव है। वर्तमान व्यवस्था में कार्यों का जो वितरण किया गया है वह उलझनों के बाद तथा प्रायः अचेतन रूप से ही किया गया है। यह समय-समय पर लिए गये आकस्मिक निर्णयों का परिणाम है। उदाहरण के लिए माप और तोल का निरीक्षण (Inspection of weights and measures) एक ऐसी सेवा है जिसमें निष्पक्ष, अवैयक्तिक एवं एकरूप प्रशासन की आवश्यकता है किन्तु फिर भी इसे स्थानीय सरकार के हाथ में छोड़ दिया गया। दूसरी ओर अस्पतालों का प्रशासन एक ऐसी सेवा है जिसमें

---

* 'Local Government offers a more promising resolution of the dilemmas of adoptability versus uniformity and certainty, and of official diseretion versus popular control''

—Ibid, P. 25.

यथा सम्भव घनिष्टता एवं व्यक्तिगतता को होना आवश्यक है उसे केन्द्रीय सर-कार को सौंप दिया गया है।

सामान्य सिद्धान्तों को गिना देना अत्यन्त सरल कार्य है किन्तु उनको, विशेष सामाजिक सेवाओं में लागू करना उतना ही कठिन है। यह कठिनाई उस समय और भी अधिक बढ़ जाती है जब कि दो सिद्धान्त दो भिन्न दिशाओं की ओर खींचते हैं। अस्पताल सेवा को उदाहरण रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। यह एक ऐसी सेवा है जिसको घनिष्टता एवं व्यक्तिगतता के लिए स्थानीय स्तर पर प्रशासित किया जाना चाहिए किन्तु इस सेवा की विभिन्नता एवं क्षेत्र के कारण इसको जनसंख्या की बड़ी ईकाई पर प्रशासित करना जरूरी होता है।

वित्त सम्बंधी समस्यायें
[The Financial Problems]

स्थानीय सरकार का राजस्व अनेक प्रकार की समस्यायें उत्पन्न करता है क्योंकि यह इसके स्रोत अपर्याप्त हैं, इसकी प्रक्रिया दोषपूर्ण है, इसमें भूल की सम्भावना अधिक रहती है तथा यह व्यावहारिक दृष्टि से उतना उपयोगी नहीं है। वास्तविक सम्पत्ति पर लिए जाने वाले रेट के चार्ज को स्वामी नहीं वरन् वह व्यक्ति देता है जिसने कि उस पर अधिकार किया हुआ है। यह चार्ज स्थानीय सरकार के राजस्व का एक परम्परागत स्रोत है। इस स्रोत में अनेक निहित दोष होने के कारण ही इसकी अन्य प्रकार के स्रोतों से अनुपूरित किया जाता है। इसी प्रक्रिया द्वारा अभी तक स्थानीय सरकार का प्रशासन संचालित किया जाता रहा है किन्तु स्थानीय सरकार के कुल राजस्व पर पूरी तरह से विचार नहीं किया गया है ताकि बीसवीं शताब्दी की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए इसमें परिवर्तन किये जा सकें। एक प्रभावशील तथा व्यापक स्थानीय सरकार के लिए अधिक संतोषजनक वित्तीय व्यवस्था परम आवश्यक है।

सत्रहवीं शताब्दी में स्थानीय सरकार के उत्तरदायित्व थोड़े से थे। इनका निर्वाह करने के लिए भूमि एवं चल सम्पत्ति पर लगाये रेट्स से प्राप्त राजस्व पर्याप्त होता था। सरकार के कार्य सामाजिक उपलब्धियों के प्रावधान से प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्धित होने की अपेक्षा नियमनकारी अधिक थे। स्थानीय सरकार द्वारा सम्पन्न की जाने वाली सेवाओं में वास्तविक सम्पत्ति के स्वामियों तथा अधिकारकर्त्ताओं के हितों को ही मुख्य रूप से ध्यान में रखा जाता था। १९वीं शताब्दी में सामाजिक सेवाओं का द्रुतगति से विकास हुआ जिसके परिणाम स्वरूप स्थानीय वित्त पर भारी वजन पड़ गया। इस शताब्दी के पूर्वार्ध में ही केन्द्रीय सरकार ने स्थानीय सरकार को सहायता देना प्रारम्भ कर दिया। शिक्षा के लिए २०००० पौण्ड का प्रथम अनुदान सन् १८३३ में किया गया था किन्तु यह असल में कुछ धार्मिक संस्थाओं के लिए अनुदान था न कि स्थानीय सरकार को। प्रारम्भ में सहायता अनुदान का एक सीमित लक्ष्य था यह स्थानीय सत्ताओं को क्रियान्वित करने के लिए आकर्षित करता था जो कि कम लोक प्रिय थीं। सहायता अनुदान की मात्रा भी धीरे-धीरे बढ़ती चली गई। पहले यह कुल व्यय का १/३ भाग थी किन्तु

८० वर्ष के बाद ही यह २/५ भाग हो गई। १९वीं शताब्दी के अन्तिम दिनों में केन्द्रीय सरकार को यह महसूस होने लगा कि वह सहायता अनुदान की मात्रा बढ़ा कर भी स्थानीय सरकार पर अपना नियंत्रण रख सकेगी यह संदेह शील है। सन् १९२९ के अधिनियम ने सहायता अनुदान की एक ऐसी व्यवस्था का प्रारम्भ किया जो कि विशेष सेवाओं के लिए नहीं वरन् क्षेत्र में स्थानीय सरकार के सामान्य व्यय के लिए दी जाती थी।

यदि स्वास्थ्य मंत्रालय यह अनुभव करे कि स्थानीय सत्ता अपने कर्त्तव्यों का पालन करने में असमर्थ रही है तो वह उसके सहायता अनुदान को रोक भी सकता था। इस अधिनियम के दो परिणाम हुए। इसने स्थानीय सरकार के विरुद्ध उद्योगों की सहायता की और इसने स्थानीय वित्तीय स्वतन्त्रता को कमजोर कर दिया। १९४८ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने केन्द्रीय सरकार की सहायता के नये आधार का आंकलन किया किन्तु इसने भी स्वास्थ्य मंत्री को यह शक्ति प्रदान की कि यदि स्थानीय सत्ता कार्य कुशलता का एक निश्चित स्तर प्राप्त न कर सके तो उसके सहायता अनुदान को रोक दिया जाये। मंत्री को अपना प्रतिवेदन संसद के सम्मुख रखना होता था और अनुदान में कमी केवल तभी की जा सकती थी जब कि कामन्स सभा एक प्रस्ताव द्वारा प्रतिवेदन को स्वीकार कर ले। इस अधिनियम ने केन्द्रीय सरकार को और अधिक सशक्त बना दिया। केन्द्रीय सरकार स्थानीय सत्ता को चाहे जैसे प्रभावित कर सकती थी तथा स्थानीय सत्ता की स्थिति केवल एक अनुचर की सी रह गई। सन् १९२९ के अधिनियम ने सरकारी अनुदान को समानता के आधार पर आंकलित करने का प्रथम बार गम्भीर रूप से प्रयास किया। पहले अनुदान स्थानीय सत्ता के कुल व्यय का एक प्रतिशत मात्र होती थी। इस व्यवस्था का एक स्पष्ट लाभ यह था कि यह सरल थी। इसके द्वारा प्रगतिशील सत्ता का पक्ष लिया जाता था क्योंकि वह जितना अधिक खर्च करती थी उतनी ही अधिक उसको सहायता प्राप्त हो जाती थी। एक निश्चित अनुपात में धन को एकत्रित करने का दायित्व स्वयं सत्ता पर छोड़ दिया जाता था। सत्ता अपने हित के कारण ही मितव्ययतापूर्ण व्यवहार करने का प्रयास करती थी। केन्द्रीय सरकार को सेवा की गहरी छानबीन नहीं करनी होती थी। कुछ सेवाओं में अब भी प्रतिशतपूर्ण अनुदान को व्यवस्था जारी है। यह व्यवस्था स्थानीय सत्ताओं की आवश्यकता का कम ध्यान रखती है तथा उसके साधनों को सहायता का आधार बना कर चलती है।

सहायता अनुदान स्थानीय सरकार के संचालनार्थ अत्यन्त आवश्यक तत्व माना जाता है। सिडनी वेब (Sidney Webb) के कथनानुसार चार कारणों से सहायता अनुदान अपरिहार्य बन जाता है। प्रथम भार की असमानताओं को समानता के स्तर पर लाने के लिए, दूसरे, राष्ट्रीय सरकार के आवश्यक पर्यवेक्षण एवं नियंत्रण के लिये। तीसरे, समाज के हित में अधिक वांछित व्यय को प्रोत्साहन देने के लिए और चौथे, संसद द्वारा प्रस्तावित राष्ट्रीय कम से कम स्तर को प्राप्त करने के लिए। सहायता अनुदान की व्यवस्था होने पर भी स्थानीय रेट्स से प्राप्त राजस्व स्थानीय सरकार के व्यय

के १/३ भाग से भी अधिक भाग की पूर्ति करता है। ऐसी स्थिति में स्थानीय सरकार केन्द्रीय सरकार का एक ऐजेन्ट मात्र बन कर नहीं रह जाती।

रेट व्यवस्था से प्राप्त राजस्व की अपर्याप्तता इस व्यवस्था की आलोचना का मुख्य भाग है। रेट्स को समाज के केवल एक वर्ग पर ही लगाया जाता हैं। केवल वास्तविक सम्पत्ति के अधिकार कर्त्ता ही इसे देने के लिए उत्तरदायी होते हैं। अन्य प्रत्यक्षकारों से भिन्न रेट्स करदाता के साधनों से सम्बन्ध नहीं रखती। एक बड़े परिवार वाला गरीब व्यक्ति जिसने की सदस्यों की अधिक संख्या के कारण बड़ा मकान लिया हुआ है उस धनवान व्यक्ति की अपेक्षा अधिक रेट्स देगा जो कि एक छोटे घर में रह रहा है। एक जैसे आकार के परिवारों में भी रेट्स का भार गरीबों पर ही अधिक पड़ता है क्योंकि वे ही अपनी आय का अधिकतर भाग रेट्स के रूप में प्रदान करते हैं। रेट्स का भुगतान प्राप्त किये जाने वाले लाभ से भी संबंध नहीं रखता। जो क्षेत्र कम सम्पन्न होते हैं वहां पर रेट्स का अनुपात अधिक होता है। ये क्षेत्र सम्पन्न निवासियों को अपनी ओर आकर्षित नहीं कर पाते। इस प्रकार गरीब क्षेत्र अपने भाग्य को परिवर्तित करने का अवसर ही नहीं रखते। गरीबी से गरीबी जन्म लेती है।

रेट्स व्यवस्था की आलोचनाओं में सर्वाधिक महत्वपूर्ण यह है कि मूल्यांकन में असमानता बरती जाती है। यदि एक ही जिले की एक जैसी सम्पत्तियों को अलग-अलग मात्राओं में मूल्यांकित किया जाये तो स्पष्ट है कि अन्याय किया गया है। इस अन्याय का एक स्पष्ट प्रमाण यह है कि कोषाध्यक्ष द्वारा मिलने वाले सहायता अनुदान की मात्रा का निश्चय एक सत्ता की रेट योग्य सामर्थ्य के आधार पर किया जाता है। जो सत्ता अधिक रेट लगा सकती है उसको सहायता भी अधिक प्राप्त हो जाती है और जिसका राजस्व पहले ही कम है वह सहायता भी कम ही प्राप्त करेगा। सन् १९४८ के अधिनियम ने रेट योग्य मूल्यों को आंकने के लिए कुछ तरीकों का वर्णन किया था किन्तु यह अधिक संतोषजनक न रहा। यह विषय अत्यन्त तकनीकी है अतः इस पर विचार करने के लिए एक अलग वादविवाद की आवश्यकता है जो गहन होने के साथ-साथ विस्तृत भी होगा। निवास स्थान पर लगाई गई रेट्स की कई एक समस्याएं होती है किन्तु ये समस्यायें अन्य प्रकार की सम्पत्ति पर विचार करते समय और भी अधिक हो जाती हैं। यह बहुत कठिन होता है कि किसी व्यक्ति को एक सड़क से क्या लाभ हो रहा है या एक नहर से वह क्या फायदा उठा रहा है इसका मूल्यांकन किया जा सके। ऐसे करते समय स्वेच्छा पूर्ण तरीके से ही काम करना होता है।

रेटिंग व्यवस्था के अतिरिक्त कुछ स्थानीय सत्तायें व्यवसायिक सेवाओं से भी राजस्व प्राप्त करती हैं। वैसे गैस, विद्युत एवं अन्य कुछ सेवाओं का राष्ट्रीयकरण हो जाने से स्थानीय सत्ता के राजस्व का यह स्रोत कुछ मद्धम पड़ गया है। वर्तमान समय में मुख्यतः इस समस्या पर विचार विमर्श किया जाता है कि इन सेवाओं की संख्या को बढ़ाया जाये अथवा नहीं। यदि इन सेवाओं के द्वारा राजस्व को बढ़ा कर रेट्स की मात्रा में कमी की जाती है तो इसका अर्थ होगा कि व्यवसायिक सेवाओं के लाभ का फायदा सभी

को प्राप्त हो सकेगा अथवा इन सेवाओं का उपयोग इस प्रकार भी किया जा सकता है कि केवल उपभोक्ता ही इनसे लाभान्वित हो सकें।

कभी-कभी यह सुझाया जाता है कि स्थानीय सरकार के राजस्व का उचित स्रोत स्थानीय आय-कर होगा। यह कर कई विचारकों द्वारा समर्थन का विषय बना है। इसका सबसे बड़ा लाभ यह है कि यह साधनों के साथ समायोजित हो जाता है। स्थानीय आयकर के प्रति की जाने वाली आपत्तियां भी स्पष्ट हैं। यह राष्ट्रीय वित्तीय नीति के साथ भी संघर्षपूर्ण सम्बन्ध रखती है। इसको एकत्रित करना मंहगा पड़ता है। जब राष्ट्रीय एवं स्थानीय आयकर को मिला दिया जाता है तो करदाता पर भार अधिक बढ़ जाता है। उसकी आय का एक बहुत बड़ा भाग कर के रूप में उससे ले लिया जाता है।

स्वास्थ्य मंत्रालय ने एक समिति का गठन किया जो स्थानीय राजस्व की समस्या पर विचार कर सके। इस समिति ने पर्याप्त विचार-विमर्श करने के बाद यह सुझाव दिया कि स्थान (Site) के मूल्य का भी कर लिया जाना चाहिए। इस सम्बंध में एक समस्या यह उठ खड़ी होती है कि स्थान कर को विकास के लिए करों के साथ किस प्रकार समायोजित किया जायेगा। स्थानीय सरकार के राजस्व के सभी स्रोतों पर विचार करने के बाद यह कहा जा सकता है कि इसमें उत्पन्न समस्याओं के बारे में कोई एक सुझाव प्रस्तुत नहीं किया जा सकता। जो भी सुझाव प्रस्तुत किया जायेगा वह नया दृष्टि-कोण अपनाये बिना अनुपयुक्त रहेगा। एक परम्परागत विचार के अनुसार [illegible]म से प्राप्त राजस्व स्थानीय सरकार को जायेगा और प्राय कर से प्राप्त प्रत्यक्ष करों से प्राप्त राजस्व केन्द्रीय सरकार को जायेगा। यह मान्यता तथ्य को भुला देती है कि सरकार का एवं उसके राजस्व का पारस्परिक [illegible]ंध लाभपूर्ण स्वामित्व का नहीं है वरन् यह एक प्रकार से राजस्व की सरक्षक (Trustee) होती है। नागरिक अपनी आय का एक भाग सामूहिक रूप से सरकार के प्रबन्ध के आधीन रखने को राजी हो जाते हैं। ऐसी स्थिति में इस बात के लिए कोई कारण नजर नहीं आता कि आयकर से प्राप्त आय को स्थानीय सत्ता को क्यों ये सौंपा जाये तथा रेट्स से प्राप्त आय को केन्द्रीय सरकार के प्रबन्ध के अधीन क्यों न रखा जाये। जब स्थानीय सत्तायें केन्द्रीय पूल के राजस्व पर निर्भर करती हैं तो स्थानीय पहल एवं रुचि घातक रूप से प्रभावित होता है। जो सेवायें अनिवार्य नहीं है मूल्य को तथा अनिवार्य सेवाओं में भी निश्चित दर से अधिक स्तर की प्राप्ति के मूल्य को स्थानीय सत्ताओं द्वारा प्रदान करना चाहिए। इस प्रकार स्थानीय जनता स्थानीय सेवाओं के प्रशासन में आवश्यक एवं प्रत्यक्ष रुचि लगी। आवश्यक अनुपूरक आय को प्राप्त करने के लिए रेट्स व्यवस्था का संशोधन किया जा सकता है। ऐसा संशोधन करते समय प्रदान करने की योग्या एवं प्राप्त लाभों के अनुपात को ध्यान में रखा जायेगा तथा इस प्रक्रिया से स्थानीय भार को वहन करने के प्रयास को न्यायपूर्ण भी माना जा सकेगा।

इस सुझाव की कई आधारों पर आलोचना की जाती है। कहा जाता है कि कुछ क्षेत्र अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा अधिक धनवान होते हैं तथा अधिक श्रेष्ठ सेवाओं के भार को भी वहन कर सकते हैं। यदि अन्य क्षेत्रों जैसी ही सेवाओं का वे संचालन करेंगे तो उन पर कम खर्च आयेग। दूसरी ओर अपेक्षाकृत निर्धन क्षेत्र सेवाओं का संचालन करते समय वित्तीय भार से दब जायेंगे। इस असमानता को दूर करने के लिए एक उपाय है कि सामाजिक सेवाओं से सम्बधित सभी चार्ज राष्ट्रीय कोष से लिए जायें; किन्तु यदि स्थानीय सत्ताओं से उनका वित्तीय उत्तरदायित्व छीन लिया जाय तो इसके कारण अन्य प्रकार का उत्तरदायित्व भी उन पर नहीं रह पायेगा। परिणामस्वरूप स्थानीय सरकार का भी लोप हो जायेगा। पूर्ण सामाजिक न्याय प्राप्त करने के लिए असमानता को पूरी तरह दूर करना होगा तथा स्थानीय पहल एवं स्वेच्छा पर भी समाप्त प्राय हो जायेगी। इस विरोधाभास को दूर करने का कोई तरीका नहीं है। कुछ विचारक यह मानते हैं कि यदि सामाजिक न्याय की प्राप्ति के लिए स्थानीय सरकार को भी बलिदान करना पड़े तो कोई हर्ज नहीं है। दूसरी ओर अन्य विचारक न्याय की अन्य परिभाषा देते हैं। उसके कथनानुसार व्यक्ति को अपने भाग्य का निर्धारण करने की शक्ति प्राप्त हो जाये, वह स्वयं ही अपनी विजय को प्राप्त कर सके तथा गलती करने के लिए भी वह स्वतंत्र हो तो उसे और किस न्याय की जरूरत पड़ेगी।

जिन स्थानीय सेवाओं की केन्द्रीय पुल द्वारा वित्तीय व्यवस्था की जाती है वे राष्ट्रीय महत्व की होती हैं। इनके संचालन में केन्द्रीय सरकार रुचि लेती है तथा इनकी सुव्यवस्था के लिए वह स्थानीय सरकार के कार्यों पर नजर रखती है। वह वित्तीय दबावों का प्रयोग कर सकती है अर्थात केन्द्रीय कोषाध्यक्ष को भुगतान करने से मना कर सकती है। फ्रैन्क जेसप का यह कहना सच है कि स्थानीय सरकार के वित्त की समस्या अत्यन्त महत्वपूर्ण बन गई है। रेट व्यवस्था वर्तमान आवश्यकताओं को देखते हुए अपर्याप्त है तथा कार्य रूप में अन्यायपूर्ण है। राज्य की सहायता पर बढ़ती हुई निर्भरता की प्रवृत्ति के साथ ही स्थानीय स्वायत्तता की बढ़ती हुई कटौती की प्रवृत्ति भी बढ़ती जा रही है।* कोष की शक्ति जब संसद के हाथों में आ गई तो वह राज्य के कार्यों पर नियंत्रण करने लगी। इस प्रकार जब केन्द्रीय सरकार आर्थिक शक्तियों को अपने हाथ में केन्द्रीयकृत कर लेगी तो यह स्वाभाविक है कि स्थानीय स्वायत्तता धीरे-धीरे कम होती चली जायेगी।

---

*"The problem of Local Government finance has become crucial. The rates system is inadequate to modern needs and inequitable in its incidence, the trend towards greater dependence upon state subventions is accompained by a trend towards the curtailment of local autonomy."

—Ibid, P. 64.

स्थानीय सरकार की बनावट

[The Structure of Local Government]

स्थानीय सरकार का पूरा-पूरा उपयोग करने से सम्बंधित कोई भी तर्क उस समय तक अधिक उपयोगी नहीं रहेगा जब तक कि वर्तमान आवश्यकताओं के अनुरूप स्थानीय सरकार की एक नई प्रभावशील व्यवस्था का प्रारम्भ किया जाये। स्थानीय सत्ता की इकाइयों की समस्या भी इस दृष्टि से अत्यन्त महत्व रखती है। स्थानीय सरकार की वर्तमान बनावट को बहुत कुछ असंतोषजनक माना जाता है। इसका विकास जिस अव्यवस्थित रूप में हुआ है उसमें ऐसा होना स्वाभाविक ही था। पेरिश तथा काउन्टीज दो ऐसी इकाइयां है जिनकी सीमायें थोड़ी ही परिवर्तित हुई है। इनका जन्म हजारों वर्ष पूर्व हुआ था। अपनी स्थापना के समय दोनों में से एक भी निकाय प्रतिनिधि स्थानीय सरकार के संचालन के लिए संगठित नहीं किया गया था। एक मुख्य रूप से धार्मिक इकाई थी जब कि अन्य न्यायिक एवं सैनिक। शहरी एवं देहाती जिले, १९वीं शताब्दी के अन्तिम दिनों की उपज हैं। इसका सम्बन्ध स्थानीय सरकार की आवश्यकताओं से था। सन् १८३० से निरन्तर स्थानीय सरकार के कार्यों में वृद्धि होती चली गई। संसद ने अपने व्यवस्थापन द्वारा जब भी स्थानीय सरकार के कार्यों को बढ़ाया तो उसका लक्ष्य केवल अच्छी सरकार की स्थापना ही नहीं था। इसी प्रकार सीमाओं का परिवर्तन करते समय जनसंख्या सम्बंधी परिवर्तनों को ध्यान में नहीं रखा गया। यही कारण है कि ब्रिटन (Brighton) तथा (Hove) जैसे कस्बे यद्यपि एक ही साथ एक बड़ी शहरी इकाई में विकसित हुए हैं, किन्तु ये स्थानीय सरकार की अलग अलग इकाइयां हैं।

स्थानीय सरकार की बनावट के सम्बन्ध में समय-समय विचार किया जाता रहा है तथा अनेक सुझाव प्रस्तुत किये जाते रहे हैं। प्रत्येक नये कार्यक्रम का सुझाव देने वाले लोग प्रायः उसी प्रकार की सत्ता को एक आदर्श रूप मानते थे जिससे कि उनका स्वयं का सम्बन्ध था। सबसे अच्छा तरीका तो यह है कि पहले उस कार्य पर विचार किया जाये जिसे कि किया जाना है। उसके बाद उसके तरीके पर जिसके आधार पर उसे किया जाना है और उसके बाद यह देखना चाहिए कि क्या प्रशासकीय सुविधा एवं सरलता की दृष्टि से सर्व श्रेष्ठ सैद्धान्तिक तरीके में तथा बुद्धिपूर्ण व्यवहारिक तरीके में किसी प्रकार का समझौता किया जाना चाहिए। दृष्टिकोण का यह तरीका विभिन्न स्थानीय सत्ता की परिषदों को सुझाया जा सकता है। सुधार की समस्या पर उनका दृष्टिकोण उनके विभिन्न अनुभवों एवं इतिहासों से प्रभावित होना स्वाभाविक है।

स्थानीय सत्तायें कार्य एवं आकार की दृष्टि से पर्याप्त भिन्नतायें रखती हैं। कुछ स्थानीय सत्तायें एक विशेष लक्ष्य के लिए संगठित की जाती हैं जब कि अन्य सत्तायें अनेक लक्ष्यों की साधना के लिए संगठित की जाती हैं। आकार की दृष्टि से भी विभिन्न काउन्टीज के बीच पर्याप्त असमानतायें वर्तमान रहती हैं। फिर भी सभी काउन्टीज को अधिनियम द्वारा एक जैसी शक्तियां प्रदान की जाती हैं तथा एक समान कर्त्तव्यों का दायित्व सौंपा जाता

है। काउन्टी वारोज के बारे में भी यह सच है। जब विभिन्न प्रकार की स्थानीय सत्ताओं के बीच कार्यों का वितरण किया जाता है तो यह सिद्धान्त अपनाया जाता है कि बस सभी आकार एवं साधनों की दृष्टि से एकरूप है। काउन्टी तथा काउन्टी वारोज का आकार बड़ा होता है अतः इसको मुख्य सेवाओं से सम्बन्ध रखना चाहिए। गैर-काउन्टी वारोज तथा शहरी एवं देहाती जिले छोटे होते हैं अतः इनको छोटी सेवाओं तक ही सीमित रखना चाहिए। यह सिद्धान्त तथ्यों के अनुरूप नहीं है।

सर्वोद्देशीय सत्ता [All Purpose Authority]—सर्वोद्देशीय सत्ता के पक्ष में अनेक तर्क दिये जा सकते हैं। इंगलैण्ड में केवल काउन्टी वारोज ही इस प्रकार की सत्ता के उदाहरण कहे जा सकते हैं। अतः काउन्टी वारोज के लाभ इस प्रकार की सत्ता के लाभ बन जाते हैं। ऐसा होना पूर्णतः उचित नहीं है वरन् कभी-कभी तो इससे भ्रम भी पैदा होने का भय रहता है। सर्वोद्देशीय सत्ता के लाभ ये बताये जाते हैं—इससे स्थानीय सरकार की सेवाओं में एकरूपता स्थापित हो जाती है। जब अनेक सत्ताएं होती हैं तो उनके कार्य-क्षेत्र के बीच संघर्ष भी उत्पन्न हो सकता है किन्तु सर्वोद्देशीय सत्ता में यह खतरा नहीं रहता। यह असम्बद्ध क्रियाओं के विरुद्ध स्थानीय सरकार की एकहरी मान्यता को प्रोत्साहन देता है। सर्वोद्देशीय स्थानीय सत्ता में साधारण नागरिक यह अच्छी तरह समझता है कि वह कहां है तथा उसकी क्या स्थिति है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि उसको अपने कार्यों की साधना के लिए केवल एक ही सत्ता की ओर देखना होता है। इससे वह भ्रम में पड़ने से भी बच जाता है। जब एक स्थानीय क्षेत्र में कई सत्तायें बनायी जाती हैं तो उनके निर्वाचनों में खड़े होने वाले उम्मीदवारों की संख्या बहुत कम रहती है। इनः सदस्यों का स्तर भी अधिक ऊंचा नहीं रहता। सर्वोद्देशीय सत्ता रहने पर जब एक ही स्थानीय सत्ता रहती है तो चुनाव की प्रक्रिया भी अत्यन्त सरल हो जाती है। इन लाभों में से कई तो ऐसे हैं जो कि व्यवहार में नहीं वरन् केवल सिद्धान्त में ही स्थित रहते हैं।

कई बार एक बड़ी सत्ता के कार्यों की जटिलता, [illegible] एवं [illegible] समितियों को सत्ता का हस्तांतरण अनिवार्य बना देती है तथा इससे इतना अधिक विभागीकरण स्थित हो जाता है कि एकरूप नीति को अपनाना कठिन हो जाता है। यदि वह अपनायी भी गई तो उसे लगातार [illegible] [illegible] रहना कठिन हो जायेगा। जब कभी बड़ी नीति के बारे में मतभेद [illegible] उपस्थित होते हैं तो सर्वोद्देशीय सत्ता में हितों के गम्भीर [illegible] को आसानी से मिटाया जा सकता है किन्तु जब कभी [illegible] [illegible] उपस्थित होती हैं तो वे प्रायः बड़ी नीति से सम्बन्धित प्रश्नों पर नहीं [illegible] छोटे एवं कम महत्व के विषयों पर उपस्थित होती हैं। इनको [illegible] देखा जा सकता तथा स्थानीय सरकार की शक्तियों को एक ही सत्ता के हाथों में केन्द्रित कर देने से भी इनको दूर नहीं किया जा सकता। [illegible] इस प्रकार के मतभेदों एवं विभिन्नताओं को स्थानीय सरकार के [illegible] सुधार करके दूर नहीं किया जा सकता। इसके लिए इन [illegible] के बीच बुद्धिपूर्ण सहयोग स्थापित करना होगा [illegible]

उत्पन्न होने की सम्भावना है। इनके बीच सहयोग स्वाभाविक रूप से स्थापित नहीं किया जा सकता क्योंकि ये अधिकारी विभिन्न सत्ताओं की सेवा में रहते हैं। यह भी कहा जाता है कि सर्वोद्देशीय सत्ता के आधीन साधारण नागरिक की स्थिति का सुधारना संदेहजनक है क्योंकि यहां अनेक सत्तायें तो नहीं होतीं किन्तु अनेक विभाग होते हैं और इन विभागों मे उसके भ्रमित हो जाने की सम्भावना पूरी तरह बनी रहती है।

सर्वोद्देशीय स्थानीय सत्ता के विरुद्ध एक मुख्य तर्क यह दिया जाता है कि स्थानीय सरकार द्वारा सम्पन्न की जाने वाली सेवायें अनेक प्रकार की होती हैं। उन सभी को एक ही सत्ता द्वारा क्रियान्वित किया जाना अनावश्यक ही नहीं हानिकारक भी है। ये सेवायें इतनी भिन्न-रूपी होती हैं कि एक क्षेत्र के लिए जो सेवायें उपयोगी तथा आवश्यक हैं वे दूसरे क्षेत्र के लिए अनावश्यक बन जाती हैं। कुछ सेवाओं को छोटे क्षेत्र या कम जनसंख्या वाले समूह द्वारा अच्छी प्रकार सम्पन्न किया जा सकता है जब कि अन्य के लिए व्यापक क्षेत्र एवं बड़ी जनसंख्या वाले समूह की आवश्यकता होती है। सर्वोद्देशीय सत्ता का यह अन्तर्निहित दोष काउन्टी बारोज पर लागू नहीं होता क्योंकि इसका क्षेत्र इतना छोटा होता है कि पारस्परिक सम्बन्ध को कायम किया जा सकता है किन्तु इसकी जनसंख्या पर्याप्त बड़ी होती है, इसलिए यह अधिकांश सेवाओं को सम्पन्न कर सकता है।

एडहाक सत्ता [Adhoc Authority]—सर्वोद्देशीय सत्ता की ठीक विरुद्ध प्रकृति वाली एडहॉक सत्ता होती है। यह सत्ता केवल एक ही विशेष उद्देश्य की साधना के लिए स्थापित की जाती है तथा उस लक्ष्य के अनुरूप ही इसको ढाला जाता है। बाहरी विचार-विमर्श द्वारा इसको बदलने की आवश्यकता नहीं रहती। इस प्रकार की इकाई को संगठित करने के लिए उस विशेष सेवा की आवश्यकताओं को ही ध्यान में रखा जाता है अन्य किसी बात को नहीं। जब इस प्रकार की सत्ता के लिए होने वाले निर्वाचनों में व्यक्ति उम्मीदवार बनते हैं तो वे इस सत्ता द्वारा सम्पन्न किये जाने वाले कार्यों में विशेष रुचि रखने के कारण तथा उससे सम्बन्धित ज्ञान रखने के कारण ही ऐसा करते हैं। दूसरी ओर सर्वोद्देशीय सत्ता के सदस्यों को सभी व्यवसायों का जानकार (Jacks of all trades) होना चाहिए। वर्तमान समय में शुद्ध रूप से एडहॉक सत्ता की रचना करना लोकप्रिय नहीं है।

एडहॉक सत्ताओं के आलोचकगण इनको विप्लवयुक्त एवं अकार्यकुशल स्थानीय सत्ता का प्रतीक बताते हैं। १९वीं शताब्दी के मध्यकाल में इन्हीं कारणों से इनका बहिष्कार किया गया था। यद्यपि उस समय की अकार्यकुशलता पूरी तरह से स्थानीय सरकार के दोषपूर्ण यन्त्र पर ही आधारित नहीं थी किन्तु फिर भी यह सच है कि एडहॉक सत्ताओं की व्यवस्था को संचालित किया जाना कठिन होता है। प्रत्येक कार्य के लिए अलग से स्थानीय सत्ता को स्थापना करना कठिन तथा उलझनपूर्ण रहेगा। अनुभव यह भी बताता है कि सभी स्थानीय सत्ताओं में रखे जाने के लिए उचित एवं योग्य स्वय सेवक भी नहीं मिल पायेंगे। निर्वाचन व्यवस्था इतनी जटिल हो जायेगी कि साधारण मतदाता एक प्रकार से भूलभुलैया में पड़ जाता है। यह

सच है कि सभी चुनावों को एक ही साथ कराया जा सकेगा किन्तु इस व्यवस्था में जो कठिनाइयां उत्पन्न होंगी उनके कारण इसे अपनाने का साहस कोई भी नहीं कर पाता।

सर्वोद्देशीय सत्ता एवं एडहॉक सत्ता दोनों ही अतिशय के दो किनारे हैं। दोनों ही किनारे के अपने दोष हैं। वर्तमान व्यवस्था को कोई भी संतोषजनक नहीं बताता किन्तु इसे सुधारा किस प्रकार जाये, इस सम्बन्ध में कई सुझाव समय-समय पर रखे जाते रहे हैं। सन् १६४५ का श्वेत-पत्र, सीमा आयोग का प्रतिवेदन आदि को अधिकारी पक्ष के सुझाव कह सकते हैं। राजनैतिक दलों या स्थानीय सरकार से सम्बन्धित संस्थाओं द्वारा भी समय-समय पर ये प्रस्ताव रखे गये हैं। गैर-अधिकारी प्रस्तावों में से जो प्रकाशित हो चुके हैं वे नगर निगमों की संस्थाओं, मजदूर-दल तथा स्थानीय सरकार के अधिकारियों की राष्ट्रीय संस्था द्वारा रखे गये हैं।

नगर निगमों के संघों का एक शक्तिशाली वर्ग यह चाहता है कि स्थानीय सरकार को सर्वोद्देशीय सत्ताओं के आधार पर संगठित किया जाना चाहिए। इसका क्षेत्र आवश्यक रूप से बड़ा होगा क्योंकि कुछ लक्ष्यों की साधना के लिए सत्ता का क्षेत्र बड़ा होना जरूरी हो जाता है। सर्वोद्देशीय सत्ता का कम से कम आकार पहले ही निर्धारित कर दिया जाता है। मजदूर दल की योजना द्वि-सूत्री योजना थी। इसमें प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित क्षेत्रीय एवं क्षेत्र परिषदें (Regional and Area Councils) रखी गईं। यह योजना शहरों में स्थानीय सरकार के वर्तमान संगठन से पूर्णतः भिन्न थी क्योंकि इस समय कार्यों को काउन्टी परिषद तथा बारो या शहरी जिला परिषदों द्वारा सम्पन्न किया जाता है।

इस सम्बन्ध में सन् १६४५ में प्रकाशित श्वेत-पत्र ने अपने सुझाव प्रस्तुत किये। इसमें कहा गया था कि कम से कम वर्तमान में बनावट के रूप को परिवर्तित करना अनावश्यक है तथा अवांछित भी। विश्व-युद्ध के बाद जो पुनर्निर्माण के कार्य आवश्यक थे उनको सम्पन्न करने के लिए स्थानीय सरकार में किये गये क्रान्तिकारी सुधार एक बाधा सिद्ध होंगे। श्वेत-पत्र में यह स्वीकार किया गया कि कुछ सेवाओं के संचालन के लिए काउन्टी या काउन्टी बारो से भी बड़े क्षेत्रों की आवश्यकता होती है। श्वेत-पत्र ने सुझाया कि इन सेवाओं पर विचार करने के लिए संयुक्त मण्डल या संयुक्त समितियां गठित की जानी चाहिए। इसके लिए पर्याप्त परम्परायें भी विद्यमान हैं। यह माना गया कि कई एक सत्तायें अपने कार्यों को सम्पन्न करने में अत्यन्त छोटी हैं। अतः स्थानीय सरकार की वर्तमान सीमाओं को बदला जाना चाहिए।

सीमा परिवर्तन का कार्य अत्यन्त धीमी गति से न हो इसलिए यह उपयोगी रहेगा कि एक स्थायी सीमा आयोग स्थापित कर दिया जाये। इसे किसी भी स्थानीय सत्ता के स्तर एवं सीमाओं में परिवर्तन करने का अधिकार हो तथा कुछ मामलों में यह संसद की स्वीकृति प्राप्त करले। संसद द्वारा इन सिद्धान्तों को स्वीकार कर लिया गया तथा सन् १६४५ के स्थानीय सरकार

अधिनियम में इनको अभिव्यक्ति प्रदान की गई। अधिनियम ने एक आयोग की रचना की जिसमें कि पांच सदस्य होते हैं। इस आयोग को स्थानीय सत्ताओं की सीमायें एवं स्तर बदलने की शक्ति दी गई ताकि स्थानीय सरकार की सभी सत्ताओं को व्यक्तिगत रूप से एवं सामूहिक रूप से प्रभावशील तथा सुविधाजनक बनाया जा सके। आयोग किसी भी स्थानीय सत्ता पर पृथक अकेले रूप में विचार नहीं करता था वरन् यह भी देखता था कि यदि इसकी सीमाओं में परिवर्तन किया गया तो उसका अन्य सत्ताओं पर क्या प्रभाव पड़ेगा। इन सत्ताओं की समस्यायें प्रायः परस्पर सम्बद्ध होती हैं तथा एक की क्रियाओं का प्रभाव दूसरे पर अवश्य पड़ता है। काउन्टीज तथा काउन्टी वारोज से सम्बन्धित आदेशों को संसद के सामने रखना होता था किन्तु अन्य सी मामलों में आयोग का निर्णय अन्तिम रहता था। लन्दन क्षेत्र को आयोग की दृष्टि से अलग रखा गया क्योंकि यह कई एक विशेष समस्यायें प्रस्तुत करता है तथा इस पर अलग से विचार किया जाना जरूरी हो जाता है।

सीमा आयोग (Boundary Commission) ने अपना प्रथम प्रतिवेदन अप्रेल १९४७ में प्रसारित किया। इसमें बनावट सम्बन्धी सुधारों पर कुछ रोचक आलोचनायें की गई थी। काउन्टी वारोज की समस्याओं पर विशेष ध्यान दिया गया। काउन्टी वारोज की सीमाओं में परिवर्तन करने के लिए जो सामान्य सुझाव दिये गये थे उनको तीन शीर्षकों में विभाजित किया जा सकता है। प्रथम, अतीत की नीति के अनुरूप काउन्टी वारोज में सीमित रूप से प्रसार कर दिया जाये। दूसरे, काउन्टी के कुछ भागों में काउन्टी वारोज का ठोस खण्ड बना कर काउन्टी वारोज का अधिक प्रसार कर दिया जाये। तीसरे, नये काउन्टी क्षेत्रों की रचना जिसमें कि सभी वर्तमान काउन्टी वारोज अपना काउन्टी वारो का स्तर छोड़ देंगे

इन सुझावों में से दूसरे नम्बर का सुझाव एक वर्ग के दृष्टिकोण के अनुरूप था। नगरनिगमों का संघ इसी रूप में सोच रहा था तथा तीसरा सुझाव कुछ-कुछ मजदूर दल के अनुरूप था। आयोग का दूसरा प्रतिवेदन अप्रेल, १९४८ में प्रकाशित हुआ था। इसने श्वेत-पत्र की इस मूल धारणा की ही आलोचना की कि वर्तमान काल स्थानीय सरकार की रचना में सुधार करने का काल नहीं है। इस प्रतिवेदन में कहा गया कि आयोग ने दो वर्ष के अपने जीवन काल में एक भी ऐसा आदेश प्रसारित नहीं किया जो कि स्थानीय सरकार की वर्तमान सीमाओं में कुछ परिवर्तन करता हो। ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि सीमाओं एवं कार्यों के बारे में अलग-अलग विचार करना मूर्खतापूर्ण है। सीमा आयोग का कार्य क्षेत्र केवल सीमाओं तक ही मर्यादित था वह कार्यों के सम्बन्ध में विचार नहीं कर सकता था। अतः व्यवस्थापिका से इस आयोग का अधिकार क्षेत्र बढ़ाने के लिए कहा गया।

आयोग के द्वितीय प्रतिवेदन ने स्थानीय सरकार की कमजोरियों का विश्लेषण किया। आयोग की मुख्य-मुख्य सिफारिशें निम्न प्रकार थी।

१. स्थानीय सरकार की इकाइयां तीन प्रकार की होनी चाहिए- काउन्टीज, काउन्टी वारोज तथा काउन्टी जिले (सभी गैर-काउन्टी वारोज, शहरी जिले एवं देहाती जिले) इसी श्रेणी में आजाते हैं।

२. इंगलैण्ड तथा वेल्स को नयी काउन्टीज में विभाजित कर दिया जाना चाहिये। उनमें से अधिकांश को दो सूत्रीय व्यवस्था के अनुसार प्रशासित करना चाहिए किन्तु कुछ एक सूत्र की सत्तायें भी हो सकती हैं।

३. काउन्टी बारोज (सामान्यत: ६०,००० से २००,००० तक की जनसंख्या वाले को अधिकांश उद्देशीय सत्तायें होना चाहिए। इनको काउन्टी प्रशासन का ही एक भाग होना चाहिए जब कि ये कुछ विशेष सेवाओं का संचालन करें। उदाहरण के लिए पुलिस या अग्निरक्षा सेवायें, शहर नियोजन आदि। इसके अतिरिक्त पशुओं की बीमारी, स्वीकृत स्कूल आदि मामलों में, जिनमें से कोई भी शहर की सरकार के लिए महत्व नहीं रखता, फिर भी उसे काउन्टी के एक भाग के रूप में ही कार्य करना चाहिए।

यद्यपि इस आयोग ने यथासम्भव एक राय स्थापित करने का प्रयास किया तथा इसकी कुछ सिफारिशों में समझौते की लगन भी प्राप्त होती है किन्तु प्रतिवेदन को वादविवाद के लिए प्रोत्साहन देना ही था। उदाहरण के लिए काउन्टी परिषदों को प्रस्तावित अधिकांश उद्देशीय काउन्टी बारोज में तथा बहुउद्देशीय काउन्टी बारोज में कोई अन्तर नजर नहीं आया।

सीमा आयोग ने सन् १९४७ के अपने प्रतिवेदन में यह बताया कि जो बात एक काउन्टी या काउन्टी बारो के लिए सच है वह आवश्यक रूप से अन्य के लिए सच नहीं होगी। अतः जब स्थानीय परिस्थितियां इस बात की मांग करें तो उनको अपने मूल सिद्धान्तों को छोड़ देना चाहिए। आयोग ने यह भी सुझाया था कि कम साधन स्रोतों वाले कुछ काउन्टी जिलों को अपने कुछ कार्य काउन्टी को सौंप देने चाहिएं जबकि शक्तिशाली काउन्टी जिलों को कुछ शक्तियां काउन्टी से हस्तांतरण के रूप में प्राप्त करनी चाहिए।

इस प्रकार आयोग ने यह माना कि कार्यों पर स्थानीय सरकार की बनावट के एक अविभाज्य भाग के रूप में विचार करना चाहिए। दूसरे, एक ही श्रेणी में आने वाली सभी सत्तायें आवश्यक रूप से एक जैसी शक्तियों का उपभोग नहीं करेंगी। इतने पर भी लगता था कि आयोग के दृष्टिकोण उसके पुराने अधिकार क्षेत्र के रंग में रंगे हुए थे। यदि आयोग सीमा एवं स्तर (Status) की अपेक्षा कार्यों से ही विचार करना प्रारम्भ करता तो उसकी सिफारिशों का रूप ही दूसरा होता।

लन्दन अपने आप में एक भिन्न ही समस्या है। लन्दन के एक स्वतन्त्र नगर के रूप में रहने से समस्यायें और भी उत्पन्न हो जाती है। लन्दन काउन्टी परिषद तथा राजधानी बारो परिषदों के बीच शक्तियों के उचित वितरण की समस्या तथा उनके बीच उचित सम्बन्ध की समस्यायें अत्यन्त गम्भीर हैं। लदन महान की भी अनेक समस्यायें हैं क्योंकि इसमें इकाइयां शामिल हैं। इतने निवासियों के लिए स्थानीय सरकार पद का प्रयोग करना शब्द का गलत प्रयोग है किन्तु कुछ सामाजिक सेवाओं के नियोजन के लिए लन्दन महान (Great London) को स्थानीय इकाई माना जाता है। एक सम्भव सरकारी रचना मुख्य रूप से लन्दन महान के लिए एक क्षेत्रीय सत्ता (Regional Authority) होगी। समस्त क्षेत्र (Region) को चार या पांच क्षेत्रों में बांट दिया जायेगा जो कि एक प्रकार से काउन्टीज के अनुरूप होंगे। काउन्टीज

को आगे भी बारोज में उपविभाजित कर दिया जायेगा और अन्त में बारोज को भी वार्डों में बांट दिया जायेगा। ये वार्ड केवल चुनाव की दृष्टि से ही नहीं वरन् स्थानीय सरकार की इकाइयों के रूप में भी महत्वपूर्ण होंगे। क्षेत्रीय स्तर (Regional level) की लन्दन सरकार केन्द्रीय सरकार पर अपरिहार्य रूप से प्रभाव रखती है। यह राष्ट्रीय दृष्टि से भी उतनी ही महत्वपूर्ण है जितनी कि स्थानीय दृष्टि से।

इस सम्बन्ध में मूल बात यह है कि जब भी कभी स्थानीय सरकार की इकाइयों पर विचार किया जाये, इन पर व्यावहारिक रूप से विचार किया जाना प्रारम्भ किया जाना चाहिए न कि पूर्व अनुभव की मान्यताओं या धारणाओं से।

स्थानीय सरकार में राजनीति
[Politics in Local Government]

स्थानीय सरकार की प्रकृति राष्ट्रीय एवं राज्य सरकार की प्रकृति से पूरी तरह भिन्न होती है। यहां हम उन सिद्धान्तों एवं व्यवहारों को अपना भी सकते हैं और नहीं भी अपना सकते जो कि राष्ट्रीय राजनीति के अविभाज्य अंग माने जाते हैं। इस प्रकार के प्रश्नों पर विचारकों में पर्याप्त मत-भेद है। दलीय राजनीति का स्थानीय सरकार में महत्व है अथवा नहीं है, इसे यहां आकर सक्रिय रूप से योगदान करना चाहिए अथवा नहीं, यह भी एक उलझा हुआ प्रश्न है। इसके पक्ष एवं विपक्ष में कई प्रकार के तर्क समय-समय पर प्रदान किये जाते रहे हैं। एक दृष्टिकोण के अनुसार स्थानीय सरकार विना राजनीति के भी बहुत अच्छी प्रकार कार्य करती रही है अतः राजनीति को इसमें प्रविष्ट करके क्यों नई-नई समस्यायें उत्पन्न की जायें। इसके अतिरिक्त स्थानीय सरकार द्वारा जो अनेक सेवायें प्रदान की जाती हैं उन सेवाओं को दलीय आधार पर सम्पन्न करना कठिन बन जायेगा। स्थानीय सरकार वास्तविक समस्याओं के लिए व्यावहारिक सुझाव ढूंढती रहती है। दलीय राजनीति इन प्रश्नों को सुलझाने की अपेक्षा अधिक जटिल बना देगी। एक दूसरे दृष्टिकोण के अनुसार जिन प्रश्नों पर स्थानीय सरकार द्वारा विचार किया जाता है वे प्रश्न ऐसे होते हैं जिन पर कि राजनैतिक दलों का दृष्टिकोण अलग-अलग होता है। यह अत्यन्त बेईमानीपूर्ण माना जायेगा कि इस तथ्य को छिपाया जाये। स्थानीय परिषदों में राजनीति का प्रवेश नहीं है यह कहने का अर्थ केवल यह होता है कि इसकी राजनीति रूढ़िवादी होती है। इसके अतिरिक्त जब राजनीति का स्थानीय क्षेत्र में प्रवेश हो जाता है तो स्थानीय सरकार के कार्यों में जनता की रूचि आवश्यक रूप से बढ़ जाती है।

कई एक विचारक यह मानते हैं कि इन दोनों ही दृष्टिकोणों में से बाद वाला सत्य के अधिकतम निकट है। राजनीति को स्थानीय सरकार के क्षेत्र में अवश्य आना चाहिए। इन विचारकों के मतानुसार यह पूछना गलत है कि राजनीति का स्थानीय राजनीति में प्रवेश है अथवा नहीं किन्तु पूछना इस तरह चाहिए कि दलीय राजनीति का स्थानीय सरकार में क्या कार्य है। ग्रेट ब्रिटेन की स्थानीय सरकार में भारत से भिन्न वहां के राजनैतिक दल खुलकर भाग लेते हैं। दलों के स्थानीय संगठन भी हैं। इन संगठनों द्वारा दलीय अनु-

शासन के अधीन रहकर एक छोटे स्तर पर वे सभी कार्य किये जाते हैं जो कि बड़े स्तर पर राष्ट्रीय दल द्वारा किये जाते रहे हैं। स्थानीय सरकार से सम्बन्धित विभिन्न प्रश्नों के बारे में वामपक्षी एवं दक्षिणपक्षी दलों के बीच पर्याप्त अन्तर है। इन दोनों के बीच जो भौतिक अन्तर है उनको दलों की घोषित नीतियों में स्पष्ट नहीं किया जाता क्योंकि वे समय-समय पर बदलती रहती हैं। यह कहा जाता है कि 'नीति' दिये हुए तथ्यों एव दी हुई परिस्थितियों में व्यवहृत राजनैतिक दर्शन की अभिव्यक्ति है। परिस्थितियां एवं तथ्य बदलते हैं अतः इसका भी परिवर्तनशील होना स्वाभाविक है। मजदूर दल भी ऐसी नीतियां अपना सकता है जो कि रूढ़िवादी दल की विशेषता है। इसी प्रकार रूढ़िवादी दल भी उदार नीतियाँ अपनाने को मजबूर हो सकता है यद्यपि विचारधारायें तो अपने नाम के अनुसार चलती है किन्तु नीतियां वर्तमान वास्तविकताओं को भी ध्यान में रखती हैं।

वामपंथी एवं दक्षिणपंथी विचारकों के बीच कुछ स्थायी अन्तर भी वर्तमान हैं। ये अन्तर लक्ष्य की दृष्टि से नहीं है क्योंकि दोनों ही पक्ष प्रायः एक जैसे लक्ष्यों की साधना के लिए प्रयत्नशील रहते हैं। इन दोनों के बीच मूल अन्तर विचार करने की आदतों का है। वामपंथी लोग प्रायः निगमन (Deductive) रूप में सोचते हैं तथा सामान्य सिद्धान्त बनाने की धुन में रहते हैं जबकि दक्षिणपंथी विचारक सामान्य सिद्धान्त नहीं बनाना चाहते वरन् उनके हाथ में जो मूर्त समस्या है उसके लिए वे उपयुक्त सुझाव या समाधान ढूंढने की फिराक में रहते हैं। प्रथम तरीका तीव्र गतिपूर्ण है जबकि दूसरे की गति मन्द है। कई बार तो यह अत्यन्त मन्द पड़ जाती है। यह अनुभव एवं परम्पराओं पर आधारित रहता है। प्रथम तरीका व्यवस्थापिकाओं के माध्यम से तथा दूसरा सामान्य न्यायालयों के माध्यम से कार्य करता है। यह तय कर पाना कठिन है कि इन दोनों ही संस्थाओं में से किसने इंगलैण्ड के लोगों के जीवन के तरीकों को अधिक प्रभावित किया है। वैसे सरकार में इन दोनों ही तरीकों की आवश्यकता रहती है। प्रत्येक के अपने कुछ लाभ हैं और प्रत्येक की अपनी कुछ परेशानियां। असल में ये दोनों ही एक दूसरे के पूरक हैं। दोनों की तुलना दो प्रकार के यात्रियों से की जा सकती है। वामपंथी यात्री अपनी यात्रा के लक्ष्य को निर्धारित कर लेता है और तब उसे प्राप्त करने के लिए वह किसी भी साधन को अपनाने में पीछे नही रहता किन्तु दक्षिणपंथी यात्री मंजिल की अपेक्षा उसे प्राप्त करने के साधनों पर अधिक जोर देता है। वह रास्ते में पड़ने वाले रोड़े को हटाने में अपना ध्यान लगाता है। वैसे दोनों का लक्ष्य एक ही है यद्यपि वे दोनों प्रायः इस बात को स्वीकार करने में आगे–पीछे देखते हैं। यात्रा के दौरान भी वे लगातार यह तर्क करते रहते हैं कि किस मार्ग से जल्दी पहुँचा जा सकेगा। एक यात्री 'सरकार' का पद प्राप्त कर लेता है और दूसरा 'विरोधी' का।

परम्परागत रूप से सरकार के कार्य को तीन भागों में विभाजित किया जाता है—व्यवस्थापिका, कार्य पालिका एवं न्यायपालिका। यहाँ कार्य पालिका से हमारा अर्थ प्रशासकीय कार्यों से है। व्यवस्थापिका द्वारा निगमन तरीके को अपनाया जाता है जबकि न्यायपालिका आगमन तरीके से काम

लेती है। यह बात ध्यान में रखने योग्य है कि राजनैतिक दलों को व्यवस्थापन की रूप रचना में मुख्य भाग लेने की छूट दे दी जाती है किन्तु इस सम्बन्ध में सामान्य समझौता रहता है कि वे न्यायपालिका के क्षेत्र से बाहर ही रहेंगे। इस प्रकार सैद्धान्तिक रूप से प्रशासन का एक भाग राजनैतिक दलों के लिए खुला हुआ है किन्तु दूसरा भाग ऐसा नहीं है। अनुभव द्वारा इस सैद्धान्तिक निष्कर्ष का समर्थन किया जाता है। स्थानीय सरकार का मुख्य सम्बन्ध प्रशासन से रहता है। यह विशेष स्थितियों पर प्रदत्त सामान्य सिद्धान्तों को लागू करती है। ऐसी स्थिति में केन्द्रीय एवं स्थानीय दोनों ही स्तरों पर राजनैतिक दलों को एक जैसा स्थान प्रदान करना गलत होगा। स्थानीय सरकार मूर्त समस्याओं के लिए प्रायः ऐसा समाधान तलाश करती है जो कि सामान्य ज्ञान (Common Sense) पर आधारित हो। अलग-अलग दलों के विचारक भी जब सामान्य बुद्धि से सोचने लगते हैं तो उनके निष्कर्ष बहुत कुछ एक जैसे ही रहते हैं। स्थानीय स्वामिभक्ति दलीय बन्धनों को भी काट देती है। सभी दलों के सदस्य सामान्य हितों को प्रोत्साहन देने के लिए एक हो जाते हैं।

स्थानीय एवं केन्द्रीय सरकार के बीच केवल कार्यों की प्रकृति का ही भेद नहीं है वरन संसद एवं स्थानीय सत्ता के यंत्र की बनावट भी पर्याप्त अन्तर रखती है। मेयर अथवा परिषद का सभापति प्रधानमंत्री जैसी ही स्थिति में होता है। समिति के सभापति क्राउन के मंत्री से समानता रखते हैं। अन्तर यह है कि मंत्री अपने विभाग के निर्णयों एवं कार्यों के लिए स्वयं ही उत्तरदायी होता है जबकि स्थानीय सरकार में यह उत्तरदायित्व समिति के कन्धों पर होता है। स्थानीय सरकार में केबिनेट जैसी कोई चीज नहीं होती। बड़ी स्थानीय सत्ताओं में से कुछ में समन्वयकारी समिति (Coordinating Committee) की रचना की जाती है। वैसे केबिनेट जैसे किसी निकाय का स्थानीय सरकार में कोई कार्य नहीं रहता। केबिनेट का कार्य है व्यवस्थापन को निर्देशन देना तथा नीति से सम्बंधित विषयों में मार्ग दर्शन करना। यह विभागों के चालू प्रशासकीय कार्यों से कम सम्बंध रखती है, किन्तु स्थानीय सत्ता का मुख्य सम्बंध प्रशासन से रहता है। वह व्यवस्थापिका एवं अर्ध-व्यवस्थापन की क्रियाओं को सुलझाने से सम्बंध नहीं रखती।

स्थानीय सरकार में विरोधी दल एवं सत्ताधारी दल के भेदों की भी आवश्यकता नहीं रहती। स्थानीय स्तर पर ऐसी कोई परम्परा नहीं है कि यदि स्थानीय सत्ता की समिति द्वारा रखा गया कोई प्रस्ताव परिषद में पास न हो सके तो उसे त्यागपत्र दे देना चाहिए। इसी प्रकार संसद को भंग करने तथा मतदाताओं की राय जानने जैसी प्रक्रियायें भी यहां नहीं है। कठोर दलीय अनुशासन संसदीय सरकार का आवश्यक भाग होता है किन्तु यह स्थानीय सत्ता के कार्यों में कोई भाग नहीं रखता। स्थानीय स्तर पर सदस्यों को पूर्ण स्वतन्त्रता प्रदान की जाती है केवल यही बन्धन होता है कि वे सरकारी यंत्र के संचालन के लिए खतरा न बन जायें।

स्थानीय स्तर पर यदि कहीं सरकार एवं विरोधी दल जैसा वर्गीकरण भी कर दिया जाये तो वहां उनका कार्य संचालन बड़े रोचक ढंग से किया जाता है परिषद की बैठक होने के पहले ही प्रत्येक दल व्यक्तिगत रूप से अपनी

बैठक करता है तथा उसमें यह निर्णय लेता है कि परिषद में विचारार्थ रखे जाने वाले विषयों पर दल को क्या नीति अपनानी चाहिए। दल का सदस्य इस निर्णय को स्वीकार करता है। परिषद के सदस्यगण वैसे भी व्यक्तिगत बैठकें करते रहते हैं जहां कि वे परिषद के कार्यों के बारे में विचार-विमर्श करते हैं। इस व्यवस्था के अपने कुछ वास्तविक या सम्भावित दोष भी हैं। व्यक्तिगत रूप से पहले ही निर्णय ले लिया जाता है और दूसरे पक्ष के अभाव में परिषद के वाद-विवाद भी मात्र औपचारिकता रह जाते हैं। सदस्य पहले ही अपना एक निश्चित दृष्टिकोण बना कर परिषद में आते हैं। वे अपने विरोधी पक्ष की बातों को सुनने में कोई रुचि नहीं लेते। आवश्यक सूचना प्रदान करने के लिए अधिकारीगण भी उपस्थित नहीं रहते। यह तरीका रूप की दृष्टि से भी कभी-कभी अप्रजातंत्रात्मक मान लिया जाता है क्योंकि बहुमत वाला दल भी परिषद की कुल संख्या में अल्पमत ही होता है और उसकी राय का क्रियान्वयन प्रजातंत्रात्मक नहीं कहा जा सकता। बहुमत की राय क्षेत्र की जनता के बहुमत की राय नहीं होती। स्थानीय सरकार में दलीय राजनीति के आ जाने से जो अनेक दोष पैदा हो जाते हैं वे इसके स्वाभाविक दोष नहीं है वरन् उसके दुरुपयोग के दोष हैं।

दलीय राजनीति द्वारा उचित योगदान किया जा सकता है। अपने श्रेष्ठ रूप में दल मूल्यवान होते हैं तथा वे जनता के राजनैतिक प्रशिक्षण के लिए महत्वपूर्ण कार्य करते हैं। जो भी साधन जनता को स्थानीय सरकार में उसके कर्तव्यों एवं अधिकारों से परिचित करायें उनको प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। अनुभव के आधार पर यह कहा जा सकता है कि राजनैतिक दल प्राय: स्थानीय रुचि को प्रोत्साहित करने में महत्वपूर्ण रूप से भाग लेते हैं। वे धीरे-धीरे मतदाताओं की संख्या बढ़ाते हैं। फ्रेन्क जेसप (Frank Jessup) के शब्दों में यह कहा जा सकता है कि दलीय राजनीति संसदीय कार्यों की अपेक्षा स्थानीय सरकार में अधिक सुधरे हुए रूप में भाग लेती है। बिना दल व्यवस्था के संसद कार्य नहीं कर सकती किन्तु स्थानीय सरकार कर सकती है।* स्थानीय सरकार में दलीय राजनीति का योगदान संतुलित रूप में होना चाहिए। जब दलीय राजनीति पर बहुत जोर दिया जाता है तो ऐसा लगता है कि मानों दल ही प्रधान हो गया तथा उसी के भाग्य की रचना स्थानीय राजनीति का लक्ष्य बन गया और अच्छी सरकार का ध्येय गौण बन गया। इसी प्रकार यदि राजनैतिक दलों को कोई भी स्थान प्रदान करने से मना कर दिया जाये तो यह एक प्रकार से तथ्यों को अस्वीकार करना समझा जायेगा। राजनैतिक दलों से स्थानीय स्तर पर जो कार्य करने की आशा की जाती है उनको संक्षेप में परिभाषित नहीं किया जा सकता।

---

* "Party politics, therefore, have a more modest part to play in local government than in the affairs of parliament. Without the party system Parliament could not work; Local Government can."

—Ibid, P. 98

स्थानीय सरकार के अधिकारी एवं सदस्य
[Officials and Members of Local Government]

स्थानीय सरकार को जो विभिन्न उत्तरदायित्व सौंपे गये हैं तथा इससे जो आशायें की जाती हैं उनको उस समय तक पूरा नहीं किया जा सकता जब तक कि इनको संचालित करने वाले लोग उचित आदर्शों से प्रेरित न हों तथा आवश्यक तकनीकी योग्यता न रखते हों। केवल यही पर्याप्त नहीं होता कि योग्य एवं अच्छे सदस्यों को निर्वाचित कर लिया जाये अथवा अधिकारियों की नियुक्ति कर दी जाये। उनके कार्य क्षेत्रों को भी स्पष्ट रूप में परिसिमित कर दिया जाना चाहिए ताकि अतिराव एवं गलत निर्देशन को रोका जा सके। परम्परागत रूप से निर्वाचित सदस्यों का यह कार्य होता है कि वे नीतियां निश्चित करें जब कि वैतनिक अधिकारी इन नीतियों को क्रियान्वित करने का कार्य करेंगे। ये अधिकारी छोटे मोटे नीति सम्बन्धी प्रश्नों को भी तय कर सकते थे। अधिकारी एवं सदस्यों के कार्यों का यह आसान वर्गीकरण आज के तथ्यों को देखते हुए सही नहीं प्रतीत होता।

वर्तमान प्रवृत्तियों की आलोचना करते हुए कई बार यह कहा जाता है कि सदस्यों के निर्णय लेने की शक्ति को कम महत्व के प्रश्नों पर ही सीमित कर दिया गया है। उदाहरण के लिए कार्य के घंटे तय करना आदि किन्तु नीति से संबधित महत्वपूर्ण प्रश्नों को अधिकारियों के हाथों में छोड़ दिया गया है केवल वे ही उनको तय करने का विशेषज्ञतापूर्ण ज्ञान रखते हैं। यह दृष्टिकोण सही दिखते हुए भी गलत है। इसका मत्र आधार यह है कि इसे अपनाते समय नीति की पहल (initiation) तथा निर्णय (decision) के बीच भेद नहीं किया गया है। यह सच है कि स्थानीय सरकार द्वारा संचालित सामाजिक सेवाओं का प्रसार ज्यों-ज्यों बढ़ता जा रहा है त्यों-त्यों विशेषज्ञतापूर्ण ज्ञान की आवश्यकता भी बढ़ती जा रही है। जिन कार्यों के बारे में गैर विशेषज्ञ लोग भी अपना मत आसानी से प्रकट कर सकते हैं उनके सम्बन्ध में भी नीति की पहल प्राय: स्थानीय सरकार के अधिकारी वर्ग द्वारा ही की जाती है। उदाहरण के लिए शहर नियोजन का कार्य नियोजन के के तकनीशियनों का कार्य होना चाहिए। यह हो सकता है कि 'योजना बनाई जानी चाहिए,' यह विचार उनके द्वारा प्रतिपादित न किया गया हो। वर्तमान काल में यह प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है कि अधिक महत्व के विषयों पर विचारों की पहल गैर-विशेषज्ञ द्वारा कम से कम की जाय तथा किसी अधिकारी या सरकारी विभाग द्वारा अधिक से अधिक की जाये। विचार चाहे किसी के द्वारा प्रारम्भ किया गया हो किन्तु एक प्रशासकीय प्रस्ताव के रूप में उसके विकास का कार्य अधिकारी द्वारा ही किया जायेगा। इस स्तर पर यह नीति की रचना नहीं कहा जायेगा वरन् यह एक प्रशासकीय प्रस्ताव मात्र ही कहा जायेगा।

निर्वाचित सदस्यों के अनेक कार्य होते हैं। उनका एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य यह है कि प्रस्तावों को नीति के रूप में परिवर्तित किया जाये। प्रस्तावों की स्वीकृति संशोधन एवं अस्वीकृति जो भी सदस्यों के सामने रखी जाती है वह उनकी इच्छा पर निर्भर है कि उसे माने या न माने। इसका

निर्णय वे स्वयं ही करेंगे। प्रस्तावों में क्या महत्वपूर्ण है, किसकी अवहेलना की गई है तथा किसे स्वीकार किया जाना चाहिए। इस प्रकार यद्यपि विशेषज्ञों द्वारा महत्वपूर्ण कार्य किया जाता है किन्तु अन्तिम निर्णय लेने की शक्ति उनके हाथ में नहीं रहती। अधिकारीगण सत्य के केवल एक ही पक्ष को देख पाते हैं। उनका दृष्टिकोण इतना पक्षपातपूर्ण बन चुका होता है कि पूर्ण सत्य को देखने में वे असमर्थ प्रायः रहते हैं जबकि साधारण व्यक्ति अथवा गैर-विशेषज्ञ ऐसा कर सकता है।

विशेषज्ञ एवं गैर-विशेषज्ञ, अधिकारी एवं गैर अधिकारी के बीच स्थित सम्बंध में इससे कोई खास अन्तर नहीं आता कि कुछ स्थानीय सत्ताओं की समितियों में बाहर से ऐसे भी लोगों को ले लिया जाता है जो कि उन समितियों के कार्यों में विशेष ज्ञान रखते हैं। ये सदस्य कई बार समिति को मूल्यवान रूप में सहायता करते हैं। सहवृति के सिद्धान्त को अधिक साहसपूर्ण एवं कल्पनात्मक कार्यों के लिए उपयोग में लाया जा सकता है। यह देखने में अप्रजातंत्रात्मक लगता है किन्तु यदि हम मेजिनी की प्रजातंत्र की परिभाषा को ध्यान में रखें तो कोई आपत्ति नहीं रहेगी। मेजिनी का कहना था कि प्रजातंत्र बुद्धिमान एवं सर्वश्रेष्ठ नेतृत्व के आधीन सभी के माध्यम से सभी की प्रगति है। सहवृत सदस्यों के रहने पर भी निर्वाचित सदस्यों को महत्वपूर्ण कार्य करना होता है। उनको स्थानीय सरकार के कार्यों में सामान्य रुचि लेनी होती है। वे कार्य के एक क्षेत्र में ही विशेषज्ञतापूर्ण ज्ञान रखने की अपेक्षा सभी विषयों में सामान्य ज्ञान रखते हैं। सदस्यों का एक दूसरा कार्य यह है कि वे अंकेक्षणकर्त्ता या दर्शक के रूप में कार्य करते हैं। इनको अधिकारियों द्वारा साप्ताहिक, मासिक, त्रैमासिक, या वार्षिक प्रतिवेदन दिये जाते हैं जिनमें वे अपने कार्यों का लेखा-जोखा प्रदान करते हैं। अधिकारियों को यह ज्ञात रहता है कि उनके कार्य, अकार्य आदि का लेखा रहता है तथा इनको चुनौती दी जा सकती है, इनकी आलोचना की जा सकती है। इस ज्ञान के कारण वे स्वेच्छा पूर्ण, बेईमानी पूर्ण एवं अवहेलना पूर्ण रवैया नहीं अपना सकते। आलोचना करने के कार्य को सम्पन्न करते समय बहुत सावधानी बरतने की आवश्यकता होती है क्योंकि इसे यदि अनुत्तरदायित्वपूर्ण रूप से किया गया तो इसके परिणामस्वरूप पहल की शक्ति समाप्त हो जायगी।

दूसरी ओर यदि इसे व्यवहृत नहीं किया गया तो डर है कि नौकरशाही प्रवृत्तियां विकसित हो जायेंगी। सदस्यों का तीसरा कार्य अपने चुनाव क्षेत्र के लोगों से लगातार सम्पर्क बनाये रखना है। परिषद के निर्वाचित सदस्य क्षेत्र के सभी भागों से आते हैं। इनके माध्यम से स्थानीय सत्ता, स्थानीय आकांक्षाओं एवं आवश्यकताओं के साथ घनिष्ट सम्बन्ध रख सकती है। सदस्यों का यह कार्य उन जिलों में तथा काउन्टीज में और भी अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है जो कि बिखरे रूप में बसे हुए होते हैं। यह बड़े आकार के क्षेत्रों में भी महत्वपूर्ण समझा जा सकता है। सदस्य द्वारा सूचना प्रदान करने का जो कार्य किया जाता है वह द्विभागीय प्रक्रिया है। वह एक ऐसा माध्यम है जिसकी सहायता से स्थानीय भावना एवं ज्ञान सत्ता तक पहुंचाया जाता है तथा सत्ता के कार्यों एवं उन कार्यों के कारणों का ज्ञान स्थानीय लोगों

को दिया जाता है। सदस्यों के माध्यम से नागरिक सत्ता के सम्मुख अपनी शिकायतें भेज सकते हैं। स्थानीय सत्ता उन शिकायतों की जांच करती है। जनता संसद सदस्यों से भी अपनी समस्याओं की शिकायत कर सकती है किन्तु ससद सदस्य को प्राप्त करना सुगम नहीं होता। इसके अतिरिक्त शिकायत करने की कार्यवाही भी इतनी उलझी हुई तथा जटिल होती है कि जन-साधारण प्राय: इसे नहीं कर पाता। स्थानीय सत्ता के सदस्य साधारण नागरिकों की पहुंच की सीमा में रहते हैं उनको गलियों में पाया जा सकता है, वे चर्च में मिल सकते हैं अथवा आकस्मिक रूप से कहीं भी मिल सकते हैं। इस अनौपचारिक सम्पर्क के द्वारा सदस्यगण नागरिकों की समस्यायें सुलझाने की शक्ति प्राप्त करते हैं। शिकायत करने की प्रक्रिया में अधिक औपचारिकता नहीं बरतनी होती। शिकायत चाहे कितनी ही छोटी या महत्वहीन क्यों न हो किन्तु सदस्य द्वारा उसको इतना हल्का नहीं लिया जाता। हो सकता है कि दिखने में महत्वहीन लगने वाला एक प्रश्न ही गम्भीर परिणाम उत्पन्न करने का कारण बन जाये। कुछ भी शिकायत करने वाले के जीवन के लिए तो यह प्रश्न उपयोगी एवं महत्वपूर्ण ही रहता है। एक मरीज ही सही रूप में जान सकता है कि दांत के डाक्टर के आपरेशन का क्या प्रभाव हुआ, डाक्टर इस बात की जानकारी नहीं रखता। इसी प्रकार शिकायत करने वाले की समस्या छोटी होते हुए भी उसके लिए गम्भीर सिद्ध हो सकती है। प्रशासन को चाहिए कि इन सभी समस्याओं के निराकरण के लिए कोई आसान तरीका निकाले। सत्ता के सदस्यों को यह देखना होता है कि प्रशासन का लक्ष्य अर्थात् 'मनुष्य का अच्छा जीवन' अपना महत्व न भूल जाये।

सदस्यों का एक अन्य महत्वपूर्ण कार्य उच्च स्तर के अधिकारियों की नियुक्ति करना है। इस कार्य को सम्पन्न करने में सत्ता की सफलता या असफलता ही उसके कार्य पर निर्णयात्मक प्रभाव डालेगी। इस शक्ति का पर्याप्त महत्व है। इसी कारण महत्वपूर्ण पदों पर मुख्य अधिकारियों की नियुक्ति की स्थानीय सरकार की शक्ति को केन्द्रीय सरकार द्वारा मर्यादित कर दिया गया है। कुछ मामलों में अधिनियम द्वारा यह व्यवस्था कर दी जाती है कि नियुक्ति पर सरकारी विभाग की स्वीकृति प्राप्त की जाये ताकि इन अधिकारियों को उनका कार्य सम्पन्न करने में गलत दबाव से सुरक्षित रखा जा सके। स्वास्थ्य के मैडीकल अधिकारी, सफाई निरीक्षक आदि को ऐसे अधिकारियों के उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। यह सीमा कई बार गम्भीर आलोचना का कारण भी बनती है। यह कहा जाता है कि इस से स्थानीय सत्ता अपने अधिकारियों को नियुक्त करने एवं हटाने की शक्ति से वञ्चित रह जाती है। यदि केन्द्रीय विभाग स्वेच्छाचारी रूप से निषेधाधिकार का प्रयोग करने लगे तो सत्तायें अपने उचित दायित्व से वंचित रहेंगी, साथ ही व्यक्तिगत अधिकारियों के साथ अन्याय का व्यवहार पनप सकता है।

अधिकारियों को उनके उचित कार्य क्षेत्र में स्वतंत्रता प्रदान करने का अर्थ है कि सदस्यों को उनके निर्णय में तथा उनकी नियुक्ति में विश्वास

है। व्यवहारिक रूप से यह सम्भव नहीं है कि अधिकारीगण अपना प्रत्येक कार्य करने से पूर्व अनुमति प्राप्त करे क्योंकि इस प्रक्रिया से पर्याप्त श्रम एवं देर होने की सम्भावना रहती है। इस सम्बन्ध में जे. एस. मिल का यह कहना सच है कि प्रशासन के विषयों में एक प्रतिनिधि सभा का उचित कार्य यह नहीं है कि वह स्वयं ही निर्णय ले वरन् उसका कार्य यह देखना है कि जो लोग निर्णय ले रहे हैं वे उचित व्यक्ति होने चाहिए। सदस्यों एवं अधिकारियों के बीच उचित सम्बन्ध यह मान कर चलता है कि इनमें से प्रत्येक एक दूसरे के कार्यों का उचित सम्मान करेगा। साथ ही यह दोनों ही पक्षों में पूर्ण सद्भावना की मांग करता है।

स्थानीय सरकार के सदस्यों एवं अधिकारियों के पारस्परिक सम्बन्ध की समस्या को एक अन्य समस्या के भाग के रूप में जाना जा सकता है जिसका सम्बन्ध सरकार एवं प्रशासन के प्रत्येक क्षेत्र में विशेषज्ञ एवं गैर-विशेषज्ञों के कार्यों से रहता है। यह समस्या मंत्री एवं नागरिक सेवकों के पारस्परिक सम्बन्धों में उठती है, एक व्यापारिक कम्पनी के हिस्सेदारों एवं सचालकों के पारस्परिक सम्बन्धों में उठती है, एक विश्वविद्यालय की परिषद् एवं सीनेट के बीच उठती है, एक अस्पताल के प्रशासकीय निकाय एवं मैडीकल स्टाफ के बीच उठती है, एक स्कूल के प्रशासकों एवं हैडमास्टर के पारस्परिक सम्बन्धों में उठती है। यह समस्या वर्तमान प्रशासन में इतनी अधिक हो चुकी है कि प्रत्येक सरकार यह चाहती है कि विशेषज्ञता के सामने लोकप्रिय नियंत्रण को समायोजित किया जाये। प्रशासन में विशेषज्ञ एवं गैर-विशेषज्ञ दोनों ही प्रकार के अधिकारियों एवं कार्यकर्त्ताओं के लिए स्थान होता है किन्तु दोनों के कार्यों को निश्चित रूप से निर्धारित नहीं किया जा सकता। प्रशासन में विशेषज्ञता की ओर बढ़ती हुई प्रवृत्ति को तुलनात्मक अध्ययन के आधार पर देखा जा सकता है। १९वीं शताब्दी का प्रशासक एक सामान्य व्यवहारकर्ता मात्र था। वह अपना सारा समय प्रशासन के कार्य में न लगा कर केवल आंशिक समय ही इसमें लगाता था। शेष समय में वह अपना अन्य कार्य करता था। यह व्यवस्था उस समय उपयुक्त थी जबकि सरकार के कार्य केवल नियमनकारी थे। किन्तु ज्यों-ज्यों सामाजिक सेवाओं का क्षेत्र बढ़ता गया त्यों-त्यों विशेषज्ञतापूर्ण ज्ञान वाले अधिकारियों की नियुक्ति करना अपरिहार्य बनता गया। विशेषज्ञों के बढ़ते हुए महत्व के साथ ही स्थानीय सरकार के अधिकारियों की संख्या भी बढ़ती गई, उनका वेतन अधिक हो गया उनकी भर्ती करते समय अधिक शिक्षा के स्तर की मांग की जाने लगी। स्थानीय सरकार के अधिकारी मुख्यतः कार्य पर ही प्रशिक्षण प्राप्त करते हैं। उनकी सामान्य शिक्षा को सीमित ही रखा जा सकता है। स्थानीय सरकार की सेवाओं की दशाओं में जो सुधार हुआ है वह बहुत कुछ स्थानीय सरकार के अधिकारियों के राष्ट्रीय संघ के प्रयासों का परिणाम है।

अधिकारियों के सम्बन्ध में एक अन्य समस्या यह उठायी जाती है कि इनको खुले तौर पर दलीय राजनीति में भाग लेना चाहिए अथवा नहीं। यह समस्या इतनी अधिक गम्भीर नहीं बन रही है क्योंकि चारों ओर सद्भावना का वातावरण रहने के कारण मतभेद उत्पन्न होने का अवसर प्रायः कम ही रहता है।

स्थानीय सरकार के सम्बन्ध में प्रमुख समस्या यह है कि आज कल परिषद भवन की सीटों पर बैठने के लिए ऐसे व्यक्तियों की तलाश करना कठिन और कभी-कभी तो प्रायः असम्भव भी हो जाता है जिसमें कि पर्याप्त उत्साह हो तथा जिनके पास कार्य करने के लिए अतिरिक्त समय हो। यह एक तात्कालिक एवं गम्भीर समस्या है जिसकी अवहेलना नहीं की जा सकती तथा जिसके परिणाम-स्वरूप अन्य कई समस्यायें उठ खड़ी होती हैं। फ्रेन्क जेसप (Frank Jessup) का यह कहना पूर्ण रूप से सही है कि सरकार का यंत्र चाहे कितना भी अच्छा क्यों न हो; सरकार का स्तर अन्त में उन पुरुषों एवं स्त्रियों, सदस्यों एवं अधिकारियों पर निर्भर करता है जो कि मानवीय एजेन्ट हैं। यदि वे अच्छे हैं तो अच्छी सरकार भी सम्भव हो सकती है चाहे यंत्र अपूर्ण ही क्यों न हो। किन्तु यदि वे मानवीय एजेन्ट गरीब हालत के हैं तो सरकारी यंत्र के पूर्ण होते हुए भी असंतोषजनक सरकार सामने आयेगी। * स्थानीय सरकार की बनावट के बारे में तो पर्याप्त विचार विमर्श किया जाता है किन्तु उस में कार्य करने वाले अधिकारियों पर विचार कम किया जाता है। बनावट पर तो विषय गत रूप में विचार किया जा सकता है क्योंकि उसके आंकड़े व तथ्य उपलब्ध हो जाते हैं किन्तु अधिकारियों से सम्बन्धित किसी भी वाद-विवाद में या विचारविमर्श में विषयगत पहलू का उत्पन्न होना अत्यन्त स्वाभाविक बन जाता है। यंत्र से सम्बंधित विचार विमर्श करना आसान भी होता है। अतः इन विभिन्न कारणों से सेवी-वर्ग की समस्या पर उचित ध्यान नहीं दिया जाता।

पर्याप्त योग्यता वाले निर्वाचित सदस्य क्यों नहीं मिल पाते हैं इसके अनेक कारण हैं जो प्रायः सर्व विदित हैं किन्तु फिर भी संक्षेप रूप में इनका वर्णन किया जाना उचित रहेगा। इसका प्रथम कारण यह है कि कई लोग प्रारम्भ में स्थानीय सरकार के कार्यों में रुचि लेना पसन्द नहीं करते क्योंकि ऐसा करना उनको रुचिकर प्रतीत नहीं होता। स्थानीय परिषद को जन जीवन में अनेक गलतियों एवं कार्य की अवहेलनाओं के लिए दोषी ठहराया जाता है। परिषद जिन कार्यों के लिए उत्तरदायी नहीं होती उनके सम्बन्ध में बढ़ने वाली समस्याओं के लिए भी उसी के ऊपर लोग प्रायः दोषारोपण करते हैं। स्थानीय परिषद के विरुद्ध लगाए जाने वाले लांछनों की प्रकृति सामान्य होती है। दैनिक व्यवहार की बात-चीत में स्थानीय सरकार के भ्रष्टाचारपूर्ण कारनामें आम विषय बन जाते हैं। स्थानीय परिषद का उम्मीदवार बनने से पूर्व प्रत्येक व्यक्ति के मस्तिष्क में परिषद का यही दोष-

---

*"However good the machinery of Government may be the quality of Government depends in the end, upon the men and women, members and officials, who are the human agents. If they are good possibly good Government is possible, despite imperfect machinery, but if the human agents are poor, unsatisfactory government is the inescapable consequence, however perfect the machinery may be."

—Ibid, P. 112-113.

पूर्ण चरित्र रहता है तथा वह अपने आपको इसके साथ एकीकार नहीं करना चाहता। सौभाग्य से भ्रष्टाचार वर्तमान स्थानीय सरकार की समस्या नहीं है। भ्रष्टाचार के विरुद्ध अनेक कानून प्रावधान बनाए गए हैं। यदि किसी शिकायत के पक्ष में पर्याप्त प्रमाण प्राप्त हो जाएं तो यह एक नैतिक कर्तव्य माना जाता है कि कानून उचित कार्यवाही करे। तथ्यों के ऊपर आधारित ईमानदारीपूर्ण आलोचना एक स्वस्थ प्रक्रिया मानी जाती है किन्तु सस्ती और घटिया प्रकार की अनुत्तरदायित्वपूर्ण बातों को समाज विरोधी समझा जाना चाहिए। किसी भी नागरिक को यह नहीं समझना चाहिए कि स्थानीय सरकार में सक्रिय योगदान किसी प्रकार उसके व्यक्तित्व को नीचा गिराएगी।

जो व्यक्ति अपने किसी विशेष स्वार्थ की दृष्टि से स्थानीय परिषदों के लिए उम्मीदवार बनते हैं तथा स्थानीय सरकार के कार्यों में रुचि लेते हैं वे कभी भी अच्छे पार्षद नहीं बन सकते। मनोवैज्ञानिकों द्वारा यह तर्क प्रस्तुत किया जाता है कि पारषद बनने के पीछे मूल उद्देश्य तो प्रायः सभी का एक ही होता है और वह है शक्ति का प्रयोग करने की इच्छा। इस तर्क में सत्यता होते हुए भी उम्मीदवारों को दो भागों में विभाजित किया जाता है। प्रथम में वे लोग आते हैं जो स्थानीय सरकार में अपना कुछ योगदान करना चाहते हैं। ऐसे लोगों को दूसरे प्रकार के उन लोगों से भिन्न देखा जाना चाहिए जो कि स्थानीय सरकार को अपने स्वार्थों की सिद्धि का साधन बनाना चाहते हैं।

योग्य व्यक्तियों के परिषद का सदस्य बनने के मार्ग में एक अन्य कठिनाई यह है कि जहां कहीं निर्वाचन दलीय आधार पर लड़े जाते हैं वहां यदि कोई व्यक्ति अपने पीछे शक्तिशाली दलीय पृष्ठभूमि नहीं रखता या वह सभी दल की नीति की कमजोरी तथा शक्ति दोनों को ही भली प्रकार देख पाता है तो उसका पारषद बनना कठिन होगा। जिस व्यक्ति को किसी दल का समर्थन नहीं प्राप्त होता और जो चुनाव में सफलता प्राप्त करने की आशा नहीं करता वह स्थानीय सरकार के लिए महत्वहीन बन जाता है। यह स्वाभाविक है कि एक राजनैतिक दल प्रायः उसी व्यक्ति का समर्थन करेगा जो कि समय-समय पर दल की नीतियों का प्रचार करता रहे। दलीय स्वामीभक्ति के साथ निर्णय की ईमानदारी को समायोजित करना कई बार बौद्धिक एकाग्रता पर एक गम्भीर भार बन जाता है।

केन्द्रीय सरकार का स्थानीय सरकार के कार्यों पर बढ़ता हुआ नियन्त्रण भी इस दृष्टि से एक महत्वपूर्ण तत्व बन जाता है। अत्यधिक केन्द्रीय नियन्त्रण की स्थिति में स्थानीय सरकार की स्वायत्तता समाप्त हो जाती है। वह एक प्रकार से कार्यों का अभाव सा महसूस करने लगती है। इस प्रकार की संस्था में बौद्धिक योग्यता वाले स्त्री और पुरुष आने में रुचि नहीं लेते। यद्यपि स्थानीय सरकार पूरी तरह से अधीनस्थ स्थिति में नहीं पहुंची है किन्तु फिर भी यह सच है कि स्थानीय सत्ताओं की स्वतन्त्रता को सीमित बनाकर स्थानीय सरकार के कार्यों में भाग लेने से योग्य व्यक्तियों को विमुख कर दिया जाएगा। यदि ऐसे लोग रुचिहीन हो जाएं तो स्थानीय सरकार में बौद्धिक संकट उत्पन्न हो जाएगा।

कुछ लोग ऐसे भी हैं जो कि स्थानीय सरकार के कार्यों में भाग लेने में रुचि रखते हैं। इसके लिए पर्याप्त योग्य भी हैं किन्तु फिर भी अनेक आर्थिक परिस्थितियां उनको ऐसा करने से रोक देती हैं। जो व्यक्ति वास्तव में स्थानीय सरकार के कार्यों में रुचि लेता है और सामाजिक सेवाओं के क्षेत्र में सचमुच कुछ योगदान करना चाहता है उसे अपना अधिकांश समय इस कार्य में लगाना होगा किन्तु इतना अतिरिक्त समय जिन लोगों के पास होता है उनकी संख्या बहुत अधिक नहीं है। इसके परिणामस्वरूप स्थानीय सत्ताओं में आने वाले सदस्यों का अनुपात या तो ऐसे लोगों में से होता है जो कि अपने सक्रिय जीवन से सेवानिवृत हो चुके हैं अथवा जो सम्पन्न घराने के हैं। केवल कुछ ही स्थानीय सत्ताएं ऐसी हैं जो कि विभिन्न उम्र एवं आर्थिक स्थिति वाले लोगों का प्रतिनिधित्व करें। इसके अतिरिक्त परिषद की बैठकें प्रायः उस समय होती हैं जबकि काम करने के दिन होते हैं। इसलिए साधारण काम करने वाला व्यक्ति तो वैसे ही इसके बाहर हो जाता है। स्थानीय परिषद की बैठकों में रहने वाली उपस्थिति बहुत कम रहती है।

परिषद के कार्यों में जो समय लगता है उससे कहीं अधिक समय उसकी समितियों, उप-समितियों एव सम्मेलनों की बैठकों में लगता है। इसके अतिरिक्त स्कूलों एवं अन्य संस्थाओं का निरीक्षण करने में समय लग जाता है। समय की इन कठिनाइयों को दूर करने के लिए संध्याकालीन बैठकों की व्यवस्था की जाती है किन्तु जहां सदस्यों को एक विस्तृत क्षेत्र से लिया जाता है वहां संध्याकालीन बैठकें असम्भव बन जाती हैं। इसके परिणामस्वरूप महत्वपूर्ण मसलों पर निर्णय दिन के अन्त में लिया जाता है जब कि उपस्थित सदस्यगण शारीरिक एवं मानसिक दोनों ही दृष्टियों से थक चुके होते हैं। अतः यह स्वाभाविक है कि निर्णय अधिक उपयुक्त नहीं होंगे। कुछ जागरूक नियुक्तिकर्त्ता अपने किसी भी कर्मचारी को जो कि स्थानीय सत्ता में निर्वाचित हो चुका हो, सार्वजनिक कार्य में लगाए गए समय के लिए भी वेतन प्रदान करते हैं। निःसन्देह यह अभ्यास बढ़ता जा रहा है किन्तु यह छोटे स्तर के नियुक्तकर्त्ताओं के लिए व्यवहारिक नहीं है। एक दुकानदार जिसके केवल दो सहायक कार्यकर्त्ता हैं वह अपने एक कार्यकर्त्ता को स्थानीय सत्ता के कार्यों में भाग लेने के लिए कैसे अनुमति दे सकता है। यह एक ऐसा स्वेच्छापूर्ण वरदान है जिसके लिए जनता किसी भी नियुक्तिकर्ता पर दबाव डालने का अधिकार नहीं रखती।

कभी-कभी इस समस्या पर यह सुझाव दिया जाता है कि स्थानीय सत्ता के सदस्यों को वेतन प्रदान किया जाना चाहिए। जब संसद के सदस्यों को वेतन प्रदान किया जाता है तो उन सदस्यों को क्यों न प्रदान किया जाए जो कि स्थानीय सरकार के कार्यों का भार वहन करते हैं। इस प्रकार की तुलना करना अधिक उचित नहीं कहा जा सकता क्योंकि संसद के सदस्य अपने कर्त्तव्यों को पूरा करने में अधिकांश समय व्यतीत करते हैं और इस प्रकार यह उनका प्रमुख व्यवसाय बन जाता है। दूसरी ओर स्थानीय सत्ता की सदस्यता का मूल तत्व यह है कि यह एक अंशकालीन सेवा है जिसको

कि प्रति दिन के कार्यों के साथ-साथ सम्पन्न किया जा सकता है, उनके स्थान पर नहीं। वेतन प्रदान करने के लिए सिद्धान्त के प्रति और भी कई आपत्तियां की जाती हैं। यह कहा जाता है कि यह व्यवहार इस सिद्धान्त के विपरीत होगा कि स्थानीय सरकार के कार्यों में योगदान सेवा की-भावना से किया जाना चाहिए। दूसरे, यदि वेतन की मात्रा कम होगी तो इससे कठिनाइयां दूर नहीं हो सकेंगी और यदि वेतन बहुत अधिक हुआ तो इन पदों को प्राप्त करने के लिए बड़े बड़े राजनैतिक दाव-पेंच लड़ाए जाएंगे। तीसरे, जब स्थानीय सरकार के सदस्यों को पुनः निर्वाचित होने में कोई सन्देह रहता है तो वे उस स्थिति की कल्पना कर लेते हैं जब कि परिषद की सदस्यता छोड़ने के बाद वे लोग बेरोजगार हो जाएंगे, उनकी जीविका का कोई साधन नहीं रहेगा। इस स्थिति से अपने आपको बचाने के लिए वे जनता का समर्थन प्राप्त करने हेतु घटिया साधनों को अपनाने में भी नहीं हिचकिचाते। चौथे, जब सदस्यों को वेतन देने की परम्परा प्रारम्भ हो जाएगी तो सवैतनिक विशेषज्ञ अधिकारियों एवं अवैतनिक गैर-विशेषज्ञ सदस्यों के बीच का अन्तर समाप्त हो जाएगा। पांचवें, मितव्ययता लाने के लिए परिषदों का आकार छोटा कर दिया जाएगा और ऐसी स्थिति में केवल कुछ ही लोगों को उनकी अपनी स्थानीय सरकार में निरन्तर सक्रिय भाग लेने का अवसर प्राप्त हो सकेगा। यद्यपि सवैतनिक सदस्यों के विरोध में अनेक तर्क प्रस्तुत किए जा सकते हैं किन्तु फिर भी ऐसे किसी साधन की तलाश करनी होगी जो कि साधारण स्त्री पुरुषों को भी स्थानीय सरकार के कार्यों में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित कर सके।

उचित प्रकार के लोगों को स्थानीय सरकार की ओर आकर्षित करने की समस्या का अभी तक मान्य समाधान नहीं हो सका है। सुझाव चाहे कुछ भी रखा जाए और स्थानीय सरकार के कार्यों में योग्य व्यक्तियों की रुचि को जागृत करने के लिए चाहे कोई भी प्रयास किया जाए किन्तु यह एक तथ्य है कि स्थानीय परिषदों में निरन्तर सामर्थ्यवान् एवं सूचित स्त्री पुरुष आने चाहिएं जो कि निःस्वार्थ भाव से अपने साथियों के कल्याण के कार्यों में स्वेच्छापूर्वक अपनी शक्ति एवं समय लगा सकें। जब भी कभी स्थानीय सरकार में सुधार की बात की जाती है तो सेवी वर्ग के तत्व को बहुत कम महत्व दिया जाता है तथा बनावट पर ही अधिकतर ध्यान केन्द्रित रहता है। यद्यपि ढांचे का भी अपना महत्व है, शरीर में अस्थिपिंजर का भी महत्व है किन्तु जिस मांस के द्वारा इसे ढका जाता है, जिस मस्तिष्क के द्वारा इसे प्रशासित किया जाता है और जिस आत्मा के द्वारा इसे चेतना दी जाती है वे इससे भी अधिक महत्वपूर्ण हैं। परिषद के निर्वाचित प्रतिनिधि न केवल इन बाद वाले गुणों को ही प्रदान करते हैं किन्तु वे ऐसे साधन भी हैं जो कि यन्त्र को चालू रखने के लिए शक्ति प्रदान करते हैं। जॉन स्टुआर्ट मिल का यह कहना बिल्कुल सही है कि यन्त्र की भांति राजनीति में भी इंजन को चलाने वाली शक्ति यन्त्र के बाहर से प्राप्त की जानी चाहिए। जो शक्ति स्थानीय सरकार के यन्त्र को संचालित रखती है वह उन लोगों की रुचि एवं उत्साह में प्राप्त होती है जो कि इनका प्रतिनिधित्व करते हैं।

दोनों के लिए न किसी उत्तरदायित्व का अनुभव करता है और न ही नियन्त्रण की भावना रखता है।*

सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दी में इंगलैण्ड में जबकि संसद नियन्त्रण रखने के अपने कार्यों का पालन करने में असफल रही तो इसके परिणाम स्वरूप व्यक्तिगत शासन का जन्म हुआ और अब यदि सीमा निर्धारण करने के कार्यों को जनता द्वारा सम्पन्न किया गया तो इसके परिणामस्वरूप नौकर-शाही और केन्द्रीयकरण का जन्म होगा। जहां कहीं नौकर शाही और केन्द्रीयकरण का बोलबाला हो जाता है वहां सरकार लोचशील नहीं रहजाती और वह अपने आपको जनता की इच्छाओं के अनुरूप नहीं ढाल पाती। राज-नीति के इस तरह से स्थायी बन जाने से अनेक दुर्भाग्यपूर्ण परिणाम सामने आते हैं। राजनैतिक संस्थाओं को अपने आपको बदली हुई परिस्थितियों के अनुरूप समायोजित करते रहना चाहिए किन्तु केन्द्रीयकृत सरकार से उत्पन्न कठोरता परिवर्तन पर रोक लगा देनी है। इसी क्रिया और प्रतिक्रिया के चक्कर में पश्चिमी रोमन साम्राज्य का पतन हो गया।

स्थानीय सरकार के कार्यों में इंगलैण्ड की जनता रूचि नहीं लेती तथा उदासीन रहती है। इसके लिए उत्तरदायी कई एक कारण हैं। इसका पहला कारण अज्ञान है। स्थानीय सरकार का क्षेत्र एवं तरीके, इसके द्वारा नियन्त्रित कार्य, इसकी उपलब्धियां, इसकी असफलताएं एवं समस्याएं, इसके प्रति नागरिकों के अधिकार एवं कर्तव्य आदि को बहुत कम समझा जाता है। उस अज्ञान का एक कारण अतीतकालीन शिक्षा है जो कि बहुत कम खर्चे में प्रदान की जाती थी। यह सच है कि भावी संतति अधिक शिक्षित एवं जागरूक होगी किन्तु स्थानीय सरकार की प्रगति की वर्तमान दर ऐसी है कि इसे देश के जीवन का एक प्रभावशील भाग नहीं माना जा सकता। सन् १९४८ के अधिनियम में दो ऐसे सम्भाग थे जिनके अनुसार स्थानीय सत्ताएं सूचना केन्द्रों की रचना कर सकती थी, जो कि सूचना प्रकाशित करें, भाषणों का प्रबन्ध करें तथा स्थानीय सरकार के प्रश्नों पर विचार विमर्श एवं प्रदर्शन करें। ये अत्यन्त उपयोगी प्रावधान थे किन्तु इन पर पूरी तरह से निर्भर करना उसी तरह से बेकार है जिस प्रकार कि मशीन में ही शक्ति का स्रोत देखने का प्रयास करना है। स्थानीय सरकार की शिक्षा का प्रसार करने में प्रेस या सिनेमा अत्यन्त शक्तिशाली साधन सिद्ध हो सकते हैं। अब तक के तथ्यों को देखने पर यह ज्ञात होता है कि अखबारों में स्थानीय सरकार के कार्यों को जिस रूप में प्रतिवेदित किया गया वह पूर्णतः बचकाना था। हो सकता है इसका कारण यह हो कि सम्पादकों ने पाठकों की रूचि को कम मूल्यांकित किया हो या स्थानीय अखबारों द्वारा जो समाचार पत्र के कार्यकर्त्ता नियुक्त किए गए थे उनमें ही राजनैतिक शिक्षा का अभाव हो या अखबार को बेचने

---

*"To the ordinary citizen an administrative action is as unpredictable and unfathomable as an Act of God, and he feels no more sense of control over or responsibility for the one than the other."

—*Frank Jessup,* op. cit., P. 124.

का केवल यही एक तरीका हो कि जो चीज व्यक्ति को सबसे अधिक भाती हैं उसको वही प्रदान की जाए। इन अखबारों में स्थान भी कम रहता था जिसके परिणामस्वरूप सम्पादकों को और भी अधिक कठिनाई थी। अखबारों में जो समाचार प्रकाशित होते हैं वे सामान्य नागरिकों के स्तर से अधिक नहीं होते और इसलिए उनसे यह आशा नहीं की जा सकती कि वे स्तर को और आगे बढ़ाएंगे।

कभी-कभी जिस रूप में स्थानीय सत्ता अपने कार्यों को सम्पन्न करती है उससे भी जनता की रुचि मन्द पड़ जाती है। कुछ सत्ताओं द्वारा इस डर के आधीन कार्य किया जाता है कि कहीं उनके कार्यों की खबरें उन लोगों तक न पहुंच जाए जिनकी ओर से वे कार्य कर रही हैं। प्रेस को एक सम्भावित मित्र समझने की अपेक्षा इसे संदेह की नजर से देखा जाता है और इसके कार्य को यथासम्भव कठिन बनाया जाता है। समिति के रूप में कार्य को सम्पन्न करने के प्रत्येक अवसर का लाभ उठाया जाता है ताकि कानून के शब्दों को तोड़े बिना ही जनता और प्रेस को बैठकों से बाहर रखा जा सके। यद्यपि यह सच है कि यदि हम नगरपालिका के प्रत्येक कार्य को प्रत्येक स्तर पर सार्वजनिक रूप से करने का प्रावधान रखदें तो यह आज की अन्तर्राष्ट्रीय कूटनीति की भांति कम उपयोगी रहेगा किन्तु फिर भी वर्तमान व्यवस्था जिसमें कि महत्वपूर्ण विषयों पर गुप्त रूप से निर्णय लिया जाता है और निर्णयों की घोषणा कर दी जाती है जबकि उनके कारण अज्ञात ही रहते हैं। इस स्थिति को प्रजातन्त्रात्मक सरकार के विरुद्ध समझा जाएगा। कई बार इस स्थिति को सुधारने के लिए यह सुझाव दिया जाता है कि जन-सम्पर्क समितियों एवं अधिकारियों की नियुक्ति की जाए। कुल मिलाकर प्रचार एवं प्रकाशन प्रशासन का एक अविभाज्य भाग होना चाहिए। कोई भी चीज जो कि जनता और प्रशासन के सम्बन्धों को दूरस्थ बनाती है वह खतरनाक है। दूसरी ओर स्थानीय सत्ता द्वारा अपनाई जाने वाली सक्रिय जन सम्पर्क नीति का भी खतरा स्पष्ट है क्योंकि व्यवस्था में कई एक आवश्यक तथ्यों को छिपाया जा सकता है जबकि सभी तथ्य जनता के सम्मुख रखे जाने चाहिए। यदि स्थानीय सत्ता अपने मतदाताओं के प्रति अधिक निश्चित रूप से उत्तरदायी रहे तो निश्चय ही स्थानीय कार्यों में जनता की रुचि बढ़ेगी। जिन कार्यों में स्थानीय सत्ताएं केवल कनिष्ठ व भागीदार बन गई है अथवा केन्द्रीय सरकार के एजेन्ट मात्र हैं वहां उनका दोहरा उत्तरदायित्व है एक सरकारी विभाग के प्रति दूसरा मतदाताओं के प्रति। जनता की अभि-रुचि का स्थानीय सरकार के कार्यों में अत्यन्त महत्व है। यदि यह न हो तो प्रजातन्त्र जिन्दा न रहे। जब तक प्रत्येक नागरिक में व्यक्तिगत एवं सामा-जिक उत्तरदायित्व की भावना नहीं है तब तक प्रजातन्त्र का अस्तित्व नहीं रह सकता।*

---

*"Democracy cannot survive the withdrawal of the people's interest, it cannot exist unless, in every citizen, there is a sense of personal and social responsibility."

—Ibid, 133.

SELECTED READINGS

1. L. Golding—Local Government, English Universities Press Ltd. London, 1955.
2. Sir A. S. Mac Nalty—Local Government, Methuen & Co. Ltd., London, 26 Essex Street, Strand, W.C. 2, 1948.
3. J. H. Warren—The English Local Government System. George Allen and Unwin Ltd., Museum Street, London 4th Ed., 1955.
4. John J. Clarke—The Local Government of the United Kingdom, London, Sir Issac Pitman and Sons, Ltd, 15th Ed , 1955
5. R. M. Jackson—The Machinary of Government Macmillan & Co. Ltd., 1958.
6. Harold J. Laski—A Grammar of Politics, George Allen and Unwin (1934), 4th Ed. (10th impression).
7. A. Lowrence Lowell—The Government of England, Macmillan, 2 vols., 1917.
8. Sir J.A.R. Marriott—English Political Institutions, Oxford University Press, 4th Ed., 1938.
9. Arnold's Law Relating to Municipal Corporations, 7th Ed., F.C. Minshull, Butterworth, 1935.
10. C. R. Attlee and W. A. Robson—The Town Councillor, Labor Publishing Co. Ltd., 1925.
11. C. Barrat—Your Local Authority, Pitman, 2nd Ed., 1949.
12. R. J. Beattic—Ultra Vires in its Relation to Local Authorities, Solicitors' Law Stationery Society. 1936.

13. Charles E. Scholefield and Richard Isdell Carpenter—Blackwell's The Law of Meetings, Butterworth, 1937.

14. J.J. Clarke—Outlines of Local Government of the United Kingdom, 7th Ed., Pitman, 1954.

15. J. J. Clarke—County Councils; Their Powers and Duties, Pitman, 1939.

16. A. Crew—The Law and Practice Relating to Meetings of Local Authorities, Gree, 1934.

17. A Dumsday—Local Government Law and Legislation Hadden, Best & Co., Published annually.

18. Dumsday's Statutes of Year—Annoted and Explained Parish Councils, Handbook by D. Neligan., Hadden, Best & Co., 1953.

19. Sir A. M. Trustram Eve—The Local Government Act, 1929, Knight, 1930.

20. Sir A. M. Trustram Eve—The Future of Local Government, Athlone Press of London University, 1951.

21. Herman Finer—English Local Government, 4th Ed., Methuen, 1956.

22. R. A. Glen—Local Government Act, 1929, Eyre and Spottiswoode, 1931.

23. Sir G. Laurence Gomme—Lectures on the Principles of English Local Government, Constable O.P.

24. J. A.G. Griffiths & H. Streets—Principles of Administrative Law, Pitman, 1953.

25. G.M. Harris—Local Government in many Lands, 2nd Ed, King, 1933.

26. G M. Harris—Municipal Self-Government in Britain, King and Staples, 1939.

27. C E. Schofield—Hart's Local Govt. Act, 1933, Butterworth, 1937.

28. W O. Hart—Hart's An Introduction to the law of Local Government and Administration., Butterworth, 4th Ed., 1949.

29. E. L. Hasluck—Local Government in England, Cambridge University Press, 1936.

30. Sir Ernest Hiley—A Guide to Local Government Legislation since the great war, 1914-18. Eyre and Spottiswoode, Ltd., 1925.

31. L. Hill—The Local Government Officer, Allen & Unwin, 1938.

32. W. Ivor Jennings—The Law Relating to Local Authorities, Knight, 1934.

33. H.J. Laski, W.A. Robson, W.I. Jennings (Editors)—A century of Municipal Progress, 1835-1935 Allen & Unwin, 1935.

34. Local Government in England and Wales during the period of reconstruction, 1945, Cmd. 6579.

35. Professor William Anderson (Ed.)—Local Government in Europe, D. Appleton-century Co. 1930.

36. Local Government law and Legislation, Hadden, Best & Co. Ltd., Issued annually.

37. Lord MacMillan and others—Local Government Law and Administration in England and Wales, Butterworth, 14 vols.

38. J.P.R. Maud—Local Government in Modern England, Thornton Butterworth, 1933.

39. R.C. Maxwell—Parish Councillor's Guide, Shaw, 5th Ed., 1935.

40. J B. Morrell and A.G. Watson (Editors)—How York Governs itself, Allen & Unwin, 1928.

41. J. B. Morrel and A.G. Watson (Editors)—Whitehall at work, Allen & Unwin, 1930.

42. W. Blake Odgers—Local Government and Macmillan, English Citizen Series, 1913.

43. Josef Redlich—Local Government in England, Macmillan, 2 vols., 1903.

44. W. A. Robson—Development of Local Government, 2nd Ed., Allen & Unwin, 1932.

45. Royal Commission on Local Government—

First Report (Cmd. 2506, 1925) H. Stationary office.
Second Report (Cmd. 3 13, 1928)
Third Report (Cmd. 3436 1929)
Minutes of Evidence in Seven Parts, H.M. Stationary office.

46. H. Samuels—The Local Government Act, 1929, Hadden, Best & Co. Ltd., 1929.

47. A. N. Schofield—Byelaws of Local Authorities, Butterworth, 1939.

48. A. N. C. Shelley—The Councillor, Nelson, 1939.

49. Sir E. D. Simon—A city council from within, Longmans, 1926.

50. H. E. Smith—English Local Government Law, Pitman, 1938.

51. F, H. Spencer—Municipal origins, Constable, 1911.

52. A.R. Taylour & J. Moss—Local Government Act, 1933, Hadden, Best and Co. Ltd., 1934.

53. J, H. Thomas—Town Government in the Sixteenth century, Allen & Unwin, 1933.

54. Sidney and Beatrice Webb—English Local Government from the Revolution to the Municipal corporations Act, Longmans.

Vol. 1.—The Parish and the county, 1906.
Vol. 2 & 3—The Mayor and the Borough, 1924, 2 vds.
Vol. 4—Statutory Authorities for Special Purposes, 1922.
Vol. 5—The Story of the king's Highway, 1920.
Vol. 6. English Prisons under Local Govt.
Vol. 7.—English Poor Law History.
Vols. 8 & 9—English Poor Law History.

55. C. Winter—Post-Entry Training for Local Government, officers, Hodge, 1939.

56. C. Kent Wright—The A.B.C. of Local Government Evans Bros. Ltd., 1939.

57. Sir Robert & Henry Hobhouse—An outline of Local Govt & Finance in England and wales (Excluding Lond- Sweet and Max- 1937, 8th Ed.

58. J. H. Warren, Municipal Trading, Labour Publishing Company Ltd., 1923.

59. R. B. Suthers—Mind your own Business, Allen & Unwin, 1929.

60. George Bernard Shaw—The common sense of Municipal Trading, Fifield, 1912.

61. W. A. Robson—The Public Utility Services, Allen and Unwin, 1935.

62. Leonard Darwin—Municipal ownership, Murray, 1908.

63. Herman Finer--Municipal Trading, Allen and Unwin 1941.